पुण्यात्मा कहाएगा। परन्तु जो कोई इसमें रत्ती भर भी वासना या स्वार्थ का दलेप करेगा, पापी कहलाएगा। सन्तान शब्द में आशा, नैसर्गिक प्रेम, त्याग और ममत्व के गम्भीर भाव भरे पड़े हैं। सन्तान की पालना और शिक्षा में माता-पिताओं को जो त्याग करना पड़ता है—मृत्यु के समय भी वे जो त्याग-वृत्ति सन्तान के प्रति रखते हैं—यह बिलकुल मनुष्य के स्वार्थी स्वभाव के विपरीत है। फिर भी वह सन्तान के नाम पर सर्वस्व त्याग करता है; परन्तु इसके साथ यदि सन्तान की अभिलाषा और ममत्व का भी त्याग कर सकें, तो सन्तानोत्पादन बहुत-कुछ पुण्य कहा जा सकता है।

एक समय था, जबकि जगत के नैसर्गिक प्रवाह को स्थिर बनाए रखने के लिए सन्तान पदाई जाती थीं; और वे सन्तान संसार की सम्पत्ति तथा भविष्य की भाग्य-विधाता होती थीं। उस काल में जगत् से सर्वथा विरक्त, परम ज्ञानी, तपोनिष्ठ ऋषि-गण भी सन्तान उत्पन्न करते थे। क्या वे स्वादेन्द्रिय के लोलुप थे, जिन्होंने तमाम ऐहिलौकिक वासनाएँ त्याग दी थीं? क्या वे इन्द्रिय-स्वाद के लिए पत्नी और पुत्र के बन्धनों में बँधे रह सकते थे? व्यास और वशिष्ठ जैसे तपोधनियों से क्या यह आशा की जाय? उग्र तपोनिधान शिव, जिन्होंने काम को भस्म किया था, पति के पति और पुत्रों के पिता थे। आज की मनुष्य-जाति क्या इस पुत्रोत्पादन के गम्भीर तत्त्व पर—शिव के कठोर संयमशील जीवन पर—विचार करेगी, जहाँ परम त्याग और तप एवं गार्हस्थ्य जीवन में भेद ही नहीं—दोनों ही जीवन एक साथ निभ रहे हैं?

उस समय असंख्य ऐसे जीवन थे; वह सतयुग था; वह धर्मकाल था; तब पिता होना परम गौरवान्वित और सन्तान उत्पन्न करना परम

पुण्य कर्म था। क्योंकि उन महात्माओं की सन्तानें उनकी अपनी देश, जाति और समाज की अक्षय सम्पत्ति, ज्वलन्त गौरव और जीवं चिह्न थीं। तत्कालीन शास्त्रों में भी सन्तान की बड़ी महिमा है। भग पातञ्जलि ने चरकसंहिता में लिखा है:—

अच्छायश्चैक गन्धश्च निष्फलश्च यथा द्रुमः। अनिष्ट गन्धश्चैकः निरपत्यस्तथा नरः। अप्रतिष्ठश्च नग्नश्च शून्यश्चैकेन्द्रियश्चना। मन्तव्यो निष्क्रियश्चैव यस्यापत्यं न विद्यते।

* * *

बहुमूर्तिर्बहुगुणो बहुव्यूही बहुक्रियः। बहुचक्षुर्बहुज्ञानो बहात्मा च बहुप्रजः। माङ्गल्योयं प्रशस्तोऽयंधन्योयं वीर्यवानयम्। बहु-शाखोऽयमिति च स्तूयते न बहुप्रजः। प्रीतिर्बलं सुखं वृत्तिर्विस्तारो विभवः कुलम्। यशो लोकाः सुखोदर्कास्तुष्टिश्चापत्य संश्रिता। तस्मा-दपत्यमन्विच्छन्गुणांश्चापत्य संश्रितान्।

सन्तान की यह प्रतिष्ठा उस महदुद्देश्य से है। आज भी, विवाह-शादी के अवसरों पर मङ्गलकार्यों के समय पुत्रहीना स्त्री का तिरस्कार किया जाता है, उसकी छाया भी पुत्रवती सुहागिन पर नहीं पड़ने दी जाती, पुत्र-कलत्रहीन जन इस लोक और परलोक में कभी प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं होता। यही कारण है कि क्या नर, क्या नारी—सभी सन्तान की लालसा में भटक रहे हैं। पहले बिना सन्तान कोई नहीं मरता था। अब प्रथम तो सन्तान उत्पन्न ही नहीं होती—अगर हुई भी तो उसका जीवित रहना कठिन है! हमारी भारतीय माताएँ इसी लालसा में मर मिटती हैं। सहस्रों दुष्ट-जनों की बन आती है। कोई पीर साहब, कोई गाज़ी मियाँ, कोई

सैयद साहब, कोई पैग़म्बर आदि को सन्तानोत्पत्ति का साधन बता देते हैं, तो ये सन्तान के मतवाले पागलों की तरह उन्हीं के पास जाकर उनकी भेंट-पूजा में अपने पसीनों की कमाई पानी की तरह बहा देते हैं। ऐसे सैकड़ों पापिष्ठ, नीच और दुराचारी विधर्मियों के अपवित्र चरणों पर अपने नेत्रों के अमूल्य मोती न्यौछावर करते और सन्तान की भीख माँगते जब हम अपनी पूज्य माताओं और बहिनों को देखते हैं, तो हृदय फटने लगता है। पर रुपया-पैसा, धन-ज़ेवर सब लुटा कर भी ये अभागिनी ही बनी रहती हैं। उनका सूखा अस्थिमय शरीर गण्डे-तावीज़ों से भरा रहता है। इन सबको देख कर आँखें भर आती हैं। हा, अभागी भारत सन्तान! वीरप्रसू की यह दुर्दशा! जिनके प्रताप का संसार लोहा मानता था, वे भङ्गी, चमार, डोम और मुसलमानों के पैरों गिर कर सन्तान की भीख माँगती फिरें।

इतनी कुचेष्टाओं पर भी सन्तान का दिन-दिन ह्रास हो रहा है। जिन माताओं ने राम, भीष्म और कृष्ण पैदा किए थे—हिमालय की जिन स्वच्छ कन्दराओं में कपिल, व्यास और गौतम बैठे भाग्यवान् भारत का यश गा रहे थे, जिस देश की वनस्पति और वृक्षों के पत्तों को खा-खा कर गौतम और कणाद ने न्याय और वैशेषिक की गूढ़ फ़िलॉसफ़ी प्रोद्भासित की थी, वही भूमि ऐसी पोच और निकम्मी सन्तान कैसे पैदा करने लगी कि उसे सादर गुरु मानने वाले आज उन्हें मनुष्य-समाज में अपने चरणों में स्थान देना भी अपमानजनक समझते हैं? इसका कारण क्या है? क्या हिमालय की वायु में अब अमृत नहीं रहा? भारत की भूमि क्या अब वैसे अन्न और फल नहीं पैदा करती? गङ्गा में क्या अमृत-शक्ति नहीं रही? यह सब तो वैसे ही हैं, फिर हम सब वैसे क्यों नहीं रहे? गुरुपन

गया, मान गया, धन गया, बल गया—सब गया, मनुष्यत्व भी गया, उस पर भी हम बैठे-बैठे देखें ? इसका कारण क्या है ? हमारी नस्ल क्यों गिर रही है ? मनुष्य को पैदा करने की शक्ति क्यों नष्ट हो गई है ? क्या हम मनुष्य, आदर्श मनुष्य, संसार के सर्वोच्च मनुष्य नहीं पैदा कर सकते ? अवश्य कर सकते हैं, यदि हम चाहें। दुःख की बात यह है कि हमारी रुचि इधर नहीं है। हम तो लम्पटता के दास, विषय-भोग के अभिलाषी हैं। सन्तान तो आप ही पैदा हो जाती है। क्या तीस करोड़ नर-नारियों में एक भी दम्पति राम, भीष्म, कपिल, व्यास, शुक, शङ्कर और दयानन्द नहीं उत्पन्न कर सकता ? देश में ऐसे कितने पिता हैं, जिन्होंने सन्तान पैदा करना सीखा है; और कितने ऐसे पुरुष हैं, जो सन्तान के लिए स्त्री-प्रसङ्ग करते हैं ? अवश्य ही इसका उत्तर शून्य मिलेगा। यह क्या राम और भीष्म की सन्तान के लिए डूब मरने की बात नहीं है ?

हमारे पितृगण हमारी इस पशुता पर हमें जितना कोसें, धिक्कारें और शाप दें, वही थोड़ा है। इस प्राकृतिक नियम की अवहेलना के दण्ड में हमें निर्वंश और कीड़े-मकोड़े से भी नीचा बन जाना चाहिए; और वैसा हमें बन जाना पड़ेगा।

अगर हम माता-पिता बनना सीखते—उन नियमों का पालन करते, जिनकी शास्त्रों में आज्ञा है, तो आज भारत की गुलामी स्थिर न रहती। उसकी वह गुरुपने की पगड़ी, जो उसे बड़े भारी आत्म-त्याग से मिली थी, यों संसार के पैरों से न कुचली जाती।

क्या कोई ऐसा माई का लाल है, जो मनुष्य-जाति की शोभा देने योग्य सन्तान पैदा करने का हौसला मन में रखता हो ? वह सन्तान पैदा

करे; परन्तु अयोग्य व्यभिचारी स्त्री-पुरुष का व्यभिचार के फल-स्वरूप सन्तान पैदा करना मेरी दृष्टि में पाप है ?

योरोप में सन्तान-निरोध का प्रश्न बहुत गर्म है; परन्तु उसकी भित्ति पुण्य पर नहीं, पाप पर है। उस निरोध का अभिप्राय यह है कि यथेच्छ भोग-विलास करते रहने पर भी सन्तान की झंझट न भुगतनी पड़े। योरोप की सामाजिक परिस्थिति ऊपर से चाहे जैसी लुभावनी हो; परन्तु भीतर से वह बहुत ही अस्वाभाविक है। शीघ्र ही समाज के लिए वह जीवन-घातक हो जायगी। मैं तो यह कहता हूँ कि व्यभिचार और इन्द्रिय-परायणता पहले दर्जे का पाप-कर्म है; और उसके फल-स्वरूप सन्तानों का धड़ाधड़ होना उस पाप का उचित दण्ड है। मेरी राय में ये ठोस लोहे के गोले हैं, जो इन पापियों के गले में डालने चाहिए, जिससे ये जगत्-समुद्र में खूब ही गोते खायँ; और अन्त में संयम का पाठ पढ़ें। ये वैज्ञानिक चोर और अपराधी हैं, जो लोगों को इन्द्रिय-वासना तृप्त करने के निष्कण्टक मार्ग बताते हैं; और प्रकृति के स्वाभाविक दण्ड से उन्हें बचाने की तरकीब पेश करते हैं। मेरी इच्छा तो यह है कि जो स्त्री-पुरुष विषय वासना के कीड़े हैं, उनके तो प्रति दिन दो-दो बच्चे मक्खी और मच्छरों की तरह होने ही चाहिए; और मक्खी-मच्छरों की तरह ही उनका जीवन-सुख हराम कर देना चाहिए।

इसमें सन्देह नहीं कि सन्तान बड़ी प्यारी और लुभाने वाली वस्तु है। कौन हृदय है, जो निर्दोष बच्चे का मुस्कराता मुख चूमने की अभिलाषा त्याग सके ? यह भी सत्य है कि वे घर श्मशान तुल्य हैं, जिनमें बच्चों की विशुद्ध क्रीड़ा नहीं होती; परन्तु एक भेड़ के बच्चे को देखिए, जो अपने बाड़े में उछल-कूद कर रहा है। उसकी माता उसे पुकारती है, वह फूलों

गृहस्थ दुख के अगाध समुद्र में आश्रमहीन-सा क्यों ग़ोते खा रहा है ? पति-पत्नी दोनों आपस में प्रेम, श्रद्धा, और विश्वास क्यों नहीं रखते ? देश में व्यभिचार की वृद्धि क्यों हो रही है ? तीन करोड़ विधवाएँ क्यों ख़ून के आँसू बहा रही हैं ? जहर खाकर, कपड़ों में आग लगा कर, कुएँ में गिर कर हमारी बहुत सी बहिनें क्यों मर रही हैं ? पुरुष इस आश्रम से घबरा कर घर छोड़कर भाग जाते हैं, आत्म-हत्या करते हैं ! इत्यादि हृदय को दहलाने वाली अनेक बातों पर क्या कभी आपने कुछ भी विचार किया है ?

यह प्रश्न कुछ कम महत्व का नहीं है ! इस पर ही देश के भले-बुरे का दारोमदार है। यह प्रश्न इस कान सुन कर उस कान से निकाल देने का नहीं है। करोड़ों में शायद सौभाग्य से कोई विरला ही ऐसा गृहस्थ होगा जो सुखी हो ! इस आश्रम में प्रवेश करने के बाद सभी प्रायः पश्चात्ताप किया करते हैं। यहाँ ऐसे मूर्ख मनुष्यों का जिक्र नहीं है, जिन्हें अपने लाभालाभ का कुछ ज्ञान ही नहीं है—जो बिना सींग और पूँछ के पशु हैं।

इस जगत में सुख की इच्छा कौन नहीं करता ? सभी सुख के लिए उत्सुक हैं। जङ्गली पशु, आकाश-गामी पक्षी, कीड़े-मकोड़े, बिलों में, कन्दराओं में और भूमि के अन्दर रहने वाले प्राणी; यहाँ तक कि अणु-परिमाणु तक भी सब सुख के लिए व्याकुल हैं। वे सुख की आशा में—चकवा चकवी के साथ, सिंह सिंहनी के साथ, सर्प सर्पिणी के साथ, वृक्ष लता के साथ, पुरुष स्त्री के साथ मिलने के हेतु व्याकुल हो उठते हैं। मैं शादी करके अत्यन्त सुखी

होऊँगा और अपने द्वारा दस आदमियों को सुखी करूँगा, इसी महत्वाकांक्षा से मनुष्य विवाह करने के लिए अत्यन्त आतुर दिखाई देता है। परन्तु हा! खेद है कि विवाह करने पर वास्तव में कोई भी सुखी नहीं देखा जाता! इसका कोई कारण नहीं है, ऐसा समझ बैठना भूल है। जैसा इस तक़दीर में लिखा होता है वैसा ही होता है, यह उत्तर मूर्खतायुक्त है। जन्म, मृत्यु और विवाह ये तीनों परमात्मा के अधीन हैं, ऐसा मानने वाले ज्ञान-शून्य हैं। जिसके साथ तक़दीर में संयोग बदा होगा उसी से विवाह होगा, ऐसा कहने वाले निरे पाखण्डी हैं। थोड़ा सा विचार कर लेने से ही इन उक्त बातों का खण्डन हो जाता है। जब कि विवाह सुख का मूल समझा जाता है तो ऐसी दशा में मनुष्य विवाह के बाद अभाव, दीनता, चिन्ता और दुख के समुद्र में क्यों डूबता जाता है।? विवाह के बाद अशान्ति की ज्वाला उसे क्यों दग्ध करती है? विवाह करके मैंने अपने आप कुल्हाड़ी मार ली, मुझसे बड़ी भूल हुई, यह बात बार-बार मुँह से क्यों निकला करती है?

इन उपरोक्त सब बातों का एकमात्र उत्तर यह है कि बिना तैयारी के कार्य-क्षेत्र में उतर पड़ने का ही यह सर्वनाशक भयङ्कर परिणाम है। किसी भी कार्य को ले लीजिए, बिना तैयारी के कदापि नहीं हो सकता। जो मूर्ख बिना तैयारी के काम करता है, वह उस कार्य में सफलता नहीं पाता और अन्त में सिर धुन-धुन कर पछताता है। यदि किसी को उपदेशक बनना है तो सबसे पहिले उसे पढ़कर, सुनकर, और देखकर स्वयँ उपदेश प्राप्त करना

होगा, तभी वह उपदेश दे सकेगा अन्यथा प्रयत्न निष्फल हो जावेगा। युद्ध-क्षेत्र में वही वीर विजयी होगा, जिसने कि पुरुषार्थ के अतिरिक्त शस्त्र-परिचालन का वर्षों तक अच्छा अभ्यास किया हो—जो रण-भूमि में जाने की पूर्ण तैयारी कर चुका हो। इसी प्रकार वही व्यापारी वाणिज्य-व्यवसाय द्वारा लाभ उठावेगा, जिसने कि इस कार्य को करने के पूर्व अच्छी तरह सोचा-विचारा है और खूब तैयारी कर ली है। किसी भी काम को उदाहरणार्थ ले लीजिए और विचारिए कि बिना तैयारी के वह नहीं हो सकता। दर्जी यदि अपना कार्य चलाकर उसमें कृतकार्य होना चाहता है तो पहिले उसे कपड़े की काट-छाँट, कतर-ब्योंत, सीखने के साथ ही साथ सुई, धागा, कैंची, गज, मैशीन आदि की तैयारी करनी पड़ेगी। बिना उक्त तैयारी के यदि मनुष्य चाहे कि मैं दर्जी का काम कर लूँ, तो यह बिलकुल असम्भव बात है। छोटी से छोटी बात लीजिए जो कि हम लोगों के यहाँ दैनिक कार्य है—रोटी बनाकर खाने के लिए अन्न, सूप, चक्की, चलनी, तवा, चूल्हा, जल, अग्नि, पात्र आदि बहुत सी वस्तुएँ संग्रह करनी पड़ती हैं। बिना इस तैयारी के हमारा भोजन नहीं बन सकता। सारांश यह है कि काम छोटा हो चाहे बड़ा, प्रत्येक में सबसे पहिले उचित तैयारी की आवश्यकता है। बिना तैयारी के किया हुआ कार्य कदापि पूर्ण, सफल और उत्तम नहीं हो सकता।

जब कि छोटे-छोटे कामों के लिए भी बड़ी-बड़ी तैयारियाँ करनी पड़ती हैं, और तैयारी में जरा सी भी भूल होने पर उस

भूल का प्रायश्चित्त करना पड़ता है, तो गृहस्थाश्रम जैसे महत्व के तथा उत्तरदायित्वपूर्ण आश्रम में बिना तैयारी के पदार्पण करना भूल नहीं तो और क्या है? गृहस्थाश्रम का उद्देश क्या है? पति के प्रति पत्नी का और पत्नी के प्रति पति का कर्त्तव्य क्या है? गृहस्थाश्रम में किस प्रकार स्वर्गीय सुख का अनुभव प्राप्त किया जा सकता है? कब, कैसी और कितनी सन्तान पैदा करनी चाहिए? उनका लालन-पालन करने में कितनी सावधानी की आवश्यकता है? पिता होने का अधिकारी कौन है? माता कौन बन सकती है? इत्यादि अत्यावश्यक बातों का ज्ञान प्राप्त किए बिना गृहस्थ बन जाने से ही आज गृहस्थाश्रम अत्यन्त दुख का सामान बन रहा है। देश की यह अधोगति इसी आश्रम की अधोगति के कारण हुई है।

देश में मृत्यु-संख्या के साथ ही साथ जन-संख्या भी बढ़ रही है। बच्चों के पालन-पोषण का प्रबन्ध तो दूर रहा, बल्कि जिन्हें स्वयँ अपने पेट भरने की चिन्ता है उन मानव-दम्पति के आठ-आठ, दस-दस सन्तानें हैं। सन्तानें होना ही चाहिए, पेट भर खाने को मिले या न मिले। कोठरी तो एक ही है, स्त्री के साथ सोना ही पड़ता है। एक दो होकर रह जावें तो भी कुशल हो! यहाँ तो मुर्गी के अण्डे की तरह पैदा होते ही जाते हैं। किसी भिखारिन की ओर दृष्टि डालिए। लज्जा-निवारण तक के लिए उसके शरीर पर वस्त्र नहीं है, किन्तु एक गोद में, एक पीठ पर, एक कन्धे पर और दो आगे-पीछे, और कितने ही सैनिकों की तरह मैले-कुचैले, भूखे और नङ्गे

बालक दौड़ते जाते हैं। एक दुर्भिक्ष पड़ते ही जहाँ-तहाँ शिशु, बालक, युवक, वृद्ध, और वृद्धाओं की लाशों का ढेर दिखाई देता है। अनाहार और अल्पाहार के कारण इस लोक से वे चल बसते हैं। जो जीवित हैं, वे मुर्दे बने हुए हैं। कहीं माता पेट की ज्वाला से पीड़ित हो, अपनी सन्तान को फेंक कर इधर-उधर दौड़ती फिर रही है, तो कहीं अपने हृदय के टुकड़े बच्चे के हाथ का ग्रास छीनकर उसकी माता खा रही है। कुत्तों के आगे से दोने उठाकर चाटते हुए असंख्य भारतवासी मिलेंगे। हा! लिखते कलेजा काँपता है कि भूखों मरते लोगों ने अपनी सन्तानों को जिन्दा ही भूमि में गाड़ दिया और अपने प्यारे बच्चों को अपने हाथों से भून-भून कर खा गए, इससे बढ़कर और क्या घोर पैशाचिक कार्य होगा?

बिना तैयारी के किए गए कार्यों का परिणाम निर्धनों में उपरोक्त है, तो धनिकों और साधारण स्थिति के मनुष्यों में दूसरे प्रकार का है। उनके सैकड़ों रुपये दवा-दारू, गण्डे-मन्तर, जादू-टोने और फूँकने-झाड़ने में ही बरबाद होते रहते हैं। जरा भी शान्ति नहीं रहती। सर्वत्र हाहाकार मचा रहता है। अगणित सन्तानें माता-पिता अपनी भूलों से, अपने हाथों भूमि और अग्नि में समर्पण कर देते हैं। करोड़ों बाल-विधवाएँ बैठी हैं—करोड़ों बाल-विधुर मौजूद हैं। व्यभिचार का बाजार दिन-प्रतिदिन गर्म हो रहा है। महर्षि वाल्मीकि ने अपनी रामायण में श्रीरामचन्द्र जी के समय का वर्णन लिखा है, उसे पढ़कर और आजकल की इस अधोगति को देखकर जी भर आता है। हम वाल्मीकि के उस वर्णन को यहाँ लिखते हैं:—

न च स्म वृद्धा बालानां प्रेत कार्याणि कुर्वते ।

महाभारत में भी लिखा है :—

न बाल एव म्रियते तदा कश्चिज्जनाधिप ।

न च स्त्रियं प्रजानाति कश्चिद् प्राप्त यौवनः ॥

—आदिपर्व

अर्थात्—माता-पिता के सामने (योद्धाओं के अतिरिक्त) किसी की सन्तान नहीं मरती थी। स्त्रियाँ सभी पति-भक्तिपरायणा और सधवा होती थीं।

कैसा आनन्द, कैसा सुख, कैसी शान्ति इन श्लोकों में भरी है। परन्तु, आज तो कुछ का कुछ हो गया। पवित्र गृहस्थाश्रम दुखों का क्रीड़ास्थल हो गया। इसमें हमारा ही दोष है। हम गृहस्थाश्रम की पूर्ण तैयारी किए बिना ही उसमें कूद पड़ते हैं, इसका जो फल होता है वह हमारी आँखों के आगे है।

गृहस्थाश्रम के पूर्व जिस एक आश्रम का विधान हमारे शास्त्रकारों ने किया है, वही इसकी तैयारी है—वही इस कार्य-क्षेत्र की भूमिका है। अर्थात्, बिना उचित ब्रह्मचर्य के गृहस्थाश्रम निस्सार और व्यर्थ है। ब्रह्मचर्य क्या है ? इस विषय को अब हम आगे समझावेंगे।

(२) ब्रह्मचर्य

महर्षि मनु कहते हैं :—

चतुर्थ मायुषो भागं मुषित्वाद्यं गुरोर्द्विजः ।

द्वितीय मायुषो भागं कृत दारो गृहे वसेत् ॥

अर्थात्—मनुष्य को चाहिए कि आयु के प्रथम चौथे भाग में गुरु के यहाँ ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, और फिर दूसरे भाग में अर्थात् २५ वर्ष की वय से ५० वर्ष तक विवाह करके गृहस्थाश्रम में रहे।

यहाँ पच्चीस वर्ष तक गृहस्थ रहने के लिए पहिले पच्चीस वर्ष के अखण्ड ब्रह्मचर्य का विधान है। वह गृहस्थाश्रम जैसा होता था उसका हम आगे चलकर यथास्थान जिक्र करेंगे। सारांश यह है कि विधिपूर्वक गृहस्थ रहने के लिए २५ वर्ष के ब्रह्मचर्य की आवश्यकता है। किन्तु हा! दुर्भाग्यवश हम लोग रात-दिन वीर्य-पात करते हैं और ब्रह्मचर्य का नाम भी नहीं लेते! शारीरिक पूर्ण विकास भी नहीं होने पाता कि हम लोग जननेन्द्रिय का उपयोग करने लगते हैं। फल-स्वरूप जीर्ण, शीर्ण, अल्पायु, रोगी, दुर्बल, मांस-रक्त-हीन सृष्टि को देख रहे हैं। ब्रह्मचर्य क्या है, इसकी व्याख्या हमारे पूर्वाचार्यों ने इस प्रकार की है :—

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा।
सर्वत्र मैथुनत्यागो ब्रह्मचर्यम् प्रचक्षते॥

—याज्ञवल्क्य

अर्थात्—मन से, वचन से और शरीर से सदा सर्वदा सब प्रकार के मैथुनों से दूर रहने की साधना को ब्रह्मचर्य कहते हैं।

लिङ्गपुराण में भी लिखा है :—

मैथुनस्या प्रवृत्तिर्हि मनोवाक्काय कर्मणा।
ब्रह्मचर्य मितिप्रोक्तं यतीनाम् ब्रह्मचारिणाम्॥

इस श्लोक का तात्पर्य और पूर्वश्लोक का अर्थ एक ही है। मैथुन आठ प्रकार के होते हैं :—

स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्।
सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्ति रेव च॥
एतन्मैथुनमष्टाङ्गम् प्रवदन्ति मनीषिणः।
एतद्विरहितं कर्म ब्रह्मचर्य मुदाहृतम्॥

अर्थात्—स्त्री विषयक स्मरण, वर्णन, उसके साथ खेलना, देखना, एकान्त स्थान में वार्तालाप करना, सङ्कल्प, उत्साह, और प्रत्यक्ष मैथुन, ये आठ प्रकार के मैथुन हैं। जो व्यक्ति इनसे रहित है, वही ब्रह्मचारी है।

यही बात महाभारत के शान्तिपर्व में इस प्रकार वर्णित है :—

लिङ्ग संयोगहीनं यच्छब्दरूपशं विवर्जितम्।
श्रोत्रेण श्रवणं चैव चक्षुषा चैव दर्शनम्॥
वाक् सम्भाषा प्रवृत्तं यत्तन्मः परिवर्जितम्।
बुध्या चाध्यावसायीति ब्रह्मचर्यमकल्मषम्॥

ब्रह्मचर्य का असली रूप उक्त श्लोकों से भली-भाँति प्रकट हो जाता है। जो लोग ब्रह्मचर्य का रूप लँगोटी लगाकर, भिक्षा माँगकर काल-यापन को समझते हैं, वे भूल करते हैं। ब्रह्मचर्य का असली अर्थ वीर्य-रक्षा करना है। जिसने वीर्य-रक्षा की है उसी ने मृत्यु पर अपना पूर्ण अधिकार कर लिया है। जो मनुष्य जीवन भर नियमपूर्वक वीर्य की रक्षा करते हैं, जो बिना आवश्यकता के

जननेन्द्रिय द्वारा वीर्य-पात नहीं करते उनकी कान्ति, बल, मेधा, बुद्धि और आयु बढ़ती है। वे स्थिर-यौवन पाकर, सुख और शान्तिपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करते हैं। यह बात प्रलोभन मात्र नहीं है—बिलकुल सत्य है। हमारे इतिहास इसके साक्षी हैं। महाबली राम-दूत हनुमान का समुद्रोलङ्घन, लङ्कादहन आदि कार्य हम लोगों ने बारम्बार कथाओं में पढ़ा और सुना है। महर्षि जमदग्नि के पुत्र महाप्रतापी परशुराम क्या कुछ कम थे। उनका नाम सुनकर ही बड़े-बड़े वीर क्षत्रियों के हाथों से अस्त्र-शस्त्र छूट पड़ते थे और शरीर से पसीना निकलने लगता था। अत्यन्त बलशाली राजर्षि भीष्मपितामह इसी वीर्य-रक्षा के द्वारा इच्छा-मरणी हुए थे। जब तक उन्होंने स्वयँ नहीं मरना चाहा तब तक उन्हें कोई भी नहीं मार सका। यदि महाभारत के मैदान में अपनी इच्छा से, बाणों से बैंगन की तरह विद्ध होकर भूमि पर गिर पड़े तो क्या हुआ? फिर भी मरने की इच्छा न होने के कारण लगभग दो महीने तक उत्तरायण सूर्य की प्रतीक्षा में उन्हीं बाणों पर जीवित पड़े रहे। सूर्य उत्तरायण होते ही अपनी इच्छा से स्वर्ग-यात्रा की। इससे बढ़कर ब्रह्मचर्य की महत्ता का उदाहरण अन्य नहीं हो सकता। योगशास्त्र में भी योगिराज शिवजी ने कहा है :—

मरणं विन्दु पातेन जीवनं विन्दु धारणात्।

अर्थात्—वीर्य-पात ही मृत्यु, और वीर्य-रक्षा ही जीवन है।

वेद में लिखा है :—

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्यु मुपाघ्नत ।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वऽ राभरत् ॥

—अथर्व

अर्थात्—ब्रह्मचर्य-रूप तप से देवताओं ने मृत्यु को दूर किया है। इन्द्र भी ब्रह्मचर्य के द्वारा ही देवताओं को तेज प्रदान करता है।

कुछ दैववादी, भाग्य के भरोसे पर रहने वाले आलसी तथा अज्ञानी पुरुषों ने संसार में ऐसा भ्रम फैला दिया है कि मृत्यु अनिवार्य है। जो कुछ भी विधाता ने भाग्य में लिख दिया है, वह अमिट है, फिर ब्रह्मचर्य पालने से क्या लाभ ? इत्यादि। ऐसे लोगों की बातों में नहीं आना चाहिए। वेदों में ऐसे अनेक मन्त्र आए हैं जिनमें मृत्यु को दूर हटाने तथा उसे पर्वत के नीचे दबा देने का उपदेश है। तात्पर्य यह है कि पुरुषार्थ द्वारा मनुष्य मृत्यु को हटाकर अपमृत्यु के भय से मुक्त हो सकता है। यह पुरुषार्थ उसी में हो सकता है जिसने आजन्म वीर्य-रक्षा और ब्रह्मचर्य-व्रत को नियमपूर्वक पाला हो। आयुर्वेद में लिखा है :—

शरीरे सर्वधातूनां सारं वीर्यं प्रकीर्त्तितम् ।
तदेव चौजस्तेजश्च बलं कान्ति पराक्रमः ॥
यस्मिञ्छुद्धे शरीरस्य गतिः शुद्धाभवेत्सदा ।
ब्रह्मचर्य दशायां हि क्षीणे क्षीणः पराक्रमः ॥
धैर्य तेजोविरहितः रोगग्रस्तकलेवरः ।
सारहीनं यथावस्तु तथैव स नरः स्मृतः ॥

अर्थात्—शरीर में समस्त धातुओं का सार एकमात्र वीर्य ही है। वही ओज, तेज, बल, कान्ति और पराक्रम-रूप से शरीर में व्याप्त है। ब्रह्मचर्य-काल में वीर्य के क्षीण होने से मनुष्य पराक्रम तथा धैर्य और तेजोहीन होकर अनेक रोगों से घिर जाता है। जैसे सारहीन पदार्थ रद्दी होता है उसी तरह वीर्यहीन पुरुष बेकाम होता है।

जो लोग ब्रह्मचर्य-पालन नहीं करते वे नपुंसक हो जाते हैं :—

ब्रह्मचर्य विहीनास्ते स्वयं क्लीवत्वमागताः।

* * *

ब्रह्मचर्य विहीनत्वाद्रोगग्रस्त कलेवरः।
इहाऽऽमुष्मिक कार्येषु ह्य समर्थ तनुर्भवेत्॥
मेह क्लीबादि भी रोगैर्दुःखितो विमनाः सदा॥"

अर्थात्—ब्रह्मचर्य के पालन न करने से मनुष्य सब कामों में असमर्थ होता है। प्रमेह, नपुंसकता आदि रोगों से दुखी होकर सर्वदा दीन-हीन रहता है।

ब्रह्मचर्यविहीनत्वाद योनि मैथुनस्तथा।
हतशुक्र हतोत्साहाः हत बुद्धिपराक्रमाः॥
अयुजाल्पजा वा या म्लानध्वज युतापवै।
समर्था मनने चैवा ममर्थाः परिरम्भने॥

अर्थात्—थोड़ी उम्र में ही ब्रह्मचर्य के नष्ट होने से ये हस्त मैथुन, गुदा-मैथुन आदि अप्राकृतिक मैथुनों द्वारा अपना वीर्य नष्ट कर देते हैं। ऐसे

मनुष्यों के सन्तान नहीं होती। यदि होती भी है तो जीवित नहीं रहती। जननेन्द्रिय की शिथिलता के कारण पुरुष स्त्री के काम का ही नहीं रह जाता। गृहस्थाश्रम की तैयारी के लिए एकमात्र तैयारी ब्रह्मचर्य का पालन ही है।

आयुर्वेद कहता है :—

> यशो वै ब्रह्मचर्यं हि यतः पुरुषार्थ साधनः।
> ब्रह्मचर्य प्रभावेण नरः प्राप्नोति गौरवम्॥
> ब्रह्मचर्यं शरीरस्य साधनं परमं मतम्।
> ब्रह्मचर्य विहीनानाम् जीवनं हि निरर्थकम्॥

अर्थात्—ब्रह्मचर्य ही परम यश है, क्योंकि बिना ब्रह्मचर्य के मनुष्य कुछ भी पुरुषार्थ नहीं कर सकता। ब्रह्मचर्य के प्रभाव से मनुष्य गौरव को पाता है। ब्रह्मचर्य ही शरीर का परम साधन है। ब्रह्मचर्य के बिना यह मानव-जीवन व्यर्थ है।

अब यहाँ पर यह प्रश्न होता है कि यदि यह ब्रह्मचर्य इतना आवश्यक है तो किस उम्र तक इसका अनुष्ठान किया जावे? इसका उत्तर यह है कि जिन्हें गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना हो वे २५ वर्ष की अवस्था तक तो अवश्य ही वीर्य-रक्षा करें। इस उम्र के पूर्व शरीर का पूर्ण सङ्गठन नहीं हो चुकता। पचीस वर्ष की अवस्था तक शरीर का वृद्धि-विकास होता रहता है। शरीर पूर्णतया विकसित नहीं होने पाता और वीर्य-पात द्वारा उसका नाश आरम्भ कर दिया जाता है, इससे बढ़कर मूर्खता की बात और क्या हो सकती है?

यौवन के लक्षणों का सम्यक् रूप से प्रकाश होने पर शरीर की हड्डियाँ, शिराधमनी आदि पुष्ट नहीं हो चुकतीं। शरीर के भीतर ऐसी अनेक हड्डियाँ हैं जो २५ वर्ष की अवस्था के पूर्व पूर्णतया पुष्ट नहीं होतीं। पाँव की हड्डी स्कैपुला (scapula) और पेल्विस पूरी तौर से २५ वर्ष की अवस्था के पूर्व पूर्णता या लाभ नहीं कर सकतीं। अनुभव द्वारा जाना गया है कि २५ वर्ष की अवस्था के पूर्व शरीर पूर्णवृद्धि नहीं पाता, अतएव पचीस वर्ष तक वीर्य-रक्षा करना परमावश्यक है। इसके पूर्व जो वीर्य का व्यय आरम्भ कर देते हैं उनका शरीर घुने बाँस की तरह बन जाता है। यही बात आयुर्वेद ने कही है :—

पञ्चविंशतिपर्यन्तं विंशतिं तु विशेषतः।
ब्रह्मचर्यं न चरति ज्ञात्वावाऽज्ञानतः पुमान्॥

अर्थात्—पचीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। यदि २५ वर्ष तक न कर सके तो २० वर्ष तक तो अवश्य ही वीर्य-रक्षा करनी चाहिए।

सुश्रुताचार्य ने भी यही बात कही है :—

ऊन षोडश वर्षायाम प्राप्तः पञ्च विंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान गर्भं कुक्षिस्थ स विनश्यति॥

अर्थात्—जो पुरुष पच्चीस वर्ष से कम उम्र का है वह गर्भाधान करने के योग्य नहीं है।

यहाँ आयुर्वेद इस प्रकार कह रहा है तो वहाँ लड़के लड़कियों के साथ उनके माता-पिता अत्याचार कर रहे हैं। आज देश में

अज्ञानता का इतना प्रभुत्त्व स्थापित हो गया है कि कन्या यदि पितृ-गृह में रजस्वला हो जावे तो माता-पिता भाई आदि आत्मीय जन नरक-गामी हो जाते हैं ! माँ-बाप रोने लगते हैं ! रजोदर्शन के बाद ही उसे सन्तान पैदा करने योग्य मान बैठते हैं !

बाल्यावस्था के बाद प्राकृतिक नियमानुसार जीव धीरे-धीरे विकास की ओर अग्रसर होता है और एक दिन यौवन को प्राप्त होता है। प्रायः सभी देशों के पुरुषों को पन्द्रहवें या सोलहवें तथा स्त्रियों को ग्यारहवें अथवा बारहवें वर्ष उनकी देहों पर यौवन-पुष्प विकसित एवँ यौवन-चिन्हों का उदय होने लगता है। साथ ही साथ उन सबों के शरीर पर न जाने कौनसा या किस विषय का आनन्द-तूफ़ान बहकर उनके समस्त भावों को लहरा देता है। यौवन के आते ही यद्यपि शरीर के सभी यन्त्र पुष्ट हो जाते हैं, और मन के भावों में विकास हो उठता है, तथापि वीर्य-पात करने का यह समय नहीं है। इस समय पुरुषों के ओठों पर, गालों पर, बग़ल में, पेट पर तथा जननेन्द्रिय पर बाल उगने लगते हैं।

इन्हीं दिनों सन्तानोत्पादक-इन्द्रिय भी पुष्ट होने लगता है। वीर्य-कोष में वीर्य पैदा होने लगता है। स्त्रियों के भी पुरुषों की तरह ओंठ और गालों के अतिरिक्त अन्य स्थानों में बाल उगने लगते हैं। छाती पुष्ट हो जाती है और नितम्ब-भाग स्थूल हो जाता है। डिम्ब-कोष डिम्बों से पूर्ण होने के कारण रजोदर्शन हो जाता है। यह रज गर्भाशय से होता हुआ योनि द्वारा बाहर आता है। इस अवस्था में नर-नारियों का भाव बड़ा ही अदम्य हो जाता

हैं। अपने जननेन्द्रिय को काम में लाने के लिए निरन्तर व्याकुल रहते हैं। किन्तु, वास्तव में काम-पिपासा के शान्त करने का यह समय नहीं है। इस समय यदि जननेन्द्रिय से काम किया गया तो देहस्थ समस्त यन्त्र पुष्ट न होकर क्षीण होने लगते हैं।

उक्त चिन्हों के प्रकाशित होने पर केवल चार-पाँच वर्ष तक ब्रह्मचर्य पालन करने से दैहिक समस्त अवयव पूर्णतया पुष्ट हो जाते हैं। जो लोग इस अवस्था में ब्रह्मचर्य-व्रत को भङ्ग नहीं करते वे ही सुख, शान्ति, चिरायु आदि प्राप्त करते हैं। यही समय पाकदामन रखने का है। यही समय अपने जीवन को आनन्द-प्रद अथवा दुखी बनाने का है। इस यौवनावस्था के आरम्भ में जिसने कामदेव को अपनी शक्ति से दमन कर लिया, बस उसने ही मानव-जीवन का सच्चा आनन्द प्राप्त कर लिया। कहा है :—

नवे वयसियः शान्त सशान्त इति कथ्यते।
धातु पुक्षीयमाणेपु शमः कस्य न जायते॥

अर्थात्—जो किशोरावस्था में इन्द्रिय-संयम करता है वही शान्त कहाता है। जवानी का जोश निकल जाने पर तो आपही आप शान्त होना पड़ता है।

इस अवस्था में वीर्य बनकर रक्त में घुलता है और शरीर के समग्र अवयवों का पोषण तथा वृद्धि-विकास करता है। पूर्वकाल में बालकों की यह अवस्था ऋषियों की पूर्ण-कुटियों में व्यतीत होती थी। बालक २५ वर्ष की अवस्था तक ब्रह्मचर्य-पूर्वक विद्याध्ययन में तल्लीन रहते थे। ऋषियों के आश्रम बस्ती से बिलकुल अलग पर्वतों

या जङ्गलों में होते थे। वहाँ सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य रहता था। ऐशोआराम की कोई वस्तु नहीं रहती थी। चित्त को चञ्चल करने वाले प्रलोभनों की वहाँ छाया भी नहीं पड़ती थी। यही कारण था कि उन पवित्र आश्रमों में जाकर ब्रह्मचारी, मन में बुरे विकार पैदा करने वाले प्रलोभनों से बचा रहता था। आजकल शहरों में रहने वाले बालक अनेक प्रकार के प्रलोभनों और दुष्टों की सङ्गति में रहकर आहार-विहार द्वारा अपने चरित्र को इतना भ्रष्ट कर लेते हैं कि जीवन से ही हाथ धो बैठना पड़ता है। कवि ने कहा भी है कि :—

हीय तेहि मति पुंसा हीनैः सह समागमात् ॥

नीचों सङ्गति से बुद्धि भी नीच हो जाती है। इस यौवनावस्था में बहुत ही सम्भल कर चलना चाहिए। इस अवस्था में माता-पिता को अपनी सन्तान के ऊपर विशेष ध्यान रखना चाहिए। इस अवस्था में या इसके पूर्व जो लोग अपने बच्चों का विवाह कर देते हैं वे तो नर-हिन्सक क़स्साई से भी बढ़ कर हैं।

दशवर्षा भवेत् कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥
माताचैव पिताचैव ज्येष्ठो भ्राता तथैवच ।
त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्या रजस्वला ॥

पण्डित काशीनाथ के बनाए उक्त श्लोकों ने ही देश में बाल-विवाह का बीजारोपण अच्छी तरह किया है। इन्हीं दो श्लोकों के कारण भारत का कोना-कोना बाल-विधवाओं से भर गया है। परन्तु, हमारे

पूर्वाचार्यों ने अपने ग्रन्थों में ३६ बार पिता के घर कन्या का ऋतुमती होने के बाद विवाह करने का विधान बताया है। यह ऋषिमत आयुर्वेद से भी मिलता है। देखिए, महर्षि सुश्रुत लिखते हैं :—

अथास्मै पञ्च विंशति वर्षाय षोडषवर्षां।
पत्निभावहेत पित्र्य धर्मार्थ काम प्रजाः प्राप्स्यतीति ॥

सोलह वर्ष की कन्या और पच्चीस वर्ष का पुरुष ही विवाह के योग्य माना है। किन्तु, यहाँ की तो गति ही विचित्र है। युवावस्था के आ पहुँचने के कुछ पहिले ही अर्थात्, लड़कपन के समाप्त हो जाने पर यहाँ के बालक-बालिका पूर्ण यौवन-प्राप्त मनुष्य की भाँति कामोन्मत्त दिखाई देने लगते हैं। ऐसे समय में यदि दैवयोग से कुसङ्गति हो गई तो फिर कहना ही क्या है, पूरा अधःपतन हो जाता है। इस समय उन्हें कोई शिक्षा देने वाला नहीं होता। माता-पिता की दृष्टि में यह लज्जा का विषय है। शिक्षक-शिक्षिका—यदि यूनिवर्सिटी ने कोर्स में ऐसी कोई पुस्तक रख दी होती तो उन्हें रटा देते। इस आवश्यकीय विषय की अवहेलना का फल यह हुआ कि अनेक दुश्चरित्र, रोग-ग्रस्त नर-नारियों तथा उनके पाप के परिणाम-स्वरूप अल्पायु तथा दुर्बल बच्चों से दिनोंदिन भारतवर्ष भरता चला जा रहा है!

काम की प्रवृत्ति को कभी बुरी नहीं कहा जा सकता, यदि वह उचित समय पर उचित रीति से ही हो। काम की प्रवृत्ति केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए ही मनुष्य की देह में होना उचित

है। जो इस प्रवृत्ति का अनुचित व्यवहार करते हैं, वे महापापी हैं। काम को "मनोज" कहते हैं। अर्थात्, इसकी उत्पत्ति मन में होती है। मनुष्य यदि चाहे तो अपनी इच्छा-शक्ति द्वारा अपनी इस मानसिक प्रवृत्ति का दमन कर सकता है। यह संयम-गुण प्रत्येक मनुष्य में होना चाहिए। इसी संयम का नाम "ब्रह्मचर्य" है।

मनुष्य अस्वाभाविक उपायों द्वारा भी अपने जननेन्द्रिय को काम-वासना की ओर प्रवृत्त कर बैठता है। कुछ लोग कुसङ्गति में पड़कर अन्य उपायों द्वारा अपना ब्रह्मचर्य नष्ट कर देते हैं। आजकल लोग काम-चेष्टा की उत्तेजना से उत्तेजित होकर जिन अप्राकृतिक उपायों द्वारा अपना वीर्य पात करते हैं, उन्हें मुष्टि-मैथुन, गुदा-मैथुन, पशु-मैथुन आदि कहते हैं। अब आगे हम इन ब्रह्मचर्य-घातक अप्राकृतिक मैथुनों पर विचार करेंगे।

(३) अप्राकृतिक मैथुन

(मुष्टि मैथुन)

आजकल का वायु-मण्डल ही इस प्रकार का बन गया है कि उसमें किसी बालक को इन्द्रिय-परिचालन विषयक ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता ही नहीं रही। आज से पचास वर्ष पूर्व के मनुष्य इतने इन्द्रिय-लोलुप नहीं होते थे जितने कि आज के हैं। पचास वर्ष पूर्व के बालक १५-१६ वर्ष की उम्र तक यह भी नहीं जानते थे कि जननेन्द्रिय से सिवा पेशाब करने के अन्यकार्य भी किया जा सकता है या नहीं, किन्तु आजकल हम चार-पाँच वर्ष के बालक-बालिकाओं

को जननेन्द्रिय का घर्षण करते तथा उनका जवान पुरुष-स्त्रियों की भाँति उपयोग करते देखते हैं। इसमें बच्चों का तिलमात्र भी दोष नहीं है। यह पालकों की ग़लती है।

उनके माता-पिता अथवा अन्य आत्मीय जन जिनमें उनकी शैशवावस्था व्यतीत होती है, वे अपने बालकों के आगे ऐसे कार्य करते हैं जिनका कि वे स्वाभाविक रीति से गली-गली में उपयोग करते फिरते हैं। इस विषय पर हम आगे चलकर खुलासा लिखेंगे। यहाँ हमें यह दिखाने के लिए इसे लिखने की आवश्यकता पड़ी कि बालक-बालिकाओं में काम-विकार का प्रारम्भ कैसे और कहाँ से होता है। तात्पर्य यह है कि इन्द्रिय क्या पदार्थ है और उससे क्या-क्या काम लिए जा सकते हैं? यह बात एक बालक आजकल के ज़माने में बख़ूबी जानता है। इसका प्रभाव बहुत दिनों से उसके मन और देह पर हो रहा है। शैशवावस्था से ही इन्द्रिय-वेग उसे चञ्चल और अधीर कर रहा है। विवाह होने के अभी वर्षों बाक़ी हैं, लेकिन वह अच्छी तरह जानता है कि इन्द्रिय-परिचालन कैसे होता है?

बचपन तो जैसे तैसे करके निकल गया। इन्द्रिय-सुख ने उसे अधिक व्याकुल नहीं किया। देखा-देखी, कभी-कभी अनिच्छापूर्वक अथवा कुसङ्गति के कारण जो कुछ भी किया सो यों ही। कुछ विशेष आनन्द भी नहीं आया, क्योंकि अभी किशोरावस्था के नवीन भावों का हृदय में उदय नहीं हुआ था। जब कि पन्द्रह-सोलह वर्ष की अवस्था में पदार्पण किया तब उसे पृथ्वी एक नए

रूप में ही रही मालूम पड़ने लगी। अब उसे कामोत्तेजक बातें अधिक प्रिय लगने लगीं। कन्याओं के मुख अब उसे अधिक प्रिय मालूम होने लगे। अपने प्रिय मित्रों के साथ इस विषय की चर्चा करने में विशेष सुख मालूम होने लगा। बिना दाढ़ी-मूछों के मनुष्यों के गालों पर तथा कुचों पर अब अधिकतर दृष्टि जमने लगी। एकान्त में अपने साथियों से अब स्त्री-विषयक वार्तालाप सुनने की ही अभिलाषा रहने लगी। नग्न चित्रों को देखते समय मन को एक प्रकार का विशेष आनन्द प्राप्त होने लगा। सारांश यह कि वर्षा-ऋतु में बादलों को देखकर जिस प्रकार मोर नाचने लगता है, उसी प्रकार यौवन-प्राप्त किशोर मनुष्य भी नए भावों को देखकर प्रसन्नता प्रकट करने लगा।

अब उसे अपने शरीर में परिवर्त्तन दिखाई पड़ने लगा। उसके शरीर के खाली स्थान भरने लगे हैं। ग्रीष्म-ऋतु में सूखी हुई नदी के समान, उसके शारीरिक शुष्क और शून्य स्थान अब धीरे-धीरे उसी प्रकार भरने लगे, जिस प्रकार वर्षा-काल में जलाशय जलपूर्ण होने लगते हैं। बगल और तलपेट के नीचे छोटे-छोटे बाल जमते दिखाई पड़ने लगे। अब वह दर्पण में अपना मुँह बार-बार देखकर प्रसन्न होता है—उसके ओठों पर छोटे-छोटे बाल दिखाई पड़ने लगे हैं। यद्यपि उसने अनेक पुरुषों को दाढ़ी-मूँछयुक्त देखा है और यह अच्छी प्रकार जानता है कि पुरुषों को यह सब कुछ होता है, तथापि वह अपने शरीर पर इन्हीं पुरुषत्व-सूचक चिन्हों को देखकर विस्मय करता है। इतने पर ही वह चुप रहता

तो ठीक होता, किन्तु अब इस नवीनता की चर्चा में उसका मन लगने लगा। वह अपने को अब जवान समझने लगा। उसने अपने को इन्द्रिय-परिचालन के लिए योग्य समझ लिया।

अब जब कभी एकान्त में पेशाब करते समय, स्नान करते समय अथवा धोती या पायजामा पहिनते समय उसकी दृष्टि अपनी मूत्रेन्द्रिय पर पड़ जाती है तो उसके मन में एक विशेष प्रकार की सनसनी सी मालूम होने लगती है। पहिले भी स्नान के समय या वस्त्र बदलते समय वह अपनी इन्द्रिय को देखा करता था किन्तु तब उसके लिए मन में कुछ भी विचार उत्पन्न नहीं होते थे उस समय ध्यान देने योग्य कोई भी बात उसे दिखाई नहीं देती थी अब उसके मूत्र-मार्ग पर छोटे-छोटे रोएँ दिखाई देते हैं। मूत्र दण्डिका पहिले की अपेक्षा अधिक मोटी और लम्बी दिखाई पड़ने लगी है। अब उस पर ज़रा भी हाथ छू गया कि उत्तेजित हो गया। स्त्री-विषयक या इसी प्रकार की अन्य गुप्त चर्चाओं को सुनते ही स्प्रिङ्गदार वस्तु की तरह उत्तेजित हो जाता है और बहुत देर तक उसी दशा में रहता है। अब उसे शान्त करने के लिए उसकी इच्छा होती है। इसकी उत्पत्ति और निवृत्ति का कारण जानने की किसकी इच्छा नहीं होती? बस, इस इच्छा के जाग्रत होने से ही किशोरवय के बालक इन्द्रिय चलाना आरम्भ कर देते हैं। इस समय वे ऐसी ही सङ्गति की खोज में रहते हैं। खोजने पर इस जगत में सभी वस्तुएँ मिल जाती हैं। फिर भला बुरी सोहबत क्यों न मिले? यह बात कैसे मानी जा सकती है! कभी-कभी

तो दूर जाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती, नौकर और दाइयाँ ही उन्हें यह सर्वनाशकारी पाठ पढ़ा देते हैं। समवयस्क मित्र मिल गया तो फिर कहना ही क्या है ? कभी-कभी ऐसे नाते-रिश्तेदार भी यह बात सिखाते देखे गए हैं कि जिनसे इस प्रकार की स्वप्न में भी आशा नहीं की जा सकती थी ! अधिक क्या कहा जावे, शिक्षक विद्यार्थी को, सहोदर सहोदर को कभी-कभी इन्द्रिय-परिचालन की शिक्षा देते देखा गया है !!

यह उम्र ऐसी होती है कि यदि कोई अच्छी शिक्षा देने वाला तथा देख-रेख करने वाला न हुआ तो प्रतिशत ९९ युवक इस गड्ढे में गिर कर अपनी जिन्दगी बर्बाद कर डालते हैं। इस अवस्था में कामोत्तेजन होने लगता है। उस उत्तेजित मूत्र-नलिका को हिलाने-डुलाने में, दबाने-रगड़ने में बड़ा आराम मालूम होने लगता है। उस समय उसे उस सुख का अनुभव होने लगता है जिसे उसने पहिले कभी अनुभव नहीं किया था। ऐसा मालूम होता है, मानो कोई व्यक्ति नींद आने की दवा उसके शरीर पर छिड़क रहा है। उसे आज तक नहीं मालूम था कि अपने हाथ की मुट्ठी से— अँगुलियों की सहायता से, जिसके लिए वह इतना उत्कण्ठित था, वही सुख प्राप्त किया जा सकता है ! मूत्र-नलिका को मुट्ठी में लेकर घर्षण करने लगा। ज्यों-ज्यों अधिक घर्षण किया गया, त्यों त्यों विशेष आनन्द मालूम होने लगा। मालूम पड़ता था कि आँखें झपी जाती हैं, न जाने किस आनन्ददायक वस्तु की इच्छा हो रही है। इस समय इससे बढ़कर आनन्द सांसारिक किसी वस्तु में दिखाई नहीं

पड़ता। दस-पाँच मिनट के घर्षण से वीर्य निकल जाता है। उसका सुख-बोध भी यहीं समाप्त हो जाता है। सामने ही श्वेत रङ्ग के एक पदार्थ की बूँद पड़ी दिखाई दी। वह नहीं जानता कि इस श्वेत रङ्ग के पदार्थ में मानव-देह की सबसे अधिक सार-वस्तु है; वह नहीं जानता कि यह मेरा जीवन है; उसे नहीं मालूम कि मानव-देह रूपी दीपक का तेल यही है; उसे क्या पता कि आज मैं ने अपने हाथों अपना नाश आरम्भ कर दिया! उसे क्या मालूम कि यह पदार्थ क्या है? इसका व्यवहार किस तरह होता है और किस काम में आता है? मालूम भी हो तो कहाँ से? माता के पेट से तो कोई कुछ सीख कर आता ही नहीं है। उसे जो कुछ सिखाया गया है या देखा है, वही उसे मालूम है!

जिस आनन्द को उसने अभी अनुभव किया था, वही उसे बारम्बार याद आने लगा। भूख लगने पर जिस तरह पेट में भोजन डालना पड़ता था, नींद आने पर जिस प्रकार शय्या ग्रहण करनी पड़ती थी, अब ठीक उसी तरह आहार, निद्रा की भाँति यह मुष्टि-मैथुन की पिपासा भी जाग्रत हो उठी। भूख हमेशा नहीं लगती, अतएव रात-दिन खाने की चिन्ता नहीं करनी पड़ती, परन्तु यह एक ऐसी भूख है जो हमेशा लगी ही रहती है। जब कभी समय और मौक़ा मिला कि वही अनिर्वचनीय सुख का अनुभव किया! इस प्रकार हमारे देश के युवक और युवतियाँ हस्त-मैथुन का आरम्भ करके अपना सर्वनाश कर रही हैं।

इस समय यदि कोई उन्हें समझा दे कि—"जिसे आँखें मूँद

कर तुम सुख-भोग कहते हो, यह क्षणिक सुख-भोग वास्तव में सच्चा सुख नहीं है। यह दो क्षण के सुख का परिणाम सारे जीवन के लिए, आमरण, अनन्त दुख और असीम कष्ट है, अपने हाथों अपनी ही बर्बादी है। इससे अनेक भयङ्कर रोगों की उत्पत्ति होती है। इस कुक्रिया द्वारा लाखों कुल नष्ट हो गए हैं। मिर्गी, मूर्च्छा, संग्रहणी, कोढ़, नामर्दी, पागलपन इत्यादि सैकड़ों भयङ्कर रोग इस कुटेव से पैदा हो जाते हैं। मनुष्य अल्पायु हो जाता है।" तो वह कदापि इस मुष्टि-मैथुन द्वारा अपने देह की सार-वस्तु को नष्ट करके जीवन भर मरण-यन्त्रणा भोगने की इच्छा न करता। लेकिन, ऐसी बातें समझावे कौन ? पिता-माता से तो इस विषय की आशा ही नहीं, क्योंकि ऐसी बातचीत समझाना लज्जा की बात है। बालक मर जावे, इसकी चिन्ता नहीं, परन्तु लज्जा नहीं मरनी चाहिए! शिक्षक बेचारा क्या कर सकता है ? यूनिवर्सिटी ने सेरों वज़न की पुस्तकें कोर्स में रक्खी हैं, यदि एकाध तोले दो तोले वज़न की छोटी-मोटी किताब पढ़ाई के कोर्स में इस विषय की रख दी होती तो शिक्षक महाशय भी उसे रटा देते। कोर्स के अतिरिक्त वे कुछ भी नहीं कह-सुन सकते। अब रहे नाते-रिश्तेदार, भला वे इस लज्जा के पर्दे को कैसे हटा दें ? फलतः बालक सन्ध्या-सवेरे बिला नागा मुष्टि-मैथुन करने लगा। किसी ने भी उसे इस दुष्कृत्य से नहीं बचाया! किसी ने भी उसे उसकी ग़लती नहीं बताई! किसी ने भी उस भोले, अज्ञानी, नासमझ बालक को इस कुमार्ग से नहीं हटाया!

बालिकाओं को इस हस्त-मैथुन का भयङ्कर फल भोगना पड़ता है। रजोदर्शन बहुत देर में होता है। मासिक-धर्म समय पर न होकर कभी अति विलम्ब से और कभी बहुत जल्दी हो जाता है। डिम्बकोष तथा जरायु खराब हो जाने के कारण गर्भ-धारण की योग्यता नष्ट हो जाती है, शरीर दिनोंदिन कान्तिहीन, दुर्बल और रोगी होता जाता है। छातियाँ बहुत देर से और साधारण उठती हैं। हिस्टीरिया, श्वेत प्रदर आदि विविध भयङ्कर रोगों से शरीर घिरा रहता है। लड़कों की भी यही दशा हो जाती है। जननेन्द्रिय टेढ़ी, निकम्मी, सन्तान पैदा करने के अयोग्य हो जाती है। मुख की कान्ति एकदम नष्ट हो जाती है। आँखें भीतर धँस जाती हैं और उनके आसपास काले-काले दाग पड़ जाते हैं। नाक के नथुने फूल जाते हैं। आँखों में पीलापन आ जाता है। शीघ्र ही जवानी के चिन्ह प्रकट होने लगते हैं। शरीर के अवयव पुष्ट नहीं होने पाते। दाढ़ी-मूँछ बहुत पतली और देर में निकलती हैं। देह में मान्स-पेशियाँ मजबूत नहीं होने पातीं। मेरुदण्ड भी निर्बलता के कारण टेढ़ा हो जाने से ज्ञान-तन्तु और आयु-नष्ट हो जाता है, स्मरण-शक्ति नष्ट हो जाती है। स्वर-यन्त्र ढीला पड़ जाने से आवाज भर्रा जाती है। स्त्री-सहवास की ताक़त सदा के लिए जाती रहती है। काम करने में फुर्ती नहीं मालूम होती और न मन ही लगता है। इस भाँति शारीरिक और मानसिक दुखों को झेलते हुए कुछ समय काटकर सदा के लिए इस लोक से विदा हो जाते हैं। इससे बढ़कर और भयङ्करता क्या हो सकती है?

जब कि उक्त चिन्ह अपने पुत्र-पुत्रियों में उनके माता-पिता को अथवा पालकवर्ग को दृष्टि आवें, तब उन्हें निश्चय अनुमान कर लेना चाहिए कि इस एकदम के परिवर्त्तन का कारण वीर्य-पात के सिवा अन्य कोई नहीं है। अपनी सन्तान के शुभचिन्तक समझदार माँ-बापों का इस समय क्या कर्त्तव्य है, इस बात को वे स्वयँ ही विचार सकते हैं। यदि स्वयम् लज्जा के कारण कुछ न बोल सकते हों तो किसी दूसरे बहाने से उन्हें उनकी भूल समझा देनी चाहिए। ऐसा करने से देश का बहुत कुछ मङ्गल हो सकता है। हमारे बालक इन अप्राकृतिक मैथुनों से बखूबी बच सकते हैं।

(गुदा-मैथुन)

हस्त-मैथुन में तो एक ही बर्बादी होती है, किन्तु इस गुदा-मैथुन—पुरुष-मैथुन में तो दो पुरुषों के जीवन का सत्यानाश हो जाता है। यह अत्याचार है—यौवन का, किशोरावस्था का भयङ्कर खून है। आज इस पापी समय में गोरे और खूबसूरत बच्चों के साथ मैथुन करके उनका पवित्र जीवन, नारकी जीवन बना दिया जाता है। जो बच्चा कुकृत्य से—पापियों के इस पाप-फन्दे से बचा है वह संसार में धन्य है। एक महाशय तो यहाँ तक कहते हुए सुने गए हैं कि "भगवान! मुझे कभी गोरा और खूबसूरत बालक न दे, नहीं तो विषय-लम्पट पुरुष उसका जीवन नष्ट करने की ताक में फिरते रहेंगे!"

नहीं पीटते। सबक़ याद नहीं हुआ तो अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा नाममात्र को दण्ड देते हैं। उन्हें अपने पास बिठाते हैं और अन्य किसी कारण को प्रदर्शित करते हुए उनसे प्रेम-व्यवहार करते हैं। ऐसे बच्चों को क्लास में कमज़ोर होने पर भी ऊँचे क्लास में चढ़ा देते हैं। बेचारा बालक गुरु जी के उपकारों से इतना दब जाता है कि वे जो कुछ भी कहते हैं उसे फ़ौरन ही बिना आगा-पीछा सोचे स्वीकार कर लेता है।

स्कूलों की दीवारों पर जहाँ तक हाथ पहुँचता है वहाँ तक पेन्सिल के लिखे हुए वाक्य पढ़ने पर हृदय में जिन भावों का उदय होता है—जैसा दुख होता है, वह लिख कर नहीं बताया जा सकता। अमुक लड़के ने अमुक लड़के के साथ, अमुक तिथि को अमुक स्थान पर ऐसा किया है। अमुक लड़का अमुक लड़के को छोड़कर अमुक के साथ अपना सम्बन्ध करने की इच्छा कर रहा है। लड़के इस प्रकार की अनेक गन्दी बातें जी खोलकर दीवार पर प्रकट कर देते हैं। इन चित्रों और वाक्यों को अध्यापकगण देखते हैं। वहाँ आने जाने वाले दूसरे लोग देखते हैं, और वे बालक भी देखते हैं जो उस समय तक कुछ भी नहीं समझते थे। इस प्रकार निरन्तर देखते रहने पर भी अध्यापक महाशयों के मन पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। उसे रोकने का उन्होंने कुछ भी उपाय नहीं किया। हाँ, इसका प्रभाव उन मक्खन जैसे कोमल हृदय के बच्चों के मन पर अवश्य पड़ा। उनके दिल में एक प्रकार के नवीन कार्य की उत्सुकता उत्पन्न हो गई। वे भी अपने से ऊँचे क्लास के

विद्यार्थियों का अनुकरण करने लगे—अपने हाथों अपना मानव-जीवन नष्ट करने लगे।

स्कूलों की दीवारें ही ऐसी गन्दी बातों से चित्रित हों, सो नहीं। धर्मशालाएँ, मुसाफ़िर खाने, ऐसे मन्दिर जो प्रायः शून्य रहते हैं, ऐसे रेल के डिब्बे जिनमें यात्री कम हों, पाख़ाने इत्यादि भी गन्दी बातों और गन्दे चित्रों से बचे नहीं होते! इन बातों को देख कर समाज का झुकाव किस ओर है, यह अच्छी प्रकार जाना जा सकता है। पुरुष-मैथुन भारतवर्ष में दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। यहाँ वेश्याओं की तरह इस कार्य के करने वाले हज़ारों पुरुष हैं।

जो लोग लोभ अथवा भय प्रदर्शित कर छोटे-छोटे बच्चों के साथ इस प्रकार का दुष्कार्य करते हैं, वे अपना सर्वनाश तो कर ही डालते हैं, साथ ही अपने से अधिक भयङ्कर इन बालकों का भविष्य बना देते हैं। अप्राकृतिक मैथुन के कारण वीर्य भी अधिक निकलता है। डॉक्टर ग्रेहम साहब का कथन है:—

"प्राकृतिक मैथुन की अपेक्षा, अप्राकृतिक उपायों द्वारा जो वीर्य-पात होता है, वह चौगुना होता है।"

उस समय यह सब कुछ नहीं मालूम होता, क्योंकि शरीर में शक्ति है, चढ़ता हुआ ख़ून है, जवानी है। लेकिन, एक दिन वह अवश्य ही आवेगा और शीघ्र ही आवेगा कि जवानी का जोश जाता रहेगा, रक्त की उष्णता घट जावेगी और शक्ति भी पलायन कर जावेगी। उस समय अपने किए के लिए सिवाय पश्चात्ताप

और दुख के कुछ भी नहीं रह जावेगा—मानव-जीवन एकदम असार और अकर्मण्य हो जावेगा। गुदा-मैथुन की केवल निन्दा करने से काम नहीं चलेगा। यहाँ हम इसके दोष अच्छी प्रकार समझावेंगे।

जननेन्द्रिय को प्रकृति ने अत्यन्त कोमल बनाया है। इसे कठोर स्पर्श से हानि होती है। स्त्री-योनि की रचना भी प्रकृति ने ऐसी ही की है। योनि-मार्ग में एक चिकना द्रव-पदार्थ रहता है जो पुरुष की जननेन्द्रिय को भीतर प्रवेश करने में बड़ी भारी सहायता देता है। उसे प्रवेश करते समय कुछ भी कष्ट नहीं होता। किन्तु, गुदा की रचना वैसी नहीं है—आड़ी-टेढ़ी है। देखो चित्र नं० १ में, छ। इस आड़े-टेढ़े मार्ग में लिङ्गेन्द्रिय के जाने से उसमें टेढ़ापन आ जाता है, जो नपुंसकता का चिन्ह है। यद्यपि गुदा-मार्ग सङ्कीर्ण होने से, लिङ्गेन्द्रिय के प्रवेश होने से कुछ विशेष आनन्द अवश्य आता होगा, किन्तु यह आनन्द जीवन को बर्बाद कर देता है—नामर्द बना देता है। गुदा में वीर्य-पात करने का कोई स्थान नहीं है, अतएव लिङ्ग की दबी हुई हालत में ही वीर्य निकलता है और मल में गिरता है। गुदा के आगे ५-६ इञ्च की दूरी पर ही मल-स्थान है, वहाँ मल सञ्चित रहता है। उस मल में जननेन्द्रिय के लिप्त हो जाने से बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतएव यह पुरुष-मैथुन सर्वथा त्याज्य और अहितकर कार्य है। इस व्यसन से पुरुष को सदैव बचना चाहिए।

जिन बच्चों और पुरुषों से यह मैथुन किया जाता है, उन्हें

चित्र-नम्बर १

नर-वस्ति-गह्वर
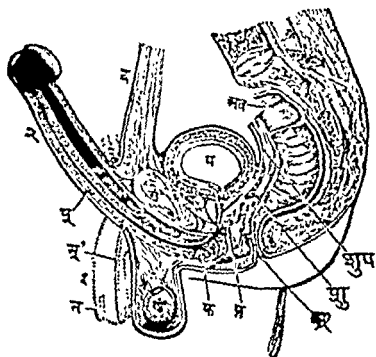
द=उदर की दीवार; व=वस्ति या मूत्राशय; शुप=शुक्र-प्रनाली। शु=शुक्राशय; ध=मल-द्वार; प्र=प्रोस्टेट; फ=मूत्र-मार्ग का स्थूल भाग; अं=अण्ड; त=शिश्नाग्र-त्वचा; मू=मूत्र-मार्ग; १=शिश्न की शिथिलतावस्था; २=शिश्न की दृढ़ावस्था (प्रहृष्ट शिश्न); सं=विटप-सन्धि (कटी हुई)।

भयङ्कर हानि होती है। जो प्रायः मैथुन कराते हैं, उनका शुक्राशय खराब हो जाता है। मूत्राशय के नीचे ही, गुदा-मार्ग के पास ही शुक्राशय होता है—चित्र नं० १ में देखो 'शु'। रात-दिन बारम्बार मैथुन कराने से यह शुक्राशय बिलकुल खराब हो जाता है। शुक्राशय के बिगड़ने से नपुंसकता आ जाती है और पुरुष स्त्री के काम का नहीं रहता। रात-दिन मैथुन कराने से गुदा की सङ्कोचन-शक्ति भी जाती रहती है जिससे वीर्य धारण करने की शक्ति नहीं रहती। वह अपनी पत्नी के पास जाकर उसकी इच्छा पूर्ण नहीं कर सकता।

जो बालक अथवा युवक इस बुरी आदत में फँसे हों उन्हें अपने सुधार की चिन्ता करनी चाहिए। हम यहाँ यह नहीं बता सकते कि कितने मनुष्य इससे बचे होंगे? लेकिन, इतना कह सकते हैं कि शायद ही कोई बचा होगा। अतएव इस विषय पर विचार करना चाहिए। वे लोग, जो कभी भूले भटके इस कार्य में फँसे हों, उन्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन, ऐसे लोग, जो बिलकुल ही डूबे हुए हैं, उन्हें खबरदार हो जाना चाहिए। आगे चलकर हम ऐसे लोगों के लिए पुंसत्व प्राप्त करने के उपाय भी बतलावेंगे।

(पशु-मैथुन)

इस उम्र में बहुत से मनुष्य अपनी काम-ज्वाला को पशु-मैथुन द्वारा शान्त करते देखे जाते हैं। भैंस, गऊ, घोड़ी, कुतिया, बकरी,

बँदरिया आदि पशुओं के साथ मैथुन करते हैं। स्त्रियाँ नर-पशुओं से मैथुन करती हैं। ऐसे मनुष्यों के लिए राक्षस शब्द का प्रयोग करें तो अत्युक्ति न होगी। इनसे बढ़ कर दुष्ट और नीच संसार में कोई अन्य पुरुष नहीं कहा जा सकता। पशु-मैथुन का जननेन्द्रिय पर बहुत ही बुरा परिणाम होता है। कभी-कभी तो जननेन्द्रिय सड़-गलकर नष्ट हो जाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि आजकल वीर्य की बहुमूल्यता जाती रही। जैसे बने तैसे क्षणिक सुख-भोग की इच्छा से वीर्य-पात करके मानव-जाति अपने अप्राप्य, दुर्लभ जीवन को बर्बाद कर रही है।

किस प्रकार ये बातें मानव-समाज से हटाई जा सकेंगी? इसका कोई उपाय दृष्टि नहीं आता! सुधारकों के तब तक सभी प्रयत्न निष्फल और व्यर्थ हैं, जब तक कि देश मे ऐसी-ऐसी सर्वनाशकारी आदतें न हटाई जावें। वीर्यहीन, शक्तिहीन, निर्बल, मूर्ख, गुलाम, रोगी आदि जिस देश में बसते हों उसका कल्याण केवल व्याख्यानों से नहीं हो सकता। सबसे पहिले बालकों और नवयुवकों के सुधार की आवश्यकता है। माता-पिता और शिक्षकों को चाहिए कि इस विषय की ओर से अब उदासीनता त्याग दें। यदि माँ-बाप और शिक्षक ही नहीं समझावेंगे तो फिर इस विषय में बालकों को अन्यत्र ज्ञान प्राप्त करने की सम्भावना ही नहीं। पिता-माता और शिक्षक के अतिरिक्त एक समुदाय देश-शुभचिन्तकों का है। वे इस कार्य को यदि चाहें तो कुछ तकलीफों का सामना करके कर सकते हैं। बहुत से स्थानों में विज्ञान-संस्थाओं

ने यह कार्य अपने हाथों ले लिया है । ग्रन्थकारों ने भी अब इस विषय पर अपनी लेखनी उठाई है और स्वास्थ्य-नीति-सम्बन्धी ग्रन्थों की रचना की है। चिकित्सकों का ध्यान भी इस ओर आकृष्ट हो गया है। मासिक और साप्ताहिक पत्र-पत्रिकाएँ भी लेखों द्वारा इस विषय की चर्चा करते देखी जाती हैं। बहुत से सभ्य राज्यों में राजा भी इन विषयों की आलोचनाओं में उत्साही पुरुषों को उत्साह प्रदान किया करते हैं।

सन्तान की इच्छा सभी कोई करता है, लेकिन कैसे खेद की बात है कि सन्तान जिस वस्तु द्वारा उत्पन्न होती है उसके साथ घोर अन्याय किया जाता है। यह विषय लोगों में अश्लील तथा गन्दा समझा जाता है। इसी कारण आज देशवासी दुर्दशा-ग्रस्त हो रहे हैं। आज हमारे दुखों की सीमा नहीं है। चारों ओर से खींचा-तानी हो रही है। अशान्ति और हाहाकार घर में मच्छर और खटमलों की तरह घुसे बैठे हैं। इस दुख, अशान्ति और हाहाकार के अन्य कारण भी हैं, किन्तु मुख्य कारण ब्रह्मचर्य—वीर्य-रक्षा का अभाव है। यदि हम जीवन-यात्रा के मूल मन्त्र को सीख लेते, यदि हम अतीत-काल के गुरु-गृहों में जाकर संयम, चरित्र-गठन, और विद्या सीख लेते तो आज इस प्रकार मुर्दे की तरह उद्यम-शून्य, अकर्मण्य बन कर देश में विषाद का साम्राज्य न जमा देते। आजकल यौवन के आरम्भ में ही लोगों में बुढ़ापे के चिन्ह झलकने लगते हैं। भारत के भावी कर्णधार बालकों में और युवकों में वह कान्ति और तेज नहीं दिखाई पड़ता! थोड़े ही श्रम से

थक कर वे हाँफने लगते हैं। कोई स्वतन्त्र कार्य नहीं कर सकते। "चार दिन की ज़िन्दगी" कह कर किसी तरह जीवन बिताना अपना कर्त्तव्य समझ बैठे हैं!

इन कुकर्मों द्वारा देश का सत्यानाश हो गया! यौवन के साथ अत्याचार किया गया। भारत की उज्ज्वल कीर्त्ति पर कालिमा लगा दी गई। ब्रह्मचर्य के नाश से ही संसार का सच्चा सुख नष्ट हो गया। नासमझी से किशोरावस्था में सुख-सुख कह कर इस मानव-शरीर का सर्वस्व पानी की भाँति नष्ट कर दिया! सब कुछ खोकर, हताशापूर्ण मन से अब अन्तिम दिनों की राह देखी जा रही है। लेकिन, इस पुस्तक के लिखने का मतलब लोगों को हतोत्साह करना नहीं है, बल्कि उनकी आशा-लता को और हरी बनाकर देश में उच्चता प्राप्त कराने का है। इस पुस्तक से जीवन-मन्त्र सीख लें; संयम का अभ्यास करें; अपने खोए हुए धन को पुनः प्राप्त करने तथा भली प्रकार सञ्चय करने का प्रयत्न करें। यह दुर्जय पृथ्वी उनके वशीभूत हो जायगी। प्रकृति मस्तक झुका कर आज्ञा-पालन करेगी। यहाँ तक कि मृत्यु भी डर से काँपती हुई दूर रहेगी।

पीछे हमने जहाँ-तहाँ "वीर्य" शब्द का प्रयोग किया है। अब हम आगे चल कर इस विषय पर विचार करेंगे कि वीर्य क्या है?

दूसरा अध्याय

(१) वीर्य क्या है ?
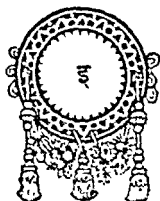
इस युग में वीर्य के रक्त रूप की व्याख्या करने की तो आवश्यकता है ही नहीं ! क्योंकि सभी इससे परिचित हैं। यहाँ तो केवल यह बतलाना है कि वीर्य कैसे उत्पन्न होता है ?

हम जो कुछ भी खाते हैं वह पहिले पाकाशय में जाता है। वहाँ उसका पचन होता है और रस तैयार होता है। सार-भाग के रूप में परिवर्त्तित होकर हृदय में चला जाता है और निस्सार-भाग मल बनकर मलाशय में चला जाता है—वह दूसरे मार्ग से शरीर के बाहर निकल जाता है। इसमें जो भाग जल का होता है वह एक दूसरी जगह इकट्ठा होता है जिसे मूत्राशय कहते हैं। मूत्राशय के भर जाने पर वह मूत्र भी मूत्र-नलिका द्वारा बाहर निकल जाता है। शरीर में मूत्राशय और मलाशय का स्थान कहाँ है ? यदि यह जानना हो तो चित्र नं० १ देखिए। जो रस हृदय में चला गया था उसका फिर पचन होता है, वहाँ वह रक्त के रूप में परिवर्त्तित होकर रक्त में

जा मिलता है। यहाँ भी इस रक्त का पाचन होता है। यहाँ वह तीन रूप में विभक्त होता है—स्थूल, सूक्ष्म और मल। रुधिर का मल पित्त है जो पाचक-पित्त में मिलकर उसे पुष्ट करता है। सूक्ष्म भाग रक्त में मिलकर उसका पोषण और क्षति-पूर्ति करता है। और जो स्थूल भाग होता है वह मांस में जा मिलता है। मांस में मिलकर इसका पाचन फिर होता है, यहाँ वह पूर्वानुसार स्थूल, सूक्ष्म और मल के रूप में बदल जाता है। मल भाग तो कान में जाकर मैल बन जाता है, सूक्ष्म भाग मांस में रहकर पोषण करता है और जो स्थूल भाग होता है वह मेदे में जाता है। मेदे में पहुँचने पर पाचन-क्रिया द्वारा पूर्वोक्त तीन भागों में फिर विभक्त होता है। मल शरीर-रक्षा के लिए रोम-कूपों में रहता है, यह पसीना कहाता है। सूक्ष्म भाग मेदे में ही रहता है और उसे पुष्ट करता रहता है। स्थूल भाग शारीरिक हड्डियों में जा मिलता है। यहाँ भी इसके पूर्वोक्त तीन भाग होते हैं। मल-भाग से नख और बाल उत्पन्न होते हैं। सूक्ष्म भाग अस्थियों में ही रह जाता है और उन्हें पुष्ट बनाता है तथा स्थूल अंश मज्जा में जा मिलता है। पाचन-क्रिया द्वारा यहाँ भी इसके तीन रूप होते हैं। मल आँखों के मैल-रूप में आँखों द्वारा बाहर निकल जाता है। सूक्ष्म भाग मज्जा में ही रहता है और उसकी क्षति-पूर्ति करता है। अब जो भाग बच रहा, वही वीर्य है। उसका कुछ भी रूपान्तर नहीं होता। कई बार तपाकर शुद्ध किए स्वर्ण की भाँति यह शुद्ध होता है। जिसे हमारे बालक और काम-पीड़ित नवयुवक तुच्छ वस्तु मान कर उसे बर्बाद करते रहते हैं! यह जठराग्नि की प्रज्वलित

भट्टी में कितनी बार शुद्ध होकर, कितनी ही कठिनाइयों से थोड़ा सा बनता है, यह हमारे पाठक समझ चुके होंगे।

भोजन करने के पश्चात् वीर्य बनने तक, रस की छः धातुओं में पाचन-क्रिया होती है। प्रत्येक धातु के पचने में पाँच दिन और डेढ़ घड़ी लगती है। इस प्रकार ३० दिन और ७ घड़ी में आहार का थोड़ा सा वीर्य बनता है। यह समप्रकृति वालों का हिसाब है। जो लोग बलवान अथवा निर्बल हैं उसी के अनुसार धातुओं के बनने में समय भी न्यूनाधिक समझ लेना चाहिए।

अब यहाँ, मन में यह प्रश्न पैदा होता है कि वीर्य की उत्पत्ति शरीर में किस अवस्था से होत है? कुछ आचार्यों का कहना है कि १२ या १३ वर्ष की अवस्था से शरीर में वीर्य बनने लगता है। किन्तु, हमारे विचार से वीर्य उसी दिन से बनने लगता है जिस दिन से कि मनुष्य आहार करता है। तब यह प्रश्न होता है कि बालकों में वीर्य क्यों नहीं दिखाई देता? इसका उत्तर यह है कि जिस प्रकार पुष्प की कली में सुगन्ध नहीं मालूम होती और पुष्प के विकसित होने पर उसी में गन्ध मालूम होने लगती है, उसी तरह बालक में वीर्य नहीं मालूम होता और किशोरावस्था के आरम्भ में वह दृष्टि आता है। तब तक वह शरीर की वृद्धि और विकास में व्यय होता रहता है। यदि किसी प्रकार बालक में वीर्य का बनना रोक दिया जावे अथवा उसका निकालना आरम्भ कर दिया जावे तो बच्चा बढ़ नहीं सकेगा और वह जीवित नहीं रह सकेगा! यह वीर्य ही शरीर का पोषक पदार्थ है। जब तक

इसकी रक्षा की जावेगी तभी तक शरीर का वृद्धि-विकास होता रहेगा। जिस दिन से इसका खर्च आरम्भ हो जावेगा उसी दिन से शरीर की वृद्धि बन्द होकर शनैः शनैः नाश आरम्भ हो जावेगा। हम पीछे लिख आए हैं कि २५ वर्ष की आयु तक मनुष्य के शरीर का वृद्धि-क्रम आरम्भ रहता है। तत्पश्चात् उसमें पुष्टता आती है। इस वृद्धि-काल में और पुष्टि-काल में जो इस शरीर-वर्द्धक और शरीर-पुष्टिकारक पदार्थ वीर्य को खर्च करने लगता है, उसकी क्या दुर्दशा होगी, इसका अनुमान लगाना भी असम्भव है।

एक बात और भी है जो हमारे पढ़े-लिखे और बिना पढ़े सभी भाइयों के हृदय में रात-दिन घूमा करती है। वह यह है कि "यदि वीर्य हमेशा बनता है, और वह हमारे आहार का अन्तिम सार है तो कुछ समय में हमारे शरीर में वह अत्यन्त अधिक मात्रा में एकत्र हो जाता होगा ? यदि उसे काम में, अर्थात् खर्च में न लाया जावे तो फिर वह किस काम आवेगा ? इत्यादि।" इसका उत्तर यद्यपि अस्पष्ट शब्दों में पीछे आ चुका है, तथापि स्पष्ट शब्दों में यही है कि—"आहार किए हुए पदार्थ से रस, रस से रक्त, रक्त से माँस, माँस से मेदा, मेदा से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से वीर्य बनता है। वीर्य की भी पाचन-क्रिया होती है, परन्तु इसमें मल नहीं निकलता। केवल सूक्ष्म और स्थूल दो अंश ही बनते हैं। स्थूल भाग तो वीर्य में ही रहता है और सूक्ष्म भाग का "ओज" बन जाता है। तात्पर्य यह कि सब धातुओं में सर्व-श्रेष्ठ पदार्थ वीर्य है और वीर्य का श्रेष्ठ भाग ओज

है। इसे कुछ लोग बल भी कहते हैं। इस ओज की वृद्धि के साथ ही साथ शरीर की वृद्धि है और इसकी घटती के साथ ही शरीर का भी नाश हो जाता है। वीर्यवान पुरुष ही ओजस्वी होता है। उत्साह, बल, लावण्य, धैर्य, संयम, सौन्दर्य, तेजस्विता, बुद्धि, पुरुषार्थ आदि सब इसी ओज की विभूतियाँ हैं। जो लोग वीर्य को अधिकता से व्यय करते हैं उनमें उक्त विभूतियाँ नहीं रहतीं। इसी कारण हमारे पूर्वाचार्यों ने सन्तानोत्पत्ति-कार्य के अतिरिक्त वीर्य-पात करने में एक जातीय व्यक्ति की हत्या का पाप बतलाया है। वीर्य का पुष्ट होना अत्यावश्यक है। जैसे दीपक में तेल, उसी प्रकार शरीर में वीर्य-ओज है। जो लोग वीर्य-रक्षा करते हैं उनमें वीर्य पचता रहता है और शरीर देव-रूप हो जाता है। व्यायाम से शरीर में वीर्य,-ओज बन कर अच्छी प्रकार पच जाता है।

स्त्रियों में वीर्य होता है, परन्तु सन्तानोत्पत्ति में उससे कोई सहायता नहीं मिलती। हमने एक आचार्य की उक्ति देखी है। बात बड़ी ही मजेदार है, देखिए :—

> यदा नार्यो वुपेयातां वृषस्यं तौकथंचन।
> मुंचंत्यौ शुक्र मन्योन्य मनस्थितत्र जायते॥

अर्थात्—स्त्रियाँ यदि काम-पीड़िता होकर आपस में मैथुन करें और उस समय अन्योन्य वीर्य छोड़े तो गर्भ रह जाता है, लेकिन सन्तान बिना हड्डी की उत्पन्न होती है।

हम नहीं कह सकते कि यह बात कहाँ तक सत्य है। अधिकतर

आचार्यों ने स्त्री-वीर्य को सातवाँ धातु ही माना है और मुख्य रज को ही माना है। रज को वीर्य से ही बल, वर्ण तथा पुष्टि प्राप्त होती है, अर्थात् इस वीर्य से ही रज पैदा होता है। इसी से सन्तानोत्पत्ति होती है। ओज पुरुषों में और रज स्त्रियों में एक ही बात है। पुरुष के शरीर में जो जो विशेषताएँ ओज के द्वारा होती हैं, वे सभी विभूतियाँ स्त्री-शरीर में रज से पैदा होती हैं। वीर्य कैसे पैदा होता है, यह बात हम यहाँ बतला चुके हैं। अब आगे यह बतलावेंगे कि वीर्य किन किन पदार्थों के मिश्रण से बनता है?

(२) वीर्य किन-किन पदार्थों का मिश्रण है?

रसायनशास्त्र के ज्ञाताओं का कहना है कि वीर्य में ३ प्रतिशत 'आक्साइड ऑफ परोटिन' व चार प्रतिशत स्नेह, पाँच प्रतिशत फास्फेट ऑफ लाइम, क्लोराइड ऑफ सोडियम, कुछ फास्फेट और कुछ फास्फोरस है तथा ८० से ९० भाग तक जल है। वीर्य में बहुत से दूसरे पदार्थ भी पाए जाते हैं। लीकर सिमेनिस (Liquor Semenis) जिसे वीर्य का जल भी कहते हैं, एक दूसरी वस्तु अण्डे के समान सफेद रङ्ग की होती है जिसे एल्ब्यूमिन (Albumin) कहते हैं। इसे हम लोग ओज कह सकते हैं। इनके अतिरिक्त ठोस परिमाणु भी पाए जाते हैं जिनके दो भाग किए गए हैं (१) सेमीनलग्रेनल्स अर्थात् वीर्य के दाने और (२) स्परमेटोजा अर्थात् वीर्य के जन्तु।

* सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र (Microscope) द्वारा परीक्षा करने से

मालूम हुआ है कि पुरुष-वीर्य में एक प्रकार के अत्यन्त छोटे जन्तु होते हैं। वे इतने छोटे होते हैं कि बिना किसी बढ़िया यन्त्र की सहायता के आँखों से नहीं दिखाई देते। डॉक्टर लोग इन जन्तुओं को निम्न-नामों से पुकारते हैं :—

स्परमेटोज़ा (Spermatozoa)

सेमिनल फिलेमेण्ट (Seminal Filement)

ज़ू स्पर्मस् (Zoasperms)

सेमिनल एनेमल्क्यूल्स (Seminal Anamulcules)

स्परमेटोज़ोएड्स (Spermatozœds)

इनके अतिरिक्त कई डॉक्टरों ने सेमीनल ग्रैन्यूलस् (Seminal Granules) नामक दाने भी मालूम किए हैं। ये वीर्य-जन्तुओं से संख्या में बहुत कम होते हैं। वीर्य के दाने एक प्रकार के द्रव पदार्थ में मिले रहते हैं। शुद्ध वीर्य वीर्य-जन्तु और वीर्य के दानों से बना हुआ होता है।

डॉक्टर कॉलिकर (Kollikar) का कहना है कि "पुरुष-वीर्य का प्रत्येक जन्तु $\frac{१}{६००}$ इञ्च के बराबर होता है।" वीर्य-जन्तु दुमदार कीड़े होते हैं, जिनका अगला भाग गोल होता है। डॉक्टर लोग इन जन्तुओं को सजीव मानते हैं। जिस प्रकार मेंडक के नव-जात बच्चे पानी में इधर उधर अपनी दुम को लहराते हुए तैरते फिरते हैं, ठीक उसी तरह वीर्य-जन्तु भी वीर्य में घूमते फिरते हैं। इन जन्तुओं की गति सदा आगे की तरफ़ ही होती है, पीछे की ओर नहीं। इन जन्तुओं को वीर्य-कोष की गर्मी के समान किसी

गर्म काँच की शीशी में डाल दिया जावे तो ये वहाँ २४ घण्टे से ७२ घण्टे तक जीवित रह सकते हैं। इसी तरह की पिचकारी द्वारा बड़ी सावधानी से गर्भ-धारण कराया जा सकता है। मृतक के शुक्राशय में ये वीर्य-कीट कभी-कभी २४ घण्टे तक जीवित देखे गए हैं। जब ये कीड़े मर जाते हैं तब इनकी दुम सीधी हो जाती है।

वीर्य-जन्तुओं का सिर चपटा और लम्बगोल होता है। इसी सिर से मिली हुई पूँछ होती है। पूँछ लम्बी, पतली तथा चूड़ीदार होती है। सिर की लम्बाई १/१०००० इञ्च और इतनी ही चौड़ाई होती है। पूँछ १/२००० से १/४००० हजार इञ्च तक होती है। इसी में सञ्चालन-शक्ति है। इसी शक्ति से ये आगे बढ़ते हैं और गर्भाशय में पहुँच कर गर्भ-रूप धारण करते हैं। इनकी गति तड़फने के रूप में होती है। ये वीर्य-कीट एलकेलाइन नामक द्रव पदार्थ में रहते हैं। वीर्य में जन्तु होते हैं, किन्तु कई पुरुषों के वीर्य में जन्तु होते ही नहीं। ऐसे पुरुष सन्तानोत्पत्ति के अयोग्य होते हैं। अनुमान है कि एक घन शतांशमीटर वीर्य में छः करोड़ से आठ करोड़ तक वीर्य-कीट रहते हैं। जितना वीर्य एक बार के मैथुन में निकलता है उसमें इन जन्तुओं की संख्या पौने दो करोड़ से दस करोड़ तक होती है। यहाँ हम वीर्य-जन्तुओं का चित्र देते हैं। (देखो चित्र नं० २) वीर्य का गुरुत्व जल से अधिक होता है। एक बार मैथुन के समय लगभग आधे तोले से सवा तोले तक वीर्य-पात होता है। १०० भागों में ९० भाग जल ३ भाग स्फुर (Phosphorous) और खटिक (Calcium) के १ भाग

सोडियम के लवणों का, एक भाग अन्य लवणों का और ५ भाग कई तरह की सेलों के होते हैं। यदि वीर्य को एक काँच के गिलास में अलग रख दें तो कुछ देर के पीछे उसकी दो परतें हो जाँयगी। ऊपर की तह दही के पानी के समान कुछ सफेद और पारदर्शक नहीं होती। नीचे की तह गाढ़ी और दूधिया रङ्ग की होती है। इसी में सारे वीर्य-जन्तु नीचे बैठे दिखाई पड़ेंगे। ऊपर की तह में जल और उसमें घुले हुए अन्य लवण तथा कुछ टूटी-फूटी सेलें (cells) रहती हैं। जितनी गहिरी नीचे की तह होती है, उतने ही अधिक वीर्य-जन्तु उसमें समझने चाहिएँ। ये शुक्र-कीट जल में जीवित नहीं रहते। अम्ल अथवा अम्ल-रस में भी तुरन्त मर जाते हैं। वे अल्पक्षारीय प्रतिक्रिया वाले द्रवों को पसन्द करते हैं।

(३) वीर्य का स्थान

जिस जगह वीर्य-शुक्र बनता है उस जगह का नाम "शुक्राशय" है। यह मूत्राशय के पीछे मल-मार्ग के आगे है। चित्र नं० १ में 'शु' देखिए। ये दो थैलियाँ हैं। शुक्राशय की लम्बाई लगभग $\frac{3}{2}$ इञ्च के होती है। इसका परिमाण सब मनुष्यों में एक समान नहीं होता। ऊपर का सिरा भारी होता है तथा नीचे का पतला और नुकीला। थैली के मध्य बगलों से शुक्र-प्रनाली जुड़ी रहती है। शुक्र-प्रनाली का अन्त थैली के नीचे वाले नुकीले सिरे में होता है। जहाँ शुक्र-प्रनाली शुक्राशय से जुड़ती है वहीं से एक

पतली नली का आरम्भ होता है (देखो चित्र नं० ३ में ४) इसे शुक्र-स्रोत कहते हैं। शुक्र-स्रोत प्रोस्टेट ग्रन्थि के भीतर घुसकर मूत्र-मार्ग में खुलता है।

पुरुष के शरीर में अण्ड-कोष या वृषण होते हैं। यह जननेन्द्रिय के नीचे थैली की शक्ल में लटकता है। इसमें मुर्गी के अण्डे की भाँति दो अण्डे हैं। अण्डे की लम्बाई डेढ़ से पौने दो इञ्च के लगभग, चौड़ाई एक इञ्च और मोटाई इससे कुछ कम होती है। वजन लगभग १ तोले के होता है। अण्ड-कोष की दीवार को टटोलने पर पतला और चपटा एक पिण्ड और मालूम होगा। यह उपाण्ड है। अण्ड-कोष में शुक्र-ग्रन्थियाँ हैं। इनमें कोई दो-तीन सौ के लगभग छोटे-छोटे कोष्ठ हैं। इन कोष्ठों में बाल जैसी पतली कोई ८००-९०० के लगभग नालियाँ हैं। ये नालियाँ बहुत मुड़ी हुई होती हैं। समस्त नालियों की लम्बाई लगभग ½ मील होती है। शुक्र-ग्रन्थि की नालियाँ वास्तव में छोटी-छोटी नली के रूप में ग्रन्थियाँ हैं। इन ग्रन्थियों में वीर्य बनता है।

वास्तव में वीर्य का कोई स्थान नहीं है। जिस तरह समस्त शरीर में रुधिर व्याप्त है उसी तरह सारे शरीर में वीर्य भी व्याप्त है। यदि ऐसा न होता तो शरीर का वृद्धि-विकास और पालन-पोषण नहीं हो सकता। कोई यह समझे कि वीर्य किसी जगह पानी की तरह भरा होगा, यह बात नहीं है। व्यभिचारी और कामी व्यक्ति प्रायः कह दिया करते हैं—"यदि वीर्य-पात न किया जावे तो वीर्य रहेगा कहाँ, क्योंकि जब वीर्य-स्थान भर जावेगा तब वह

स्वप्नदोष और प्रमेह के रूप में निकल जावेगा।" इत्यादि बातें मूर्खतायुक्त हैं। ऐसे लोगों का ख्याल है कि शरीर में कहीं न कहीं पर वीर्य का एक कुण्ड भरा है, जब उसमें अधिक वीर्य हो जाता है तब स्वप्नदोष, प्रमेह आदि के रूप में छलकने लगता है। ऐसे विचारों ने ही देश में व्यभिचार को बढ़ाया है। इन्हीं विचारों के कारण लोगों के दिल से वीर्य-रक्षा का महत्व नष्ट हो गया है।

स्मरण रखना चाहिए कि वीर्य समस्त शरीर में व्याप्त है। रुधिर की अधिकता होने से जिस प्रकार शरीर से रुधिर निकालने की जरूरत नहीं पड़ती उसी तरह वीर्य की अधिकता होने पर वीर्य-पात की आवश्यकता नहीं है। जिन लोगों को अत्यन्त पौष्टिक पदार्थ नित्य खाने के लिए मिलते हैं उनमें वीर्य अधिक होता है। मूर्ख वैद्य, हकीम उन्हें वीर्य-पात की आज्ञा देते हैं! यदि ये अज्ञानी लोग व्यायाम, प्राणायाम, आसन द्वारा अपने वीर्य की उत्तेजना को शान्त करने का उपदेश किया करें तो देश का परम कल्याण हो सकता है।

जिस भाँति दही में मक्खन रहता है, उसी तरह शरीर में वीर्य भी रहता है। मक्खन निकालने के पूर्व जिस प्रकार दही का मथना आवश्यक होता है उसी प्रकार मैथुन द्वारा समस्त शारीरिक इन्द्रियों का मथन होकर वीर्य अण्ड-कोष में इकट्ठा होकर मूत्रेन्द्रिय द्वारा बाहर निकल जाता है। सारे शरीर से वीर्य का खिंचाव होने के कारण ही मैथुन मे विशेष आनन्द का अनुभव होता है, रोमाञ्च होने लगता है। प्रकृति ने प्रजा वर्द्धनार्थ इस क्रिया में एक विशेष

प्रकार का आनन्द रखा है। आशा है, पाठक इस विषय को समझ गए होंगे। अब आगे "स्त्री-वीर्य अर्थात् रज में क्या-क्या पदार्थ होते हैं?" इस विषय पर विचार करेंगे।

(४) रज में कौन-कौन से पदार्थ होते हैं ?

पुरुष के अण्ड-कोषों की भाँति स्त्रियों में भी अण्ड-कोष होते हैं। अन्तर इतना ही है कि पुरुषों के अण्ड-कोष बाहर की तरफ होते हैं तो स्त्रियों के भीतर की ओर होते हैं। ये दोनों गर्भाशय के दाहिने-बाएँ रहते हैं। पुरुष-वीर्य की भाँति स्त्री-रज में भी जन्तु होते हैं। इनका आकार पुरुष के वीर्य-जन्तुओं से तिगुना अर्थात् $\frac{1}{200}$ इञ्च के बराबर होते हैं।

रज के जन्तुओं की आकृति अण्डे के सदृश होती है। जिस प्रकार अण्डे के अन्दर दो भाग—जर्दी और चर्बी होते हैं उसी

से घिरी होती है (देखो चित्र नं० ४ में २) इस पारदर्शक झिल्ली में प्रायः इसी से मिली हुई, वाइटेलस (Vitellus) होती है (देखो चित्र नं० ४ में ३) यह द्रव पदार्थ के समान है। इसमें दो प्रकार के परमाणु होते हैं (१) बड़े (२) छोटे। गोल परमाणुओं को ग्लब्यूल्ज (Globules) और छोटे परमाणुओं को ग्रन्यूल्ज (Granules) कहते हैं। इन दोनों का आकार एकसाँ नहीं है। ग्रन्यूल्ज अपने आकार और बराबर सञ्चालन होने के कारण रङ्गीन परमाणुओं के सदृश होते हैं। गोल परमाणु फैट ग्लब्यूल्ज (Fat Globules) सरीखे होते हैं। ये विशेषतः न्यूक्ल्यस के घेरे के पास अधिक रहते हैं।

जर्दी के भाग को न्यूक्ल्यस अथवा जरमीनल वेसिकल (Germinal Vesicle) कहते हैं। (देखो चित्र नं० ४ में ४) यह $\frac{१}{५००}$ इञ्च के बराबर होता है। यह स्वच्छ और पारदर्शक झिल्ली के समान होता है। इसमें रेशा या ताना-बाना नहीं होता। इसमें कभी-कभी परमाणु भी पाए जाते हैं। इसके उस किनारे पर जो याक के घेरे के पास होता है वह जरमीनल स्पॉट कहलाता है। यह जर्मीनल स्पॉट (Germinal Spot) सुन्दर पीले रङ्ग के परमाणु के सदृश होता है। (देखो चित्र नं० ४ में ५) इसमें एक विशेष प्रकार का क्षार होता है और प्रकाश की किरणों को परावृत्त करने की शक्ति अधिक होती है।

अब हम आगे, उत्पादक स्थानों के विषय में विचार किए बिना आगे बढ़ना उचित न समझ कर इनके विषय में विचार करेंगे।

(५) जननेन्द्रियाँ

पुरुष-जननेन्द्रिय विषयक ज्ञान थोड़ा-बहुत प्रत्येक पुरुष को है। इसके अतिरिक्त पीछे भी बहुत कुछ बतलाया जा चुका है। चित्र नं० १ के देखने से बहुत कुछ समझ में आ जाता है। पुरुष के शरीर में वीर्य और मूत्र निकलने का एक ही मार्ग है। लिङ्ग के मुण्ड पर एक ऐसा चमड़ा होता है जो हट सकता है और फिर उसके ऊपर आ जाता है। मैथुन के समय वह शिश्न-मुण्ड पर से पीछे की ओर हट जाता है। इस चमड़े को घूँघट कहते हैं। (देखो चित्र नं० १ में न) कभी-कभी यह घूँघट इतना तङ्ग होता है कि आसानी से ऊपर की ओर नहीं हटता। कभी-कभी तो इतना तङ्ग होता है कि उसमें मूत्र निकलने के अतिरिक्त और चौड़ा मार्ग नहीं होता। जिन पुरुषों की यह दशा हो उन्हें किसी चतुर डॉक्टर से ऑपरेशन कराना चाहिए।

पुरुष-जननेन्द्रिय तीन बेलनाकार डण्डों से बना है। इनमें से दो मोटे-मोटे डण्डे ऊपर की तरफ पास-पास रहते हैं और तीसरा डण्डा जो भीतर से पोला होता है, उन दोनों डण्डों के बीच में नीचे होता है। इस डण्डे में नली होती है, यह मूत्र-मार्ग है। लिङ्ग को टटोल कर इन तीनों डण्डों को मालूम किया जा सकता है। इन डण्डों के भीतर छोटे-छोटे आशय होते हैं। कामोत्तेजन के समय ये आशय रक्त से भर जाते हैं, अतएव लिङ्ग खड़ा और कड़ा हो जाता है। जैसे कपड़े का नल पानी से भर जाने पर खूब कड़ा

हो जाता है, उसी तरह इन आशयों में रक्त भर जाने से लिङ्ग में उत्तेजना आ जाती है। जब मैथुन-क्रिया समाप्त हो जाती है तब आशयों का रक्त शिरा द्वारा लौट जाता है और खाली नल की तरह शिश्न भी मुलायम होकर लटक जाता है।

शिश्न के नीचे एक थैली रहती है। इसे अण्ड-कोष कहते हैं। यह थैली माँस के सिकुड़ने और फैलने से छोटी और बड़ी हो जाती है। यदि ध्यानपूर्वक अण्ड-कोष को देखा जावे तो उसमें एक लहर सी दिखाई देगी। यह त्वचा के नीचे रहने वाले माँस के सङ्कोच और फैलाव से होता है। ठण्ड के ऋतु में अण्ड-कोष सिकुड़ जाता है और गर्मी में माँस के फैल जाने से वह लटक जाता है। बुढ़ापे में भी अथवा निर्बल पुरुषों के अण्ड-कोष ढीले लटकते रहते हैं। बहुत से पुरुषों के एक ही अण्डा होता है। किसी के अण्ड ही नहीं होते। अण्डहीन पुरुषों के सन्तान नहीं हो सकती। पुरुष-जननेन्द्रिय अत्यन्त कोमल स्थान है। इसे अधिक श्रम से तथा चोट आदि से बचाना चाहिए। पुरुष के अण्ड यदि जवानी से पहिले ही काट दिए जावें तो उनकी शारीरिक वृद्धि भी रुक जावेगी। दाढ़ी मूँछें भी अच्छी तरह नहीं उगेंगी।

नारी-जननेन्द्रिय के विषय में यहाँ विशेष लिखने की आवश्यकता बोध होती है, क्योंकि पुरुष उसके विषय में बहुत कम ज्ञान रखते हैं। यह बाह्य इन्द्रिय नहीं है। स्त्रियों के जननेन्द्रिय विषयक जो कुछ भी बातें समझने की हैं वे भीतरी बातें हैं। जिस जगह पुरुष के लिङ्ग और अण्ड-कोष होते हैं, उसी जगह स्त्री के जो अङ्ग

होता है वही उत्पादक स्थान है। इसे भग कहते हैं। भग के बीच
में एक दरार होती है। बाहर से देखने पर सिर्फ दो पाट ही दिखाई
देते हैं। इन्हें भगोष्ठ कहा जा सकता है। यदि कोई इन भगोष्ठों
को उँगलियों की सहायता से चौड़ा करके देखे तो भीतर दो पतले
ओष्ठ और दिखाई पड़ेंगे। (देखो चित्र नं० ५ में ग और घ)
भगोष्ठ के फैलाने पर भीतर दो छिद्र दिखाई देंगे। इन छिद्रों में से
एक बड़ा होता है। यह योनि का छिद्र है (चित्र नं० ५ में देखो)
मैथुन के समय पुरुष का शिश्न इसी छिद्र द्वारा योनि में प्रवेश करता
है, इसी छिद्र से मासिक स्राव होता है और इसी से बालक जन्म
लेता है। दूसरा छिद्र इस छिद्र से लगभग १ या २ इञ्च ऊपर होता
है। यह मूत्र-मार्ग का छिद्र है (देखो चित्र नं० ५ में द)।

अक्षत-योनि स्त्रियों के योनि-द्वार पर एक पतला त्वचा का परदा
लगा रहता है (देखो चित्र नं० ५ में य) इस परदे में भी एक छिद्र
रहता है, जिसमें से प्रति मास आर्तव निकला करता है। पहले
पहल दिन जब कि स्त्री से मैथुन किया जाता है, तब शिश्न के
भीतर घुसने के कारण यह परदा फट जाता है। इसके फटने से स्त्री
को थोड़ा बहुत दर्द होता है और थोड़ा सा रक्त भी निकला करता
है। किसी-किसी स्त्री में यह परदा अत्यन्त ही पतला होता है और
उसका छिद्र चौड़ा होता है। यदि छिद्र मोटाई में कम अर्थात्
पतला हुआ तो यह परदा नहीं फटता और बिना किसी कष्ट के
मैथुन अच्छी प्रकार हो जाता है। क्योंकि यह परदे का छिद्र फैल
कर चौड़ा भी हो सकता है। जब तक यह परदा मौजूद है और यह

छिद्र पड़ा नहीं हुआ है तब तक यह माना जाता है कि स्त्री से मैथुन नहीं किया गया है। परदे का फट जाना इस बात का साक्षी होता है कि स्त्री से मैथुन हो चुका। चोट के लग जाने से भी कभी-कभी यह परदा फट जाता है। जो कन्याएँ हस्त-मैथुन करती हैं उनका भी यह परदा फट जाता है। जब परदा फट जाता है तो उसके शेष भाग के टुकड़े योनि-द्वार के इधर उधर दिखाई दिया करते हैं।

ऊपर के भगोष्ठ ऊपर की ओर जाकर मिल जाते हैं। जहाँ ये परस्पर मिलते हैं वह स्थान कुछ उभरा हुआ होता है (देखो चित्र नं० ५ में क)। जब स्त्री की अवस्था १२ या १३ वर्ष की होती है तब यहाँ बाल जमने लगते हैं। इस उभरे हुए स्थान के नीचे, मूत्र-द्वार के ऊपर दोनों भगोष्ठों के मध्य में एक छोटा सा अङ्कुर होता है (देखो चित्र नं० ५ में न) इसे भग-नासा कहते हैं। जिस प्रकार पुरुष में शिश्न होता है उसी प्रकार स्त्री में यह अङ्ग होता है। शिश्न की अपेक्षा यह अत्यन्त छोटा होता है। इसमें भी शिश्न-दण्डिकाओं की तरह दो दण्डे होते हैं। इनकी रचना भी शिश्न-दण्डिकाओं के समान ही है। जैसे लिङ्ग का घूँघट खुलता है वैसे इस भग-नासा की त्वचा भी ऊपर को हट जाती है। मैथुन के समय यह भग-नासा शिश्न की भाँति रक्त से भर जाता है और वैसा ही कड़ापन आ जाता है। मैथुन के समय शिश्न भग-नासा से रगड़ा जाता है, इस रगड़ से स्त्री को अत्यन्त आनन्द होता है। मैथुन-क्रिया के समाप्त होने पर इस भग-नासा से रक्त लौट जाने के कारण यह भी शिश्न की तरह ढीला हो जाता है।

जैसे पुरुष में दो शुक्र-ग्रन्थियाँ होती हैं वैसे ही स्त्री में भी दो अङ्ग होते हैं। इनमें डिम्ब बनते हैं, अतएव इन्हें डिम्ब-ग्रन्थियाँ कहते हैं। स्त्री के डिम्ब और पुरुष के वीर्य-जन्तुओं के संयोग से ही गर्भ की स्थिति होती है। ये डिम्ब-ग्रन्थियाँ बस्ति-गह्वर में उसकी पार्श्विक दीवारों से लगी हुई रहती हैं। एक ग्रन्थि गर्भाशय के दाहिनी ओर रहती है, दूसरी उसके बाईं ओर (देखो चित्र नं० ६ में ट) ग्रन्थि का आकार और परिमाण कबूतर के अण्डे के समान होता है। उसकी लम्बाई, एक इञ्च से सवा इञ्च तक, चौड़ाई पौन इञ्च और मोटाई आधा इञ्च के लगभग होती है। वजन ६ माशे से ८ माशे तक होता है।

योनि वास्तव में एक नली है, जिसका ऊपर का सिरा गर्भाशय की ग्रीवा के नीचे के भाग में चारों ओर लगा रहता है। गर्भाशय का बहिर्मुख इस नली के भीतर रहता है। गर्भाशय सामने की ओर झुका रहता है। योनि की लम्बाई तीन या चार इञ्च होती है। उसके सामने की दीवार पिछली दीवार से कुछ कम लम्बी होती है। योनि की दीवारें आपस में मिली रहती हैं अतएव चौड़ा-मरोड़ा आदि कोई वस्तु उसमें सहज ही नहीं घुस सकती। दबाव पड़ने पर योनि की लम्बाई और चौड़ाई अधिक हो सकती है। द्वार के पास योनि कुछ तङ्ग होती है; बीच में चौड़ी होती है; गर्भाशय के पास आकर फिर तङ्ग हो जाती है। योनि की दीवार में बहुत से शिराजाल होते हैं। ये शिराएँ मैथुन के समय रक्त से भर जाती हैं। मैथुन के समय पहिले से अधिक मोटी हो जाती हैं।

योनि-मार्ग से जुड़ा हुआ गर्भाशय होता है। यह पुरुषों में नहीं होता। स्त्रियों में ही होता है। इसी आशय में पुरुष के वीर्य-कीट जाकर वृद्धि पाते हैं और क्रमशः बढ़ने के पश्चात् बालक के रूप में जन्म लेते हैं। अब हम आगे अन्य बातों पर विचार करने के पूर्व गर्भाशय के विषय में विचार करेंगे।

(६) गर्भाशय

स्त्रियों में यह वह अङ्ग है जिसमें गर्भ रहा करता है। यह बस्ति-गह्वर में रहता है। इसके सामने मूत्राशय और पीछे मलाशय होता है। गर्भाशय के दोनों ओर कुछ ही दूरी पर डिम्ब-ग्रन्थियाँ रहती हैं। गर्भाशय का आकार नाशपाती नामक फल से मिलता-जुलता है। अन्तर केवल इतना ही होता है कि गर्भाशय का स्थूल भाग नाशपाती की तरह गोल होने के बजाय चपटा होता है।

ऐसी स्त्री में, जिसके सन्तान न उत्पन्न हुई हो अथवा जिसे गर्भ न रहा हो—गर्भाशय की लम्बाई ऊपर से नीचे तक तीन इञ्च, चौड़ाई एक किनारे से दूसरे किनारे तक २ इञ्च और मोटाई सामने से पीछे तक १ इञ्च होती है। उसका वजन २$\frac{1}{2}$ तोले से ३$\frac{1}{2}$ तोले तक है। जिनके गर्भाशय में गर्भ रह चुका हो, उसकी लम्बाई चौड़ाई कुछ ही अधिक होती है। गर्भाशय के ऊपर का भाग मोटा होता है। नीचे का भाग, जो योनि से जुड़ा रहता है, पतला होता है। नीचे के भाग में एक छिद्र होता है (देखो चित्र नं० ६ में म) इसे गर्भाशय का बहिर्मुख कहते हैं। इस मुख के दो ओष्ट

होते हैं—एक अगला और दूसरा पिछला । योनि में उँगली डाल कर दोनों ओष्ठ और गर्भाशय स्पर्श किया जा सकता है ।

गर्भाशय वस्ति-गह्वर में सीधा नहीं खड़ा रहता । वह आगे की तरफ़ मूत्राशय की ओर झुका रहता है । जहाँ गर्भाशय के ऊपर का स्थूल भाग नीचे के पतले भाग से मिलता है, वहाँ भी गर्भाशय कुछ आगे को मुड़ा रहता है । गर्भाशय के ऊपर परिविस्तृत कला चढ़ी रहती है । यह कला गर्भाशय से मूत्राशय पर चली जाती है । वस्ति-गह्वर के पार्श्वों में गर्भाशय कला की दो चौड़ी तहों द्वारा बँधा रहता है । (देखो चित्र नं० ६ में क) । ये उसके चौड़े या पार्श्विक बन्धन कहाते हैं । पार्श्विक बन्धन की दोनों तहों के बीच में गर्भाशय का अगला या गोल बन्धन रहता है । (देखो चित्र नं० ६ में च) । यह उदर की दीवार से होकर वृहत् भगोष्ठ तक जाता है और वहीं रह जाता है । इन्हीं बन्धनों द्वारा गर्भाशय अपने स्थान में स्थिर रहता है । जब यह बन्धन खिंचकर लम्बे और ढीले हो जाते हैं, तब गर्भाशय अपने स्थान से हट जाता है । गर्भाशय कभी-कभी बजाय आगे झुके रहने के पीछे की ओर झुक जाता है ।

गर्भाशय भीतर से पोला होता है । उसके अन्दर अधिक स्थान नहीं रहता, क्योंकि अगली और पिछली दीवारें क़रीब-क़रीब मिली हुई रहती हैं । गर्भ रहने के पूर्व गर्भाशय छोटा होता है और यह वस्ति-गह्वर के भीतर रहता है । जब गर्भ स्थित हो जाता है तब यह धीरे-धीरे बड़ा होता है और तीसरे मास उसका ऊपरी भाग उदर की दीवार में से टटोल कर स्पर्श किया जा सकता है ।

स्त्रियों में डिम्ब-ग्रन्थियों की तरह डिम्ब-प्रनालियाँ भी दो होती हैं। एक दाहिनी और दूसरी बाईं। यह नली गर्भाशय से आरम्भ होकर डिम्ब-ग्रन्थि तक जाती है। डिम्ब-प्रनाली गर्भाशय के चौड़े पार्श्विक बन्धन के ऊपर के किनारे में बन्धन की दोनों तहों के बीच में रहती है। डिम्ब-प्रनाली की लम्बाई लगभग ४ इञ्च होती है। उसकी मोटाई गर्भाशय के पास $\frac{१}{६}$ इञ्च और डिम्ब-ग्रन्थि के पास $\frac{१}{३}$ इञ्च के लगभग होती है। नली भीतर से बहुत वक्र होती है। गर्भाशय के पास नली का भीतरी व्यास $\frac{१}{२४}$ इञ्च और डिम्ब-ग्रन्थि के पास $\frac{१}{१२}$ इञ्च के लगभग होता है। डिम्ब-प्रनाली का सिरा ग्रन्थि की ओर फूला हुआ होता है और यहाँ छिद्र के चारों ओर झालर सी लगी रहती है (देखो चित्र नं० ६ में १)। डिम्ब-प्रनाली डिम्ब-ग्रन्थि से जुड़ी हुई नहीं होती। केवल उसकी झालर का थोड़ा सा भाग डिम्ब-ग्रन्थि से मिला रहता है। जब डिम्ब-ग्रन्थि से कोई डिम्ब निकलता है तब वह इस झालर के सहारे डिम्ब-प्रनाली के छिद्र तक पहुँचता है।

अब हम आगे स्त्रियों के मासिक-धर्म के विषय में विवेचना करेंगे।

होते हैं—एक अगला और दूसरा पिछला। योनि में उँगली डाल कर दोनों ओष्ठ और गर्भाशय स्पर्श किया जा सकता है।

गर्भाशय वस्ति-गह्वर में सीधा नहीं खड़ा रहता। वह आगे की तरफ़ मूत्राशय की ओर झुका रहता है। जहाँ गर्भाशय के ऊपर का स्थूल भाग नीचे के पतले भाग से मिलता है, वहाँ भी गर्भाशय कुछ आगे को मुड़ा रहता है। गर्भाशय के ऊपर परिविस्तृत कला चढ़ी रहती है। यह कला गर्भाशय से मूत्राशय पर चली जाती है। वस्ति-गह्वर के पार्श्वों से गर्भाशय कला की दो चौड़ी तहों द्वारा बँधा रहता है। (देखो चित्र नं० ६ में क) । ये उसके चौड़े या पार्श्विक बन्धन कहाते हैं। पार्श्विक बन्धन की दोनों तहों के बीच में गर्भाशय का अगला या गोल बन्धन रहता है। (देखो चित्र नं० ६ में व) । यह उदर की दीवार से होकर बृहत् भगोष्ठ तक जाता है और वहीं रह जाता है। इन्हीं बन्धनों द्वारा गर्भाशय अपने स्थान में स्थिर रहता है। जब यह बन्धन खिचकर लम्बे और ढीले हो जाते हैं, तब गर्भाशय अपने स्थान से हट जाता है। गर्भाशय कभी-कभी बजाय आगे झुके रहने के पीछे की ओर झुक जाता है।

गर्भाशय भीतर से पोला होता है। उसके अन्दर अधिक स्थान नहीं रहता, क्योंकि अगली और पिछली दीवारें क़रीब-क़रीब मिली हुई रहती हैं। गर्भ रहने के पूर्व गर्भाशय छोटा होता है और वह वस्ति-गह्वर के भीतर रहता है। जब गर्भ स्थित हो जाता है तब वह धीरे-धीरे बड़ा होता है और तीसरे मास उसका ऊपरी भाग उदर की दीवार में से टटोल कर स्पर्श किया जा सकता है।

स्त्रियों में डिम्ब-ग्रन्थियों की तरह डिम्ब-प्रनालियाँ भी दो होती हैं। एक दाहिनी और दूसरी बाईं। यह नली गर्भाशय में आरम्भ होकर डिम्ब-ग्रन्थि तक जाती है। डिम्ब-प्रनाली गर्भाशय के चौड़े पार्श्विक बन्धन के ऊपर के किनारे में बन्धन की दोनों तहों के बीच में रहती है। डिम्ब-प्रनाली की लम्बाई लगभग ४ इञ्च होती है। उसकी मोटाई गर्भाशय के पास $\frac{१}{६}$ इञ्च और डिम्ब-ग्रन्थि के पास $\frac{१}{२}$ इञ्च के लगभग होती है। नली भीतर से बहुत तङ्ग होती है। गर्भाशय के पास नली का भीतरी व्यास $\frac{१}{२४}$ इञ्च और डिम्ब-ग्रन्थि के पास $\frac{१}{१२}$ इञ्च के लगभग होता है। डिम्ब-प्रनाली का सिरा ग्रन्थि की ओर फूला हुआ होता है और यहाँ छिद्र के चारों ओर झालर सी लगी रहती है (देखो चित्र नं० ६ में १)। डिम्ब-प्रनाली डिम्ब-ग्रन्थि से जुड़ी हुई नहीं होती। केवल उसकी झालर का थोड़ा सा भाग डिम्ब-ग्रन्थि से मिला रहता है। जब डिम्ब-ग्रन्थि से कोई डिम्ब निकलता है तब वह इस झालर के सहारे डिम्ब-प्रनाली के छिद्र तक पहुँचता है।

अब हम आगे स्त्रियों के मासिक-धर्म के विषय में विवेचना करेंगे।

तीसरा अध्याय

(१) मासिक-धर्म

भारतवर्ष में लड़कियाँ बारहवें-तेरहवें वर्ष में ऋतुमती होती हैं। जो प्रान्त गर्म हैं वहाँ कुछ जल्दी और जो प्रान्त ठण्डे हैं वहाँ कुछ विलम्ब से रजोदर्शन होता है। ऋतुमती होने का क्या कारण है, यह जान लेना बहुत ही आवश्यक है। स्वाभाविक नियमानुसार बालिकाओं के बारह-तेरह वर्ष की अवस्था में गर्भाशय के भीतर रक्त का सञ्चार होता है। इन दिनों गर्भाशय का मुख कुछ खुल जाता है और रक्त योनि-पथ से होकर बाहर निकल जाता है। इसी रक्त-स्राव का नाम मासिक-धर्म है; क्योंकि यह प्रति मास होता है। जो लाल रङ्ग का तरल-योनि से प्रतिमास बहता है, उसे आर्त्तव या ऋतु कहते हैं। आर्त्तव निकलने को रजस्वला या ऋतुमती होना कहते हैं। आर्त्तव का सबसे प्रथम निकलना रजोदर्शन कहलाता है। रजोदर्शन इस बात का चिन्ह है कि कन्या के यौवन काल का अब आरम्भ हो गया है। इसके साथ ही साथ जवानी के अन्य लक्षण भी, जैसे स्तनों का

पदना, कामेन्द्रिय पर बालों का जमना इत्यादि। कन्या की मानसिक दशा में भी विचित्र परिवर्त्तन होने लगते हैं।

जलवायु के अनुसार तो रजोदर्शन जल्दी या देर से होता ही है, किन्तु सभ्यता, सामाजिक दशा, रहन-सहन का ढङ्ग, शिक्षा-प्रणाली और परिस्थिति आदि के कारण भी रजोदर्शन जल्दी और देर से होता है। जिनकी लड़कियाँ बचपन से ही विवाह आदि की बातें सुनती रहती हैं, उन्हें रजोदर्शन शीघ्र होता है। चञ्चल स्वभाव की लड़कियों को भी रजोदर्शन जल्दी होता है। अमीर घरों की लड़कियों को, जिन्हें शारीरिक श्रम कम करना पड़ता है, परन्तु पौष्टिक और उत्तेजक भोजन खूब मिलता है, गरीब घरों की लड़कियों की अपेक्षा रजोदर्शन जल्दी ही हुआ करता है।

१२ या १४ वर्ष की आयु से ४५-५० वर्ष की आयु तक स्त्री प्रति मास रजस्वला होती रहती है। जब गर्भ स्थित हो जाता है तब मासिक-धर्म बन्द हो जाता है। कोई कोई स्त्रियाँ ऐसी भी होती हैं, जिन्हें गर्भ-स्थिति की दशा में भी मासिक-धर्म होता रहता है। जो स्त्रियाँ अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं वे बच्चा जनने के बाद भी कई महीनों तक ऋतुमती नहीं होतीं। ४५ से ५० वर्ष की अवस्था के अन्दर आर्त्तव का निकलना प्रायः बन्द हो जाया करता है इसे रजोनिवृत्ति कहते हैं। रजोदर्शन से रजोनिवृत्ति तक—गर्भस्थिति तथा प्रसव के कुछ काल के बाद को छोड़ कर—स्त्री को मासिक-धर्म होता है। इसी काल में स्त्री प्रायः गर्भ धारण के योग्य होती है। कभी-कभी

रजोदर्शन के पूर्व और रजोनिवृत्ति के पश्चात् भी गर्भ रह जाता है, किन्तु ऐसा बहुत कम होता है।

मासिक-धर्म प्रायः २८ दिन के अन्तर से होता रहता है। कभी-कभी एक या दो दिन कम या अधिक भी हो जाते हैं। यह रक्त-श्राव ३—४ दिन तक रहता है। ऋतु-स्राव की अवधि कम से कम १ दिन और अधिक से अधिक ६ दिन है। ६ दिन से अधिक स्राव का होना रोग का सूचक है। महीने में कई बार या कई महीनों में एक बार स्राव होना भी बुरा है। जिन लड़कियों का स्वास्थ्य खूब अच्छा होता है। जो समस्त जीवन में अस्वाभाविक उपायों द्वारा इन्द्रिय-परिचालन अर्थात् मैथुन-कार्य में प्रवृत्त नहीं होतीं, उन्हें मासिक-धर्म समय पर ही हुआ करता है। जो स्त्रियाँ अधिक मैथुन पसन्द करती हैं, उन्हें मासिक-धर्म समय पर नहीं होता। जिनका स्वास्थ्य खूब अच्छा रहता है, उन्हें ४ दिन से अधिक आर्त्तव नहीं निकलता। जिनके मासिक-धर्म में कुछ गड़बड़ हो उनके गर्भाशय में भी किसी प्रकार का दोष अवश्य है। ऐसी दशा में यदि योग्य चिकित्सक द्वारा इन सभी दोषों को न हटाया गया तो उस स्त्री की तन्दुरुस्ती सदा के लिए नष्ट हो जाती है। उसे आमरण दुख झेलते हुए समय व्यतीत करना पड़ता है। अतएव ऐसी अवस्था प्राप्त होने पर शीघ्र ही विशेष सावधानी के साथ कार्य करना उचित है। इन सब बातों के लिए व्यर्थ की अनुचित लज्जा के मारे छिपाना ठीक नहीं है। जिस बात के ऊपर सारे जीवन का आनन्द, सुख और शान्ति अवलम्बित है, उसे छिपाना मूर्खता है।

हमारे देखने में आया है कि हमारे घरों की नासमझ बहिनें प्रायः ऐसी बातों को छिपाया करती हैं। इसका परिणाम बड़ा ही भयङ्कर होता है। यही कारण है कि हमारे देश में प्रतिशत सत्तर स्त्रियाँ इस ऋतु-सम्बन्धी पीड़ा से व्यथित हैं। ऋतु के थोड़े ही उन्नीस-बीस होने पर सावधान हो जाना चाहिए। इन बातों को छिपा कर सदैव कष्ट भोगना उचित नहीं है। शरीर में व्याधि को पाल-पोस कर रखना ही मूर्खता है। व्याधि को अपना परम-शत्रु समझ कर, उसे तत्काल ही मिटाने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। जो लोग रोग की ओर से निश्चिन्त रहते हैं उन पर रोग अपना पूर्ण अधिकार जमा लेता है और एक न एक दिन जिन्दगी से हाथ धोना पड़ता है। ऋतु-स्राव समय पर नहीं होता, किन्तु स्त्रियाँ गर्भ धारण करती हैं, इससे स्त्री-पुरुष निश्चिन्त हो जाते हैं और ऋतु की अनियमितता पर कुछ भी ध्यान नहीं देते। ऐसे गर्भ से जब रोगिणी और अल्पायु सन्तान पैदा होती है तब मूर्ख दम्पति तक़दीर और ईश्वर का आश्रय लेकर सन्तोष मान लेते हैं। कितनी अज्ञानता है ?

ऋतु के समय प्रत्येक स्त्री को कुछ नियमों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। जो स्त्रियाँ ऋतु-काल के नियमित नियमों का परिपालन नहीं करतीं उन्हें असह्य दुख भोगने पड़ते हैं। हम लोगों की यह कैसी भयङ्कर अज्ञानता है कि ऐसे आवश्यकीय विषय को अश्लील और गन्दा समझ कर उसकी शिक्षा देना बुरा समझते हैं। लिखते खेद होता है कि विवाह के पूर्व घर की स्त्रियाँ, जैसे भौजाई, चाची,

तथा अन्य सहेलियाँ ऐसी-ऐसी मूर्खतापूर्ण बातें अपनी अज्ञानता के कारण कन्या को समझा देती हैं कि जिससे प्रथम सहवास के दिन ही ऐसा मालूम होने लगता है मानो श्रीमती जी दाम्पत्य-प्रेम और बनावटी नाज़-नखरे से पहले ही जानकार हो चुकी हैं। मूर्खा स्त्रियाँ प्रायः ये ही बातें सिखाती हैं कि पति को अपने वश में कैसे रखना, इच्छित कार्य अपने पति से किस प्रकार कराना, ज़ेवर, वस्त्र इच्छानुसार कैसे प्राप्त करना, बनावटी प्रेम कैसे प्रदर्शित करना इत्यादि। यदि इस शिक्षा के बजाय स्वास्थ्य-सम्बन्धी अन्य शिक्षाएँ दी जाया करें तो देश का बहुत कुछ भला हो सकता है। जो स्त्रियाँ स्वास्थ्य-रक्षा विषयक विशेष ज्ञान प्राप्त कर लेती हैं उन्हें आजीवन किसी तरह का भी शारीरिक क्लेश नहीं सहना पड़ता। उनका यौवन चिरस्थायी होता है। दाम्पत्य-प्रेम बढ़ता है और सन्तान का सच्चा सुख देखती हैं।

छोटी-छोटी लड़कियों को भी मासिक-धर्म होने लगता है। जर्मन देशीय डॉक्टरों ने अनेक उदाहरण दे रखे हैं। हम भी अपने पाठकों के मनोरञ्जनार्थ यहाँ उन्हें उद्धृत करते हैं :—

एक लड़की को दो वर्ष की उम्र में ही मासिक-धर्म होने लगा। प्रति-मास नियमित रूप से ४ दिन ऋतु-स्राव होता था। उसके गुप्त अङ्गपर बाल ऊग आए थे और दूसरे अगुप्त अङ्ग भी जवान औरतों की तरह पुष्ट हो गए थे।

एक लड़की एक वर्ष की अवस्था से ही ऋतुमती होने लगी थी और दस वर्ष की अवस्था में तो उसे एक सन्तान भी हो गई।

एक लड़की को ४ वर्ष की अवस्था में ऋतु-स्राव हुआ और आठ वर्ष की अवस्था में पुरुष-समागम होने पर उसे गर्भ रह गया। उस गर्भ से केवल एक माँस-पिण्ड ही निकला।

किसी-किसी डॉक्टर का कहना है कि डिम्ब-कोष के बिगड़ जाने से ही बचपन में इस प्रकार रजोदर्शन हो जाता है। अस्त्र-चिकित्सा द्वारा इस ऋतु-स्राव को बन्द किया जा सकता है। समय से पूर्व जो लड़कियाँ ऋतुमती हों, उन्हें पुरुष-समागम से बचाना बड़ी जरूरी बात है।

आर्त्तव रक्तमय स्राव है। यह गर्भाशय से निकल कर आता है। इस रक्त में श्लेष्म मिली होती है अतएव रक्त की तरह यह शीघ्र ही नहीं जम सकता। इसका रङ्ग लाल और कुछ-कुछ कालापन लिए होता है। आर्त्तव का परिमाण सब स्त्रियों में समान नहीं होता। इसका परिमाण एक छटाँक से चार छटाँक तक होता है। आर्त्तव निकलने के पूर्व गर्भाशय की श्लैष्मिक कला अधिक रक्तमय हो जाती है। अधिक रक्त के कारण कला पहिले से कुछ मोटी हो जाती है। अब इस कला में जगह-जगह रक्त एकत्र हो जाता है। इस रक्त के इकट्ठे होने से श्लैष्मिक कला मुलायम-पिलपिली हो जाती है। फिर रक्त कला से होकर बाहर निकलता है। रक्त निकल चुकने पर कला सिकुड़ कर पहिले जैसी हो जाती है। मासिक-धर्म के दिनों में डिम्ब-ग्रन्थियाँ, डिम्ब-प्रनालियाँ और योनि अधिक रक्तमय हो जाती है। उनका रङ्ग कुछ गहरा हो जाता है। गर्भाशय का आकार भी कुछ-कुछ बढ़ जाता है। मासिक-धर्म

तथा अन्य सहेलियाँ ऐसी-ऐसी मूर्खतापूर्ण बातें अपनी अज्ञानता के कारण कन्या को समझा देती हैं कि जिससे प्रथम सहवास के दिन ही ऐसा मालूम होने लगता है मानो श्रीमती जी दाम्पत्य-प्रेम और बनावटी नाज़-नख़रे से पहले ही जानकार हो चुकी हैं। मूर्खा स्त्रियाँ प्रायः ये ही बातें सिखाती हैं कि पति को अपने वश में कैसे रखना, इच्छित कार्य अपने पति से किस प्रकार कराना, जेवर, वस्त्र इच्छानुसार कैसे प्राप्त करना, बनावटी प्रेम कैसे प्रदर्शित करना इत्यादि। यदि इस शिक्षा के बजाय स्वास्थ्य-सम्बन्धी अन्य शिक्षाएँ दी जाया करें तो देश का बहुत कुछ भला हो सकता है। जो स्त्रियाँ स्वास्थ्य-रक्षा विषयक विशेष ज्ञान प्राप्त कर लेती हैं उन्हें आजीवन किसी तरह का भी शारीरिक क्लेश नहीं सहना पड़ता। उनका यौवन चिरस्थायी होता है। दाम्पत्य-प्रेम बढ़ता है और सन्तान का सच्चा सुख देखती हैं।

छोटी-छोटी लड़कियों को भी मासिक-धर्म होने लगता है। जर्मन देशीय डॉक्टरों ने अनेक उदाहरण दे रखे हैं। हम भी अपने पाठकों के मनोरञ्जनार्थ यहाँ उन्हें उद्धृत करते हैं:—

एक लड़की को दो वर्ष की उम्र में ही मासिक-धर्म होने लगा। प्रति-मास नियमित रूप से ४ दिन ऋतु-स्राव होता था। उसके गुप्त अङ्गपर बाल उग आए थे और दूसरे अगुप्त अङ्ग भी जवान औरतों की तरह पुष्ट हो गए थे।

एक लड़की एक वर्ष की अवस्था से ही ऋतुमती होने लगी थी और दस वर्ष की अवस्था में तो उसे एक सन्तान भी हो गई।

एक लड़की को ४ वर्ष की अवस्था में ऋतु-स्राव हुआ और आठ वर्ष की अवस्था में पुरुष-समागम होने पर उसे गर्भ रह गया। उस गर्भ से केवल एक माँस-पिण्ड ही निकला।

किसी-किसी डॉक्टर का कहना है कि डिम्ब-कोष के बिगड़ जाने से ही बचपन में इस प्रकार रजोदर्शन हो जाता है। अस्त्र-चिकित्सा द्वारा इस ऋतु-स्राव को बन्द किया जा सकता है। समय से पूर्व जो लड़कियाँ ऋतुमती हों, उन्हें पुरुष-समागम से बचाना बड़ी जरूरी बात है।

आर्त्तव रक्तमय स्राव है। यह गर्भाशय से निकल कर आता है। इस रक्त में श्लेष्म मिली होती है अतएव रक्त की तरह यह शीघ्र ही नहीं जम सकता। इसका रङ्ग लाल और कुछ-कुछ कालापन लिए होता है। आर्त्तव का परिमाण सब स्त्रियों में समान नहीं होता। इसका परिमाण एक छटाँक से चार छटाँक तक होता है। आर्त्तव निकलने के पूर्व गर्भाशय की श्लैष्मिक कला अधिक रक्तमय हो जाती है। अधिक रक्त के कारण कला पहिले से कुछ मोटी हो जाती है। अब इस कला में जगह-जगह रक्त एकत्र हो जाता है। इस रक्त के इकट्ठे होने से श्लैष्मिक कला मुलायम-पिलपिली हो जाती है। फिर रक्त कला से होकर बाहर निकलता है। रक्त निकल चुकने पर कला सिकुड़ कर पहिले जैसी हो जाती है। मासिक-धर्म के दिनों में डिम्ब-ग्रन्थियाँ, डिम्ब-प्रनालियाँ और योनि अधिक रक्तमय हो जाती है। उनका रङ्ग कुछ गहरा हो जाता है। गर्भाशय का आकार भी कुछ-कुछ बढ़ जाता है। मासिक-धर्म

के पूर्व ही दो चार दिन से आर्त्तव के निकलने तक प्रायः स्त्रियों की शारीरिक और मानसिक दशा में कुछ परिवर्त्तन हुआ करता है। आलस्य और अरुचि तो साधारण बातें हैं। कमर, नितम्ब और पेड़ू कुछ-कुछ भारी मालूम होते हैं। कोई कोई स्त्रियाँ इन दिनों चिड़चिड़े स्वभाव की हो जाती हैं। जो स्त्रियाँ चञ्चल होती हैं उन्हें इन दिनों अजीर्ण और क़ब्ज़ की शिकायत रहती है। जो स्त्रियाँ शारीरिक व्यायाम न करने के कारण अमीरी के झोंके से मोटी हो जाती हैं या जिन्हें जोशीली किताबें और उपन्यासों के पढ़ने का शौक़ अधिक होता है, उन्हें मासिक-धर्म के समय पेड़ू, नितम्ब और कमर में बहुत पीड़ा होती है और हाथ-पैर टूटते रहते हैं।

मासिक-स्राव क्यों होता है? इसका उत्तर अभी तक निश्चित नहीं है। प्राचीन शास्त्रकार और अर्वाचीन वैज्ञानिक इस विषय में चुप हैं। मासिक-धर्म का प्रयोजन यह मालूम होता है कि उससे गर्भाशय की श्लैष्मिक कला इस योग्य बन जावे कि उसमें गर्भ चिपक सके। परीक्षाओं तथा अनुभवों द्वारा यह बात निश्चय हो चुकी है कि मासिक-धर्म के पश्चात् प्रथम पक्ष में स्त्री के गर्भ धारण करने की अधिक सम्भावना होती है। ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं और नए मासिक-धर्म का समय निकट आता जाता है, त्यों-त्यों गर्भ धारण करने की सम्भावना कम होती जाती है। यह स्पष्ट है कि गर्भाधान के लिए मासिक-धर्म बन्द होने के पश्चात् बारह तेरह दिन उत्तम हैं। इन्हीं दिनों गर्भाशय का मुख चौड़ा रहता है,

बाद में सिकुड़ जाता है, अतएव गर्भ का रहना असम्भव है। आर्त्तव-स्राव के दिनों में मैथुन करना पैशाचिक कार्य ही नहीं है, बल्कि उसमें स्त्री-पुरुष को स्वास्थ्य-सम्बन्धी बहुत ही हानि उठानी पड़ती है। प्रति मास एक डिम्ब डिम्ब-प्रनाली में पहुँचा करता है। यदि ठीक समय पर उसका वीर्य-जन्तु से संयोग हो गया तो गर्भ रह जाता है। यदि गर्भ नहीं रहे तो डिम्ब नष्ट हो जाता है। अब हम आर्त्तव-स्राव के दिनों में स्त्री के पालने योग्य बातों का वर्णन करेंगे।

(२) रजस्वला के कार्य

आर्त्तवस्रावदिवसाद् हिंसा ब्रह्मचारिणी।
शयीतदर्भ शय्यायां पश्येदपि पतिं न च॥
करे शरावे पर्णेवा हविष्यं त्र्यह माचरेत्।
अश्रुपात नखच्छेद मभ्यंगमनु लेपनम्॥
नेत्रयो रञ्जनं स्नानं दिवास्वापंप्र धावनम्।
अत्युच्च शब्द श्रवणं हसनं बहु भाषणम्॥
आयासंभूमि खननं प्रवातं च विवर्जयेत्॥

(१) रजस्वला को हिंसा नहीं करनी चाहिए। अगर हिंसा करेगी तो उसके गर्भ से बालक निर्दयी और हिंसक पैदा होगा। अतएव अहिंसा-व्रत रखना चाहिए।

कर्मणा मनसा वाचा सर्व भूतेषु सर्वदा।
अक्लेश जननं प्रोक्तं हिंसात्वेन योगिभिः॥

(मन से, वचन से और कर्म से किसी को कष्ट न पहुँचाना ही अहिंसा है।)

(२) ऋतुमती स्त्री को ब्रह्मचर्य से रहना चाहिए। जो स्त्री इन दिनों ब्रह्मचर्य से नहीं रहती उसके गर्भ से पैदा होने वाली सन्तान विकलाङ्ग, मूर्ख, अल्पायु और व्यभिचारिणी होती है।

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्था सु सर्वदा।
सर्वत्र मैथुनत्यागो ब्रह्मचर्य प्रचक्षते॥

(मन, वचन और कर्म से मैथुन का त्यागना ही ब्रह्मचर्य है।)

(३) कुश की शय्या पर सोवे और अपने स्वामी का मुँह तक भी न देखे।

(४) हाथ में, मिट्टी के बर्त्तन में अथवा पत्तल में मूँग भात आदि सतोगुणी, मिर्च-मसालों से रहित भोजन करे।

(५) अपने नेत्रों से आँसू न बहावे। रजस्वला-अवस्था में जो स्त्री रोती है उसके गर्भ से पैदा होने वाला बालक कदापि अच्छे नेत्रों वाला नहीं हो सकता।

(६) अपने हाथ-पैरों के नाखूनों को न काटना चाहिए। जो इसका पालन आर्त्तव-स्राव के दिनों में नहीं करती उसकी सन्तान बुरे नाखूनों वाली अथवा नाखूनों से रहित होती है।

(७) शरीर में तैल उबटन लगाना भी इन दिनों में अच्छा नहीं है। नहीं तो कोढ़ी सन्तान होगी।

(८) चन्दनादि लेपन करना भी रजस्वला के लिए वर्जित है। क्योंकि ऐसा करने वाली स्त्री के दुखिया बालक पैदा होते हैं।

(९) आँखों में सुरमा न लगाना चाहिए। रजस्वला स्त्री यदि अञ्जन आँजे तो सन्तान अन्धी पैदा होगी।

(१०) रजस्वला को दिन में न सोना चाहिए। दिन में सोने वाली स्त्री से दिन में अत्यन्त सोने वाला बालक पैदा होगा।

(११) रजोधर्म के दिनों में स्त्री को अत्यन्त कठोर आवाज़ न सुनना चाहिए। यदि इस नियम का पालन न किया जावेगा तो बालक बहिरा पैदा होगा।

(१२) इन दिनों हँसी-ठठ्ठा भी न करना चाहिए और न अधिक बोलना ही चाहिए। जो स्त्री बहुत हँसेगी अथवा बहुत बोलेगी उसकी सन्तान के ओंठ और जीभ काले होंगे।

(१३) मासिक-धर्म के समय अधिक मेहनत न करना चाहिए, नहीं तो पागल सन्तान पैदा होगी।

(१४) नाखूनों से पृथ्वी नहीं खोदनी चाहिए। ऐसी स्त्री से गिरने वाली और रेंगने वाली सन्तान पैदा होती है।

(१५) अत्यन्त हवा में न बैठना चाहिए, नहीं तो उन्मत्त बालक पैदा होगा।

(१६) ऋतु के दिनों में एकान्तवास करना चाहिए। इससे बड़ा भारी लाभ होता है। सबसे बड़ा भारी लाभ तो

यह है कि मनुष्य एकान्तवास में बहुतेरी बुराइयों से बच जाता है।

(१७) किसी पवित्र वस्तु को स्पर्श नहीं करना चाहिए। रक्तस्राव के कारण अपवित्रता रहती है अतएव पवित्र वस्तु का स्पर्श वर्जित है।

(१८) अन्य पुरुष तथा बदसूरत मनुष्य को न देखना चाहिए नहीं तो सन्तान भी बदशक्ल पैदा होगी।

(१९) बिलकुल चुपचाप रहना भी ठीक नहीं है, नहीं तो सन्तान गूँगी पैदा होगी।

(२०) सिर में अधिकांश कङ्घी करना ठीक नहीं है, अन्यथा गञ्जी सन्तान उत्पन्न होगी।

(२१) चोरी, झूठ, क्रोध, ईर्ष्या, घमण्ड, लोभ इत्यादि पापों से अपनी रक्षा करनी चाहिए। वरना ये सारे अवगुण सन्तान में होंगे।

(२२) रजस्वला स्त्री का भोजन अत्यन्त शीघ्र-पाची (हल्का) होना चाहिए। गुरुपाक (भारी) पदार्थों का खाना इन दिनों अत्यन्त हानिकारक है।

(२३) अत्यन्त गर्म अथवा अत्यन्त शीतल चीज़ें खाना-पीना उचित नहीं है।

(२४) ठण्डी और खुली जगह में न सोना चाहिए।

(२५) ठण्डे जल से स्नान करना अथवा शरीर को धोना ठीक नहीं है। सर्दी के मौसिम में हाथ-पैर धोने के लिए गरम पानी

को काम में लाना चाहिए। मामूली ठण्ड से भी ऋतु बन्द हो जाता है। अत्यन्त ठण्ड लगने से पेट में दर्द, श्वेत प्रदर आदि रोग हो जाते हैं। कभी-कभी तो गर्भाशय तक खराब हो जाता है। अतएव ठण्ड से बचना इन दिनों बड़ा ही आवश्यक है।

(२६) स्त्रियों को ऋतु के दिनों में रेलगाड़ी, मोटरगाड़ी, बाईसिकल, घोड़े आदि की सवारी में बड़ा लम्बा सफ़र करना उचित नहीं है।

(२७) बारीक महीन वस्त्र न पहनने चाहिएँ। जो रजस्वला स्त्रियाँ बारीक वस्त्र पहनती हैं उनके गर्भाशय में दाह होने लगता है। यह रोग आगे चलकर इतनी प्रबलता धारण कर लेता है कि अच्छे-अच्छे चिकित्सक भी इसे नहीं हटा सकते।

(२८) भय पैदा करने वाली बातें नहीं सुननी अथवा देखनी चाहिएँ, नहीं तो डरपोक बालक उत्पन्न होगा।

(२९) ऋतु के समय सदाचरणों का व्यवहार करना चाहिए। प्रेम, दया, धैर्य, क्षमा, शान्ति, परोपकार, सत्य-भाषण, अहिंसा आदि सद्गुणों को अपने हृदय में स्थान देना चाहिए।

(३०) ईश्वर-भक्ति, पति-भक्ति, और देश-भक्ति को सर्वदा हृदयङ्गम करना चाहिए।

रजस्वला के पालने योग्य हमने कुछ नियम ऊपर बताए हैं। इन उक्त नियमों पर ऋतु-स्राव के दिनों में विशेष ध्यान रखना चाहिए। इस समय जितनी ही सावधानी और संयम रक्खा जावेगा उतना ही अच्छा है। प्रत्येक स्त्री को इन नियमों का पालन करना

परमावश्यक है। जिस तरह उत्तम, दृढ़, चिरस्थायी मकान बनाने वाला व्यक्ति अच्छी, पुख्ता नींव तैयार करता है, उसी तरह उत्तम, दृढ़कार्य, निरोग और दीर्घायुषी सन्तान उत्पन्न करने के लिए ऋतु के दिनों में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है। जिन मकानों की नींव—बुनियाद ही कमजोर है, उसपर उत्तम भवन निर्माण नहीं किया जा सकता। यदि कोई मूर्ख हठ से या बल करके अपनी ज़िद पूरी करने के लिए उस पर महल बना भी ले तो वह कदापि सन्तोषप्रद नहीं हो सकता। अवश्य ही, और शीघ्र ही वह किया हुआ अनुचित परिश्रम व्यर्थ हो जावेगा, अतएव आवश्यकीय है कि नींव अच्छी हो। गर्भाशय रूपी जमीन पर सन्तान रूपी महल तैयार करने के लिए, पहिली बात यह है कि नींव अच्छी रखी जावे। स्त्री का रजस्वला समय में पवित्राचरण होना परमावश्यक है। यदि ऋतु-काल में गड़बड़ हो गई तो बस, फिर आगे सम्भलना अत्यन्त कठिन है। स्त्री-पुरुष रूपी दोनों शिल्पकारों को इस सुसन्तान रूपी सुन्दर भवन निर्माण करने में बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। काम-पिपासा शान्त करने के लिए स्त्री-पुरुषों की रचना नहीं हुई है। प्रकृति ने इनकी रचना उत्तम प्रजा उत्पन्न करने के लिए की है। कामाग्नि बुझाते समय आजकल जो गर्भ रह जाता है, उससे देश का कल्याण होने के बजाय सर्वनाश हो रहा है। आजकल का स्त्री-प्रसङ्ग बालक पैदा करने के लिए नहीं है, बल्कि काम-ज्वाला शान्त करने के लिए है। बच्चे पैदा हो जाते हैं—पैदा किए नहीं जाते। सन्तान के प्रति स्त्री के जो जो

कर्त्तव्य हैं उनका आरम्भ रजोदर्शन से ही है, अतएव यदि उत्तम सन्तान पाने की इच्छा हो तो रजस्वला को अपने कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए। रजोधर्म के समय जो विचार, जो भाव स्त्री के हृदय में होते हैं वे सन्तान में अवश्य ही आते हैं। अतएव इन दिनों स्त्रियों को कैसा आचरण करना चाहिए, इस बात को वे स्वयँ विचार कर लें। क्योंकि सन्तान तो अधिकतर स्त्री के विचारों का ही प्रतिविम्ब होती है। अतएव बहिनो! तुम अपने कर्त्तव्य का पालन करो।

अब हम आगे स्त्रियों के ऋतु-सम्बन्धी रोगों की चिकित्सा लिखेंगे। आशा है, पाठक-पाठिकाएँ इनसे लाभ उठावेंगी।

(३) ऋतु-चिकित्सा

ऋतु-चिकित्सा बड़ी सावधानी से करनी चाहिए। चतुर वैद्य से ही इलाज कराना चाहिए। मूर्ख वैद्यों से, नामधारी वैद्यों से इस रोग का इलाज कदापि नहीं कराना चाहिए। एक कहावत भी है—"चतुर वैद्य के हाथों मरना अच्छा, किन्तु मूर्ख वैद्य द्वारा अमर रहना भी दुखप्रद होता है।" इसी विषय में क्या सभी रोगों के उपचार में, चतुर वैद्य की ही तलाश में रहना चाहिए। इस रोग में यदि औषधि ठीक नहीं दी गई तो गर्भ-स्थान के बिगड़ जाने का बड़ा भारी डर रहता है। स्त्रियों के इस रोग को प्रदर कहते हैं।

प्रदर की उत्पत्ति का कारण—शराब पीने से, अप्राकृतिक भोजन से, भोजन पर भोजन करने से, अजीर्ण से, गर्भपात से,

गर्भ-स्राव से, अति मैथुन से, घोड़े आदि की सवारी से, पैदल चलने से, चिन्ता से, भारी वजन उठाने से, चोट के लगने से, दिन में सोने से, सीढ़ियाँ चढ़ने-उतरने से, दौड़ने से प्रदर रोग हो जाता है।

प्रदर कई प्रकार के होते हैं—जैसे वात, पित्त, कफ और सन्निपात। स्त्री-योनि से नाना प्रकार का रक्त बिना ऋतु के निकलता रहे, शरीर दुखता हो और हड़फूटन हो, ये प्रदर रोग के लक्षण हैं।

वात-प्रदर—जिसकी योनि से शुष्क रक्त निकले, फेनयुक्त हो, थोड़ा-थोड़ा कष्ट सहित निकले और माँस के पानी के समान हो, उसे वात-प्रदर समझना चाहिए।

पित्त-प्रदर—रक्त पीले रङ्ग का हो, नीला, सफ़ेद या लाली लिए हुए गर्म निकले। अधिक निकले, शरीर में दाह हो, ये लक्षण पित्त-प्रदर के हैं।

कफ-प्रदर—जिसका रुधिर गोंद की तरह लसदार हो, पीला अथवा गुलाबी पानी के समान रङ्ग हो, उसे कफ का प्रदर समझना चाहिए।

सन्निपात-प्रदर—शहद समान, घृत समान, मुर्दे की गन्ध समान जिसका रुधिर निकलता हो, वह त्रिदोष का प्रदर समझना चाहिए।

रक्त-प्रदर—यह पित्त और रक्त के विकार से होता है। देह का टूटना, देह से रक्त निकलने के कारण कसक होना। शरीर का कृप हो जाना, मूर्च्छा आना, भ्रम होना, आँखों में अँधेरा

आना, शरीर में जलन होना, प्यास अधिक लगना, भूख मर जाना, अजीर्ण होना इत्यादि उपद्रव रक्त-प्रदर के हैं।

असाध्य-प्रदर—योनि-मार्ग द्वारा रात-दिन रक्त बहता ही रहे। दाह हो, शरीर में ज्वर हो और दुर्बलता हो, ये लक्षण असाध्य प्रदर के हैं।

शुद्ध आर्त्तव—जिस स्त्री की योनि से प्रति मास खरगोश के रक्त के समान आर्त्तव निकले, जिसमें दाह न हो, ५ रात्रि तक स्राव हो, न कम न ज्यादा निकले, वस्त्र पर दाग न पड़े, ये लक्षण शुद्ध आर्त्तव के हैं।

उपाय

(१) काला नमक, जीरा, मुलहटी, कमलगट्टा प्रत्येक छः छः माशा लेकर काढ़ा बना ले। ऊपर से शहद डाल कर पिलाने से वात-प्रदर दूर होता है।

(२) मुलहटी ६ माशा, मिश्री ६ माशा इन्हें बारीक पीस कर चावलों के पानी से रोज़ प्रातःकाल सेवन करने से पित्त-प्रदर नाश होता है।

(३) रसौत ६ माशा, चौलाई की जड़ का रस ६ माशा दोनों को शहद में मिला कर ७ दिन सेवन करने से सब तरह का प्रदर-विकार दूर हो जाता है।

(४) आसापाल की छाल का काढ़ा बना कर उसे गोदुग्ध में डाल कर पीवे। इससे भी सब तरह का प्रदर दूर हो जाता है।

(५) कुश की जड़ को चावलों के पानी में घोट कर तीन दिन के पीने से सब तरह का प्रदर जाता रहता है।

(६) दारुहल्दी, रसौत, चिरायता, अडूसा, नागरमोथा, लाल चन्दन, आक के फूल, सब छः छः माशे लेकर इनका काढ़ा बना ले, और शहद डाल कर पीवे। इसके सेवन से रक्त-प्रदर, श्वेत-प्रदर और पीत-प्रदर का बिलकुल नाश हो जाता है।

(७) गूलर के फलों को सुखा कर बारीक पीस; कपड़छान कर ले। बाद में मिश्री और शहद मिलाकर तीन-तीन तोले की गोलियाँ बना ले। स ात दिन के सेवन से प्रदर-रोग बिलकुल नष्ट हो जाता है।

(८) सोने का वर्क़ एक भाग, अनविंधे मोती दो भाग, शुद्ध शिंगरफ़ ३ भाग, शुद्ध विष ४ भाग, छोटी पीपल ५ भाग इन सबों को जम्भीरी के रस में ४ दिन खरल करके सुखा ले। प्रदर वाली स्त्री को केले की फली में एक रत्ती से दो रत्ती तक ४० दिन तक खिलावे। कमजोर स्त्री को मलाई में देवे। प्रमेह वाले पुरुष को भी यदि यह दवा आँवले के मुरब्बे में ४० दिन दी जावे तो प्रमेह भी निस्सन्देह छूट जाता है।

(९) शुद्ध पारा १ तोला, शुद्ध गन्धक १ तोला, ताम्र-भस्म एक तोला, अभ्रक-भस्म १ तोला इन सब की कचजली करके बाद में, मीठे अनार के रस में, सोंठ के क्वाथ में, नागरमोथे के क्वाथ में, धम्मन (बला) के रस में क्रमशः खरल करके दो-दो रत्ती की गोली बना ले। गाय के दूध में, बकरी के दूध में अथवा

मकरध्वज में एक गोली नित्य प्रातःकाल सेवन करे। इससे दाह-ज्वर सहित सब प्रकार के प्रदर दूर हो जाते हैं।

(१०) एक तोला साफ कतीरा लेकर पाव भर पानी में डाल कर एक मिट्टी के पात्र में सायङ्काल को ओस में रख देवे। प्रातः २ तोला मिश्री और एक तोला शहद मिला कर रोगिणी स्त्री को पिलावे। दस बजे दिनके लगभग पाव भर पानी में गूलर का ताजा ७ फल व २ तोले देशी शक्कर मिला कर लपसी बना कर खिलावे। एक तोले सूखे आँवले को घी में भून कर कपाल के बाल उस्तरे से साफ करके वहाँ लगावे। सफेद जीरे की लुगदी नाभी पर रक्खे। गर्म पदार्थ, खटाई एवम् जागने से परहेज रखे। सात दिन के सेवन से ही कैसा ही कष्ट-साध्य रक्त-प्रदर क्यों न हो, अवश्य निर्मूल हो जाता है।

(११) चिकनी सुपारी, माजूफल, धव के फूल, मोचरस, सोना-गेरू, रसौत, चौलाई की जड़, सब को समान भाग लेकर कूट लें, बाद में पैसे भर दवा को छटाँक भर चावलों के धोवन के साथ सेवन करने से प्रदर-रोग नाश हो जाता है।

(१२) मालकँगनी आधपाव, देशी मोथा आध पाव, राई आध पाव, नीम की कोंपल आध पाव, इन सब चीजों का अर्क भपके से खींच कर एक साफ बोतल में भर लेना चाहिए। दो तोले अर्क में ४ माशा शहद मिला कर दिन में दो या तीन बार सेवन कराना चाहिए। इसके सेवन से १०-१५ दिन में ही बहुत दिनों का बन्द आर्त्तव भी पुनः होने लगता है।

(१३) अशोक की छाल का अर्क भपके द्वारा उतार लेना चाहिए। बाद में यह अर्क कच्चे दूध में ६ माशे डाल कर दिन में दो-तीन बार सेवन करना चाहिए। इसके सेवक से पुराने से पुराना रक्त-प्रदर भी नाश हो जाता है।

(१४) कौड़िया लोहबान ३ तोले, भुना हुआ सफेद जीरा १॥ तोला, इन दोनों को बारीक चूर्ण कर नौ मात्रा बना लें। नित्य दो बार केले की फली में रख कर सेवन करना चाहिए। इसके सेवन से असाध्य रक्त-प्रदर भी जाता रहता है।

(१५) कतीरा २ तोला, गोखरू बड़े २ तोले, सफेद कत्था २ तोला, खड़िया २ तोला, इन सबको खूब अच्छी तरह कूट कर चूर्ण बना ले। प्रातःकाल ९ माशे चूर्ण मिश्री मिले हुए बकरी के तीन छटाँक दूध के साथ खावे। इसी प्रकार सायङ्काल को भी सेवन करे। श्वेत-प्रदर के लिए यह दवा अक्सीर है।

(१६) जहरमोहरा, जशबसब्ज (हौलदिली का पत्थर), अनविधे मोती, चाँदीवर्क, सब तीन-तीन माशे लेकर अर्क बेदमुश्क में १ दिन खरल करे। इसमें कहरवा, माजूफल, रूमीमस्तगी, गुलाब के फूल, सफेद चन्दन, तवाखीर, इलायची छोटी और इलायची बड़ी, सब छः छः माशे लेकर बारीक पीस कर कपड़छान करके मिला दे। ईसबगोल के ल्वाब में इन सब की चने के बराबर गोलियाँ बना ले। दो दो गोली सायं-प्रातः बकरी के दूध के साथ खिलाने से श्वेत-प्रदर जाता रहेगा। खटाई तथा बादी चीजों से बचना चाहिए।

(१७) चिकनी सुपारी एक पाव, सेलखड़ी दो तोले, पाँचों मेवा प्रत्येक २ छटांक कुल १० छटांक। घी एक सेर, बूरा १ सेर, मैदा एक सेर। सुपारियों को ढाई सेर दूध में पकावे। दूध सूख जाने पर सुपारी निकाल कर कूटे, मैदा को घी में भून ले। बूरे की चाशनी बना कर सब औषधि मिला कर वजन में एक छटांक के लड्डू बनावे। एक लड्डू प्रातःकाल खावे। २१ दिन के सेवन से स्त्रियों के रक्त-स्राव की बीमारी कैसी भी क्यों न हो, शान्त हो जावेगी। खाने के लिए सिर्फ़ बेसन की रोटी और घृत ही दे।

(१८) कही (करवई) के पत्ते दो तोले, काली मिर्चें ७ नग २ छटांक जल में घोट-छान कर एक तोला मिश्री मिला कर पिलावे। सात दिन में ही आराम होगा। इसका गुण उपरोक्त दवा नं० १७ के समान ही है। तत्काल गुण दिखावेगी। पथ्य भी उपरोक्त ही है।

(१९) कासनी की जड़ १० तोला, खीरे के बीज ४ तोले, ककड़ी के बीज ४ तोले, खरबूजे के बीज ४ तोले, तुख्म कसूस ४ तोले, जङ्गली अमरूद के बीज ४ तोले, मकोय ४ तोला, लोबिआ सुर्ख ३ तोला, पित्तपापड़ा ३ तोला, गुलाब के फूल २ तोले, गावजवाँ २ तोला, गाजर के बीज ४ तोला, बीज कासनी २ तोला, गुलगावजवाँ २ तोला, पोदीना २ तोला, (अगर जङ्गली मिल सके तो अच्छा है) जूफ़े के फूल २ तोले, परशावशाँ २ तोला, काकनज के बीज १॥ तोले। अङ्गूरी सिर्का १ बोतल, मिश्री देशी शक्कर की १। सेर। चार पहर भिगो कर शर्बत बना

लेवे। शाम और सुबह ४-४ तोले इस शर्बत के सेवन करने से सब प्रकार के प्रदर को लाभ होता है।

(२०) गोंद चीनिया एक तोला, गोखरू १ तोला, चिरायता १ तोला, गेहूँ का निशास्ता भुना हुआ १ तोला, सुपारी-तेलिया एक तोला, इन सबको कूट-छान कर चूर्ण बना ले। एक तोला चूर्ण बासी पानी के साथ रोज सुबह के वक्त सेवन करने से सब तरह का प्रदर जाता रहता है। पथ्य केवल मसूर की दाल और चावल देना चाहिए।

(२१) आँवले सूखे, पठानी लोद, दोनों समभाग लेकर चूर्ण कर ले। इच्छा हो तो मिश्री मिला ले। ६ माशे से ९ माशे तक सुबह-शाम भोजन के दो घंण्टे पहिले ताजे पानी के साथ सेवन करने से रक्त-प्रदर शान्त हो जाता है। पथ्य सिर्फ साबूदाना या चावल देवे।

(२२) चीनिया गोंद १॥ तोला, बंसलोचन १० माशा, रूमी-मस्तगी १० माशा, बबूल का गोंद ३। तोला, गोंद सुहॉजना १॥ तोला, बड़ी इलायची के दाने ५ माशे, छोटी इलायची के दाने ५ माशे, सङ्गजराह भस्म ३। तोले, मूँगा भस्म १० माशे, चूहे की लेंडी २ तोले, नागकेशर १ तोला। इन सब के बराबर कूजे की मिश्री लेकर सबको कूट-छान कर चूर्ण कर ले। नित्य प्रातःकाल १० माशे चूर्ण को गोदुग्ध के साथ सेवन करने से ७ दिन में, कैसा भी प्रदर-विकार क्यों न हो, समूल नष्ट हो जाता है। पथ्य मूँग की दाल और गेहूँ की रोटी।

(२३) गेरू, जीरा सफ़ेद, धनियाँ, सतावर, सङ्गजराह,

लाख, पीपल, इन सब को कदली-पुष्प के अर्क में रगड़ कर बेर के बराबर गोलियाँ बना ले। जाड़े के दिनों में ताजे पानी के साथ एक गोली रोज प्रातःकाल, और ग्रीष्म-ऋतु में गेरू के पानी के साथ सेवन करने से रक्त-प्रदर जड़ से नष्ट हो जाता है।

(२४) (कुकुन्दर) (कुकरौंधा) नामक बूटी को जड़ सहित कुचल कर एक तोला स्वरस निकाल कर उसमें एक तोला शहद मिलाकर सायं-प्रातः सेवन करने से रक्त-प्रदर नाश होता है।

(२५) खार खुरक २ तोला, तुख्मबालङ्गू एक तोला, चिरायता १ तोला, कासनी २ तोला, दोनों इलायचियों के बीज ६-६ माशे, वर्गगार, वर्ग कटजवा, वर्ग मकोय प्रत्येक १४ माशा, इन सब को सेर भर पानी में कूट-पीस कर पकावे। जब १॥ पाव पानी रह जाय तब उतार कर छान ले और दो तोला शर्बत बनफ़्शाँ मिलाकर पीने से रुका हुआ रजोधर्म आरम्भ हो जायेगा। लघुपाक पथ्य-पदार्थों का ही सेवन करना इन दिनों बहुत जरूरी है।

(२६) पके हुए केले की फली में मिश्री मिलाकर खाने से सोम रोग नाश होता है।

(२७) आँवलों के रस में शहद मिलाकर सेवन करने से स्त्रियों का सोम रोग जाता रहता है।

(२८) उड़द का आटा, मुलहटी और विदारीकन्द को बारीक पीस कर चूर्ण कर ले। बाद में बराबर की मिश्री मिला कर ३ तोले चूर्ण नित्य गोदुग्ध के साथ सेवन करने से कैसा भी सोम रोग हो, नष्ट हो जाता है।

(२९) अधिक दिन मांम रोग रहने से मूत्रातिसार नामक रोग हो जाता। है ताड़ वृक्ष की जड़, छुहारा, मुलहठी, विदारीकन्द, इन सबको बारीक पीस कर चूर्ण करले। शहद और मिश्री मिलाकर दो तोला नित्य सेवन करने से स्त्रियों का मूत्रातिसार नामक रोग समूल नाश हो जाता है।

(३०) काले तिल, सोंठ, मिर्चकाली, पीपल, भारङ्गी, गुड़ (पुराना), सब ६-६ माश लेकर, इनका काढ़ा बनावे। इस काढ़े को १५ दिन सेवन करने से जो स्त्री रजस्वला न होती हो, अवश्य होने लगेगी।

(३१) किरमाला के पत्ते, नीम के पत्ते, अड़से के पत्ते, पटोल के पत्ते और वच। इन सबको औटा कर, पानी को कपड़े से छान ले। इस जल से योनि धोई जावे तो योनि की दुर्गन्ध नष्ट होती है।

(३२) कौंच की जड़ के काढ़े से योनि धोई जावे तो चौड़ी योनि भी सिकुड़ कर तङ्ग हो जाती है।

(३३) भाँग को बारीक पीस कर, उसकी पोटली बना ले। इस पोटली को स्त्री-योनि में रखने से योनि तङ्ग हो जाती है।

(३४) नं० ३३ में लिखे अनुसार, मोचरस की पोटली रखने से भी योनि-सङ्कोचन होता है।

(३५) दही से योनि धोई जावे तो भी योनि-सङ्कोचन होता है।

(३६) सफेद फिटकरी को फुला लेवे, बाद में धावड़े के फूल और माजूफल सब समभाग लेकर बारीक घूट-पीसकर कपड़-

स्नान कर ले। इनकी पोटली बनाकर योनि में रखे, इससे भी योनि तङ्ग होती है।

(३७) आँवले के रस में मिश्री डाल कर १० दिन पीने से योनि-दाह दूर हो जाता है।

प्रदर आदि योनि रोगों के लिए उक्त नुस्खे पर्याप्त होंगे। इन नुस्खों के सहारे स्त्रियों के रोग समूल नष्ट किए जा सकते हैं। योनि-रोग, स्त्रियों को २० प्रकार के होते हैं। उनकी परीक्षा तथा चिकित्सा किसी योग्य वैद्य से करानी चाहिए। कई आचार्यों ने स्त्रियों को प्रमेह-रोग होना माना है किन्तु :—

रजः प्रसेकान्नारीणां मासिमासि विशुद्ध्यति ।

कृत्स्नं शरीरं दोषांश्च न प्रमेहन्त्यतः स्त्रियः ॥

स्त्रियों को प्रति मास रजोधर्म होता रहता है अतएव उनके शारीरिक समस्त दोष शुद्ध रहते हैं, यही कारण है कि स्त्रियों को प्रमेह-रोग नहीं होता। बाँझ स्त्रियों की चिकित्सा हम आगे चल कर लिखेंगे। अब अगले अध्याय में हम पुरुषों की नपुंसकता का वर्णन और उसकी चिकित्सा लिखेंगे।

चौथा अध्याय

(१) सात प्रकार की नपुंसकता

नपुंसकता किन किन कारणों से पैदा होती है, यह बात हम पहिले अध्याय में अच्छी प्रकार समझा चुके हैं। दुबारा उसी विषय को लिखना व्यर्थ समझ कर, अब हम यहाँ यह समझाने की कोशिश करेंगे कि नपुंसकता कितने प्रकार की होती है ?

जो मनुष्य स्त्री से मैथुन करने की इच्छा करे, लेकिन अपनी निर्बलता के कारण अपनी इच्छा पूरी न कर सके, उसे नपुंसक कहते हैं। यदि किसी प्रकार मैथुन में प्रवृत्त हो जावे तो दम फूल उठे, शीघ्र ही वीर्य निकल जावे, शरीर पसीने से भीग जावे, मैथुन में दोनों (पति-पत्नी) को आनन्द न आवे, लिङ्ग ढीला हो जावे, स्त्री को स्खलित न कर सके, और जिसके वीर्य में वीर्य-जन्तु न हों, अथवा निर्बल हों, ऐसे पुरुष को नपुंसक या नामर्द कहते हैं, आयुर्वेद ने सात प्रकार की नपुंसकता मानी है :—

क्लीवः स्यात्सुरताशक्त स्तद् भावः क्लैव्यमुच्यते ।

तच्चसप्त विधं प्रोक्तं निदानं तस्य कथ्यते ॥

—भावप्रकाश

सात प्रकार की नामर्दी

(१) मानस-क्लैब्य—मन की निर्बलता के कारण नामर्दी।

(२) पित्तज-क्लैब्य—पित्त की अधिकता से नामर्दी।

(३) वीर्यक्षयजन्य-क्लैब्य—वीर्य की कमी के कारण नपुंसकता।

(४) रोगजन्य-क्लैब्य—बीमारी के कारण नामर्दी।

(५) शिराछेदजन्य-क्लैब्य—वीर्य-वाहक नसों के कट जाने के कारण पैदा हुई नामर्दी।

(६) शुक्रस्तम्भन-क्लैब्य—वीर्य के रोकने से नामर्दी।

(७) सहज-क्लैब्य—जन्म से ही नामर्दी।

* * *

मानस-क्लैब्य के लक्षण और उपाय

द्वेष्य स्त्री संप्रयोगाच्च क्लैब्यं तन्मान संस्मृतम्।

जिस पुरुष को मैथुन-विषयक बातचीत बुरी लगे और स्त्री-रमण से द्वेष हो, उसे मानस-क्लैब्य कहते हैं। मनुष्य विश्वास रूप ही है। जिसका जैसा विश्वास होता है वह वैसा ही बन जाता है। अपनी आत्म-शक्ति पर मनुष्य का पूरा-पूरा अधिकार होना चाहिए।

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः।

अर्थात्—मन ही मनुष्य के मोक्ष और बन्धन का कारण है।

मन की शक्ति कितनी प्रबल है, इसे लोग बहुत कम जानते हैं।

मन की शक्ति के आगे संसार की समस्त शक्तियाँ तुच्छ हैं। शारीरिक बल भी मानसिक बल के आगे कुछ नहीं है। पूर्वकाल में हमारे ऋषियों का मनोबल इतना उन्नत होता था कि बड़े-बड़े भीमपराक्रम—योद्धा उनसे हार खाया करते थे। वे लोग मानसिक शक्ति को मुख्य, और शारीरिक शक्ति को गौण समझते थे। परन्तु इस जमाने में लोगों ने शारीरिक शक्ति को मुख्य मानकर मानसिक शक्ति को तुच्छ समझ लिया है। जिनका मन सबल है वे असम्भव काम कर डालते हैं, ऐसा कई बार हमारे अनुभव में आया है। कभी-कभी शारीरिक शक्ति वाले पुरुषों को परास्त होते पाया है। सारांश यह कि बिना मनोबल के शारीरिक शक्ति किसी भी काम की नहीं है। मनुष्य में पहिले पहिल मनोबल की आवश्यकता है शारीरिक बल का तो दूसरा नम्बर है। यह बात बिलकुल सत्य है कि :—

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।

मनुष्य का मन जब भय, शोक, क्रोध, घृणा आदि दुखों से दुखी होकर बिगड़ जाता है तब उसके मन की उमङ्ग एकदम ठण्डी हो जाती है। मैथुन-कार्य का सारा दारोमदार मन पर है। यही कारण है कि काम का नाम मनोज और मनसिज है। काम की उत्पत्ति मन से है। जब मन ही बिगड़ गया तो फिर काम-क्रिया अर्थात् मैथुन कैसा ? यही कारण है कि मैथुन के समय यदि मन ही बिगड़ गया तो पुरुष का लिङ्ग शिथिल होकर गिर जाता है। इस प्रकार की नपुंसकता को मानसिक नपुंसकता कहते हैं।

आजकल की विवाह-प्रथा के कारण पुरुषों को उनकी इच्छानुकूल पत्नी न मिलने से प्रायः जब वे काम की उमङ्ग में स्त्री के पास जाते हैं तब चिन्ता, क्रोध, दुःख और घृणा के भावों का मन में उदय होने से उनका लिङ्ग शिथिल हो जाता है। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अपने पर विश्वास नहीं रखते, अपने मन में वे यही सोचा करते हैं कि, "मैं अपनी स्त्री को खुश न कर सकूँगा। वहाँ उसके पास जाने पर यदि मैं उसे तृप्त न कर सका तो बड़ी ही लज्जा की बात होगी।" इस प्रकार के विचारों से मनुष्य मानसिक क्लैब्यता को पहुँचता है। व्यर्थ का भय, लज्जा और शोक नहीं करना चाहिए।

बहुत सी स्त्रियाँ इतनी बेहया और दुष्टा होती हैं कि वे झूठ-मूठ ही अपने साथ मैथुन करने वाले पुरुष से ऐसी ऐसी बातें कह देती हैं जिनसे उनका नामर्द होना प्रकट होता है। ऐसी औरतों की बातों से अच्छे वीर्यवान और बलवान पुरुष के मन पर भी बुरा सिक्का बैठ जाता है और वह अपने को नामर्द समझने लगता है। फल यह होता है कि उसका मनोबल गिर जाता है और वह मानसिक नपुंसक बन जाता है। सच्चा मर्द होने पर भी वह पुरुष जब कभी स्त्री के साथ मैथुन करने के लिए तैयार होता है तभी उसे वह बात याद आने लगती है कि अमुक स्त्री ने मुझे नामर्द कहा था। बस, इस बात के याद आते ही लिङ्ग ढीला हो गया और वे अपने को वास्तव में नामर्द ही समझने लगे। भय, लज्जा, शोक और चिन्ता के समय पुरुष

को स्त्री-प्रसङ्ग कदापि न करना चाहिए। मानसिक नामर्दी एक प्रकार की मुर्दादिली है। अपनी शक्ति पर अविश्वास है, वहम है, शङ्का है और कुछ भी नहीं है। मानसिक नपुंसक को स्त्री से अलग रहने पर कामोत्तेजन होता है, लेकिन स्त्री के पास जाते ही उत्तेजना शान्त हो जाती है। ऐसे मानसिक क्लैब्य की दवा यही है कि वह मन से मुर्दादिली हटा कर अपने पुरुषार्थ पर विश्वास रखे, अपनी आत्म-शक्ति पर भरोसा लावे। अपना दिल और दिमाग़ बलवान बनावे। कोई पौष्टिक दवा का सेवन भी करना चाहिए। इसकी सबसे अच्छी दवा आत्म-सम्मान, स्वाभिमान, आत्म-विश्वास और मन पर अधिकार जमाना है। और कोई दवा इस नामर्दी की नहीं है।

* * *

पित्तज-क्लैब्य के लक्षण और उपाय

कटु काम्लैः सलवणैरति मात्रोप सेवितैः।

पित्ताच्छुक्र क्षयो दृष्टः क्लैब्यं तस्मात्प्रजायते॥

मिरच, खटाई, नमक प्रभृति पित्तकारक पदार्थों के अत्यन्त सेवन से पित्त बढ़ कर वीर्य को ख़राब कर देता है। वीर्य के क्षय होने से पुरुष नपुंसक हो जाता है। एक जगत प्रसिद्ध कहावत है—

बह बिगड़ी जो खाय मिठाई, नर बिगड़ा जो खाय खटाई।

मिर्च-मसालों की तेजी से पित्त बिगड़ कर जो नपुंसकता पैदा होती है वह " पित्तज-क्लैब्य " कहाती है। *

लालमिर्च, खटाई, तीखा नमक, चटपटे मसाले इत्यादि पदार्थ पित्त को दूषित करते हैं। जो लोग इन तीखे, रूखे और गर्म पदार्थों के सेवन में कुछ भी आगा पीछा नहीं सोचते, वे नामर्द हो जाते हैं। क्योंकि इन पदार्थों के सेवन से पित्त कुपित हो जाता है या एकदम अतिशय बढ़ जाता है। पित्त का कुपित होना या बढ़ जाना बहुत ही बुरा है। हम पीछे दूसरे अध्याय में कह आए हैं—"हमारे आहार की तीसरी क्रिया के समय पित्त बनता है जो पाचक पित्त में मिल कर उसे पुष्ट करता है।" पित्त वीर्य बनाने वाली धातु है, जब यह पित्त ही दूषित हो जावे तो वीर्य आवेगा ही कहाँ से। किसी जलाशय के सोतों को बन्द करके जिस प्रकार पानी की इच्छा करना मूर्खता है, ठीक उसी तरह पित्त को बिगाड़ कर मर्द होने की इच्छा है। जैसे शरीर में वीर्य की कमी होने से पुरुष नामर्द हो जाता है वैसे ही वीर्य में विकार होने पर भी पुरुष नपुंसक हो जाता है। ऐसे नामर्दों का वीर्य एकदम पतला होता है। इसका कारण तेज़ मसाले हैं।

---

* हमारे बहुतेरे भाई जो मिर्च-मसाले खाने में अपना पुरुषत्व दिखाते हैं और अपने को मर्द समझते हैं, जो मिर्च-मसालों से बचने वाले पुरुषों को नामर्द अथवा मरीज़ समझते हैं; उन्हें अपनी दशा पर थोड़ा विचार करना चाहिए।

—लेखक

जिन्हें स्त्री-सुख भोगने की अभिलाषा हो, जो अपनी सन्तान अच्छी पैदा करने के इच्छुक हों और जिन्हें मर्द कहलाना हो, उन्हें लालमिर्च, खटाई, तेज नमक, मसाले और गर्म पदार्थ त्याग देने चाहिएँ। मूर्ख वैद्यों की दवाइयों से भी पित्तज नामर्दी होती देखी गई है। कच्ची-पक्की, वङ्ग-भस्म, पारद-भस्म, लोह-भस्म तथा तेजी उत्पन्न करने के लिए भाँग, अफीम, कुचला आदि के सेवन से भी नपुंसकता पैदा होती है। मूर्ख वैद्यों द्वारा बनाई गई भस्मों से बड़े-बड़े रोग उत्पन्न होते देखे गए हैं यहाँ तक कि जिन्दगी ही बरबाद हो जाती है। जो लोग नशे को मर्दी देने वाला मानते हैं वे बड़ी ही भूल करते हैं। क्षणिक उत्तेजक होने के कारण ही लोग ऐसा मानने लगे हैं। किन्तु, वास्तव में नशे से वीर्य का नाश होता है। यद्यपि स्तम्भन में अफीम एक ही चीज है तथापि नामर्दी पैदा करने में भी इससे बढ़ कर अन्य नशा नहीं है। अफीम खा लेने से आरम्भ में, मैथुन में देर लगती है, लेकिन फिर धीरे-धीरे शीघ्र पतन पल्ला पकड़ लेता है और नामर्द हो जाते हैं। एक प्रसिद्ध वैद्य ने अपनी पुस्तक में लिखा है—"लाल मिर्च, खटाई, नशा और पित्तकारक पदार्थों के सेवन करने वाले नामर्द को यदि अमृत भी पिलाया जावे तो भी नामर्दी नहीं जा सकती।" अर्थात् "पित्तज-क्लैब्य" दूर करने के लिए सबसे पहिले पुरुष को ऐसे मिर्च-मसालों का छोड़ देना बहुत ही जरूरी है। बिना इन पदार्थों के छोड़े, लाखों उत्तमोत्तम औषधि सेवन करने से भी कुछ लाभ नहीं होगा।

"पित्तज-क्लैब्य" में पुरुष का वीर्य अत्यन्त पतला पानी के तुल्य होता है। उसमें वीर्य-कीट नहीं होते। यदि होते भी हैं तो अत्यन्त निर्बल और थोड़े। ऐसे पुरुषों के वीर्य में लस नहीं होता। मैथुन के समय शीघ्र ही वीर्यपात हो जाता है, कुछ भी आनन्द नहीं आता! बहुतों को तो कामोत्तेजन ही नहीं होता। यदि हुआ भी तो नाम मात्र के लिए ही। ऐसे रोगी के चित्त पर गर्मी और सुस्ती रहती है। ऐसे रोगी को अपना आहार बिलकुल सादा और सुपच रखना चाहिए। वीर्य को गाढ़ा करने वाले और बढ़ाने वाले पदार्थ ही भोजन में रहने चाहिएँ। नीचे लिखे अनुसार औषधि तैयार कर सेवन करने से पित्तज-क्लैब्य नाश हो जाता है।

(१) विदारीकन्द में विदारीकन्द की भावना देकर उसकी गोलियाँ बना ले। दो गोली सुबह और दो गोली सायङ्काल को गोदुग्ध के साथ सेवन करना चाहिए।

(२) आँवलों को आँवलों के स्वरस की ७ भावनाएँ देकर और सुखाकर घी अथवा शहद के साथ खिलाना चाहिए।

(३) विदारीकन्द और गोखरू को समभाग लेकर चूर्ण कर ले, बाद में बराबर की मिश्री मिला ले। नित्य प्रातः समय एक तोला गोदुग्ध के साथ सेवन करे।

(४) देशी शक्कर के बने हुए आँवले का मुरब्बा ले। रोज़ एक नग आँवले को चाँदी के वर्क़ में लपेट कर सेवन करने से बड़ा भारी लाभ होता है।

(५) शतावर-पाक खिलाने से भी यह रोग समूल नाश हो जाता है। शतावर-पाक इस प्रकार बनाना चाहिए :—

शतावर ४ तोला, गोखरू ४ तोला, बला ४ तोला, अतिबला ४ तोला, कौंच के बीज ४ तोला, तालमखाना ४ तोला, विदारीकन्द ४ तोला। इन सब को कूट-छान कर पाव भर शुद्ध घृत में भून ले। ४५ तोला खोआ भून कर इसमें मिला दे। १। सेर मिश्री की चाशनी बना कर इसमें खोआ वग़ैरह सब मिला दे। ऊपर से त्रिफला, त्रिकुटा, कचूर, धनियाँ, सुगन्धवाला, दोनों जीरे, कपूर कचरी, काकोली, चीर काकोली, वंसलोचन, जावित्री, जायफल, चव्य, देवदारु, प्रियङ्गु, लौंग, भूरिछरीला, चमेली के फूल, अजवायन, कायफल, नागकेशर, मुलहटी, सौंफ, तालीसपत्र। सब एक-एक तोला लेकर चूर्ण कर ले और ऊपर लिखे अनुसार तैयार की हुई चाशनी से मिला दे, ऊपर से आध पाव किशमिश और पाव भर बादाम की मींगी डाल कर एक-एक तोले के लड्डू बाँध ले। नित्य प्रातःकाल एक लड्डू खाकर ऊपर से दूध पिए।

(६) सफ़ेद कद्दू (पेठे) का गूदा २॥ सेर पाँच सेर पानी में डाल कर मिट्टी के बर्तन में पकावे। जब आधा जल रह जावे तब चूल्हे से नीचे उतार कर निचोड़ ले और थोड़ा धूप में सुखा ले। अब उसे पत्थर पर पीस कर पीठी सी बना ले। इस पीठी को आध सेर घी में भूने, जलने न पावे यह ध्यान रखना चाहिए। जब सुर्ख रङ्ग हो जावे तब उतार ले।

इसमें अब सोंठ २ तोले, पीपल २ तोले, सफ़ेद जीरा २ तोले, धनियाँ ६ माशे, छोटी इलायची के दाने ६ माशे, तेजपात ६ माशे और दालचीनी ६ माशे, इन सबको कूट-कपड़छान करके मिला दे। इतना हो चुकने पर २॥ सेर मिश्री की चाशनी बनाकर उसमें उक्त सब चीजें डालकर चलावे और दस मिनट बाद आग से नीचे उतार ले। जब शीतल हो जावे तब एक पाव शुद्ध बढ़िया मधु और ६ माशे चाँदी के वर्क़ उसमें मिला दे और एक पात्र में रख दे। इसको नित्य सुबह के वक्त चार तोले सेवन करना चाहिए।

(७) ईसबगोल की भूसी में मिश्री बराबर की मिला ले। सुबह के वक्त ६ माशे चूर्ण को फाँक कर ऊपर से मिश्री मिला हुआ गऊ का दूध पी ले।

वीर्यक्षयजन्य-क्लैब्य के लक्षण और उपाय

अतिव्यवायशीलो यो न च वाजीक्रियारतः।
ध्वज भङ्ग मवाप्नोति सशुक्र क्षय हेतुतः॥

जो मनुष्य मैथुन तो खूब करे और वीर्य बढ़ाने वाली वाजीकरण औषधियों का सेवन न करे; उसके वीर्य क्षीण हो जाने से इन्द्रिय शिथिल हो जाती है, उसे शुक्रक्षयजन्य नपुंसक कहते हैं।

वीर्य कितनी बहुमूल्य और अलभ्य वस्तु है, इस विषय पर हम दूसरे अध्याय में विस्तारपूर्वक लिख चुके हैं। सृष्टि-नियम के विरुद्ध, क़ानून-क़ुदरत के खिलाफ़ मैथुन द्वारा बेवक़ूफ़ी और नादानी

से वीर्य का अपव्यय करने से भी नपुंसकता हो जाती है। मैथुन का परिणाम वीर्यपात है, जब कि अधिक मैथुन द्वारा वीर्य ही खर्च कर दिया जावे तो मर्दी आवेगी कहाँ से ? ऐसे नपुंसक को चेतनता तो होती है, लेकिन बिना वीर्यपात के ही लिङ्ग ढीला हो जाता है। क्षणिक उत्तेजना होकर शिथिलता आ जाती है। मैथुन में ऐसे व्यक्ति का वीर्य गिरता ही नहीं, यदि गिरता भी है तो बूँद-बूँद करके बहुत थोड़ा। ऐसे मर्दों से स्त्री की अभिलाषा पूर्ण नहीं हो सकती अतएव ऐसे लोगों को नामर्द समझना चाहिए।

इस नपुंसकता के साथ ही साथ शरीर कमजोर हो जाता है, मुँह की कान्ति जाती रहती है, मिजाज चिड़चिड़ा हो जाता है, सूरत बिगड़ जाती है, आँखें भीतर धँस जाती हैं। दिल, दिमाग़ कमजोर हो जाता है, नींद नहीं आती, घबराहट होती है, चक्कर आते हैं। भय बना रहता है, बुरे स्वप्न आते हैं, सुस्ती रहती है इत्यादि सैकड़ों ही दोष पैदा हो जाते हैं। बहुतेरे मूर्ख नित्यप्रति वीर्यपात करते हैं। बहुत से नित्य कई बार करते हैं। हस्त-मैथुन, गुदा-मैथुन, पशु-मैथुन और बहु मैथुन से अपना वीर्य—अपने जीवन का सार नष्ट करते रहते हैं। प्रकृति उन्हें नियमोल्लङ्घन के दण्डरूप में नामर्द बना देती है। देश में अन्धेर हो रहा है। छोटे-छोटे बच्चों के विवाह हो रहे हैं। बाल-विवाह की कृपा से ऐसे नपुंसकों की संख्या करोड़ों तक पहुँच गई है। काल के ग्रास बूढ़े पुरुष भी १४,१५ वर्षीया कन्या का हाथ पकड़ कर वीर्य का दिवाला निकाल रहे हैं। ऐसे काम के पुजारी भी नामर्द हो जाते

हैं। ध्यानपूर्वक देखेंगे तो आपके समीप ही ऐसे अनेक उदाहरण मिल जावेंगे।

ऐसे नामर्दों को चाहिए कि सबसे पहिले वीर्य-रक्षा करें। बाद में बल-वीर्य-वर्द्धक पदार्थों, जैसे दुग्ध, घृत, मक्खन, रबड़ी, मलाई, दही, हलुआ, बादाम आदि का उचित परिमाण में सेवन आरम्भ कर दें।

(१) आध पाव बादाम की मींगी पानी में भिगो दे। जब भीग जावे तब उनका छिलका हटा कर पत्थर पर पीस कर पीठी बना ले। इस पीठी को पाव भर मिश्री की चाशनी में डाल कर पका ले। जब दोनों एक जान हो जावें तब एक छटांक गरम घी डाल कर चलावे। इसमें २ रत्ती छोटी इलायची के बीज डाल कर नीचे उतार ले। इच्छा हो तो २-३ चाँदी के वर्क़ भी डाल लेवे। अपने बलाबल का ध्यान रख कर इसे सेवन करने से बहुत ज्यादा बल-वीर्य बढ़ता है।

(२) उर्द की दाल के छिलके साफ़ कर ले। बाद में उसे खूब घी में अच्छी तरह भून ले। अब इस दाल को गोदुग्ध में डालकर खीर बना ले। अपने बलाबल का ध्यान रख कर इसे नित्य सेवन करने से वीर्य बढ़ता है।

(३) उर्द के लड्डू बनाकर खाने से भी वीर्य बढ़ता है। इनके बनाने की विधि सहज है, इसलिए यहाँ नहीं लिखी गई।

(४) अच्छे पके हुए मीठे आमों का रस १६ सेर, देशी मिश्री ४ सेर, गो-घृत १ सेर, काली मिर्च २० तोले, सोंठ का

मैदा ३२ तोले, पीपल १० तोले, इन सब में ४ सेर पानी मिला क
मिट्टी के पात्र में पकावे। चलाने के लिए काठ की लकड़ी लेवे। जब
बिलकुल गाढ़ा हो जावे तब नीचे उतार कर उसमें नीचे लिखी
दवाएँ मिलावे। धनियाँ, जीरा, चित्रक, पत्रज, नागरमोथा, दाल
चीनी, कलौंजी, पीपला मूल, नागकेशर, इलायची, लौंग, जायफल
प्रत्येक चार-चार तोले लेकर चूर्ण कर लेवे और उपरोक्त पाक में
मिला दे। इसे चीनी के या मिट्टी के चिकने वर्तन में भरकर रख दे।
नित्य भोजन के पूर्व चार तोले खाने से नामर्दी जाती रहती है।

(५) नागौरी असगन्ध एक सेर, सोंठ वैतरा आध सेर
पीपल पाव भर और कालीमिर्च आध पाव, इन्हें पीसकर कपड़
छान कर ले। सोलह सेर गो-दुग्ध लेकर औटावे, जब आधा रह
जावे तब उपरोक्त चूर्ण मिलाकर खोआ बना ले। इस खोवे को दो
सेर गो-घृत में भूने, जब लाल हो जावे तब उतार ले। दूसरी
कड़ाही में चार सेर अच्छे बूरे की अथवा मिश्री की चाशनी बना
कर उसमें भुना हुआ खोआ मिला दे। जब लड्डू बाँधने के लायक
चाशनी हो जावे तब उसमें तज, तेजपात नागकेशर, इलायची, लौंग,
पीपला मूल, जयाफल, तगर, वंशलोचन, नेत्रवाला, सफ़ेद चन्दन का
चूर्ण, आँवला, नागरमोथा, खैरसार, चीते की छाल और शतावर,
इन सबका एक-एक तोला कपड़छन चूर्ण मिलाकर आग से नीचे
उतार ले। ठण्डा होने पर आधी-आधी छटाँक के लड्डू बाँध ले।
एक लड्डू रोज सुबह खाकर ऊपर से मिश्री मिला गो-दुग्ध पीना
चाहिए। यह पाक गरम है, यह अच्छी तरह ध्यान में रखना

चाहिए। सर्दी या वादी प्रकृति के पुरुषों को ही लाभप्रद है और दूसरों को हानिप्रद है। इसे जाड़े की मौसम में ही खाना चाहिए।

(६) सफ़ेद मूसली तीन पाव, कूट पीसकर कपड़छान कर ले। बबूल का बढ़िया गोंद डेढ़ पाव घी में भून कर फूले बना ले। लौंग, छोटी इलायची, नागकेशर, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, तेजपात, जावित्री और जायफल, इन सबको डेढ़ तोला लेकर उम्दा बारीक चूर्ण कर ले। आध सेर घी में सफ़ेद मूसली के चूर्ण को मन्द अग्नि में भूने; जब सुर्ख हो जावे तब उतार ले। अब ४ सेर मिश्री की चाशनी तैयार करे, जब चाशनी होने पर आवे तब गोंद और सफ़ेद मूसली डाल कर खूब चलावे। पाक के लायक़ चाशनी होने में जब १० मिनट रह जावें तब लौंग, इलायची आदि का चूर्ण भी उसमें छोड़ दे। अब नीचे उतार कर वङ्ग-भस्म १॥ तोला, वर्क़ चाँदी ६ मारो और वर्क सोने के ३ मारो डाल कर सबको एक जी कर ले।

इतना होने पर काँसी की थाली में घी चुपड़ कर उसे इसमें फैला दे। जम जाने पर वर्फी की भाँति काट कर चीनी के बर्त्तन या चिकनी हाँडी में रख दे। नित्य प्रातःकाल दो तोला पाक खाकर ऊपर से मिश्री मिला दूध पीना चाहिए।

(७) ताजा गोखरू लाकर, कूट पीस कर कपड़-छान कर ले। गोखरू के आध सेर चूर्ण को २॥ सेर गो-दुग्ध में डाल कर मन्द मन्द आँच से खोआ तैयार करे। इस खोये को १ सेर गो-घृत में खूब अच्छी तरह भून ले। जब लाल हो जावे तब नीचे लिखी दवाओं का चूर्ण इसमें मिला दे :—

धुली हुई भाँग २॥ तोले, केशर ६ माशे, भीमसेनी कपूर ॥। माशे, कौंच के बीजों की मींगी ६ माशे, छोटी इलायची ६ माशे, अजवायन ६ माशे, नागकेशर ६ माशे, नागरमोथा ६ माशे, सूखे आँवले ६ माशे, सेमर का गोंद ६ माशे, छोटी पीपल ६ माशे, दालचीनी ६ माशे, तेजपात ६ माशे, जायफल ६ माशे, जावित्री ६ माशे, लौंग ६ माशे कालीमिर्च ६ माशे और लोध ६ माशे।

इन सब को मिलाकर पाँच सेर मिश्री की चाशनी में दवा मिला हुआ खोआ मिला कर खूब चलावे फिर आग से नीचे उतार कर घी लगी काँसे की थाली में जमा दे। सूख जाने पर बर्फी काट कर रख ले। नित्य आधी छटाँक सुबह के वक्त खाकर ऊपर से मिश्री मिला हुआ गो-दुग्ध पीना चाहिए, वीर्यक्षयजन्य नपुंसकता के लिए बहुत ही लाभदायक है।

(८) सफ़ेद मूसली, स्याह मूसली, सत्त गिलोय, सोंठ, पीपल, मुलहठी, ईसबगोल, तालमखाना, मुरूली, बबूल का गोंद, रूमी-मस्तगी, बीजबन्द, लौंग और जायफल, सबको चार-चार तोले लेकर कूट-पीस कर चूर्ण कर ले। केशर ४ तोले और धुली हुई भाँग १० तोले पीस कर इसी चूर्ण में मिला ले। सब ... ...घर घी

चित्र-नम्बर ६
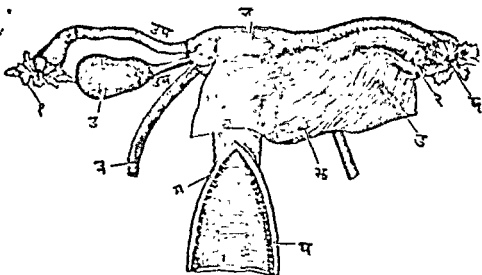
गर्भाशय, डिम्ब-प्रनाली, डिम्ब-ग्रन्थि

ज = जरायु या गर्भाशय; क = चौड़ा बन्धन, यह बन्धन केवल एक ही ओर दर्शाया गया है ; दप = डिम्ब-प्रनाली; डय = डिम्ब-ग्रन्थि का बन्धन; व = जरायु का गोल बन्धन; द = डिम्ब-ग्रन्थि, यह ग्रन्थि चौड़े बन्धन की पिछली तह में रहती है, जैसी कि चित्र में दाहिनी ओर दर्शाई गई है ; १ = डिम्ब-प्रनाली के मुख की झालर; छ = छिद्र, जिसके द्वारा डिम्ब डिम्ब-प्रनाली में पहुँचता है ; म = जरायु का बहिर्मुख; य = योनि

Fine Art Printing Cottage, Allahabad.

रोगजन्य नपुंसकता के लक्षण और उपाय

लिङ्गवृद्धि करान्योगान् सेवते यः प्रमादतः ।
महतामेढ्रयोगेन चतुर्थी क्लीवतां व्रजेत् ॥

जो अज्ञानी पुरुष अज्ञानी वैद्यों की लिङ्ग को बढ़ाने वाली औषधि का प्रयोग करते हैं उससे लिङ्ग बढ़ तो जाता है, किन्तु नपुंसकता आ जाती है। अथवा कोई लिङ्ग-सम्बन्धी भयङ्कर रोग से या अन्य रोगों के कारण जो नामर्दी पैदा होती है, उसे रोगजन्य नपुंसकता कहते हैं। सूजाक, उपदंश, स्वप्न-दोष, प्रमेह आदि वीर्य-नाशक रोगों से दिन प्रतिदिन वीर्य खराब हो जाता है; अतएव ऐसे रोगियों को नामर्दी हो जाती है। ऐसे नामर्द प्यासे मृग की भाँति इधर उधर दवा की खोज में भटकते फिरते हैं। यदि किसी ऊँट-वैद्य की दवा की गई तो हालत पहिले से भी बहुत खराब हो जाती है। अखबारों में छपे हुए विज्ञापनों को देख कर उनसे दवा मँगाते हैं और अपना धन और स्वास्थ्य नष्ट कर देते हैं। फल इसका यह होता है कि धूर्त वैद्यों से धोका खाकर, पैसे गँवाकर फिर चुप हो जाते हैं। वैद्यों पर उनका विश्वास नहीं रह जाता, अतएव आजन्म वे नामर्द ही बने रहते हैं। गार्हस्थ्य सुख से वञ्चित रहते हैं। अपनी स्त्री को करोड़ों का द्रव्य पास में होने पर भी प्रसन्न नहीं रख सकते, क्योंकि स्त्री की तृप्ति अच्छे प्रकार के मैथुन में है न कि रुपये-पैसे में। इस तरह के नपुंसकों की संख्या

भारतवर्ष में बहुत हैं। इनका शुक्र पानी की तरह पतला और निस्सार होता है। देश में ऐसे-ऐसे मर्दों की संख्या कम न है, जिन्हें दर्शन और स्पर्श मात्र से ही वीर्य-पात हो जाता है अपनी निर्बलता जानकर अपनी भार्या को तुष्ट रखने के लिए ऐसे म नित्य प्रति मैथुन करते हैं। मर्द समझता है कि ऐसा न करने शायद मेरी स्त्री पर-पुरुष को ताकने लग जावेगी। ऐसे पुरुष बड़ भयङ्कर भूल करते हैं। जिस बात से बचाने के लिए वे बहु-मैथु करते हैं, वही बात होती है; अर्थात् स्त्रियाँ दूसरे पुरुषों से प्रे करती हैं। इस प्रकार आज देश में व्यभिचार की वृि उत्तरोत्तर होती जा रही है। विषयाधिक्य से स्त्री परितृप्त नहं होती। इसके विषय में एक लेडी डॉक्टर श्रीमती सत्यभाम देवी बी० ए०, एम० डी० का कथन विशेष विचारणीय है। कहती हैं :—

"कोई कोई घमण्डी पुरुष इस मूर्खता में फँस कर बहु-मैथुन करते हैं कि—"कहीं स्त्री यह न समझ ले कि इसमें बल नहं है।" ऐसे मूर्ख यह नहीं जानते कि बहु-मैथुन के कारण जब हम नामर्द हो जावेंगे, तब बिलकुल ही इच्छा पूरी न कर सकेंगे फिर क्या होगा ? यह लिखना आवश्यक है कि स्त्री बहु-मैथुन में कभी प्रसन्न नहीं होती, बल्कि उसे ऐसे पुरुष से उलटी घृणा होने लगती है। पूर्ण स्खलित होना ही स्त्री के लिए परम आनन्द का विषय है। नित्य कोई स्त्री स्खलित हो ही नहीं सकती। यदि नित्य स्खलित होने लगे तो शीघ्र ही मुर्दा बन जावेगी। स्त्री पन्द्रहवें दिन

उचित और पूर्ण मैथुन करने वालों को, नित्य ही अपना आपा खोने वालों की अपेक्षा अधिक पसन्द करती हैं।

विषयाधिक्य से नपुंसकता होती है। पूर्ण वयस्कों के लिए भी यह एक न एक दिन आगे चल कर नामर्द बना देता है। आयुर्वेद में लिखा है :—

आहारस्य परंधाम वीर्यं तद्रक्षमात्मनः।
क्षयो यस्य बहून् रोगान्मरणं च नियच्छति॥

बहु-मैथुन के प्रेमियों को ध्यान में रखना चाहिए कि अति मैथुन से स्त्री का जीवन भी नष्ट हो जाता है, परन्तु स्त्री से पुरुष को ज्यादह हानि होती है। पुरुष के वीर्य में कुछ ऐसा गुण है कि वह स्त्री के शरीर को विशेष लाभप्रद होता है। बालक तो उत्पन्न होता ही है, किन्तु इसके अतिरिक्त स्त्री की बहुत कुछ शारीरिक उन्नति होती है। प्रायः देखा जाता है कि विवाह के पूर्व कन्या के शरीर का जो डील-डौल था वह विवाह के कुछ ही महीनों बाद ड्यौढ़ा और दूना तक होता देखा गया है। पुरुष की दशा इसके विपरीत होती है। विवाह होते ही दिन प्रतिदिन उसका शरीर जर्जर और दुर्बल होने लगता है। मैथुन के समय जितना सार-भाग पुरुष को त्यागना पड़ता है, उतना स्त्री को नहीं। यदि तुलना करके देखा जावे तो जहाँ पुरुष का दस भाग हो, वहाँ स्त्री का एक भाग जाता है। पुरुष का वीर्य जितना भी निकलता है उसकी तुलना में नारी-देह का सार न कुछ के बराबर है। जिस

प्रकार सहवास के पश्चात् पुरुष के लिङ्ग में कमजोरी आ जाती है उस तरह स्त्री में निर्बलता नहीं आती। स्त्रियों में काम की मात्रा पुरुषों से दस गुना अधिक है, इस रहस्य को हमारे पाठक हमारे इस विवेचन से भली प्रकार समझ गए होंगे। बहु-मैथुनाभ्यासी पुरुषों को बहु-मैथुन त्याग कर अपनी नामर्दी हटाना चाहिए।

अति श्रम से, अति रोगी रहने से, अति चिन्ता से, अति शोक से, अति भोजन से, अति क्षुधा से भी कामोत्पादक शक्ति नष्ट हो जाती है। मैथुन की इच्छा ही नहीं होती। यदि कभी मैथुन किया भी तो मूर्च्छा या बेहोशी सी आ जाती तथा प्यास लगती है। ऐसे पुरुष का दिल और दिमाग़ भी कमजोर हो जाता है। आमाशय और यकृत के निर्बल हो जाने से भी नपुंसकता पैदा हो जाती है। इनके निर्बल होने से शरीर की समस्त धातु निर्बल हो जाती हैं। इसी कारण सम्भोग-शक्ति कम हो जाती है। यदि आमाशय आदि की निर्बलता से नपुंसकता हुई हो तो पहले उनका उपाय करना चाहिए। दिमाग़ की कमजोरी के कारण यदि नामर्दी हो तो गर्म-सर्द तासीर का ध्यान रखकर पौष्टिक माजून, पाक या चूर्ण सेवन करने से लाभ होगा। गुर्दों की निर्बलता से भी नपुंसकता पैदा होती है। इसलिए गुर्दे यदि कमजोर और रोगी हों तो उनका भी इलाज कराना चाहिए। इनके बलवान और निरोग होने पर नामर्दी दूर हो जाती है। पुरुष को इस विषय में रोग का कारण ढूँढकर बड़ा सावधानी

से इलाज करना चाहिए। पौष्टिक और बल-वर्द्धक नुस्खे हम इसी अध्याय में आगे चल कर लिखेंगे।

शिराच्छेद-जन्य नपुंसकता के लक्षण और उपाय

पञ्चमी क्लीवता ज्ञेया शिराच्छेदादि कारणात्॥

यदि किसी कारण वीर्य-वाहिनी नसें कट जावें या छिद जावें तो लिङ्ग में उत्तेजना नहीं होती। ऐसी नामर्दी को शिराच्छेद-जन्य नपुंसकता कहते हैं। अण्ड-कोष के अण्ड यदि नष्ट कर दिए जावें, कुचल दिए जावें या काट दिए जावें तो भी पुरुष नपुंसक हो जाता है। गुदा और अण्डों के बीच की नस के कट जाने से भी नपुंसकता आ जाती है। सिद्धासन के समय इसी नस को एड़ी से दबाया जाता है। फल यह होता है कि आसन के अभ्यासी की काम-वासना शान्त हो जाती है। कान के पीछे की नस कट जाने से भी पुरुष नामर्द हो जाता है। दोनों कानों के पीछे दो वीर्य-वाहिनी शिराएँ हैं। ये दोनों शिराएँ भेजे से मिलकर उतरी हैं और प्रत्येक अवयव की एक शाखा इन रगों में आ मिली हैं और ये रगें अण्ड-कोष में चली गई हैं। कान के पीछे नसों में दूध के समान रस वहता है। इन नसों में से यदि जरा सा भी यह दूध [illegible] का पानी निकाल दिया जावे तो इतनी कमजोरी आती है कि बहुत सा खून निकलने पर भी उतनी कमजोरी नहीं होती।

वीर्य-वाहिनी नसों के तथा मर्मस्थानों के कट जाने से छिद जाने से अथवा टूट-फूट जाने से नामर्दी होती है। यह एक भनायक

नपुंसकता है। इसका कुछ भी उपाय नहीं है। कोई दवा-दारू अपना प्रभाव नहीं कर सकती। पुरुष को चाहिए कि वह अपने ऐसे स्थानों को सावधानी से रखे। चोट, दबाव, शस्त्र आदि से सर्वदा बचाता रहे।

शुक्रस्तम्भन नपुंसकता के लक्षण और उपाय

बलिनः क्षुब्ध मनसो निरोधाद्‌ब्रह्मचर्यतः।
षष्टं क्लैब्यं स्मृतंतत्तु वीर्यस्तम्भ निमित्तकम्॥

यदि बलवान व्यक्ति खिन्नमन होकर ब्रह्मचर्य से वीर्य को रोक लेवे तो वह "शुक्र-स्तम्भ क्लीब" कहाता है। जो पुरुष ब्रह्मचर्य-काल के पश्चात् अर्थात् २५-३० वर्ष की अवस्था के बाद भी वीर्य-पात नहीं करता उसे फिर कामोत्तेजन नहीं होता, अर्थात् ऐसा पुरुष स्त्री-प्रसङ्ग के काम का नहीं होता। वर्षों तक काम को निरोध करने से इन्द्रिय शान्त हो जाती है। उसे स्त्री-प्रसङ्ग की कभी इच्छा नहीं होती। वीर्य के रुकने से कामोत्तेजन नहीं होता। जब कि मन में ही काम-वासना नहीं तो मनोज कहाँ से हो? यह नपुंसकता सब प्रकार के मैथुनों से बचने पर होती है। वीर्य स्थिर हो जाता है—पुरुष ऊर्ध्वरेता हो जाता है। यह नपुंसकता निन्दनीय नहीं है। ऐसे नपुंसक केवल काम-वासना से दूर रहते हैं और संसार के बड़े से बड़े काम सहज ही में कर डालते हैं। ऐसे लोग धन्य हैं। इनके मुख पर चमक रहती है। शरीर लोह के समान कठोर और दृढ़ होता है। बड़े ही पुरुषार्थी होते हैं। धैर्य, क्षमा,

दम, संयम, शूरता, साहस, निर्भयता उनके साथ रहती हैं। यदि दोष है तो केवल इतना ही कि कामिनी की कामना पूर्ण नहीं कर सकते, क्योंकि उनके शरीर में मनोज का ठौर-ठिकाना ही नहीं होता! ऐसे ही पुरुष महात्मा होते हैं। जिन्होंने काम को अपने वश में कर लिया उन्होंने इस संसार की प्रत्येक वस्तु पर अपना प्रभुत्व जमा लिया।

किसी वस्तु को जब कि कुछ दिनों तक काम में न लाया जावे तो वह निकम्मी सी हो ही जाती है। इसी प्रकार जो कभी भी इन्द्रिय-परिचालन नहीं करता अथवा इस विषय का मन में ध्यान तक भी नहीं करता वह स्त्री-प्रसङ्ग के लिए अयोग्य-सा हो जाता है। काम-ज्वाला एक ऐसी वस्तु है कि मनुष्य जितना इसकी ओर बढ़ेगा उतनी ही यह उत्तरोत्तर भयङ्करता धारण करती हुई धधकती जावेगी। परन्तु, ज्यों ही इस ओर से उदासीनता धारण की कि वह शान्त होती चली जाती है। बच्चे को यदि दूध पीने से १५-२० दिन के लिए माता से दूर कर लिया जावे तो २-४ दिन स्तनों में कष्ट होने के बाद फिर दुग्ध ही नहीं बनता। यही दशा वीर्य-रक्षा करने वालों की होती है, अर्थात् उनकी कामेच्छा शान्त होजाती है। ऐसे पुरुषों को यदि स्त्री-प्रसङ्ग करने के योग्य बनना हो तो दवा-दारू से काम नहीं चलेगा। उन्हें ऐसे उपायों का अवलम्बन करना चाहिए जिससे कि उनके हृदय-सरोवर में काम की लहरें उठने लगें। अपनी-अपनी सहूलियत के अनुसार प्रत्येक पुरुष इसका उपाय सोच सकता है। हम भी निम्न उपायों को यहाँ लिखते हैं :—

(१) अपने अत्यन्त प्यारे मित्रों से स्त्री-विषयक गुप्त चर्चा करना।

(२) एकान्त में नग्न स्त्रियों के चित्रों को देखना।

(३) मधुर स्वर वाली खूबसूरत स्त्रियों के नृत्य-गीत को सुनना और देखना।

(४) स्त्रियों के गुप्त अङ्गों को देखने की चेष्टा करना।

(५) पशु-पक्षियों का मैथुन देखना।

(६) कामोत्तेजक पदार्थों का सेवन करना।

(७) शृङ्गार-रस पूर्ण कथा, उपन्यास आदि देखना।

(८) शृङ्गार-रस के नाटक, सिनेमा वग़ैरह देखना।

(९) खूबसूरत स्त्रियों से सरोवर के किनारे बैठकर, कुसुमित उद्यानों में बैठकर प्रेमपूर्ण वार्त्तालाप करना।

(१०) जलाशयों में स्त्रियों के साथ जल-क्रीड़ा करना।

(११) रूप-यौवन सम्पन्ना, षोड़श वर्षीया कन्याओं के साथ हँसी-मज़ाक़ करना, उनके अङ्गों को स्पर्श करना, उनके कुचों को मर्दन करना तथा उनके गुलाबी गालों को चुम्बन करना।

(१५) अपना नग्न शरीर किसी बड़े दर्पण में खड़े होकर देखना।

कुछ दिनों तक इन्द्रिय को काम में न लाने से मूत्र-नालिका सिकुड़ जाती है। ऐसी दशा में लिङ्ग पर कुछ गरम जल डालना चाहिए।

शिश्नाग्र त्वचा को हटा कर सुपारी पर धीरे-धीरे चमेली, मोगरा अथवा तिल्ली का तेल मलना चाहिए। मूत्र-स्थान के चारों ओर भेड़ी का दूध भी धीरे-धीरे मलने से फायदा होता है। सारांश यह कि जिस तरह हो सके मन में मनोज को स्थान देना चाहिए।

हमारी सम्मति से ऐसे नपुंसकों को स्त्री-सम्भोग की इच्छा नहीं करनी चाहिए। उन्हें देश, समाज और धर्म की सेवा में लग जाना चाहिए। इससे उन्हें बहुत कुछ मान मिलेगा, क्योंकि ऐसे नपुंसक भगवान की कृपा से अब इस देश में बहुत ही कम होते हैं। मुझे तो ऐसे मर्दों के लिए नपुंसक लिखते भी सङ्कोच था, किन्तु आयुर्वेद ने ऐसे व्यक्ति को भी एक प्रकार का नपुंसक माना है, अतएव लिखना पड़ा।

सहज नपुंसकता के लक्षण और उपाय

जन्म प्रभृति यत्क्लैब्यं सहजं तद्धिसत्तमम्।

जो पुरुष जन्म से ही नपुंसक हो उसे सहज नपुंसक कहते हैं। माता-पिता के वीर्य और रज के दोष से ही ऐसे नपुंसक पैदा होते हैं। वैद्यकशास्त्रों में लिखा है—माँ-बाप के वीर्य-रज के दोष से, पूर्व-जन्म के सञ्चित पापों से, गर्भस्थ वीर्य-वाहिनी नसों में दोष होने से अथवा वीर्य के सूख जाने से जो बालक उत्पन्न होता है, वह सहज-क्लीव होता है। ऐसे नपुंसकों को लिङ्ग होता ही नहीं। यदि होता है तो सिर्फ आधा या पौन इञ्च के लगभग। कुछ पुरुषों के

बड़ा भी होता है, लेकिन वह सदैव शिथिल रहता है और केवल पेशाब करने के काम का होता है। इस पुस्तक के लेखक को एक पुरुष को देखने का मौक़ा मिला है, जिसका लिङ्ग मोटा ताजा था लेकिन लिङ्ग की जड़ में नीचे की तरफ़ एक छिद्र अण्ड-कोष के ऊपर था। जब वह पेशाब करता था तो इस छिद्र द्वारा मूत्र निकलता था, जिससे अण्ड-कोष आदि अवयव भीग जाते थे। जब वह इस छिद्र को अँगुली से बन्द कर देता तो मूत्र मूत्र-नलिका द्वारा गिरने लगता था। ऐसे व्यक्ति भी सहज नपुंसक ही माने जावेंगे।

आयुर्वेद ने इस प्रकार के नामर्दों को असाध्य कहा है :—

असाध्यं सहज क्लैव्यमर्मच्छेदाच्चयद्भवेत्।

ऊपर वर्णित सात तरह के हिजड़ों में से "सहज नपुंसक" और "शिराच्छेद-जन्य नपुंसक" असाध्य हैं। शेष पाँच प्रकार के साध्य हैं। इस सहज नपुंसकता के भी पाँच भेद हैं :—

(१) आसेक्य नपुंसक
(२) ईर्ष्यक नपुंसक
(३) कुम्भिक नपुंसक
(४) महापण्ड नपुंसक
(५) सौगन्धिक नपुंसक

हम इनके विषय में भी यहाँ लिखेंगे, क्योंकि यह विषय छोड़ देने के योग्य नहीं है।

(१) आसेक्य नपुंसक :—

पित्रो इत्यल्प वीर्यत्वादासेक्य पुरुषो भवेत् ।
सशुक्रं प्राश्य लभते ध्वजोच्छ्रायम संशयम् ॥

माता-पिता के अत्यन्त अल्प रज-वीर्य द्वारा जो बालक पैदा होता है उसे आसेक्य नपुंसक कहते हैं। इसका दूसरा नाम मुख-योनि भी कहा है। ऐसे व्यक्ति के लिए पुंसत्व प्राप्त करने का यही एकमात्र उपाय है कि किसी बलवान पुरुष का लिङ्ग अपने मुख में लेकर उससे अपने मुँह में मैथुन करावे, जब उसका वीर्य निकले तब उसे थूके नहीं और निगल जावे। इस प्रकार वीर्य-पान करने से ऐसे नपुंसक का लिङ्ग चैतन्य होता है और वह स्त्री से मैथुन कर सकता है। इसी कारण इसका दूसरा नाम "मुख-योनि" रखा है।

(३) ईर्ष्यक नपुसक :—

दृष्ट्वा व्यवायमन्येषां व्यवाये यः प्रवर्त्तते ।
ईर्ष्यकः स तु विज्ञेयो दृग्योनिरयमीरितः ॥

दूसरे को मैथुन करता देखकर जो स्वयँ मैथुन कर सके ऐसे पुरुष को ईर्ष्यक नपुंसक माना है। वैसे तो मैथुन देखते ही प्रत्येक की इच्छा वैसा करने की हो जाती है, किन्तु भेद इतना ही है कि "ईर्ष्यक नपुंसक" किसी को मैथुन करते देखे बिना स्त्री-गमन कर ही नहीं सकेगा। जिसके लिङ्ग में कभी चेतना न होती हो और दूसरे का मैथुन देखकर ही जिसे उत्तेजना होती हो उसे ईर्ष्यक अथवा "दृग्योनि" नपुंसक कहते हैं। इलाज कुछ भी नहीं है।

(३) कुम्भिक नपुंसक :—

स्वे गुदेऽब्रह्मचर्याद्यः स्त्रीषु पुंवत्प्रवर्त्तते।
कुम्भिकः सतु विज्ञेय × × × × × ×॥

कुम्भिक नपंसक इच्छा करने पर भी अपनी स्त्री से मैथुन नहीं कर सकता। जब उसे मैथुन करना हो तो पहिले किसी अन्य बलवान पुरुष से गुदा-मैथुन कराना चाहिए। जब उसकी गुदा में दूसरे पुरुष का वीर्य-पात हो जाता है, तब वह खुद स्त्री-प्रसङ्ग के योग्य होता है। ऐसे नपुंसक के लिए केवल यही एक मात्र दवा है। ऐसे पुरुष को "गुदा-योनि" भी कहते हैं।

जो पुरुष लौंडेबाज होते हैं, उनका लिङ्ग भी स्त्री के काम का नहीं होता। योनि देखते ही लिङ्ग शिथिल हो जाता है और गुदा देखकर वह उत्तेजित होता है। ऐसे पुरुष स्त्री से योनि-मैथुन करने के पूर्व थोड़ी देर गुदा-मैथुन करते हैं। जब उनका लिङ्ग गुदा-मैथुन से उत्तेजित हो जाता है, तब उसे योनि में प्रवेश करके योनि-मैथुन करते हैं।

कुम्भिक नपुंसक क्यों पैदा होता है ? इस विषय में कश्यप का कथन पाठकों को देखना चाहिए। उन्होंने बताया है— "ऋतु-काल में अल्प रजयुक्त स्त्री से श्लेष्म वीर्य वाला पुरुष यदि मैथुन करे और गर्भ रह जावे तो कुम्भिक नपुंसक होता है। क्योंकि उससे स्त्री की इच्छा पूरी नहीं होती तब वह दूसरे पुरुष से मैथुन की इच्छा करती है। इस इच्छा का परिणाम गर्भस्थ बालक पर यह होता है कि वह कुम्भिक पैदा होता है।

(४) महापण्ड नपुंसक :—

यो भार्या या मृतीमोहा दङ्गेनेव प्रवर्त्तते।
तत्र स्त्री चेष्टिताकारो जायते पण्ढ संज्ञकः॥

जो पुरुष स्त्री को ऊपर चढ़ाकर और खुद नीचे लेटकर मैथुन करता है या कराता है—इस विपरीत मैथुन से यदि गर्भ रह जावे और पुत्र उत्पन्न हो तो वह लड़का पण्ढ नपुंसक होता है। उसकी सारी चेष्टाएँ स्त्रियों की सी होती हैं। प्रत्येक गाँव में कम से कम एक दो पुरुष ऐसे जनाने मिजाज के होते ही हैं। पुरुष होने पर भी उनका हाव-भाव, वेष, भाषा-भाव स्त्रियों के समान होते हैं। चाल एक निराले ही ढङ्ग की होती है। बोलने का ढङ्ग औरतों का सा होता है। औरतों में रहना इन्हें पसन्द होता है। यदि ऐसे विपरीत मैथुन से कन्या पैदा हो तो उसकी सारी चेष्टाएँ पुरुषों की सी होती हैं। ऐसे नपुंसक में वीर्य ही नहीं होता।

ऐसे पुरुष स्त्रीकी भाँति नीचे लेटकर दूसरे पुरुष से अपने लिङ्ग पर वीर्य-पात करवाते हैं। ऐसी स्त्रियाँ दूसरी स्त्री को नीचे सुलाकर मर्द की तरह अपनी योनि से उसकी योनि को रगड़ती हैं। ऐसी स्त्री को "नारी पण्ढ नपुंसक" कहते हैं। जब दो स्त्रियाँ आपस में मैथुन करती हैं तो कभी-कभी दोनों का रज मिलकर गर्भाशय तक पहुँच जाने पर गर्भ रह जाता है। इस गर्भ से हड्डी रहित बालक उत्पन्न होता है। ऐसे बच्चे जीवित नहीं रह सकते। उसी समय, नहीं तो एक दो दिन बाद मर जाते हैं। ऐसे बच्चों के पैदा होने

की खबरें समाचार-पत्रों के पढ़ने वाले प्रायः देखा करते हैं। यह बात एक ऐसी है जिस पर पाठकों को आश्चर्य तो होगा ही, किन्तु साथ ही विश्वास भी नहीं होगा। इसलिए हम यहाँ "स्त्री स्त्री के मैथुन से गर्भ रह कर बिना हड्डी वाला बालक होता है" इसके प्रमाण में आयुर्वेद का निम्न श्लोक लिखते हैं :—

यदानार्यां वुपेयातां वृषस्यं तौकथंचन।
मुञ्चन्त्यौ शुक्रमन्योन्य मनस्थि तत्र जायते॥

(५) सौगन्धिक नपुंसक :—

य पूतियोनौ जायेत स सौगन्धिक संज्ञकः।
संयोनि शेफसो गन्ध माघ्राय लभते बलम्॥

जो बालक दुर्गन्धित योनि से उत्पन्न होता है वह सौगन्धिक नपुंसक होता है। ऐसा व्यक्ति स्त्री के काम का नहीं होता। वीर्य होते हुए भी लिङ्ग में उत्तेजना नहीं आती। सौगन्धिक नपुंसक जब दूसरे के लिङ्ग अथवा योनि को सूँघता है तब उसका लिङ्ग मैथुन के लिए तैयार होता है। इसका दूसरा नाम "नासायोनि" भी है।

(२) नपुंसकों के अन्य चार भेद

बीजोपघात ध्वजभङ्ग जराशय समुद्भवान्॥

(१) बीजोपघात नपुंसक
(२) ध्वजभङ्ग नपुंसक

(३) जरा सम्भव नपुंसक
(४) वीर्यक्षय नपुंसक

बीजोपघात क्लीब के लक्षण

शीत रूक्षान्न संक्लिष्ट विरुद्धा जीर्ण भोजनात् ।
शोक चिन्ता भयत्रासात्स्त्रीणांचात्यर्थ सेवनात् ॥
धातादीना मोजसश्च तथैवान शनाच्छ्रमात् ।
नारीणाम नभिज्ञत्वात्पञ्चकर्मा पचारतः ॥
बीजोपघातो भवति पाराडुवर्णः सुदुर्बलः ।
अल्प प्रजोल्पहर्षश्च प्रमदासु भवेन्नरः ॥

अर्थात् बासी, रूखा, खट्टा, कठोर एवम् विरुद्ध भोजन से, अजीर्ण में भोजन करने से, शोक, चिन्ता, भय, अति मैथुन, चोट और अविश्वास से, धातुओं की कमी से, भोजन न करने से, निर्जल उपवास करने से, बहुत मेहनत से, स्त्रियों पर प्रेम न होने से, वमन विरेचन आदि पञ्चकर्मो के बिगड़ने से वीर्य बिगड़ जाता है। अतएव बीजोपघात नपुंसकता पैदा हो जाती है। सांसारिक सुख की इच्छा रखने वाले पुरुषों को उपरोक्त बातों से सदा बचना चाहिए ऐसे नपुंसक का शरीर पीला पड़कर दुबला हो जाता है। सन्तान होती ही नहीं, यदि होती है तो होकर मर जाती है। इत्यादि अनेक दोष हो जाते हैं।

इस नपुंसकता की दवा यही है कि जिस कारण से नपुंसकता

आ गई हो, उसे एकदम सर्वथा त्याग देना चाहिए। बाद में वीर्य को शुद्ध करने वाली तथा बल बढ़ाने वाली दवाइयों का सेवन करना चाहिए। इसी अध्याय में आगे चलकर बल-वीर्य वर्द्धक बहुत सी औषधियाँ लिखी हैं। उनमें से जो उचित समझ पड़े वही चुना कर सेवन करना चाहिए।

ध्वजभङ्ग नपुंसकता

अत्यम्ल लवणक्षारा वरुद्धा जीर्ण भोजनात्।
अत्यम्बु पानाद्विषम पिष्टान्न गुरु भोजनात्॥
दधिक्षीरानूपमांस सेवनादतिकर्षणात्।
कन्यायां नैव गमनादयोनि मैथुनादपि॥
दीर्घां रोम्णीं चिरोत्सृष्टां तथैव च रजस्वलाम्।
दुर्गन्धां दुष्टयोनिंच तथैव च परिस्रुताम्॥
नरस्य प्रमदां मोहादति दर्पात्प्रगच्छतः।
चतुष्पदाभिगमनाच्छेफ सशाभि घाततः॥
अधावनाद्वा मेढ्रस्य शस्त्र दन्त नराक्षतात्।
काष्ठप्रहार निश्शेष शूकानां चाति सेवनात्॥
रेतसश्च प्रतीघाताद्ध्वज भङ्ग प्रवर्त्तते।

अर्थात्—अत्यन्त नमकीन, चरपरे और खट्टे पदार्थों के सेवन से, विरुद्ध भोजन (दूध-मछली) कच्चा अन्न तथा बिना भूख भोजन करने

से, बहुत जल पीने से, विषम भारी एवम् गुरुपाक पदार्थ सेवन करने से, दधि, दूध और अनूपदेशीय जीवों के माँस खाने से, अत्यन्त निर्बलता से, १२ वर्ष से कम उम्र वाली कन्या से, अप्राकृतिक मैथुन से, अयोनि स्त्री के साथ मैथुन करने से, हस्त-मैथुन अथवा पुंमैथुन से, जिसकी योनि पर बड़े-बड़े बाल हों ऐसी स्त्री के साथ मैथुन करने से, जिस स्त्री के साथ बहुत दिनों से मैथुन न हुआ हो उसके साथ मैथुन करने से, रजस्वला के साथ मैथुन करने से, दुर्गन्धित योनि वाली स्त्री से, गर्मी, सोम अथवा प्रदर-रोग वाली स्त्रियों से, मूर्खतापूर्वक मैथुन करने से, पशु-मैथुन से, लिङ्ग पर चोट लगने से, लिङ्ग को नित्य धोकर साफ़ न रखने से, लिङ्ग पर चाकू, उस्तरा, दाँत अथवा नाखून का घाव पड़ जाने से, लकड़ी आदि से लिङ्ग पर चोट आ जाने से, काम-शास्त्रोक्त शूक-प्रयोग द्वारा लिङ्ग बढ़ाने या मोटा करने से, और वीर्य के बिगड़ जाने से ध्वजभङ्ग अर्थात् लिङ्ग शिथिल होकर लटक जाता है।

ध्वजभङ्ग वाला पुरुष मैथुन नहीं कर सकता, अतएव ऊपर बताए हुए पुंसत्व-नाशक कार्यों को छोड़ने में ही ऐसे पुरुष का कल्याण है। दवा-दारू उतना काम नहीं करेगी, जितना कि नपुंसकता के कारण को ढूँढ़ कर उसे त्यागने से लाभ होगा। पहिले कारण ढूँढ़ कर उसे त्यागने की चेष्टा कीजिए और बाद में बल-वीर्य वर्द्धक औषधि सेवन कीजिए। ऐसे नुस्खे इसी पुस्तक में आगे लिखे गए हैं।

जरासम्भव नपुंसकता

जघन्यमध्यप्रवरं वयस्त्रिविधमुच्यते।
अथ च प्रवरे शुक्रं प्रायशः क्षीयतेनृणाम्॥

रसादीनां संक्षयाच्च तथैवा वृष्य सेवनात्।
बलवर्णेन्द्रियाणांच क्रमिणैव परिक्षयात्॥
परिक्षया दायुषश्चाप्य नाहाराच्छ्रमात्क्रमात्।
जरासम्भवजं क्लैव्य मित्येतैर्हेतुभिर्नृणाम्॥
जायतेतेन सोत्यर्थं क्षीणधातुः सुदुर्बलः।
विवर्णो विह्वलोदीनः क्षिप्रंव्याधिमथाश्नुते॥

अर्थात्—वृद्धावस्था में शरीरस्थ धातुएँ क्षीण हो जाती हैं। इसका कारण यह होता है कि जवानी में वीर्य-वर्द्धक पदार्थ न सेवन करके, रात-दिन वीर्यपात करते रहते हैं। परिणाम यह होता है कि बल, वर्ण और इन्द्रिय क्षीण होने लगते हैं। रक्त, माँस, मेद आदि धातुएँ क्षीण हो जाती हैं। उम्र का उतार भी होता है। बुढ़ापे में जो नपुंसकता उत्पन्न होती है उसे जरासम्भव नपुंसकता कहते हैं। भूखा-प्यासा रहने से तथा अधिक श्रम करने से भी ऐसी नपुंसकता आ जाती है। इससे शरीर अत्यन्त क्षीण और कृश हो जाता है। वर्ण पलट जाता है। विह्वलता और दीनता आ जाती है। रोग तो शरीर में अपना अड्डा जमा ही लेते हैं।

जिन व्यक्तियों की बुढ़ापे में भी स्त्री-प्रसङ्ग की इच्छा न गई हो, उन्हें वायु-नाशक और कफ-वर्द्धक औषधियाँ सेवन करनी चाहिएँ। ठण्ड के मौसिम में प्रतिवर्ष कोई बल-वर्द्धक पाक बना कर खाना चाहिए। शरीर पर तैल की मालिश कराना चाहिए। त्रिफले के पानी से आँखें धोनी चाहिएँ। त्रिफला के चूर्ण

मिश्री मिलाकर सेवन करना चाहिए। कानों में तेल डालते रहना चाहिए।

असगन्ध और विधारा दोनों सम भाग लेकर चूर्ण बना लेना चाहिए। ६ माशे से १ तोले तक फाँक कर ऊपर से धारोष्ण गो-दुग्ध पीना चाहिए। चार-पाँच महीने के सेवन से शरीर में वही शक्ति आ जावेगी, जो जवानी में थी। यह वृद्धों के लिए कल्पवृक्ष है।

क्षयक्लीव नपुंसकता

अतिप्रचिन्तनाच्चैव शोकात्क्रोधाद्भयादपि।
ईर्ष्योत्कण्ठात्तथोद्वेगात्समाविशति कोनरः॥

कृशो वा सेवते रूक्ष मन्नपान मथौषधम्।
दुर्बल प्रकृतिश्चैव निराहारोभवेद्यदि॥

अथाल्पभोजनाच्चापि हृदये योव्यवस्थितः।
रसः प्रधान धातुर्हि क्षीयेताशु नरस्ततः॥

रक्तादयश्च शीर्यन्ते धातवस्तस्यदेहिनः।
शुक्रावसानास्तेभ्यो हि शुक्रं धाम परं मतम्॥

चेतसोवातिहर्षेण व्यवायं सेवते तु यः।
शुक्रं तु क्षीयते तस्यततः प्राप्नोति संक्षयम्॥

घोरां व्याधिमवाप्नोति मरणं वास मृच्छति।
शुक्रं तस्माद्विशेषेण रक्ष्यमारोग्य मिच्छता॥

अर्थात्—अति चिन्ता, अति शोक, अति क्रोध, भय, ईर्ष्या, उत्कंठा, उद्वेग करने से बीस वर्ष का तरुण पुरुष भी नपुंसक हो जाता है। निर्बलता होने पर भी रूखा अन्न खाने पीने से, निराहार रहने से, भंग खाने से, हृदयस्थ प्रधान धातु क्षीण होकर नपुंसक हो जाता है। प्रबल प्रसन्नचित्त से आगा-पीछा न सोच कर जो अधाधुन्ध मैथुन में प्रवृत्त रहता है, उसका वीर्य क्षीण हो जाता है। ऐसी दशा में अनेक व्याधियाँ उसे आ घेरती हैं; यहाँ तक कि मृत्यु भी हो जाती है। इसलिए आरोग्यता और पुंसत्व चाहने वाले पुरुषों को वीर्य-रक्षा ही उत्तम समझना चाहिए।

थोड़ी सी ग़फ़लत से ही वीर्यनाश के कारण शरीर निकम्मा हो जाता है। पहिले जिस कारण से नपुंसकता उत्पन्न हुई हो उसे त्यागना चाहिए, तत्पश्चात् उचित रीति से बल-वीर्य वर्द्धक दवा का सेवन करना चाहिए। कोई कोई आचार्य इस क्षयज नपुंसकता को असाध्य मानते हैं।

यहाँ तक प्राचीन समय के प्राचीन आचार्यों की सम्मति से नपुंसकों के लक्षण, निदान, चिकित्सा आदि का वर्णन किया गया है। अब हम वर्तमान काल की कुकर्मज नपुंसकता का भी उल्लेख करेंगे।

समयेऽस्मिन्प्रमादाच्च सद्यवैश्यादभावनः।
इस्तमर्थं विहीनत्वादयोनि मैथुनात्तथा॥

हतशुक्र हतोत्साहाः हतबुद्धि पराक्रमाः ।
अप्रजाल्पप्रजावाच म्लानध्वजपुतापथे ॥
समर्था मनने चैवासमर्थाः पत्नि रञ्जने ॥

आजकल प्रमाद वश शराब पीकर रात-दिन वेश्याओं के घर पर पड़े रहते हैं। बाल-विवाह में, हस्त-मैथुन से, गुदा-मैथुन से, पशु-मैथुन से मनुष्यों का वीर्य, बुद्धि और पराक्रम नष्ट हो जाता है। थोड़े दिन बाद ही हिजड़े होकर दवाइयों की खोज में अखबारों के पृष्ठ पलटते रहते हैं। ऐसे मुखन्नसों की संख्या आज देश में थोड़ी नहीं है। ऐसे लोगों के औलाद होती ही नहीं और यदि होती भी है तो शीघ्र ही उसके लिए कफन और गड्ढा खोदने की तजवीज होती है। इन्हीं की कृपा से देश में बालकों की मृत्यु-संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है। दैवयोग से यदि रोगों का सामना करती हुई कोई क्षीण-काय सन्तान जीवित भी रही तो उससे देश के कल्याण की क्या कामना की जा सकती है ? इसलिए जिन्हें सन्तान पैदा करनी हो उन्हें उत्तम सन्तान पैदा करने के लिए सबसे पहिले रज-वीर्य को उत्तम बनाना चाहिए। बिना उत्तम भूमि और बीज के अच्छा पौधा पैदा हो ही नहीं सकता ! दूषित रज और वीर्य किस प्रकार शुद्ध हो सकते हैं, इसके लिए हम अब आगे अच्छे-अच्छे नुस्खे लिखेंगे। स्त्रियों की रज-शुद्धि के लिए हम पीछे चिकित्सा लिख आए हैं, यहाँ वीर्य-शुद्धि के लिए ही दवाइयाँ लिखी जावेंगी।

(३) बल-वीर्य-वर्द्धक योग

(१) मिश्री मिला हुआ, अच्छी प्रकार औटाया हुआ गो-दुग्ध सोते समय पीने से खूब बल बढ़ता है। मैथुन के बाद ऐसा दूध, रबड़ी, मलाई, मक्खन आदि खाने-पीने से बल-वीर्य नहीं घटता।

(२) मैथुन के बाद खाने की गोलियाँ—बैंगन के बीज ३ माशे, मस्तगी ९ माशे, इन दोनों को कूट-पीस कर छान ले। अब अगर के चोए में इस चूर्ण को खरल करके मिर्च के बराबर गोलियाँ बना ले। मैथुन के पश्चात् दो-चार गोली खा लेने से फिर पहिले के समान ही शक्ति आ जाती है।

(३) बल-वीर्य-वर्द्धक—१० माशे घृत और ५ माशे शहद में १० मासे मुलहठी का चूर्ण मिला कर चाटे, ऊपर से मिश्री मिला हुआ दूध पी ले। इससे खूब ही बल और वीर्य बढ़ता है। कामी पुरुषों को इसे नित्य सायङ्काल के समय सेवन करना चाहिए। मैथुन के बाद यह भी उस कमी को पूर्ण करने में एक ही है।

(४) मैथुन के बाद—सम्भोग कर चुकने के बाद यदि जरा सी सोंठ डाल कर औटाया हुआ गो-दुग्ध पिया जावे तो बड़ा ही लाभ होता है।

(५) मैथुनोपरान्त—स्त्री-समागम के बाद बादाम, केले और पुराना गुड़ खाने से निर्बलता नहीं आती।

(६) वीर्य की गर्मी—कबाब चीनी या शीतल चीनी का चूर्ण हर दो-दो घण्टे के अन्तर से अर्थात् दिन में छः बार दो-दो माशे फाँक कर ऊपर से एक गिलास ठण्डा जल पीना चाहिए। पेशाब अधिक होगा, इससे वीर्य की गर्मी शान्त होगी। इस तरह १४ दिन तक इस चूर्ण को सेवन करना चाहिए। मिर्च, खटाई, गुड़, तेल आदि से बचना चाहिए।

(७) स्तम्भन योग—रात को सोते समय २ माशे कबाब चीनी को शहद में मिला कर चाटने से रुकावट होने लगेगी। इससे स्वप्न-दोष में भी लाभ होगा।

(८) कामिनी-मद-भञ्जन रस—अक़रक़रा, लौंग, सोंठ, केशर, पीपल, जावित्री, जायफल, लालचन्दन हरेक तीन-तीन माशे लेकर अलग-अलग कूट-पीस कर कपड़छान कर ले। इनमें से तीन-तीन माशे तोल कर खरल में डाल ले। ऊपर से ६ रत्ती शुद्ध गन्धक और ६ रत्ती शुद्ध हिंगल्लू डाले। अब शोधी हुई पतली अफ़ीम डाल कर घोटे। घोटते समय आवश्यकतानुसार थोड़ा-थोड़ा पानी भी देता जाए। गोली बनाने योग्य हो जाने पर तीन-तीन रत्ती की गोलियाँ बना ले और छाँह में सुखा कर रख ले। यदि मैथुन के समय रुकावट न होती हो तो सोने के पूर्व १ गोली खाकर ऊपर से मिश्री मिला दूध पी ले। ४० दिन सेवन करने से अवश्य ही इच्छा पूर्ण होगी। नामर्दों के लिए यह अत्यन्त लाभकारक है।

(९) नपुंसकता-नाशक—फ़ौलाद का चूर्ण, हरताल वर्क़ी,

शिगरफ़ रूमी, सङ्खिया, शुद्ध पारा, प्रत्येक २ तोले १० माशे लेकर, एक पोटली में बाँध लेवे और हाँडी में रखकर, उस हाँडी में ऊपर से घीकुमार का रस आध सेर, दही आध सेर, आक का दूध आध सेर, शराब आध सेर और प्याज़ का रस आध सेर डाल कर उसका मुँह बन्द करके ४० दिन तक गोबर के ढेर में गाड़ कर रक्खे। बाद में हांडी में से उस पोटली को निकाले और जो पारा साफ़ दिखाई दे रहा हो उसे निकाल ले। बाक़ी जो वस्तुएँ उस पोटली में हों उन्हें १० तोले शहद में ख़ूब खरल करके उनका गोला बना ले। इस गोले को गेहूँ के आटे में लपेटे। आटा एक-एक अङ्गुल मोटा चढ़ा दे। इस गोले के आटे को घी में यहाँ तक भूने कि ऊपर का आटा जल कर काला हो जावे। इसे ठण्डा करके आटा उतार ले, अब फिर पहिले की तरह आटा लगा कर भून ले। इस तरह ४१ बार भूने। औषधि कुछ कम हो जावेगी, क्योंकि प्रत्येक बार थोड़ी बहुत मात्रा में आटे के साथ जावेगी। इस औषधि को पीसकर शीशी में भरे और काग लगा कर सदैव गीले रहने वाले स्थान में गाड़ दे। ४० दिन के बाद निकाल कर एक-एक रत्ती नित्य ही मक्खन या मलाई के साथ सेवन करने से नामर्दी दूर हो जाती है। खटाई और बादी चीज़ों से परहेज़ करना चाहिए।

(१०) स्तम्भन बटी—केशर ४ माशे, लौंग ८ माशे, जावित्री १२ माशे, अहिफेन १६ माशे, कस्तूरी २ रत्ती, इन सब दवाइयों को कूटकर बारीक कर ले, फिर शहद में मिला कर चार-चार रत्ती

की गोलियाँ बना ले। पाव भर गो-दुग्ध के साथ नित्य एक-एक गोली सेवन करने से अपूर्व स्तम्भन होता है और भूख भी बढ़ती है।

(११) नपुंसकत्वारि चूर्ण—सालब मिश्री १ माशा, ईसबगोल की भूसी १ माशा, सिंघाड़े का आटा ६ माशे, इन सबको कूट-छान कर रख ले। यह एक दिन की एक ख़ूराक है। इस चूर्ण को पाव भर गो-दुग्ध में डाल कर खूब औटावे। उफान आने पर दूध को नीचे उतार कर ठण्डा करे, जब थोड़ा गुनगुना रह जावे तब २ तोले शक्कर डाल कर पी लेवे। इस प्रकार सायं-प्रातः दोनों समय ५१ दिन तक इस दवा के सेवन करने से नपुंसकता नष्ट हो जाती है।

(१२) स्तम्भन वटी—केशर १ माशा, लौंग १ माशा, जावित्री १ माशा, जायफल १ माशा, अजमोद १ माशा, माजूफल १ माशा, समुद्र सोख १ माशा, मौठ की जड़ १ माशा, रूमी मस्तगी १ माशा, शुद्ध कुचला १ माशा, अफ़ीम १ माशा, शिङ्गरफ़ रूमी १ माशा, खपरिया १ माशा, मीठा तेलिया १ माशा, कस्तूरी १ माशा और कपूर १ माशा। इन सबको बारीक कूट-पीसकर कपड़छान कर ले, बाद में शहद डालकर झाड़ीबेर के बराबर गोलियाँ बना ले। इसको मैथुन से दो घड़ी पहले खाने से ख़ूब ही स्तम्भन होगा।

(१३) स्त्री-वशीकरण—शुद्ध पारा ३ माशे, शुद्ध गन्धक ३ माशे, लोह-भस्म ३ माशे, अभ्रक-भस्म शतपुटी ३ माशे, चाँदी का

भस्म ३ माशे, स्वर्ण-भस्म ३ माशे, सोना मक्खी का भस्म ३ माशे, बंसलोचन १ तोला, धुली हुई भाँग ४ तोले, इन सबको खरल में पीसकर बारीक कर ले। ऊपर से भाँग का काढ़ा डाल-डाल कर घोटे। घुट जाने पर चार-चार रत्ती की गोलियाँ बना ले। इनमें से अपनी शक्ति के अनुसार एक या दो गोली रोज खाकर ऊपर से गौ का दूध पिए। इसके ४० दिन के सेवन से नामर्द भी मर्द बन जाता है।

(१४) महास्तम्भन चूर्ण—अक़रक़रा ३ माशे, रिहाँ के बीज २ तोले, सफ़ेद कन्द २॥ तोले। इन सबको कूट-पीस कर मैथुन से २ घण्टे पूर्व फाँक ले। यदि वीर्य गाढ़ा और शुद्ध हुआ हो बिना नीबू का रस पिए कदापि वीर्य-पात नहीं होगा।

(१५) गरीबों के लिए स्तम्भन-योग—एक तोले इमली के चीएँ चार दिन तक पानी में भिगो ले। भीग जाने पर उनका छिल्का उतार कर उन्हें तोले। जितना वजन चीयों में हो, उससे दूना पुराना गुड़ उनमें मिलाकर पीस ले। जब एक दिल हो जाएँ तो चने के बराबर गोलियाँ बना कर रख ले। मैथुन से दो घण्टे पहिले २ गोली खा ले, यदि वीर्य-पात न हो तो नीबू का रस पी ले।

(१६) आनन्दप्रद सतावरी घृत—एक सेर गो-घृत लेकर उसमें १० सेर सतावर का स्वरस और १० सेर गो-दुग्ध डाल कर पकावे। जब घृत रह जावे तब १० तोले पीपल, १८ तोले शहद और पाव भर शक्कर का चूरा डाल कर किसी चाँदी या

काँच के पात्र में रख दे। इसमें से २ तोला घृत नित्य खाकर ऊपर से गो-दुग्ध पीवे तो वीर्य और बल खूब बढ़ता है।

(१७) वाजीकरण पूरियाँ—काले तिल, असगन्ध, कौंच के बीज, बिदारीक़न्द, मुलहटी, इन सबको समान भाग लेकर कूट-कपड़-छान करे। बाद में इन्हें बकरी के दूध में गूँध कर बकरी के बल-घी में पूरियाँ बना ले। इन्हें मिश्री मिले दूध के साथ खाने से वीर्य की वृद्धि होती है।

(१८) असगन्धादि चूर्ण—असगन्ध नागौरी और विधारा इनको समान भाग लेकर कूट-छान ले और घी के चिकने पात्र में रख दे। एक तोला भर इस चूर्ण को नित्य फाँक कर ऊपर से मिश्री मिला हुआ गौ का दूध पिए। प्रतिवर्ष चार मास के सेवन से वृद्ध पुरुष भी फिर से जवानों की भाँति, जवान स्त्रियों को अपने वश में रख सकता है।

(१९) वृद्ध-सञ्जीवन—सूखे आँवलों को पीस कर चूर्ण कर ले और इस चूर्ण में गीले आँवलों का रस निकाल-निकाल कर सात भावना दे ले, और फिर सुखा कर इस चूर्ण को शीशी में रख ले। अपनी शक्ति के अनुसार शहद और मिश्री मिला कर खाने से एक महीने में बुढ़ापा भाग जाता है।

(२०) बुढ़ापा-नाशक योग—सूखे विदारीक़न्द को पीस कर गीले विदारीक़न्द के स्वरस की सात भावना दे-देकर सुखा ले और चूर्ण करके शीशी में भर दे। इसे शहद और मिश्री में मिला कर सेवन करने से बूढ़ा भी जवान होता है।

(२१) असगन्ध रसायन—असगन्ध का चूर्ण २ तो०, सफेद तिल चार तो० और उड़द का आटा १६ तो०, इन सबको पकाकर घी में भूनकर खाने से नामर्दी दूर हो जाती है। यह रसायन ४० के दिन में सेवन करना चाहिए।

(२२) स्तम्भक लेप—एक सौ बड़े-बड़े चींटों को खूब कूट कर एक काँच की शीशी में भर दे, ऊपर से डेढ़ तोला रोगन बलसान या रोगन सौसन भर दे। गर्मी के मौसिम की तेज धूप में रोज ८ दिन तक इसे रक्खे। बस दवा तैयार हो गई। जब मैथुन करना हो, किसी पक्षी के पङ्ख से दोनों पैरों की अँगुलियों और तलवों पर लगा दे। इससे नामर्द भी मैथुन के योग्य उसी वक्त हो जाता है, और स्तम्भन भी होता है।

(२३) वीर्य की गर्मी दूर करना—कद्दू के बीज, भाँग के बीज, कासनी के बीज, सूखी धनियाँ, नीलोफर के फूल सब एक-एक तोला और ईसबगोल १० तोले। ईसबगोल को छोड़ कर सबको कूट ले और बिना कूटा ईसबगोल मिला दे। इस चूर्ण में से ४-५ माशे चूर्ण फाँक कर ऊपर से धारोष्ण गो-दुग्ध या ताजा जल पीना चाहिए। इसके सेवन से निश्चय ही वीर्य की गर्मी शान्त हो जायगी।

(२४) कस्तूर्यादि बटी—कस्तूरी २ माशे, केशर ४ माशे, जायफल ६ माशे, छोटी इलायची ५ माशे, बंसलोचन ७ माशे, जावित्री ८ माशे, सोने का वर्क १ माशे, चाँदी का वर्क ३ माशे। केशर, कस्तूरी और चाँदी-सोने के वर्कों को छोड़ कर सब चीजों

को कूट-पीस कर छान ले। इस चूर्ण में शेष ४ चीजों को मिलाकर खरल में डाल कर घोटे। घोटते वक्त, नागर पानों का रस डालता जावे। ३६ घण्टे की घोटाई के बाद रत्ती-रत्ती भर की गोलियाँ बना ले। गोलियाँ छाँह में सुखा ले। इनमें से एक या दो गोली मलाई में रखकर खाने से नामर्दी काफ़ूर हो जाती है। नामर्दों को इसे अवश्य सेवन करके लाभ उठाना चाहिए।

(२५) नपुंसकत्वारि छोहारा—रूमी मस्तगी १ रत्ती अक़रक़रा १ रत्ती। दोनों का चूर्ण करके एक गुठली रहित छोहारे में भर कर धागे से बाँध दे। इस छोहारे को पाव भर गौ के दूध में डाल कर उबाले। जब एक छटाँक रह जावे तब छोहारा ठण्डा करके खा लेवे और ऊपर से वह दूध भी पी लेवे। सायं-प्रातः दोनों वक्त इसके सेवन से नामर्दी दूर हो जावेगी।

(२६) स्तम्भन-गुटिका—बबूल के वृक्ष की छाल आध सेर, बबूल के फूल १० तोले, खसखस २॥ तोले, पोस्ता २॥ तोले, इन सबको एक कढ़ाई में डाल कर ३ सेर जल में उबाले। जब आध सेर पानी रह जावे तब छान ले। फिर आग पर चढ़ा दे, जब गाढ़ा हो जावे तब सालिब ३ माशे, दालचीनी ३ माशे, रूमी मस्तगी ३ माशे, सुपारी ३ माशे, कस्तूरी २ रत्ती, कुश्ताजस्त ३ माशे, तबाखीर ३ माशे, कबाबा ३ माशे, इन सब औषधियों को कूट-छान कर उसी में मिला दे और चने के बराबर गोलियाँ बना कर उन पर सोने का वर्क़ लपेट दे। सायङ्काल के समय सिर्फ़ चावल की खीर खावे, फिर २ घण्टे बाद मिश्री मिला हुआ

गर्म दूध ठण्डा करके १ गोली खाकर ऊपर से पीवे। ४ घं[illegible]
बाद मैथुन करे। मैथुन से निपट कर हाथ-पैर धोकर फिर मि[illegible]
मिला हुआ गो-दुग्ध पान करे। स्मरण रहे, मैथुन के बाद तत्का[illegible]
ही हाथ-पैर न धोवे और इस दिन तेल, खटाई वग़ैरह भी न खा[illegible]

(२७) शुक्रतारल्य नाशक—भुने हुए चनों की गिरी, ख़सख़[illegible]
कासनी के बीज हरेक तीन-तीन तोले, रूमी मस्तगी, जावि[illegible]
धुले हुए तिल, तवाखीर प्रत्येक डेढ़-डेढ़ तोले, अफ़ीम ६ र[illegible]
ख़ुरासानी अजवायन ६ रत्ती। सबको चूर्ण कर ले। सुबह औ[illegible]
शाम ६-६ माशे शीतल जल के साथ खाने से वीर्य का गिर[illegible]
पतलापन आदि रोग दूर होकर वीर्य गाढ़ा और शुद्ध ह[illegible]
जाता है।

(२८) स्वप्नदोष-नाशक योग—त्रिफला, वच और पुराना गु[illegible]
सम भाग लेकर ४ रत्ती की गोलियाँ बना ले। एक-एक गोली सा[illegible]
प्रातः शीतल जल के साथ खाने से स्वप्न-विकार दूर हो जाता है।

(२९) वीर्यस्रावावरोधक चूर्ण—३ तोले इमली के बीजें भ[illegible]
कर उनका छिलका उतार दे। बाद में उनके बराबर की मिश्री
मिलाकर चूर्ण कर ले। सुबह-शाम नित्य ६-६ माशे इस चू[illegible]
को फाँक कर ऊपर से गो-दुग्ध सेवन करे।

(३०) वीर्य गाढ़ा होने का लेप—नया कायफल भैंस के
दूध में पीस कर लिङ्ग पर लेप करके सायं-प्रातः गर्म जल से
धोने से वीर्य गाढ़ा हो जावेगा।

(३१) पुंसत्वदायक योग—सफ़ेद प्याज का रस आठ मा[illegible]

अदरक का रस ६ मासे, शहद ४ मासे और घी ३ मासे, इन चारों को मिला कर दो महीने तक सेवन करने से नामर्द भी मर्द हो जाता है।

(३२) वीर्य-वर्द्धक योग—प्याज का अर्क ६ मासे, गो-घृत ४ मासे और शहद ३ मासे, सबको मिला कर सुबह-शाम चाटने से और रात्रि को सोते समय शक्कर मिला हुआ गरम गो-दुग्ध पीने से दो महीने में ही खूब बल-वीर्य बढ़ जाता है। और अपूर्व चमत्कार दिखाई पड़ता है।

(३३) स्वप्नदोष-निवारक—मोचरस का चूर्ण ६ मासे और मिश्री ४ तोले दोनों को गऊ के गरम दूध में मिला कर लगातार २-३ महीने पीने से स्वप्नदोष दूर हो जाता है।

(३४) वाजीकरण योग—कौंच के छिले हुए बीजों का चूर्ण ६ मासे, तालमखाने के बीजों का चूर्ण ६ मासे, मिश्री एक तोला। इनका चूर्ण फाँक कर ऊपर से गौ का धारोष्ण दूध पीना चाहिए। यह उत्तम वाजीकरण योग है।

(३५) जरा-नाशक योग—१ तोले विदारीकन्द को पीसकर लुगदी बना ले। इसे मुँह में रखकर ऊपर से एक तोले गो-घृत और दो तोले मिश्री मिला हुआ गो-दुग्ध पीने से खूब बल बढ़ता है, और लगातार दो वर्ष के सेवन से बूढ़ा आदमी भी जवान हो जाता है।

(३६) उड़द की खीर—धुली हुई उड़द की दाल को रात भर भिगो दे। सुबह पत्थर पर पीस कर लुगदी बना ले। घी

गर्म दूध ठण्डा करके १ गोली खाकर ऊपर से पीवे। ४ घ
बाद मैथुन करे। मैथुन से निपट कर हाथ-पैर धोकर फिर मि
मिला हुआ गो-दुग्ध पान करे। स्मरण रहे, मैथुन के बाद तत्का
ही हाथ-पैर न धोवे और इस दिन तेल, खटाई वग़ैरह भी न खावे

(२७) शुक्रतारल्य नाशक—भुने हुए चनों की गिरी, ख़सख़
कासनी के बीज हरेक तीन-तीन तोले, रूमी मस्तगी, जावि
धुले हुए तिल, तवाखीर प्रत्येक डेढ़-डेढ़ तोले, अफ़ीम ६ र
ख़ुरासानी अजवायन ६ रत्ती। सबको चूर्ण कर लें। सुबह श्र
शाम ६-६ माशे शीतल जल के साथ खाने से वीर्य का गिर
पतलापन आदि रोग दूर होकर वीर्य गाढ़ा और शुद्ध
जाता है।

(२८) स्वप्नदोष-नाशक योग—त्रिफला, वच और पुराना
सम भाग लेकर ४ रत्ती की गोलियाँ बना लो। एक-एक गोली स
प्रातः शीतल जल के साथ खाने से स्वप्न-विकार दूर हो जाता है

(२९) वीर्यस्रावावरोधक चूर्ण—३ तोले इमली के चीएँ
कर उनका छिल्का उतार दे। बाद में उनके बराबर की मि
मिलाकर चूर्ण कर ले। सुबह-शाम नित्य ६-६ माशे इस
को फाँक कर ऊपर से गो-दुग्ध सेवन करे।

(३०) वीर्य गाढ़ा होने का लेप—नया कायफल भैंस
दूध में पीस कर लिङ्ग पर लेप करके सायं-प्रातः गर्म जल स
धोने से वीर्य गाढ़ा हो जावेगा।

(३१) पुंसत्वदायक योग—सफ़ेद प्याज का रस आठ माशे,

अदरक का रस ६ माशे, शहद ४ माशे और घी ३ माशे, इन चारों को मिला कर दो महीने तक सेवन करने से नामर्द भी मर्द हो जाता है।

(३२) वीर्य-वर्द्धक योग—प्याज का अर्क ६ माशे, गो-घृत ४ माशे और शहद ३ माशे, सबको मिला कर सुबह-शाम चाटने से और रात्रि को सोते समय शक्कर मिला हुआ गरम गो-दुग्ध पीने से दो महीने में ही खूब बल-वीर्य बढ़ जाता है। और अपूर्व चमत्कार दिखाई पड़ता है।

(३३) स्वप्नदोष-निवारक—मोचरस का चूर्ण ६ माशे और मिश्री ४ तोले दोनों को गऊ के गरम दूध में मिला कर लगातार २-३ महीने पीने से स्वप्नदोष दूर हो जाता है।

(३४) वाजीकरण योग—कौंच के छिले हुए बीजों का चूर्ण ६ माशे, तालमखाने के बीजों का चूर्ण ६ माशे, मिश्री एक तोला। इनका चूर्ण फाँक कर ऊपर से गौ का धारोष्ण दूध पीना चाहिए। यह उत्तम वाजीकरण योग है।

(३५) जरा-नाशक योग—१ तोले विदारीकन्द को पीसकर लुगदी बना ले। इसे मुँह में रखकर ऊपर से एक तोले गो-घृत और दो तोले मिश्री मिला हुआ गो-दुग्ध पीने से खूब बल बढ़ता है, और लगातार दो वर्ष के सेवन से बूढ़ा आदमी भी जवान हो जाता है।

(३६) उड़द की खीर—धुली हुई उड़द की दाल को रात भर भिगो दे। सुबह पत्थर पर पीस कर लुगदी बना ले। घी

डाल कर इस लुगदी को कढ़ाई में भून ले। जब सुर्ख हो जा तब उतार कर औटते हुए गो-दुग्ध में डालकर खीर बना ले खीर बन जाने पर मिश्री मिला कर काँसी या चाँदी के पात्र खावे। इसकी मात्रा धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए, क्योंकि यह दे से हजम होती है। ज्यों-ज्यों पचती जावे, मात्रा बढ़ाते जान चाहिए। कम से कम ४० दिन अवश्य सेवन करनी चाहिए आयुर्वेद में लिखा है—

भुक्त्वा सदैव कुरुते तरुणी शत मैथुनं पुरुषः।

अर्थात्—इस खीर को जो नित्य खाता है वह १०० स्त्रियों से मैथु करके उन्हें सन्तुष्ट कर सकता है। वैसे ही खाली उड़द की धुली हुई दा दूध में डाल कर, खीर बनाकर खाई जा सकती है।

(३७) सतावरी दुग्ध—गौ के आध सेर दूध में १ तोल सतावर का चूर्ण डाल कर उबाले। जब डेढ़ पाव रह जावे त मिश्री मिला कर ४० दिन पीने से खूब ही मैथुन-इच्छा बढ़ती है लिङ्ग भी दृढ़ हो जाता है।

(३८) वीर्य-सिन्धु—बड़े सेमल के वृक्ष की छाल का दो तोले रस निकाले, उसमें दो तोले मिश्री मिला कर सिर्फ सात दिन खाने से ही खूब वीर्य बढ़ता है।

(३९) नपुंसकामृत—दो तोले गूलर के रस में २ तोले विदारीकन्द के चूर्ण को मिलाकर चाट जावे। ऊपर से घी मिला हुआ गो-दुग्ध पीवे। इसके सेवन से नामर्द भी मैथुन के लिए उन्मत्त हो जावेगा।

(४०) सौ स्त्रियों खुश हों—गोखरू, तालमखाना, सतावर, कौंच के बीजों की गिरी, बड़ी खरेंटी, और गँगेरन। इन सबको १०-१० तोले लाकर कूट-पीस कर चूर्ण कर ले। रात्रि के वक्त छः माशे से १ तोले तक चूर्ण फाँक कर ऊपर से गर्म दूध पिए। लगातार एक-दो वर्ष खाने वाला पुरुष १०० स्त्रियों को तुष्ट कर सकता है। लिखा है:—

चूर्ण मिदंपयसा निशिपेयं यस्य गृहे प्रमदाशतमस्ति।

(४१) गुदा-मैथुन द्वारा पैदा हुई नपुंसकता—चकदत्त में लिखा है कि तिल और गोखरू का चूर्ण समभाग लेकर बकरी के दूध में पकावे और ठण्डे होने पर शहद मिलाकर खावे। महीने दो महीने के सेवन से लौंडेबाजी या हस्त-क्रिया द्वारा पैदा हुई नामर्दी दूर हो जाती है।

(४२) वीर्य-वर्द्धक—४० दिन तक सिंघाड़े के आटे का हलुआ बनाकर खाने से अवश्यमेव वीर्य पुष्ट होता है।

(४३) वीर्य-पौष्टिक—भुने हुए चने की दाल ६ माशे और बादाम ६ माशे दोनों को मिलाकर सायं-प्रातः सेवन करने से खूब ही वीर्य बढ़ता है। ज्यों-ज्यों पचने लगे थोड़ी-थोड़ी मात्रा बढ़ाते जाना चाहिए। ४० दिन में अवश्य लाभ होगा।

(४४) ताक़त की दवा—६ तोले ८ माशे असगन्ध कूट-छान कर एक सेर दूध में डाल कर औटावे। जब औट जावे तब २॥ तोले मिश्री डाल कर दोनों समय सेवन करे। बल-वीर्य खूब

बढ़ेगा और बदन सुर्ख हो जावेगा। निर्बल मनुष्य को इसमें क
मात्रा में अपनी शक्ति के अनुसार सेवन करना चाहिए।

(४५) वीर्य-वर्द्धक—तरबूज के बीजों की मींगी ६ माशे और
मिश्री ६ माशे मिला कर नित्य सायं-प्रातः खाने से शरीर खूब पु
होकर बल-वीर्य की वृद्धि होती है। दो-तीन महीने लगातार खा
से ही लाभ होता है।

(४६) वीर्य गाढ़ा बनाना—बबूल की कच्ची फलियाँ जो छाँ
में सूखी हों ५ तोले, मौलसरी की सूखी छाल ५ तोले, मोचरस
५ तोले और सतावर ५ तोले, इन सबको कूट कर चूर्ण कर ले, फि
इस चूर्ण में बराबर मिश्री मिलाकर छः माशे चूर्ण नित्य खावे
ऊपर से गो-दुग्ध पी ले। कैसा ही पतला वीर्य क्यों न हो, शी
गाढ़ा हो जावेगा।

(४७) (दूसरा उपाय)—२ तोले पिश्ता, २ तोले मिश्री
और ६ माशे सोंठ, इन तीनों को खूब बारीक पीस ले। इन्हें ए
तोले शहद में मिलाकर ऊपर से एक रत्ती धुली हुई भाँग का चू
डाल कर चाट जावे। १४ दिन में ही वीर्य खूब गाढ़ा हो जावेगा
यदि कुछ कसर मालूम हो तो कुछ दिन और सेवन कर लें।

(४८) शीघ्रपतन-नाशक योग—इमली के चीएँ पानी में
दिन तक भिगो कर उनके ऊपर का काला छिलका अलग कर दे
सूख जाने पर चूर्ण कर ले और बराबर की मिश्री मिला ले
२ चने भर नित्य खाने से ४२ दिन में शीघ्रपात दूर होकर वीर्य

(४९) अण्ड-वृद्धि-नाशक—बड़ी इन्द्रायण की जड़ को पीस कर एरण्ड के तेल में खरल कर ले। बढ़े हुए अण्ड पर तीन-तीन घण्टे के अन्तर से लेप करे। इसके साथ ही इन्द्रायण की जड़ का कपड़-छान चूर्ण दो-दो माशे प्रात-सायं गौ के दूध में डाल कर पीना चाहिए। जब तक पूरा आराम न हो तब तक इसे छोड़ना नहीं चाहिए।

(५०) नामर्दी का तेल—सफ़ेद चिरमिटी (घुँघची) १ पाव, खिरनी के बीज १ पाव और लौंग १ पाव। इन तीनों को महीन कूट-पीस कर सात कपरौटी की हुई आतिशी शीशी में भर कर पाताल-यन्त्र से तेल निकाल ले। इसमें से एक सींक पान में लगा कर खाने से २१ दिन में नामर्द भी मर्द बन जाता है। एक सींक खाने वाले को १ छटाँक और २ सींक खाने वाले को दो छटाँक घी नित्य खाना आवश्यकीय बात है।

(५१) बल-वीर्य नहीं घटेगा—मुलहटी, बिदारीकन्द, तज, लौंग, गोखरू, गिलोय और सफ़ेद मूसली। इन सबको समभाग लेकर चूर्ण कर ले। नित्य ३ माशे चूर्ण फाँक कर ऊपर से दूध पीने पर बल-वीर्य कभी नहीं घटता।

(५२) शुक्र-दोष-नाशक—वाराही कन्द का चूर्ण और मिश्री दोनों समभाग लेकर कूट-छान कर चूर्ण बना ले। इसमें से ६ माशे प्रातः और ६ माशे सायंकाल के समय फाँक कर ऊपर से धारोष्ण गौ-दुग्ध आध सेर पीने से ४० दिन में सब प्रकार का शुक्र-दोष दूर हो जाता है।

(५३) वीर्य-पौष्टिक योग—गोखरू १ तोला, कौंच के बीज २ तोले, गँगेरन के बीज १ तोले, इन्द्रवारुणी के बीज २ तोले, असगन्ध २ तोले, अडूसा २ तोले, और तालमूली, इलायची, दालचीनी, नागकेशर सब ६-६ माशे लेकर चूर्ण करे। बाद में सेमल के कोमल पत्तों के रस की २१ भावना दे। इस चूर्ण को अपने बल के अनुसार सेवन करने से वीर्य शुद्ध और पुष्ट होता है।

(५४) धातु-विकारान्तक—मखाना की ठुर्री आध पाव, तालमखाने के बीज पाव भर, सफ़ेद मूसली एक छटाँक, स्याह मूसली एक छटाँक, सेमर का मूसला एक पाव, रूमी मस्तगी २ तोले, छोटी इलायची के दाने १ तोला, बरियारी की जड़ एक छटाँक, बबूल का गोंद एक छटाँक, सेलखरी एक छटाँक, बिदारी-कन्द एक छटाँक और सतावर एक छटाँक इन सबों को कूट-पीस कर चूर्ण बना लेवे। एक तोला भर चूर्ण खाकर ऊपर से मिश्री मिला हुआ गो-दुग्ध पिए। ३१ दिन के सेवन से इच्छा पूर्ण होगी।

(५५) क्लैब्य-कुठार—शुद्ध पारा, अभ्रक-भस्म, लोह-भस्म शिलाजीत, वायविडङ्ग, स्वर्णमक्षिका-भस्म, इन सबको समभाग लेकर शहद और घृत समभाग में खरल करके एक-एक माशे भर की गोलियाँ बना ले। नित्य एक-एक गोली प्रातःकाल मिश्री मिले हुए दूध के साथ सेवन करने से नपुंसकता नष्ट होकर जवानी का सच्चा आनन्द आता है। औषधि खाने के दिनों में घृत, दूध आदि तरावट पैदा करने वाले पदार्थों का सेवन करना आवश्यक है।

(५६) बल-वर्द्धक खीर—जिस गऊ का बछड़ा बड़ा हो उसके दूध में गेहूँ के दलिए को डाल कर खीर पकावे। इस खीर में शहद और मिश्री डाल कर खाने से वृद्ध पुरुष भी तरुण की भाँति कामोन्मत्त हो जाता है। एक दिन खाकर ही इसके गुण की इन्तज़ारी करना भूल है। महीने दो महीने के सेवन में ही लाभ होता है।

(५७) रसाला—अच्छा मीठा मलाईदार गौ के दूध का जमाया हुआ दही २ सेर, सफ़ेद बूरा एक सेर, गो-घृत एक छटाँक, शहद १ छटाँक, कालीमिर्च, दालचीनी, नागकेशर प्रत्येक छः छः माशे बारीक पीस कर दही में डाल देवे। फिर शक्कर का बूरा, घी, शहद वग़ैरह मिलाकर हलके हाथ से सफ़ेद कपड़े में डाल कर छान ले। बाद में इसे भीमसेनी कपूर से सुगन्धित कर मिट्टी के कोरे पात्र में रख दे। शक्ति का विचार रख कर खावे। यह अत्यन्त बल देने वाला है। कहते हैं, इसे भगवान श्रीकृष्ण जी ने खाया था—

या स्वादिता भगवता मधुसूदनेन।

(५८) असगन्धादि घृत—असगन्ध १ सेर, गो-घृत उम्दा १ सेर, दोनों को मन्द आग पर धीरे-धीरे पकावे और जब घृत पाक पर आवे तब सोंठ, मिरच, पीपल, चतुर्जात, वायविडङ्ग, जावित्री, बला, अतिबला, गोखरू और विधारा इन सबों का अर्थात् प्रत्येक का चार-चार तोला कपड़-छान चूर्ण डाल कर चलाता रहे। बाद में लोह-भस्म, वङ्ग-भस्म, अभ्रक-भस्म प्रत्येक चार-चार तोले डाल दे। ऊपर से ३२ तोले शहद और ३२

तोले ही मिश्री डाल कर घृत को चूल्हे से नीचे उतार ले। ठण्डा होने पर चिकनी हाँडी में भर कर रख दे। अपनी शक्ति के अनुसार मात्रा सायं-प्रातः निश्चय करके खाने से अत्यन्त ही बल बढ़ता है। साथ ही वात रोगों के लिए भी यह घृत परम शत्रु है।

(५९) वीर्य-वर्द्धक दूध—पहिले पहिल ब्याई गऊ जिसका बछड़ा बड़ा हो गया हो, केवल उड़द के पत्ते ही खिलावे और उसका दूध पिए। वीर्य बढ़ाने में बड़ा ही उपयोगी सिद्ध होगा।

(६०) अपूर्व वाजीकरण—उड़दों का आटा १ तोला, घृत ९ माशे और शहद ६ माशे मिला कर लगातार ४ महीने सेवन करने से पुरुष में घोड़े की तरह मैथुन करने की शक्ति आ जाती है। दवा के ऊपर गो-दुग्ध में मिश्री डालकर जरूर पीना चाहिए।

(६१) कामिनी-मद-भञ्जन—आध सेर सफ़ेद दिल्ली की मूसली कूट कर कपड़-छान कर ले। अपनी शक्ति के अनुसार इसकी मात्रा ६ माशे से १ तोले तक रख लेवे। रोज सायं-प्रातः इस चूर्ण को फाँक कर ऊपर से पाव-आध सेर गो-दुग्ध पीवे। इससे खूब शक्ति बढ़ती है। साल भर के सेवन से पुरुष १० स्त्रियों का गर्व नष्ट कर सकता है और यदि पुत्र उत्पन्न हुआ तो अत्यन्त बलवान होगा।

(६२) पुंसत्व-वर्द्धक योग—पीपल के फल, पीपल की जड़ की छाल, भीतरी छाल और फुनगी। इन सबको छाँह में सुखा कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले। ९ माशे से १८ माशे तक

अपने बल के अनुसार सवेरे ही फाँक कर ऊपर से मिश्री मिला हुआ गो-दुग्ध पीवे। तीन-चार महीने के सेवन से मैथुन-शक्ति प्रबल हो जावेगी।

(६३) शुक्र-वर्द्धक—एक रत्ती अभ्रक-भस्म सोने और चाँदी के वर्क़ में मिला कर पान के साथ खाने से धातु खूब बढ़ती है। अथवा इतना ही अभ्रक-भस्म भाँग के साथ खाने से खूब स्तम्भन होगा। लौंग और शहद के साथ अभ्रक-भस्म खाने से भी वीर्य की वृद्धि होती है।

(६४) बल-वर्द्धक संख्या—संख्या सफ़ेद नई हाँडी में डालकर ऊपर से हाँडी पर मिट्टी का ढकन लगाकर गेहूँ के आटे से इसकी दराजें बन्द कर दे। बाद में कपरौटी करके जङ्गली कण्डों की मन्द आग में जलावे। जब संख्या उड़ जावे तब ठण्डी करके खोले और ऊपर के ढक्कन में लगे हुए फूल को उतार कर शीशी में रख ले। नित्य एक चावल भर खोए में रख कर खाने से अपूर्व बल और पुरुषार्थ बढ़ता है, वीर्य शुद्ध होकर गाढ़ा हो जाता है और पुरुष को सन्तानोत्पत्ति के योग्य बनाता है। कम से कम २१ दिन इसे अवश्यमेव सेवन करना चाहिए। जब तक औषधि सेवन करे तब तक खूब घी, दूध, मक्खन, रबड़ी, मलाई आदि खावे। भोजन सिर्फ़ मूँग या उर्द की दाल तथा गेहूँ की रोटियाँ होनी चाहिए।

(६५) क्लैब्यहर चूर्ण—लौंग १ माशा, पीपल १ माशा और छोटी इलायची का चूर्ण २ माशे। इनका चूर्ण करके इसमें एक

या दो रत्ती वङ्ग-भस्म खाने से वीर्य बढ़ता है और नामर्द भी मर्द हो जाता है।

(६६) मापादि घृत—उड़द ४ सेर, कौंच के बीज ४ सेर, जीवक, ऋषभक, महामेदा, काकोली, क्षीर काकोली, ऋद्धी, वृद्धि सतावर, मुलहटी, असगन्ध प्रत्येक १६-१६ तोले लेकर अठगुने पानी में पकावे। जब पानी चौथाई रह जावे तब उतार कर छान ले। फिर इसमें गो-घृत १ सेर, दूध १० सेर, विदारीकन्द का स्वरस १० सेर डालकर पकावे। जब घृत मात्र रह जावे तब इस घृत में मिश्री, बंसलोचन, शहद, प्रत्येक १६-१६ तोले और पीपल का चूर्ण ८ तोले मिलाकर चीनी, काँच अथवा घी के चिकने पात्र में रख देवे। इसमें से अपनी शक्ति के अनुसार मात्रा खाकर ऊपर से मूँग, चावल, घृत का इच्छानुसार भोजन करे। इसके सेवन से कभी वीर्य-क्षय नहीं होता और लिङ्ग में खूब ताक़त आती है।

(६७) बल-वर्द्धक चटनी—ग्यारह बादाम, तोले भर खस-खस (अफ़ीम के बीज), पाँच इलायची, इन सबको रात के वक़्त पत्थर, काँच अथवा मिट्टी के पात्र में भिगो दे। प्रातः समय बादाम और इलायची का छिलका हटा कर इन सबको पीस कर लुगदी बना ले। पीसते वक़्त एक तोला मिश्री भी डाल ले। इसे २ तोले गो-मक्खन में मिला कर ऊपर से ३ माशे बंसलोचन और १-२ चाँदी का वर्क़ मिला कर चाटे। एक दो महीने के सेवन से अत्यन्त बल-वीर्य की वृद्धि होगी।

(६८) नारसिंह चूर्ण—सतावर का चूर्ण १ सेर, दक्खिनी

गोखरू का चूर्ण १ सेर, वाराहीक़न्द का चूर्ण १ सेर, मत्त गिलोय १ सेर, शुद्ध भिलावाँ २ सेर, चित्रक की छाल १० छटाँक, काले तिल १ सेर, त्रिकुटा आध सेर, मिश्री ४॥ सेर, शहद २। सेर, गो-घृत १ सेर २ छटाँक। कूटने की चीजों को कूट कर मिश्री, शहद और गो-घृत में मिलाकर किसी चिकने वर्त्तन में रख दे। इसमें से २ तोले नित्य सुबह के वक्त सेवन करे और पथ्य से रहे तो अत्यन्त वीर्य बढ़ता है। इसके सेवन से १० स्त्रियों के मान को मर्दन कर सकता है और यदि पुत्र उत्पन्न हुआ तो वह सिंह के समान पराक्रमी होता है। प्रमेह, कोढ़, बुढ़ापा, क्षय, श्वास, वात-रोग, सन्निपात आदि रोग नाश होते हैं।

(६९) रमणी-मान-नाशक चूर्ण—कनेर की जड़ का चूर्ण १ तोले नग सेमल की जड़ पाँच तोले, कौंच के बीजों की गिरी ७ तोले, इन तीनों को कूट-पीस कर कपड़छान कर ले। इसमें १३ तोले मिश्री मिला ले। नित्य प्रातःकाल ६ माशे चूर्ण को फाँक कर ऊपर से घी और मिश्री मिला दूध पीवे। इसके १-२ महीने के सेवन से स्त्रियों को मैथुन के समय सन्तुष्ट कर सकता है।

(७०) मन्मथ चूर्ण—गोखरू ४ तोले, कौंच के बीज ८ तोले, गँगेरन के बीज ४ तोले, सतावर ४ तोले, विदारीक़न्द ८ तोले, असगन्ध १२ तोले, अड़ूसा, मूसली, गिलोय, लाल चन्दन, इलायची, दालचीनी, तेजपात, पीपल, आँवले, लौंग और नाग-केशर प्रत्येक २-२ तोले। खरेटी और सेमल की मूसली २१-२१ तोले, कुशा की जड़, काँस की जड़, सरपते की जड़, हरेक ७-७

तोले लेकर चूर्ण कर ले। बाद में बराबर की खाँड मिलाकर एक पात्र में भर कर रख लेवे। शक्ति के अनुसार मात्रा निर्धारित कर सेवन करने से घोड़े के समान पराक्रमी हो जाता है।

(७१) मानसोल्लास चूर्ण—तज, पीपल, लौंग, छोटी इलायची, सफेद चन्दन, आँवले प्रत्येक ४ तोले, लोह की भस्म १ तोले, शुद्ध भाँग ८ तोले, भीमसेनी कपूर और कस्तूरी १-१ माशे। इन सबका चूर्ण करके बराबर की मिश्री मिलावे। इस चूर्ण को ६ माशे नित्य खाकर ऊपर से मिश्री-मिश्रित गो-दुग्ध सेवन करने से अत्यन्त कामोद्दीपन होता है।

(७२) मदन-प्रकाशक चूर्ण—तालमखाने, मूसली सफेद विदारीकन्द, सोंठ, असगन्ध, कौंच के बीज, सेमल के फूल, खरेंटी, सतावर, मोचरस, गोखरू, जायफल, भुनी हुई उड़द की दाल, भाँग और वंसलोचन। इन सबों को समभाग लेकर चूर्ण करे। बाद में बराबर की मिश्री मिलाकर नित्य २-२ तोले सेवन करे। ऊपर से मिश्री मिला गो-दुग्ध पान करे। इस तरह एक-दो महीने के सेवन से नपुंसकता दूर होकर शरीर में कामदेव का प्रकाश होता है।

(७३) आनन्ददायक योग—अकरकरा, सोंठ, लौंग, केशर, पीपल, जावित्री, सफेद चन्दन प्रत्येक १-१ तोला, शुद्ध अफीम ४ तोले मिला कर चूर्ण कर ले। इसमें से सोते वक्त १ रत्ती चूर्ण एक माशा शहद में मिला कर चाट ले। ऊपर से मिश्री मिला गो-दुग्ध पीने से मैथुन के समय अत्यन्त ही आनन्द आता है।

(७४) पुत्रदा चूर्ण—लक्ष्मणा, लाल एरण्ड की जड़, हरड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, असगन्ध। इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण कर ले। फिर सबके बराबर अच्छी प्रकार तैयार किया हुआ लोह-भस्म मिला ले। मीठा होने के लिए मिश्री मिला ले। इसमें लोह-भस्म है, अतएव अपनी शक्ति के अनुसार मात्रा निर्धारित कर ले। नित्य प्रातः इसे सेवन करके ऊपर से मिश्री मिला गो-दुग्ध पान करने से पुत्र उत्पन्न होगा। जिनके कन्याएँ ही होती हों उन्हें इसे विधिवत आजमा कर देखना चाहिए।

(७५) सन्तानदा वटी—स्वर्ण के वर्क २ तोले, वङ्ग-भस्म, शीशा-भस्म, कान्तलोह-भस्म हरेक दो-दो तोले, धान्याभ्रक-भस्म, मोती-भस्म, मूँगे की भस्म हरेक ४-४ तोले। इन सबको मिला कर क्रमशः गो-दुग्ध, ईख का रस, अडूसा, लाख, नेत्रबाला, कलाक़न्द, केले के फूल, कमल, मालती, केशर, इनके रसों की भावना देकर सुखाता जावे। फिर कस्तूरी आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित कर दो-दो रत्ती की गोलियाँ बना ले। बाद में मिश्री शहद, अथवा घृत में मिला कर एक-एक गोली नित्य खावे तो निस्सन्देह सन्तान की प्राप्ति हो।

(७६) मन्मथ गुटिका—शुद्ध पारा १ तोला, शुद्ध गन्धक १ तोला, उत्तम अभ्रक-भस्म दो तोले, भीमसेनी कपूर ८ माशे, वङ्ग-भस्म ८ माशे, ताम्र-भस्म ४ माशे, लोह-भस्म १ तोला, विधारे के बीज, बिदारीक़न्द, सतावर, तालमखाने, खरेंटी, कौंच के बीज,

गॅगेरन, जायफल, जावित्री, लौंग, भाँग के बीज, सफ़ेद राल, अजवायन हरेक का चूर्ण ४-४ माशे। पहिले पारे, और गन्धक की कजली करके, फिर उसमें सब धातुओं को मिला कर एक जान कर ले। बाद में सब दवाइयों को एकत्र कर, पान के रस में घोट कर दो-दो रत्ती की गोलियाँ बनावे। एक गोली प्रातःकाल ही खाकर ऊपर से मिश्री मिला गो-दुग्ध (थोड़ा गर्म) पीने से अपूर्व बल, कान्ति और तेज उत्पन्न होकर पुरुष मदोन्मत्त हो जावेगा।

(७७) पुष्पधन्वा वटी—शुद्ध पारा १ तोला, शीशा-भस्म १ तोला, लोह-भस्म १ तोला, अभ्रक-भस्म ३ तोले। इन सबों को, धतूरे के रस की, भाँग की, मुलहटी की, सेमल की, पान की १-१ दिन भावना देकर फिर इसे मिश्री, शहद और घी में अपनी शक्ति के अनुसार मात्रा नियत करके चाटे। ऊपर से गो-दुग्ध पान करे तो पुरुष अनेक स्त्रियों से रमण करने वाला हो सकता है।

(७८) स्तम्भन वटिका—कस्तूरी १ तोला, केशर २ तोले, जायफल दो तोले, लौंग दो तोले, शुद्ध भाँग २ तोले और अफ़ीम ४ तोले। इन सबको कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले, बाद में थोड़ा सा जल डाल कर खरल में रगड़ ले और दो-दो रत्ती की गोलियाँ बना ले। कामी पुरुष को चाहिए कि एक गोली सोते वक्त शहद के साथ खावे। ऊपर से मिश्री और घी मिला हुआ, अच्छी तरह औटाया हुआ गो-दुग्ध सेवन करे। यह अत्यन्त स्तम्भनकारक वटी है। शक्ति के अनुसार गोली की मात्रा घटाई-बढ़ाई जा सकती है।

(७९) वीर्य-स्तम्भिनी गुटिका—केशर, लौंग, जायफल,

जावित्री, मिश्री, सेमल की मूसली, माजूफल, काला जीरा, समुद्रसोख, सफ़ेद मूसली, अक़रक़रा, बबूल की कच्ची फलियाँ, राल, पाढ़, रूमी मस्तगी, शुद्ध शिगरफ़, अफ़ीम, इन्द्रजौ, प्रत्येक ४-४ माशे। कस्तूरी और भीमसेनी कपूर २-२ माशे। इन सब वस्तुओं को पीस कर शहद में २-२ माशे की गोलियाँ बना लेवे। रात को सोते वक्त एक गोली खाकर ऊपर से मिश्री मिला हुआ दूध पीने से अपूर्व स्तम्भन होता है।

(८०) कामेश्वर रस—जायफल, अक़रक़रा, काले धतूरे के बीज, जावित्री, अफ़ीम, शीशे की भस्म, शुद्ध शिगरफ़। इन सबको समान भाग लेकर खसखस के काथ में खरल करके १-१ रत्ती की गोलियाँ बना लेवे। एक गोली मिश्री के साथ सेवन करने से महान स्तम्भन करेगी। २०-२५ दिन सेवन करने पर ही गुण मालूम पड़ता है।

(८१) नपुंसक सञ्जीवन—गिलोय का सत्त १ माशा, अभ्रक-भस्म १ रत्ती, हरताल-भस्म एक रत्ती, इलायची ४ रत्ती, पीपल दो रत्ती, खाँड ६ माशे। इन सबको १ तोले शहद में मिलाकर सेवन करने से ३-४ महीने में एक अत्यन्त नामर्द भी सौ स्त्रियों से मैथुन कर सकता है।

(८२) अपरिमित वीर्य-वर्द्धक—पाँच तोले खोआ, दो तोले मिश्री, १ माशा छोटी इलायची। इनमें एक रत्ती भर ताँबे का भस्म मिला कर खाने से, और खाने के बाद गर्म कर ठण्डा किया हुआ

शुद्ध गो-दुग्ध पीने से नपुंसकता नाश हो जाती है। २-३ महीने के सेवन से तो बहुत ही वीर्य बढ़ता है।

(८३) हरशशाङ्क चूर्ण—शुद्ध आँवलासार गन्धक ५ तोले और सेमल की जड़ का चूर्ण ५ तोले दोनों को कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले। बाद में सेमल के स्वरस की ३ भावना देकर सुखा ले, चूर्ण तैयार हो गया। अब इसकी मात्रा १ माशे से डेढ़ माशे तक सेवन करके ऊपर से दूध पीना चाहिए। ३-४ मास यदि सेवन किया जावे तो पुरुष में घोड़े के समान मैथुन करने की शक्ति आ जावेगी।

(८४) वानरी गुटिका—कौंच के १। सेर बीजों को ५ सेर दूध में उबाल कर उनका छिलका साफ़ कर दे और सुखाकर आटा बना ले। इस आटे को गो-दुग्ध में घोल कर पकौड़ी बना ले। पकौड़ियों के लिए गो-घृत ही होना चाहिए। मन्द-मन्द अग्नि पर पकौड़ियाँ बना कर, पहिले से ही बना कर रखी हुई मिश्री की चाशनी में डाल दे। जब वे खूब चाशनी पी लेवें तब उन्हें शहद भरे पात्र में डाल कर पात्र का मुख बाँध दे। जवान आदमी २-२ तोले सायं-प्रातः खाकर अपूर्व शक्तिसम्पन्न हो सकता है। यह सहज और ऊँचे दर्जे की वाजीकरण दवा है।

(८५) वीर्य-स्तम्भक वटी—अकरकरा, सोंठ, जायफल, केशर, लौंग, पीपल, कस्तूरी, कपूर और अभ्रक-भस्म। इन सबको २-२ माशे लेकर, कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले। पीछे से इनमें शुद्ध अफ़ीम १॥ तोले मिला कर आधी-आधी रत्ती की गोलियाँ बना

ते। इसमें से एक या दो गोली खाकर ऊपर से मिश्री मिला दूध पीने से घण्टे आध घण्टे के लिए अवश्य रुकावट होगी।

(८६) एला वटी—छोटी इलायची २ तोले, तेजपात २ तोले, दालचीनी २ तोले, मुनक्का २ तोले, छोटी पीपल २ तोले, मिश्री ४ तोले, मुलहटी ४ तोले, खजूर ४ तोले, जायफल ४ तोले और केशमिश ४ तोले। इन सबको कूट-पीस कर जल की सहायता से ३-३ माशे की गोलियाँ बना ले। अपने बल के अनुसार सुबह-शाम एक या दो गोली खाकर ऊपर से गौ का धारोष्ण दूध पीना चाहिए। जिन्हें कामोद्दीपन न होता हो, उनके लिए यह मनोवाञ्छित है।

(८७) निर्बलता-नाशक गुड़—सिर्फ ६ तोले ८ माशे पुराना गुड़ स्त्री-प्रसङ्ग के बाद खा लेने से कभी भी कमजोरी नहीं होगी। इसका यह मतलब नहीं है कि नित्य मैथुन आरम्भ कर दिया जावे और उपरोक्त मात्रा में गुड़ खा लिया जावे। यह उपाय कभी-कभी मैथुन करने वालों के लिए ही है।

(८८) वीर्य-वर्द्धक बताशे—रोज प्रातःकाल देशी शक्कर के बने बताशे में वट-वृक्ष का दूध भर कर खाने से खूब ही वीर्य बढ़ता और पुष्ट होता है।

(८९) अत्यन्त वीर्यदाता—खसखस के दाने २ तोले, भूने हुए चने २ तोले, खाँड ४ तोले, पूरे दो नारियलों की गिरी। इन सबको पीस-कूट कर रख ले। २ तोले नित्य खाकर ऊपर से

गो-दुग्ध पान करे। इसके सेवन से अत्यन्त वीर्य की वृद्धि होती है। स्त्री-प्रसङ्ग से बचना जरूरी है।

(९०) पुंसत्व-वर्द्धक हलवा—ग्वार पाठे का गूदा, घी, गेहूँ का मैदा और शक्कर, इन सबको बराबर-बराबर लेकर हलवा बना ले। सिर्फ २१ दिन के खाने से ही नामर्द भी मर्द हो जाता है। स्त्री-प्रसङ्ग और खटाई से बचना चाहिए।

(९१) माजून चोबचीनी—चोबचीनी १० तोले। दालचीनी, कबाबचीनी, लौंग, कालीमिर्च, रूमी मस्तगी, सालब मिश्री, जावित्री, इन्द्रजौ, मोथा, नरकचूर, अक़रक़रा, बादाम की मींगी, पिश्ता और केशर। सब ४-४ माशे लेकर कूट-पीस ले। बाद में दो माशे कस्तूरी भी मिला दे। इतनी तैयारी हो जाने पर कलईदार कड़ाही में आध सेर शहद डालकर मन्द मन्द आँच में से पकावे, जब उसमें झाग आवें तब उन्हें उतार कर फेंक दे। अब उस चूर्ण को इस शहद में डालकर तत्काल नीचे उतार ले, ठण्डा हो जाने पर १-१ तोले की गोलियाँ बना ले। एक गोली रोज सुबह खाने से बूढ़ा भी जवान हो जाता है। खटाई तथा बादी चीजों से बचना आवश्यक है। नमक लाहौरी ही काम में लाना चाहिए।

(९२) वीर्यकारक और गौरवर्णकारक चूर्ण—असगन्ध आध सेर, सफ़ेद मूसली आध सेर, स्याह मूसली आध सेर। सब का चूर्ण कर ले। बाद में इस चूर्ण को १५ सेर गो-दुग्ध में डालकर खोआ बना ले। इस खोए को छाया में सुखा ले और सूख जाने

पर चूर्ण बना ले। इसमें बराबर की मिश्री मिलाकर रख दे। २१ माशे चूर्ण रोज खाकर ऊपर से मिश्री मिला दूध पीवे। खूब वीर्य बढ़ेगा और रक्त गोरा हो जावेगा। जो अत्यन्त काले हैं, वे कुछ-कुछ गोरे हो सकेंगे।

(९३) शुक्र-सिन्धु चूर्ण—तज, गोखरू बड़ा, समुद्रसोख, मूसली स्वेत, तालमखाना, बीज बन्द और ढाक का गोंद। इन सबको समभाग लेकर कूट-छान ले और बराबर की मिश्री मिला दे। नित्य प्रातः समय ६ माशे चूर्ण फाँक कर ऊपर से धारोष्ण दूध पीने से खूब बल-वीर्य बढ़ता है।

(९४) वीर्य स्खलित ही न होगा—दुमुही (सर्प विशेष) और काले साँप की हड्डी दोनों को कमर में बाँधने से जब तक हड्डियाँ खोली न जावेंगी तब तक मैथुन के समय कदापि वीर्य-पात न होगा।

(९५) (दूसरा उपाय) गऊ के सींग के ऊपर ही ऊपर का छिलका लेकर आग पर रख, उसकी धूनी कपड़ों में देकर उन कपड़ों को पहिन ले और मैथुन करे। जब तक कपड़े नहीं उतारे जाँयगे तब तक वीर्य स्खलित नहीं होगा।

(९६) (तीसरा उपाय) ऊँट की हड्डी में छेद करके पलँग के सिरहाने की तरफ रख दे, जब तक हड्डी न हटाई जावेगी तब तक वीर्य स्खलित नहीं होगा।

(९७) (चौथा उपाय) ऊँट के बालों की रस्सी को भोग के

समय अपनी जङ्घा पर बाँध ले, जब तक रस्सी नहीं खोली जावेगी वीर्य स्खलित न होगा।

(९८) (पाँचवाँ उपाय) कमर में फिटकरी बाँध कर मैथुन करने से स्खलित होने में देर लगेगी।

(९९) (छठवाँ उपाय) रविवार के दिन घोड़े तथा खच्चर की पूछों का एक-एक बाल लेकर उन बालों को पीली कौड़ी के मध्य में एक छेद करके उस कौड़ी में डाल कर दाहिनी भुजा पर बाँध ले। इससे वीर्य स्खलित न होगा।

(१००) कौंच-पाक बनाने की विधिः—

जायफल, केशर, सोंठ, पुनर्नवा, कालीमिर्च, बला, पीपल, अतिबला, दालचीनी, मूसली, इलायची, चन्द्रोदय, तेजपात, लोह-भस्म, लौंग, अभ्रक-भस्म, अकरकरा, जावित्री, तालमखाने हरेक २-२ तोले चन्दन अगर, कस्तूरी, कपूर, हरेक ४-४ तोले।

इन सबको कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले। बाद में छिले हुए कौंच के बीजों के एक सेर चूर्ण को ४ सेर गो-दुग्ध और ३२ तोले गो-घृत में डाल कर मन्द अग्नि में पकावे। ऊपर से१॥ सेर मिश्री भी डाल दे। जब पकते-पकते खोआ-सा हो जावे तब ऊपर लिखी चीजों का चूर्ण डाल कर फौरन नीचे उतार ले। इसे चिकने पात्र में रख, नित्य २-२ तोले खाकर ऊपर से गौ का दूध पीवे। अत्यन्त वीर्य और बल की वृद्धि करेगा।

(१०१) कामसुन्दर पाक बनाने की विधिः—

सतावर, गोखरू, लौंग, इलायची, आँवला, चन्दन, पत्रज,

सोंठ, धनियाँ, मूसली, तज, छोहारे, पीपल, कमलगट्टे, कौंच के बीज, मोथा, तालमखाने, हरेक २-२ तो० और कस्तूरी ६ माशे, चिकनी सुपारी दखिनी ८ तोले, भीमसेनी कपूर ६ माशे, धुली हुई भाँग ६ तोले।

इन सबको चूर्ण करके तैयार रखे। मिश्री की चाशनी और खोआ मिला कर यथाविधि तैयार कर ले। ऊपर से यह चूर्ण डाल दे। घी चुपड़ी काँसी की थाली में ठण्डा करके ऊपर से चाँदी के वर्क लगा दे और बर्फी बना कर रख ले। अपनी शक्ति के अनुसार खाकर ऊपर से दूध पीवे। इससे दीर्घायु होकर अत्यन्त पुष्टि प्राप्त होती है।

(१०२) रति-वल्लभ पाक :—

दक्खिनी उम्दा सुपारी आध सेर लेकर बहुत बारीक-बारीक कूट ले, और खरल में डाल कर चूर्ण करके कपड़-छान कर ले। सुपारियों को जल में भिगो कर कूटना चाहिए। जब कपड़-छान हो जावे तब इस चूर्ण को ४ सेर गो-दुग्ध में डाल कर १६ तोले गौ का घी और ५ सेर मिश्री भी डाल दे। अब मन्द-मन्द आँच से इसे पकावे जब खोआ-सा बन जावे तब नीचे उतार कर निम्न-लिखित औषधियों का चूर्ण जो पहिले से ही कपड़-छान किया हुआ रखा हो, डाल दे।

इलायची, नागबला, बला, पीपल, जायफल, जावित्री, पत्रज, तज, दालचीनी, सोंठ, खस, नेत्रवाला, नागरमोथा, त्रिफला, बंसलोचन, सतावर, कौंच के बीज, दाख, तालमखाने, गोखरू,

खजूर, छोहारे, सफेद चन्दन, लौंग हरेक २-२ तोले। चन्द्रोदय २ माशे, वङ्ग-भस्म १ तोला, अभ्रक-भस्म १ तोला, और धनियाँ, क्षीर काकोली, कसेरू, महुआ, सिंघाड़े, और कलौंजी, अजवायन, बड़-वृक्ष के बीज, जटामाँसी, सौंफ, मेथी, विदारीकन्द, मूसली, असगन्ध, कचूर, नागकेसर, कालीमिर्च, चिरौंजी, सेमर के बीज, गजपीपल, कमलगट्टा, लालचन्दन हरेक २-२ तोले। कस्तूरी २ माशे, नाग-भस्म, १ तोला, लौह भस्म १ तोला, भीमसेनी कपूर २ माशे।

उपरोक्त दवाइयाँ डाल कर लड्डू बना ले अथवा थाली में फैला कर बर्फी बना ले। मात्रा २ तोले की है, किन्तु अपनी जठराग्नि की शक्ति का विचार करके ही खाना ठीक है। नित्य भोजन के पहिले इसे सेवन करना चाहिए। यदि भोजन न पचा हो तो इसे नहीं खाना चाहिए। खट्टे पदार्थों से बचना चाहिए। इस पाक के द्वारा शरीर में काम-शक्ति की अपूर्व वृद्धि होकर पुरुष घोड़े की तरह मैथुन करने वाला हो जाता है।

इसी ऊपर लिखे पाक में यदि निम्न-लिखित दवाइयाँ कूट-छान कर और मिला दी जावें तो यही "कामेश्वर पाक" बन जाता है।

खुरासानी अजवायन, समुद्रसोख, धतूरे के बीज (शुद्ध), माजूफल, अक़रक़रा, खसखस, तज, हरेक २-२ तोले और भाँग -शुद्ध ७ तोले।

यह "कामेश्वर पाक" वीर्य को गाढ़ा करता है, स्तम्भन-शक्ति को बढाता एवं काम-शक्ति को बलवान करता है।

(१०३) बादाम-पाक बनाने की विधि :—

बादामों की गिरी आध सेर लेकर पानी में भिगो दे। (बाजार में जो बादाम की गिरी मिलती है, वह ठीक नहीं है। अपने हाथों से अच्छी बादाम की गिरी निकालना चाहिए) जब भींग जावे तब छिलका उतार कर पत्थर पर खूब बारीक पीसकर पिट्ठी बना ले। तैयार हो जाने पर एक सेर शुद्ध मिश्री की चाशनी बना ले और उसमें १० तोले गो-घृत डाल दे। बाद में बादाम की पिट्ठी भी इसमें डालकर मिला दे। अब छोटी इलायची के दाने १ तोला, बड़ी इलायची के दाने १ तोला, जायफल १ तोला, लौंग १ तोला, केशर १ तोला और दालचीनी १ तोला। इन सबका चूर्ण भी मिला दे। पिस्ता १ छटाँक और चिरौंजी १ छटाँक, चाँदी और सोने के वर्क १००-१०० मिलाकर ५-५ तोले के लड्डू बाँध कर रख ले। नित्य १-१ लड्डू खाकर ऊपर से दूध पीवे। यह अत्यन्त बल-वर्द्धक है।

(१०५) पाकराज बनाने की विधि :—

गोखरू, खरैटी, कौंच के बीज, गँगेरन, सतावर, तालमखाना, विदारीकन्द, हरेक ४-४ तोले, और त्रिफला, त्रिकुटा, ३-३ तोले तथा दालचीनी, इलायची, तेजपात, जमालगोटे की जड़, सेंधा नमक, धनियाँ, कचूर, खस, कङ्कोल, नागरमोथा, वंशलोचन मुनक्का, जायफल, जटामाँसी, नागकेसर, इन्द्रजौ, पीपलामूल, साल, जावित्री, अजवायन, कायफल, मेथी, मुलहटी, देवदारु, सौंफ, छुहारे, चन्दन, तगर, जवाखार, प्रत्येक १-१ तोले।

इन उपरोक्त दवाइयों को अच्छी तरह कूट-पीसकर किसी महीन कपड़े से छान कर रख ले।

केसर, शुद्ध गन्धक, कस्तूरी, शुद्ध गूलर, शुद्ध पारा, शुद्ध शिलाजीत, हरेक १-१ तोले धुली हुई शुद्ध भाँग ५६ तोले।

इन सबको कूट-पीसकर ऊपर की दवाइयों में मिला दें और ११ छटाँक सतावर का रस और ११ छटाँक भुई आँवले के रस को मिलाकर इनमें उपरोक्त चूर्ण को भिगो दे। भीग जाने पर धूप में डालकर सुखा ले। बाद में २ सेर खोए को आध सेर गो-घृत में अच्छी तरह भून ले, जब कुछ-कुछ लाल रङ्ग हो जावे तब उतार कर रख ले।

दवाइयों के सब चूर्ण को एक कड़ाही में अलग १ सेर गो-घृत डालकर भूँज ले। जलने न पावे, इसलिए आग मन्दी रक्खे। अब ३ सेर मिश्री की चाशनी बनाकर उसमें घी में भुना हुआ खोआ और घी में भुनी हुई सब दवाइयाँ डाल दे। ऊपर से मूँगा-भस्म, मोती-भस्म, शीशा-भस्म, वङ्ग-भस्म, लोह-भस्म, ताँबा-भस्म, अभ्रक-भस्म, हरेक २-२ तो० डालकर सबको मिलाकर एकदिल कर ले। ठण्डा होने पर १-१ तोले के लड्डू बाँध ले। एक लड्डू सुबह और १ सायङ्काल को खाकर मिश्री मिला गो-दुग्ध पीने से नामर्द भी मर्द बन जाता है। स्त्रियाँ सेवन करें तो उनका वन्ध्या-दोष नाश हो जाता है। स्त्री-पुरुष दोनों इसका नियमपूर्वक सेवन करते रहें तो अवश्यमेव उन्हें सिंह के समान पराक्रमी सन्तान पैदा होती है। तेल, गुड़, मिर्च, दही, रञ्ज, क्रिया, मैथुन तथा अन्य

हानिप्रद पदार्थों तथा कार्यों से दूर रहना चाहिए। यह पाक सब पाकों में शिरोमणि है।

(४) तिले, लेप और तैल आदि

हम पीछे के प्रकरण में बहुत सी बल-वीर्य-वर्द्धक अलभ्य औषधियाँ लिख आए हैं। अब यहाँ हम अच्छे बढ़िया-बढ़िया तैल, लेप, सेंक आदि का वर्णन करेंगे। जिनकी इन्द्रिय में हस्त-मैथुन, गुदा-मैथुन, पशु-मैथुन आदि अप्राकृतिक मैथुनों के कारण टेढ़ापन, शिथिलता आदि नपुंसकत्व सूचक दोष पैदा हो गए हों, उन्हें नीचे लिखी चिकित्साओं को ध्यान से पढ़ना चाहिए, और जो उन्हें उचित जँचे वे करनी चाहिएँ। इस प्रकरण में जहाँ-तहाँ पाताल-यन्त्र का वर्णन आवेगा, अतएव हम पाताल-यन्त्र के विषय में ही सबसे पहिले लिखेंगे।

पाताल-यन्त्र—शुद्ध पवित्र भूमि में एक हाथ गहरा गड्ढा खोद कर उसमें बड़े मुख का एक पात्र रख दे। बाद में दूसरे पात्र में, जिन औषधियों का पाताल-यन्त्र द्वारा तैल निकालना हो, डाल कर उसके मुख पर छेदों वाला एक दूसरा पात्र ढाँक कर उसे गढ्ढे में रखे हुए पात्र पर युक्ति से औंधा रक्खे। रखते वक्त छेदों वाला पात्र मुँह से न हट जावे, यह बात ध्यान में रखनी चाहिए। दोनों पात्रों के मुँह को कपड़-मिट्टी करके खूब अच्छी तरह बन्द कर, गड्ढे को मिट्टी से पूर दे। मिट्टी चारों ओर अच्छी तरह दबा-दबा कर भर दे। बाद में ऊपर से आग जला दे।

जिस वस्तु का तैल निकालना होगा उसका तेल इस आग की गर्मी से नीचे के पात्र में गिर जावेगा। ठण्डा होने पर गड्ढा खोद कर पात्रों को निकाल तैल को शीशी में भर कर काम में लावे।

(१) अर्क तैल—आक के दूध में कपड़े को भिगो कर सुखा ले, इस तरह ७ बार यही क्रिया करे। बाद में उस कपड़े को मक्खन से चुपड़ कर बत्ती बना ले। इस बत्ती में आग लगा कर नीचे काँस का पात्र रख दे। इस बत्ती में से जलते वक्त तैल बूँद-बूँद करके थाली में गिरेगा। इस तैल को इन्द्रिय पर मल कर ऊपर से एरण्ड नामक वृक्ष का पत्ता लपेट कर बाँध दे। इस प्रकार २१ दिन तैल लगाने से हथलस और लौंडेबाजी से पैदा हुई लिङ्ग की खराबियाँ दूर हो जावेंगी।

(२) कामदेव तैल—जायफल, लौंग, सफ़ेद घुँघची, जावित्री, अक़रक़रा, दालचीनी, सफ़ेद कनेर की जड़ का छिलका, मालकाँगनी प्रत्येक ३-३ तोले। केंचुए ६ तोले, बीरबहूटी ६ तोले, कुचला २ तोले, हाथीदाँत का बुरादा २ तोले। इन सबों को बकरी के दूध में रगड़ कर छाँह में सुखा ले। फिर पाताल यन्त्र द्वारा विधिपूर्वक तैल निकाल ले। लिङ्ग की सुपारी और सीवन छोड़ कर इस तैल की मालिश करे और ऊपर से बँगला पान लपेट कर कपड़ा बाँध दे। ऐसा २१ दिन करने से हस्त-मैथुन और गुदा-मैथुन से उत्पन्न हुई नपुंसकता नष्ट होकर इन्द्रिय तेज हो जावेगी। यह तैल अप्राकृतिक मैथुन द्वारा शिथिलता-प्राप्त लोगों को ही काम में लाना चाहिए, अन्य को नहीं।

(३) नपुंसकत्वारि तैल—४ तोले लहसुन को सिल पर पीस कर लुगदी बना ले। बाद में किसी बरतन में ३ छटाँक अलसी का तैल और ३ पाव जल डाल कर आग पर चढ़ा दे; और इसी में लहसुन की लुगदी भी रख दे। जब पानी जल जावे तब तैल को उतार कर छान ले। अब इस तैल में राई, अक़रक़रा, नीबू के बीज और मालकाँगनी १-१ तोले डाल कर बहुत ही मन्द आँच से पकावे। जब तैल आधा रह जावे तब उतार कर छान ले। इसे सुपारी और सीवन को छोड़ कर लिङ्ग पर मलने से किसी प्रकार की भी सुस्ती क्यों न हो, जाती रहती है। कम से कम २१ दिन लगा कर देखना चाहिए।

(४) चमेली की पत्तियों का तैल—२ तोले ३ माशे तिल का तैल मन्द आग पर गरम करके नीचे उतार ले। फिर २। माशे लाल हरताल बारीक पीस कर इसमें मिला दे। ४। माशे सोहागा और ४। माशे कड़वा कूट भी पीस कर मिला दे। ऊपर से चमेली की पत्तियों का २ तोला स्वरस मिला दे। अब आग पर चढ़ा दे, जब पत्तियों का रस जल कर तैलमात्र रह जावे तब उतार कर इस तैल को छान ले। सीवन और सुपारी छोड़ कर लिङ्ग पर २१ दिन मालिश करने से लिङ्ग की सुस्ती जाती रहती है, और तेज़ी आ जाती है।

(५) पलाश-तैल—पलाश (ढाक) के बीज, कुचला, माल-काँगनी, जङ्गली कबूतर की बीट प्रत्येक ६-६ तोले, लौंग और दालचीनी हरेक १-१ तोले। इन सबको बकरी के दूध में

पीस कर छाया में सुखा ले। बाद में पाताल-यन्त्र द्वारा तेल निकाल कर शीशी में भर ले। लिङ्ग की सुपारी और सीवन छोड़ कर मालिश करके बँगला पान लपेट कर कच्चे धागे से बाँध दे। २१ दिन इसकी मालिश करने से हस्त-क्रिया से उत्पन्न विकार समूल नाश हो जाता है।

(६) क्लैब्यहर तैल—चूक, कुचला, असगन्ध, मालकाँगनी, दालचीनी, लौंग, जावित्री, जायफल, सफेद घुँघची, ढाक के बीज, जङ्गली सुअर का विष्ठा, तेलिया विष प्रत्येक ३-३ तोले। केंचुए, वीरवहूटी, साँडा, शेर की चर्बी प्रत्येक ६-६ तोले। केशर, कस्तूरी और मनुष्य के कान का मैल हरेक ३-३ माशे। इन ऊपर लिखे सब चीजों को भेड़ के दूध में पीस कर छाया में सुखा ले। सूख जाने पर पाताल-यन्त्र द्वारा इनका तेल निकाल कर शीशी में भर ले। लिङ्ग की सुपारी और सीवन छोड़कर २१ दिन इसकी मालिश करे। मालिश के बाद नागर पान बाँध दे। इस तेल से यदि लिङ्ग पर कुछ फुन्सियाँ हो जावें तो तेल लगाना बन्द कर देवें, और जब फुन्सियाँ अच्छी हो जावें तब लगाना चाहिए। यह तैल नपुंसकों के लिए ही है। अन्य पुरुष इसे काम में लावेंगे तो हानि होगी। हस्त-मैथुन, गुदा-मैथुन के दोषों को हटाकर यह तैल लिङ्ग को लकड़ी की तरह कड़ा कर देता है।

(७) पानीय-नाशक तैल—मालकाँगनी २० तोले, जमालगोटे की गिरी १० तोले, जायफल, जावित्री, दालचीनी और लौंग प्रत्येक ५-५ तोले। इन सबको पाताल-यन्त्र में डाल कर तैल

निकाल लेवे। सुपारी और सीवन छोड़ कर लिङ्ग पर मालिश करने से इन्द्रिय की नसों को शिथिल करने वाला पानी नष्ट हो जाता है। मालिश करने से जब लिङ्ग पर फुन्सियाँ निकल आवें तब मालिश करना बन्द कर दे, फुन्सियों के आराम होने पर फिर मालिश करना शुरू करे, ऐसा २१ दिन करने से लाभ होता है।

(८) अजेपाल तैल—एक तोले जमालगोटे के तैल को आध पाव चमेली के असली तैल में मिला कर इन्द्रिय पर मर्दन करे। इससे इन्द्रिय की नसों की खराबी दूर हो जाती है।

(९) राक्षस तैल— यदि किसी प्रकार का तैल काम ही न दे तब यह तेल बनाना चाहिए। वैसे इस तैल को कदापि नहीं बनाना चाहिए। यह तैल धार्मिक पुरुषों के काम की वस्तु नहीं हैं। बहुत ही आवश्यकता आ पड़े तो इस प्रकार बना ले—चूक, असगन्ध, सफेद कनेर की जड़, जावित्री, दालचीनी, जायफल, पलाश के बीज, मालकाँगनी, कुचला, लौंग, कौंच के बीज, अक़रक़रा, सफ़ेद चन्दन, देवदारु, बड़ी कटेरी, आक की जड़, एरण्ड, अफ़ीम, धतूरा, तेलिया विष हरेक १-१ तोले और चमगीदड़, साँडा, बीरबहूटी, केकड़ा, खरगोश, सेह, स्यार, गोवा, शेर, व्याघ्र, रीछ, कबूतर, जङ्गली कबूतर, केंचुए, गीध, जङ्गली सुअर, इन प्राणियों की ३-३ तोले चरबी लेवे। यदि चरबी न मिले तो ३-३ तोले माँस लेवे। अगर सबका न मिल सके तो जिनका मिले उन्हीं का माँस अथवा चर्बी लेवे। बाद में उक्त दवाइयों को तथा माँस, चर्बी आदि को भेड़ की एक दूध के भावना देकर पाताल-

यन्त्र से तेल निकाल लेवे। फिर सुपारी और सेवन बचाकर मालिश करने से सब प्रकार के इन्द्रिय-दोष हट जाते हैं। कामोत्तेजन इतना अधिक होता है कि मनुष्य भी घबरा जावे। नित्य दस स्त्रियों से मैथुन करने पर भी इन्द्रिय में शिथिलता नहीं आती।

(१०) पुंसत्वदायक घृत—सफ़ेद घुँघची १० तोले, सफ़ेद कनेर की जड़ की छाल १० तोले, और कड़वाकूट २ तोले। इन तीनों को कूट कर १५ सेर गौ के दूध में डाल दे। बाद में गरम करके दही जमा दे, फिर मथ कर घी निकाल ले। सायं-प्रातः दोनों समय इस घृत की लिङ्ग पर मालिश किया करे और एक बूँद पान में डाल कर खा लिया करे। जब तक पूरा लाभ न हो तब तक इसे सेवन करता रहे।

(११) क्लैव्यहर तिला—कुचले के भीतर का पित्ता, जमालगोटे के भीतर का पित्ता, आक के पत्तों पर से उतरी हुई भूसी, श्वेत संखिया प्रत्येक ६-६ माशे ले, और मालकाँगनी का तेल ६ माशे, लौंग का तेल १ माशा, दालचीनी का तेल १ माशा और जायफल का तेल १ माशा डाल कर खरल कर लेवे। नित्य नियमपूर्वक लगाने से हथलस और लौंडेबाजी से पैदा हुई लिङ्ग की खराबियाँ मिट जावेंगी।

(१२) शिश्न-सुधारक तिला—पीली सरसों आध सेर, बगदादी सीप की पत्तियाँ १ छटाँक, असगन्ध की पत्तियाँ १ छटाँक, लटजीरे की पत्तियाँ १ छटाँक। इन सबको सरसों के आध सेर तेल में पकावे। जब पत्तियाँ जल जावें तब नीचे उतार ले और तेल के

ठण्डा हो जाने पर उसे छान कर बोतल में रख ले। रोज इस तेल की मालिश करने से हथलस से पैदा हुई बुराइयाँ नाश होकर लिङ्ग दृढ़, पुष्ट, कड़ा और दोष-रहित हो जावेगा। जब तक अच्छी तरह फायदा न हो जावे तब तक इसे लगाना चाहिए।

(१३) सुस्ती-नाशक तैल—तिल का तैल आध सेर और एरण्ड की गिरी २० तोले। इन दोनों को आग पर रख कर औटा ले। जब तेल पाव भर रह जावे तब उतार कर छान ले और शीशी में भर दे। रात्रि के समय रोज इस तेल को सुपारी छोड़ कर लिङ्ग पर आध घण्टे तक मले। ४० दिन में हथलस से उत्पन्न टेढ़ापन और सुस्ती दूर हो जावेगी।

(१४) हस्त-मैथुन-दोष-निवारक तैल—जङ्गली कबूतर की बीट में की सफ़ेदी २ माशे, शुद्ध चमेली के तैल में खूब पीस कर इस तैल को लिङ्ग पर मालिश करे। ४० दिन में हथलस के दोष समूल नष्ट हो जावेंगे।

(१५) शिश्नोत्तेजक तैल—शुद्ध चमेली के तैल में इसबन्द पीस कर रोज लिङ्ग पर मालिश करने से लिङ्ग में ख़ूब ही कठोरता और तेजी आ जाती है।

(१६) आसुरी तैल—काले सर्प की चर्बी, मछली की चर्बी और जङ्गली सुअर की चर्बी। तीनों समभाग लेकर खरल में डाले ऊपर से बकरी का मूत्र डाल-डाल कर तीन दिन तक घोटे। इसके लगाने से लिङ्ग में निस्सन्देह तेज़ी आ जाती है।

(१७) कामोद्दीपन तैल—१६ तोले शुद्ध तिल्ली के तैल में ४ तोले

मूली के बीज पीस कर मिला दे, फिर आग पर चढ़ा कर औटावे जब लगभग १२ तोले तैल रह जावे तब छान कर शीशी में रख ले। इस तेल को नित्य ४० दिन तक लिङ्ग पर मलने से उसमें अदम्य तेजी आती है।

(१८) आनन्द-वर्द्धक तैल—स्त्री के सिर के बाल ५ तोले जला कर राख कर ले। इस राख में थोड़ी सी कबूतर की बीट की सफेदी मिला कर उसे शुद्ध चमेली के तेल में घोट ले। मैथुन के समय इस लेप को सुपारी छोड़ कर सारे लिङ्ग पर लगा कर मैथुन करे। बेहद आनन्द आवेगा।

(१९) स्त्री-मनोरञ्जन तैल—दण्डा थूहर का दूध १ तोला और गौ का दूध १ तोला। दोनों को मिला कर दिन भर धूप में रक्खे। रात को उसमें थोड़ा सा तिल का तेल डाल कर लिङ्ग पर मले। जब वह सूख जावे तब एक घण्टे के बाद स्त्री-प्रसङ्ग करे। बड़ा ही आनन्द आवेगा। इससे वीर्य भी स्तम्भन होगा।

(२०) जोंक-घृत—गौ-घृत १ पाव कड़ाही में डालकर चूल्हे पर चढ़ा दे, जब घी गरम हो जावे तब एक जीवित जोंक (बड़ी) पानी से निकाल कर उसमें छोड़ दे। कुछ देर बाद उस खौलते हुए घी में जोंक का पेट फट जावेगा (पेट फटने की आवाज होगी)। अब कड़ाही को चूल्हे से नीचे उतार कर उसमें सेमल का गोंद काजल के समान महीन पीस कर मिला दे और नीम के मोटे डण्डे से १२ घण्टे तक बिना दम लिए घोटे। इस घी को लिङ्ग पर मालिश करने से सब दोष नाश होकर खूब तेजी आती है।

यदि घी में डालने को बड़ी जोंक न मिले तो ७ छोटी जोंक डालनी चाहिए।

(२१) केंचुआ-घृत—१ तोले केंचुओं को २ तोले गो-घृत में ६ घण्टे तक खरल करे। सुपारी और सीवन छोड़ कर इसमें से थोड़ा-थोड़ा घी मल कर ऊपर से एरण्ड के पत्ते बाँध देने से लिङ्ग के सब दोष दूर हो जाते हैं, और लिङ्ग में तेज़ी आती है।

(२२) मनोज तैल—ताजी बीरबहूटी ३ तोले और बरों का छत्ता ३ तोले दोनों को खरल में डाल कर ६ तोले तिलों के तैल में अच्छी तरह घोटे। जब लगाने योग्य हो जावे तब सुपारी छोड़ कर सारे लिङ्ग पर लेप करे। कई दिन बिला नागा ऐसा करने से लिङ्ग बड़ा ही आनन्ददायक हो जाता है।

(२३) शिश्न-कठोर-कर्त्ता तैल—असली चमेली के तैल में राई पीस कर मलने से लिङ्ग सख्त हो जाता है।

(२४) पुंसत्वप्रद घृत—बच, असगन्ध, पीपलामूल और धतूरे के बीज। इन्हें बराबर-बराबर लेकर कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले। इसमें से १-१ माशा दवा गौ के १ तोले घृत में मिला कर, सुपारी को छोड़कर, शेष लिङ्ग पर नित्य ४० दिन मालिश करने से नामर्द भी मर्द बन जाता है।

(२५) वृश्चिक-तैल—एक बड़ा, काला बिच्छू और भटकटैया की पत्तियाँ ६ तोले ८ माशे। भटकटैया की पत्तियों को पीसकर टिकिया बना ले। सरसों का तैल ६ तोले आग पर चढ़ा दे, जब तैल औटने लगे तब उसमें वह टिकिया और बिच्छू डाल कर

जलावे। खूब जल जाने पर छान कर शीशी में रख ले इसमें से १ रत्ती भर तैल नागर पान पर चुपड़ कर, पान को लिं पर लपेट दे और ऊपर से कच्चा डोरा बाँध दे। पान सुपारी से दू रखना चाहिए। ऐसा करने से लिङ्ग बहुत तेज हो जाता है।

(२६) शिश्न-वक्रता-नाशक तैल—सोहागा, कूट और मैनसिल इन तीनों को समभाग लेकर कूट-पीस ले। फिर इसमें चमेली की पत्तियों का स्वरस १ तोले ८ माशे मिला दे। बाद में १० तोले तिलों के तैल में उपरोक्त सब वस्तुओं को डाल कर मन्दी आँच से पकावे। जब चमेली का रस जल जावे और तैलमात्र रह जावे, तब उतार कर छान ले। इस तैल को इन्द्रिय पर मलने से उसका टेढ़ापन दूर होकर सख्ती आ जाती है।

(२७) ऊँटकटेरी पञ्चाङ्ग तैल—ऊँटकटेरी नामक वृक्ष को जड़ सहित लाकर बकरी के दूध में भिगो दे और पाताल-यन्त्र से तैल निकाल ले। इस तैल को लिङ्ग पर मलने से लिङ्ग की शिथिलता नष्ट हो जाती है।

(२८) धतूर-तैल—धतूरे के आध सेर स्वरस में बारीक कपड़ा एक बालिश्त २१ दिन तक भिगो रक्खे। जब सब रस कपड़े में सूख जावे तब २ तोले तिल्ली के तैल में कपड़े को भिगो कर एक लोहे के छड़ में लटका दे। नीचे काँस की थाली रख कर उस कपड़े में आग लगा दे। जो तैल थाली में टपके उसे शीशी में भर कर रख ले। इसमें से दो-दो बूँद तैल सुपारी छोड़ कर सारे लिङ्ग पर मलने से ८ दिन में लिङ्ग खूब तेज हो जावेगा।
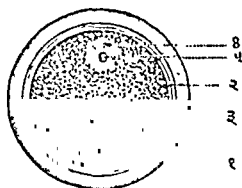
चित्र-नम्बर ४

रजोकोष

चित्र-नम्बर १५

हाथ डालकर आँवल निकालना

(२९) नामर्दी-रफ़ा तैल—मालकाँगनी ६ तोले ८ माशे, कुचले का चूरा ६ तोले ८ माशे, ढाक के बीज ६ तोले ८ माशे, जङ्गली कबूतर की बीट ६ तोले ४ माशे, सफ़ेद कौड़ी ९ माशे और अक़रक़रा ९ माशे। इन्हें कूट कर बकरी के दूध में भिगो दे। अगर रात को भिगोया जावे तो सुबह पाताल-यन्त्र द्वारा तैल निकाल ले। इस तैल की यदि लिङ्ग पर लगातार कुछ दिन मालिश की जावे तो नामर्द पुरुष भी मर्द बन जाता है।

(३०) वृन्ताक-तैल—एक ऐसा बैंगन जो अपने पेड़ में ही पीला हो गया हो, उसमें से ५ तोले बीज निकाल ले। कण्टकारी के बीज ५ तोले, पीपल ५ तो०, सूखे केंचुए ५ तोले, सफ़ेद घुँघची ५ तोले और ५ बीरबहूटी तोले। इन सबको कूट-पीस कर १ पाव तिलों के तैल में खरल करले। जब खरल हो जाय तब आतिशी शीशी में कपड़-मिट्टी करके इस मसाले को भर दे। शीशी के मुँह में तारों का गुच्छा देकर पाताल-यन्त्र की विधि से तैल निकाल ले। सीवन और सुपारी छोड़ कर इस तैल की लिङ्ग पर आध घण्टे तक मालिश करे। २ मास के प्रयोग से जन्म के नामर्द भी मर्द हो जाते हैं।

(३१) क्लैब्य दमन तैल—मूली के बीज २ तोले, पीपल २ तोले, अक़रक़रा २ तोले, लौंग २ तोले, जावित्री २ तोले, जायफल २ तोले, शुद्ध जमालगोटा १ तोले। इन सबको पीस कर २० तोले तिलों के तैल में डाल दे। मन्द आग पर पकाते-पकाते जब सब दवाएँ जल जावें तब तैल को नीचे उतार कर छान ले। इस तैल को लिङ्ग के पिछले भाग में मल कर, बँगला-

पान को आग पर सेंक कर बाँध दे। साथ ही कोई पौष्टिक द
भी खानी चाहिए। ४० दिन में पूर्णलाभ होगा।

(३२) नपुंसकता-नाशक सेंक—वीरबहूटी, केंचुए, असगंध
नागौरी, थूक, आमाहल्दी, भुने हुए चने, हाथी दाँत का बुरादा
सब ६-६ माशे लेकर कूट-छान ले। इनकी दो पोटलियाँ बना
गुलरोगन में कोयले की आँच पर गर्म करे। बारी-बारी से पोटली
से गुनगुना सेंक करे। इस प्रकार लिङ्ग को एक घण्टे नित्य
दिन तक सेंकने से लिङ्ग के सब दोष दूर हो जाते हैं। सेंक
बाद ऊपर से बँगला पान कच्चे धागे से बाँध दे।*

(३३) पुंसत्वदायक लेप—बारीक कपड़ा लेकर बरगद
के दूध में ३ बार भिगोकर सुखा ले। इसी प्रकार तीन बार
के रस में भिगो-भिगो कर सुखा ले। बाद में २४ घण्टे तक
के तेल में डुबो दे। दूसरे दिन सुपारी बचा कर सारे लिङ्ग
मक्खन की मालिश करे और ऊपर से गद्द कपड़ा लपेट कर
घण्टे तक रहने दे। यदि तेजी न आवे तो फिर उसी कपड़े
दूसरे दिन लपेटे। लेकिन, लिङ्ग से कपड़ा खोल कर अलसी के ते
में ही डाला जावे। २-४ दिन में ही तेजी आ जावेगी।

(३४) सुस्ती-नाशक लेप—बारीक कपड़े को आमाहल्दी
पानी में एक बार, धतूरे के रस में तीन बार और आक के दूध

---

* जब तक लिङ्ग पर सेंक किया जावे तब तक लिङ्ग को शीतल जल से
धोना वर्जित है।

भी तीन चार भिगो-भिगोकर सुखा ले। बाद में भैंस का थोड़ा सा घी पात्र में डाल कर आग पर चढ़ा दे और यह कपड़ा भी उसी में डाल कर मन्द-मन्द आग में पकावे। थोड़ी देर बाद कपड़े को निकाल कर उस पर शहद का लेप कर दे। ऊपर से १ रत्ती भर हीराहींग पीस कर बुरका दे। इसको सुपारी छोड़ कर सारे लिङ्ग पर अच्छी तरह लपेट कर ऊपर से कच्चा धागा बाँध दे। सिर्फ तीन दिन तक ऐसा करने से ही लिङ्ग की शिथिलता छूट जावेगी और बेहद तेज़ी आ जावेगी।

(३५) शर्तिया लेप—१० माशे प्याज के रस में २ माशे अकरकरा पीस कर, लिङ्ग पर लेप करने से वह खूब सख्त हो जाता है। २५-३० दिन तक इसे प्रयोग करना चाहिए।

(३६) (दूसरा लेप) एक समुद्रफल की गिरी और एक लौंग; दोनों को शहद में पीस कर २१ दिन लगाने से लिङ्ग कड़ा और उत्तेजित हो जाता है।

(३७) (तीसरा लेप)—चूहे की लेंडी शहद में पीस कर २१ दिन लेप करने से लिङ्ग में बड़ी ही तेजी आ जाती है।

(३८) लिङ्ग-दोष-नाशक सेंक—हाथी दाँत का बुरादा ४ तोले। मछली के दाँत का बुरादा ४ तोले, लौंग ८ माशे, जायफल २, सद्दिया, जङ्गली प्याज की गाँठ १ नग। इन सबको कूट-पीस कर आधी-आधी दवा की दो पोटलियाँ बना ले। एक छोटी सी हाँडी में आध इञ्च का एक गोल छेद कर ले। और हाँडी के मुख पर मिट्टी का ढक्कन लगा कर अच्छी तरह कपरौटी कर दे।

हाँडी में आध पाव भेड़ का दूध डाल कर उसे आग पर रख दें। आग मन्द रहनी चाहिए। गर्मी पहुँचने से छेद से भाप निकलेगी। उस भाप पर एक पोटली रख दे, जब गरम हो जावे तो उससे इन्द्रिय और आस-पास की ६-६ इञ्च तक की जगह को सेंके। जब एक पोटली से सेंकता रहे तो दूसरी पोटली उस भाप पर गरम होती रहे। इस प्रकार नित्य १॥ या दो घण्टे तक सेंके। बाद में बँगला पान को आग पर गर्म करके लिङ्ग पर बाँध दें। इस चार दिन सेंक चुके तब नीचे लिखा लेप तैयार कर ले।

सफ़ेद कनेर की जड़, जायफल, अफीम, इलायची और सेमल की छाल, इन सबको कूट-पीस कर १ तोले तिलों के तैल में मिला कर गरम करे। सुपारी को छोड़ कर शेष लिङ्ग पर ३ दिन तक इस तैल को लेप करे। रोज़ लेप को गर्म पानी से धोकर दूसरा लेप लगाना चाहिए। ठण्डा पानी और हवा से बचना चाहिए। इसके साथ-साथ कोई बलदायक दवा भी खाते रहना चाहिए।

(३९) बढ़िया लेप—आमाहल्दी, मैदा लकड़ी और तेलिया विष हरेक १०-१० माशे लेकर कूट-छान ले। १० माशे चूर्ण लेकर ताजे पानी में घोले और सुपारी तथा सीवन छोड़ कर लिङ्ग पर लेप करे। ऊपर से पान रख कर धागा लपेट दे। इसे २४ घण्टे तक बँधा रहने दे। दूसरे दिन फिर इसी प्रकार १० माशे चूर्ण का लेप करे और तीसरे दिन भी वैसा ही करे। चौथे दिन १०१ बार धोया हुआ घी का घृत लिङ्ग पर चुपड़ दे। यह लेप ३ दिन में ही अपनी करामात दिखा देगा।

(४०) इन्द्रिय-विकार-नाशक सेंक—अकरकरा, कूट, जायफल, जावित्री प्रत्येक ६-६ माशे। पुराना गुड़, एरण्ड के बीज, बिनौले की गिरी, तिल, प्रत्येक १-१ तोले। सबको कूट-छान कर बकरी के दूध में भिगो कर दो पोटलियाँ बना ले और अग्नि पर गर्म करके लिङ्ग को सेंके। इससे इन्द्रिय के समस्त विकार दूर हो जाते हैं।

(४१) हस्त-क्रिया-दोष-नाशक लेप—मनुष्य के कान का मैल, जङ्गली सुअर की चर्बी में घोट कर यदि ४० दिन तक लिङ्ग पर लेप किया जावे तो हस्त-मैथुन से प्राप्त हुई नामर्दी जड़ से दूर हो जाती है।

(४२) इन्दुगोपादि लेप—बीरबहूटी, सफेद घुँघची, अकरकरा प्रत्येक ३-३ माशे, सङ्खिया १ माशे। इन सबको अच्छी तेज शराब में खरल कर ले। फिर इन्द्रिय पर लेप करके ऊपर से पान लपेटे। ७ दिन ऐसा करने से इन्द्रिय के समस्त विकार दूर हो जाते हैं।

(४३) करवीर जटादि लेप— २ तोले सफ़ेद कनेर की जड़ के छिलकों को कूट कर २ सेर गो-दुग्ध में औटावे। बाद में इस दूध को जमाकर मक्खन निकाल ले। जमालगोटा, जायफल, सङ्खिया, इनको मक्खन में अच्छी प्रकार खरल करके रख ले। सुपारी और सीवन छोड़ कर लगावे। ऊपर से पान बाँधे, यही क्रिया ७ दिन तक करे। यदि इससे लिङ्ग पर सूजन या फुन्सी हों तो लेप का लगाना बन्द करके, धुला हुआ घी लगावे। इसके प्रभाव से अप्राकृतिक मैथुन से पैदा हुई नामर्दी दूर होती है।

(४४) कपास-बीज लेप—बिनौले की मींगी, अर्थात् जायफल, सींगिया विष, अक़रक़रा प्रत्येक २-२ तोले। इनको ६ तोले जङ्गली सुअर की चर्बी में लगातार ४ दिन घोटें। तैयार हो जाने पर सुपारी और सेवन छोड़ कर लिङ्ग पर लेप करें। ऊपर के बँगला पान रख कर पट्टी बाँध दें। इस प्रकार १४ दिन करने से लाभ होगा।

(४५) गुदा-मैथुन-दोष-नाशक लेप—रीठे की छाल और अक़रक़रा दोनों को बढ़िया शराब में खरल करके २१ दिन तक लिङ्ग पर लेप करने से गुदा-मैथुन तथा हस्त-मैथुन से पैदा हुई नपुंसकता नष्ट हो जाती है। दवा लगा कर ऊपर से नागर पान जरूर बाँधना चाहिए।

(४६) करवीरादि लेप—सफ़ेद कनेर की जड़, बड़ी कटेरी के रस में खरल करके लिङ्ग पर लगाने से कामेच्छा बढ़ती है।

(४७) शिश्न-मर्दन—गौ का घी, आक का दूध और शहद इन तीनों को काँस के पात्र में, काँस के पात्र से ही खूब रगड़ें। फिर इसमें से जितना चाहिए उतना घृत लेकर लिङ्ग पर मालिश करे तो शिथिलता और हस्त-मैथुन का दोष दूर हो जाता है।

(४८) दुर्बलता-नाशक मर्दन—दालचीनी या लौंग का तेल दोनों में से कोई सा एक अथवा दोनों का तेल इन्द्रिय पर मलने से लिङ्ग की दुर्बलता एक महीने में जाती रहती है।

(४९) लिङ्ग-स्पर्श-ज्ञान कर्ता तैल—लोबान का तैल इन्द्रिय पर मलने से, इन्द्रिय का गया हुआ स्पर्श-ज्ञान फिर प्राप्त होता है।

इन्द्रिय बढ़ाने के लेपों से, हाथ के मसलने से अथवा लिङ्ग बड़ा होने से स्पर्श-ज्ञान जाता रहता है।

(५०) इन्द्रिय-वक्रता-नाशक तैल—मैनसिल, सोहागा, कूट हरेक १-१ तोले। चमेली के पत्तों का रस २ तोले और तिलों का तैल ६ तोले। सबको तैल में डाल कर आग पर पकावे। जब तेलमात्र बाक़ी रह जावे तब छान कर शीशी में भर ले। एक दिन का नागा देकर लगावे। इस प्रकार २१ दिन तक लगाने से इन्द्रिय का टेढ़ापन दूर हो जावेगा।

(५१) (दूसरी दवा)—पहिले तिलों का तैल लिङ्ग पर मले, फिर हालों २ तोले पानी में पीस कर आग पर गर्म कर ले। इसे गुनगुना लिङ्ग पर लेप करके ऊपर से पान या अरण्ड के पत्ते बाँध दे। लिङ्ग के दोनों बाजू लकड़ी की पतली-पतली चीपें लगा कर ऊपर से पट्टी लपेट कर बाँध दे। ३ घण्टे बाद खोलकर पानी से धो डाले। इस प्रकार ११ दिन करने से हथलस की वजह से पैदा हुआ लिङ्ग का टेढ़ापन जाता रहेगा।

(५२) शिश्न-निर्बलता-नाशक लेप—सफ़ेद कनेर की जड़ की छाल १ तोले, गधे का पेशाब १ तोले और शिंगरफ़ ३ माशे। सबको पीस कर एकदिल कर ले। इस लेप को ७ दिन तक लिङ्ग पर लगावे और बाद में एरण्ड के पत्ते बाँध दे। इससे लिङ्ग की कमजोरी एकदम दूर हो जावेगी।

(५३) च्छच्छवसा लेप—जङ्गली सुअर की चर्बी, बढ़िया आण्डी और शहद, इन तीनों को समभाग मिला कर, रोज सायं-

प्रातः सुपारी बचा कर सारे लिङ्ग पर लेप करें और ऊपर से रूई की पोटली बना कर गुनगुना सेंक करे तो इससे नामर्द भी मर्द हो जावेगा। जब तक यह लेप लगाया जाय तब तक स्नान और मैथुन न करना चाहिए। ठण्डे पानी और हवा में लिङ्ग को बचाना चाहिए।

(५४) वक्रता-विनाशक लेप—बिनौलों की मींगी को बकरी की चर्बी में मिला कर खरल कर ले। लिङ्ग पर नित्य लगाया करें। इससे लिङ्ग का बाँकापन मिट कर मोटाई बढ़ जावेगी।

(५५) आनन्द-वर्द्धिनी-वर्त्तिका—१ माशे हींग शहद में पीस कर ज़ीरे के समान पतली, लम्बी बत्ती बना ले। इस बत्ती को लिङ्ग के छिद्र में रख एक घण्टे बाद मैथुन करे तो अत्यन्त आनन्द आवेगा।

(५) प्रमेह, सूज़ाक, उपदंश और पथरी-चिकित्सा

आज हमारे देश में ९९ प्रतिशत प्रमेह और सूज़ाक से लोग पीड़ित हैं। प्रमेह बड़ा ही भयङ्कर रोग है। यह नपुंसकता उत्पन्न करता है। प्रमेह में खून, चर्बी, माँस, वीर्य आदि धातुएँ नष्ट होकर मूत्र-नलिका द्वारा निकलती हैं। मूत्र के साथ अथवा पाखाना और पेशाब के समय आगे-पीछे लिङ्ग में सफेद गाढ़ा पदार्थ निकलता है, यही प्रमेह है। इस रोग से मनुष्य कृष्णपक्ष के चन्द्रमा की भाँति धीरे-धीरे क्षीणकाय होकर एक दिन इस संसार से विदा हो जाता है। प्रमेह का इलाज शीघ्र ही न होने से यह मधुमेह के रूप में परिणत हो जाता है। प्रमेह आराम हो

सकता है, परन्तु मधुमेह का आराम होना कष्ट-साध्य हो जाता है। अतएव प्रमेह की दवा करने में आलस्य करना जीवन से हाथ धोना है। इसके इलाज में जितनी जल्दी की जावे उतनी ही अच्छी बात है। जब प्रमेह भयङ्करता धारण कर लेता है तब उसका उपाय धन्वन्तरि के पास भी नहीं हो सकता। जहाँ प्रमेह के लक्षण दृष्टि आवें, शीघ्र ही औषधोपचार करना चाहिए।

प्रमेह के लक्षण

जिसको प्रमेह-रोग होने वाला होता है, पहिले उसके दाँत कण्ठ, जीभ और तालू में मैल जमता है। हाथ-पैरों में जलन होती है। शरीर में चिकनाहट और मुँह में मिठास होती है। प्यास बहुत लगती है। बाल आपस में जुट जाते हैं।

मेहनत न करने से, रात-दिन बैठे-बैठे गद्दों पर आनन्द करने से, दिन-रात खूब सोने से, दूध-दही बहुत खाने से, कछुआ और मछली का माँस खाने से, जल-प्राणियों का माँस खाने से, ग्राम्य-पशुओं का माँस खाने से, नए चावल तथा नया अन्न खाने से, वर्षा-ऋतु का नया जल पीने से, गुड़ एवँ गुड़ के बने पदार्थ अधिक खाने से, स्वप्न में स्त्री-मैथुन करने से और कफकारक पदार्थों के खाने से प्रमेह पैदा होता है।

प्रमेह, २० प्रकार का होता है

यह भी वात, पित्त और कफ से उत्पन्न होता है। कफज १०,

पित्तज ६ और वातज-प्रमेह ४ प्रकार का होता है। कफज-प्रमेह के नाम इस प्रकार हैं :— (१) उदक-प्रमेह, (२) इक्षु-प्रमेह (३) सान्द्र-प्रमेह (४) सुरा-प्रमेह (५) पिष्ट-प्रमेह (६) शुक्र-प्रमेह (७) सिकता-प्रमेह (८) शीत-प्रमेह (९) शनैर्मेह (१० लाल-प्रमेह। जैसा इन प्रमेहों का नाम है, वैसा ही पेशाब होता है। पित्तज-प्रमेह इस प्रकार है :— (१) क्षार-प्रमेह (२) नील-प्रमेह (३) काल-प्रमेह (४) हरिद्र-प्रमेह (५) माञ्जिष्ठ-प्रमेह (६ रक्त-प्रमेह। वातज प्रमेहों के नाम इस प्रकार हैं :— (१) वसा-प्रमेह (२) मज्जा-प्रमेह (३) क्षौद्र-प्रमेह (४) हस्ति-प्रमेह।

कफ़ज-प्रमेह

उदक-प्रमेह—पेशाब अधिक, सफ़ेद, साफ़, शीतल, गन्धहीन पानी जैसा, थोड़ा गन्दा और चिकना होता है।

इक्षु-प्रमेह—पेशाब गन्ने के रस सरीखा और मीठा होता है।

सान्द्र-प्रमेह—रात के समय यदि पेशाब किसी बर्तन में रख दिया जावे तो सुबह होने तक गाढ़ा हो जाता है।

सुरा-प्रमेह—पेशाब ऊपर से शराब की तरह साफ़ और नीचे गाढ़ा होता है।

पिष्ट-प्रमेह—पेशाब पिसे हुए चावलों के पानी के समान और अधिक होता है। पेशाब करते समय रोमाञ्च होता है।

शुक्र-प्रमेह—पेशाब वीर्य के समान होता है।

सिकता-प्रमेह—पेशाब में बालू जैसे कड़े कण-पदार्थ गिरते हैं।

शीत-प्रमेह—पेशाब बहुत ही शीतल, मीठा और अधिक ता है।

शनैर्मेह—पेशाब थोड़ा और बहुत धीरे-धीरे होता है।

लाल-प्रमेह—पेशाब मुख की लार के समान चिकना होता है।

(१) त्रिफला, दारुहल्दी, नागरमोथा, देवदारु। प्रत्येक ६ माशे लेकर रात्रि के समय मिट्टी के पात्र में सवा पाव के रीब जल डाल कर भिगो दे। सुबह आग पर चढ़ा कर पानी ाधा रख ले। मल को छान कर ऊपर से १ तोला शहद मिला कर वे। अगर प्रकृति गर्म हो तो इन दवाइयों को उबाल कर काढ़ा करें, बल्कि यों ही ठण्डे पानी में मसल, छान कर पी जावे। जब क लाभ न हो, सेवन करता रहे। इस काढ़े से कफज-प्रमेह नष्ट ो जाते हैं।

(२) नागरमोथा, हरड़, लोध, कायफल। प्रत्येक ८-८ माशे कर रात को मिट्टी के बर्तन में १ पाव पानी डाल भिगोकर सवेरे ाढ़ा बना ले। मसल-छान कर एक तोला शहद डाल कर पी जाना ाहिए। गर्म प्रकृति के पुरुषों को काढ़ा न बना कर पानी में ही सल-छान कर पी लेना चाहिए। इससे कफज-प्रमेह दूर होते हैं।

पित्तज-प्रमेह

क्षार-प्रमेह—पेशाब, गन्ध, वर्ण, रस और स्पर्श में खारे जल के समान होता है।

नील-प्रमेह—पेशाब नीले रङ्ग का होता है।

काल-प्रमेह—पेशाब काले रङ्ग का होता है।

हरिद्र-प्रमेह—पेशाब का रङ्ग पीला होता है, स्वाद में [illegible] होता है। पेशाब करते वक्त जलन होती है।

माञ्जिष्ट-प्रमेह—पेशाब का रङ्ग मजीठ के काढ़े के समान [illegible] दुर्गन्धित होता है।

रक्त-प्रमेह—पेशाब खून के समान, खारा, गर्म और दुर्गन्ध[illegible] होता है।

(३) पटोलपत्र, नीम की छाल, आँवले और गिलोय। [illegible] ८-८ माशे लेकर काढ़ा बना ले और ऊपर से १ तोले [illegible] मिला कर पीने से सब प्रकार के पित्तज-प्रमेह दूर जाते हैं।

(४) खस, लोध, धव और लाल चन्दन। प्रत्येक ८-८ माशे लेकर काढ़ा बना ले। फिर १ तोले शहद डाल कर पीने से पित्तज-प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

(५) ३-३ माशे शीतल चीनी का चूर्ण २-२ घण्टे के अन्तर से फाँक कर ऊपर से ठण्डा पानी पीना चाहिए। ७ दिन इस प्रकार शीतल चीनी का चूर्ण फाँक कर, बाद में पित्तज-प्रमेह-नाशक [illegible] भी दवा की जाये तो बहुत जल्दी लाभ होता है।

वातज-प्रमेह

वसा-प्रमेह—पेशाब चर्बी जैसा या चर्बी के समान होता है।

मज्जा-प्रमेह—मज्जा मिला हुआ या मज्जा के समान पेशाब होता है।

क्षौद्र-प्रमेह—शहद के रङ्ग का, मीठा, रूखा और कसैला पेशाब होता है। पेशाब पर मक्खियाँ और चींटियाँ आती हैं।

हस्ति-प्रमेह—पेशाब रुक-रुक कर तारदार और हाथी के मद जैसा होता है। कभी-कभी पेशाब रुक भी जाता है।

(६) आँवला, हरड़, बहेड़ा और गोखरू के चूर्ण को शहद अथवा घृत में मिला कर ६१ दिन चाटने से वात-प्रमेह नष्ट हो जाता है।

(७) त्रिकुटाद्यमोदक—हरड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पीपल, पाढ़, सहजन की जड़, वायविडङ्ग, हींग, कुटकी, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, हल्दी, दारुहल्दी, अजवायन, सुपारी, शालपर्णी, अतीस, चित्रक की छाल, काला नमक, जीरा, हाऊबेर और धनियाँ। सबको १-१ तोले ले और कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले। फिर ४ सेर ८ तोले जौ के सत्तू में २४ तोले गो-घृत और इतना ही शहद मिला कर ऊपर लिखी दवाइयाँ डाल दे। सबको मिला कर एकदिल करके लड्डू बना ले। एक लड्डू नित्य खाने से कठिन से कठिन प्रमेह भी नष्ट हो जाता है।

(८) सब प्रकार के प्रमेहों के लिए जौ का सेवन करना बड़ा ही लाभप्रद है। प्रमेह-रोगी को जौ का सत्तू, जौ के आटे की रोटियाँ खाना बड़ा ही फायदेमन्द है। जो लोग जौ खाते हैं, उन्हें प्रायः प्रमेह-रोग नहीं होने पाता।

(२२) जौ को रात्रि के समय भिगो, प्रातः समय पीस के पिट्ठी बना ले और शहद में मिला कर खावे। एक महीने तक ऐसा करने से प्रमेह नाश हो जाता है।

(२३) घुँघची के पत्तों का १ या २ तोले रस गौ के ... दूध में मिला कर पीने से प्रमेह अवश्य दूर हो जाते हैं।

(२४) रेवन्द चीनी ८ तोले, मिश्री ८ तोले और ... सिंघाड़े ८ तोले, सबको कूट-पीस कर छान ले। इसमें से ... चूर्ण भोजन के पूर्व पाव भर गो-दुग्ध के साथ नित्य खाने से ... से पुराना प्रमेह भी नष्ट हो जाता है।

(२५) महानीम की पक्की और कच्ची निम्बोलियाँ ... छाया में सुखा ले। सूख जाने पर कूट-पीस कर चूर्ण बना ले। नित्य १ तोला चूर्ण चावलों के धोवन के साथ सेवन करने से सकल प्रमेह नाश हो जाते हैं।

(२६) बबूल की नरम-नरम पत्तियाँ १ तोले पीस कर उनमें बराबर की मिश्री मिला दे। इसे खाकर ऊपर से पानी पीने से ... दिन के पहिले ही सब प्रकार के प्रमेह नाश हो जाते हैं।

(२७) सिंहास्य घृत—कटेरी ५ सेर, गिलोय ५ सेर ... को कूट, ६४ सेर पानी में डाल कर औटावे। जब १६ सेर पानी बाकी रह जाय तो उतार कर छान ले। फिर इसमें आँवला, हर्र, बहेड़ा, सोंठ, मिर्च, पीपल, रायसन, वायविडङ्ग, चीता, ... पञ्चमूल, पूति करञ्ज की छाल, इन्द्र जौ। सबको २-२ तोले लेकर पानी में पीस कर लुगदी बना ले। साथ ही १ सेर गो-घृत डाल कर
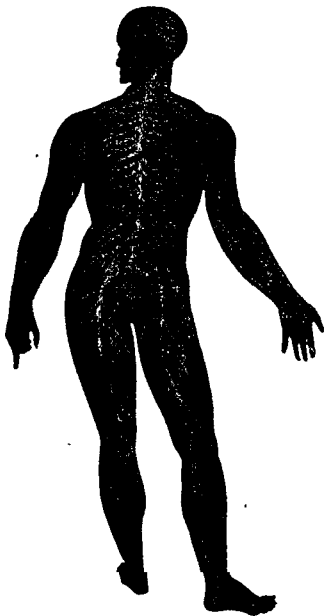
चित्र नम्बर १६

नर-पृष्ठ की रक्त-वाहिनी शिराएँ

आग पर पकावे। जब पानी जल चुके और घी मात्र शेष रह जावे तब घी को छान कर रख ले। नित्य प्रातः समय १ तोला घृत खाकर गो-दुग्ध पान करे और दूध-चावल का भोजन करे तो प्रमेह, मधुमेह आदि इस प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे सिंह को देख कर मृगगण अपने प्राण छोड़ कर भागते हैं।

(२८) धन्वन्तर घृत—दशमूल की सब दवाइयाँ ४०० तोले, दोनों करञ्ज ४०० तोले। देवदारु, हरड़, दन्ती, चीत, पुनर्नवा, थूहर, निम्ब, कदम्ब, बेल-गिरी, भिलावाँ, कचूर, पुष्कर-मूल और पीपलामूल, प्रत्येक ४०-४० तोले। जौ, बेर, कुलथी, सब ८०-८० तोले। इन सबको ४५ सेर जल में डाल कर खूब औटावे। जब चतुर्थांश जल रह जावे तब नीचे उतार कर छान ले। जलबेत, त्रिफला, भारङ्गी, गजपीपल, अदरक, वायविडङ्ग, वच, कबीला प्रत्येक १-१ तोले लेकर पत्थर पर पीसकर लुगदी बना ले। यह लुगदी और १ सेर उत्तम गो-घृत उक्त काढ़े में रख कर आग पर चढ़ा दे। जब घृतमात्र शेष रह जावे तब घी को छान कर रख ले। इसमें से नित्य प्रातः समय १ तोला खाकर ऊपर से गो-दुग्ध पीवे। प्रमेह तो नष्ट हो ही जावेगा, लेकिन कोढ़, प्लीहा, अर्श, अपस्मार आदि रोग भी नहीं रहेंगे।

(२९) चन्द्रप्रभा—कचूर, वच, नागरमोथा, चिरायता, देवदारु, हल्दी, अतीस, दारुहल्दी, पीपलामूल, चित्रक, धनियाँ, त्रिफला, चव्य, वायविडङ्ग, गजपीपल, सोनामाखी की भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, काला नमक, सेंधा नमक,

विड़ नमक, ये सब ४-४ माशे। लोह-भस्म २ तोले, मिश्री ... तोले, शुद्ध शिलाजीत ८ तोले और शुद्ध गुग्गुल ९ तोले। ... सबको मिला कर लोहे के हिमामदस्ते में डाल कर कूटे। ... कुट जाने पर २-२ माशे की गोलियाँ बना कर रख ले। एक ... गोली प्रातः समय नित्य सेवन करने से सब प्रकार के प्रमेह ... हो जाते हैं।

(३०) गन्धक-योग—शुद्ध आमलासार गन्धक १ ... यथोचित गुड़ में मिला कर खावे और ऊपर से गो-दुग्ध पीवे। इससे बीसों तरह के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

(३१) नागभस्म-योग—शीशा-भस्म ३ रत्ती, हल्दी ... आंवले के चूर्ण के साथ शहद में मिला कर चाटने से सब प्रकार के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

(३२) अभ्रक-योग—निश्चन्द्र अभ्रक-भस्म में ६ ... त्रिफला और २ माशे हल्दी का चूर्ण मिला कर १ तोला शहद ... साथ चाटने से सब तरह के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं। कम से कम २१ दिन तक चाट कर देखना चाहिए।

(३३) वङ्गेश्वर रस—पारा-भस्म और वङ्ग-भस्म १-१ ... शहद के साथ मिला कर चाटे और ऊपर से गूलर के फलों का ... शहद में मिला कर खाये। इससे सब प्रकार के प्रमेह दूर हो जाते हैं।

(३४) मेह कुलान्तक रस—वङ्ग-भस्म, अभ्रक-भस्म, शुद्ध ... शुद्ध गन्धक, चिरायता, पीपलामूल, पापचिड़ा, त्रिकुटा, त्रिफला

ाथ, रसौत, मोथा, बेल-गिरी, गोखरू, अनारदाना, हरेक २-२
और शुद्ध शिलाजीत ४ तोले। पहिले पारे की कजली करके
ं सब दवाइयाँ डाल दे और कचरी की जड़ के स्वरस में
। करके २-२ रत्ती की गोलियाँ बना ले। नित्य १-१ गोली
ो के दूध के साथ सेवन करने से प्रमेह समूल नष्ट हो जाते हैं।

(३५) पञ्चानन वटी—चित्रक की छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल,
गन्धक, शुद्ध पारा, सींगिया विष, त्रिफला, नागरमोथा। इन
ं को समभाग ले। पहिले पारे और गन्धक की कजली करके
उक्त सब दवाइयों का चूर्ण भी कजली में ही मिला दे। पानी
ंयोग से खरल करके १-१ रत्ती की गोलियाँ बना ले। १-१
ी प्रातःकाल खाकर ऊपर से गो-दुग्ध पान करे। इससे सब
ार के प्रमेह नष्ट हो जावेंगे।

(३६) सत्त गिलोय १ तोला, भुनी हुई हल्दी १ माशा, सत्त
ताजीत ९ माशे। सबों को एक साथ पीस कर रख दे। इसमें
४ रत्ती शहद में मिला कर चाटे और ऊपर से पाव भर गो-दुग्ध
२ तोले शक्कर डाल कर पीवे। इसी प्रकार सायङ्काल के वक्त
सेवन करने से सब प्रकार के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं। कम से
। २१ दिन सेवन करना चाहिए।

(३७) मधुमेह-नाशक चूर्ण—सत्त गिलोय, जामुन के पत्तों
रस, वङ्ग-भस्म, मोती-भस्म, सीप-भस्म, मुलहटी, गोंद बबूल,
ीरा, गोंद कीकर, वंसलोचन, गावजवाँ के फूल, अनबिंधे मोती,
ाब के फूल, धनियाँ, खुर्फा के बीज, चन्दन चूरा, काफूर, गुलनार

फ़ारसी, गिल अरमनी, श्वेत खसखस के बीज, निर्बीज [illegible] मींगी, काली मूसली। इन सबको कूट-पीस कपड़छान [illegible] सुबह के वक्त ६ माशे चूर्ण फाँक कर ऊपर से गौ का धारोष्ण [illegible] इससे सब प्रकार के प्रमेहों का उपद्रव बिलकुल शान्त हो [illegible] खासकर मधुमेह के लिए तो यह रामबाण सिद्ध हुआ है।

(३८) सिकतामेह-नाशक वटी—गिलोय का सत १ [illegible] बहरोजे का सत्त १ तोला, रूमी मस्तगी १ तोला, छोटी [illegible] १ तोला और मिश्री ४ तोले। इन सब वस्तुओं को कूट-पीस [illegible] मुलहटी के ताजे रस में २-२ माशे की गोलियाँ बना ले। [illegible] गोली प्रातःकाल गौ के मक्खन के साथ और एक गोली [illegible] के समय गो-दुग्ध के साथ खाने से सिकतामेह २१ दिन में [illegible] जाता है। खटाई से बहुत परहेज रखना चाहिए।

(३९) कलमी सत १ माशा, सत गिलोय ४ रत्ती, [illegible] हल्दी १ माशा। इनको पीस कर एक मात्रा तैयार कर ले। [illegible] ३ माशे शहद में डाल कर चाट जावे। प्रातः और सायं [illegible] समय इसे चाटने से एक महीने में सब प्रकार के प्रमेह [illegible] हो जाते हैं।

(४०) एलादि चूर्ण—छोटी इलायची, शिलाजीत, और [illegible] पीपल। तीनों समभाग लेकर २ माशे प्रातः और २ माशे [illegible] साठी चावलों के पानी के साथ सेवन करने से सब प्रकार के [illegible] नाश हो जाते हैं।

(४१) पलाश के फूलों को छाया में सुखा कर [illegible]

फिर १ तोले फूलों में ६ माशे मिश्री मिला कर फाँके। ऊपर ीतल जल पान करे। २१ दिन में बीसों प्रकार के प्रमेह नष्ट जावेंगे।

(४२) दूध में तालमखाने मिला कर खाने से सब तरह के ह नाश हो जाते हैं।

(४३) केले के वृक्ष के भीतरी भाग को छाया में सुखा कर -कूट कर चूर्ण बना ले। इसमें से ६ माशे से १ तोला तक मिश्री मिलाकर फाँके। ऊपर से एक गिलास ठण्डा जल ले। सब प्रकार के प्रमेह नष्ट हो जावेंगे।

(४४) सत्यानाशी के पत्तों के २ तोले रस में २ तोले गो-घृत ला कर नित्य प्रातःसमय सेवन करने से ५ दिन में ही सब ह नाश हो जाते हैं।

(४५) तुलसी के पत्तों के साथ वङ्ग-भस्म खाने से सब गर के प्रमेह नाश हो जाते हैं।

(४६) त्रिफला के चूर्ण के साथ लोह-भस्म खाने से बीसों ार के प्रमेह नाश होते हैं।

(४७) शहद, पीपल और शिलाजीत में १ रत्ती अभ्रक-भस्म ला कर खाने से बीसों प्रकार के प्रमेह शान्त हो जाते हैं।

(४८) प्रमेह-कुठार रस—छोटी इलायची, भीमसेनी कपूर, श्री, आँवले, जायफल, गोखरू, सेमल की छाल, शुद्ध पारा, शुद्ध न्धक, वङ्ग-भस्म और लोह-भस्म। सबको ३-३ माशे लेकर, पारे ौर गन्धक को पहले खरल करके कजली बना ले, बाद में वङ्ग

और लोहा-भस्म डाल कर खूब घोटे। बाक़ी दवाइयाँ कूट-पीस कर कपड़-छान कर ले और इसे भी उसी खरल में डाल कर घोटे। जब सब एकदिल हो जावें तब शीशी में भर कर रख दें। [या १॥ माशे भर चूर्ण १ तोले शहद में मिला कर चाटने से सब प्रकार के प्रमेह नाश हो जाते हैं।

(४९) प्रमेहारि शर्बत—पीपल की छाल, बबूल की छाल, महुए की छाल, कटहल की छाल, सफेद चन्दन का बुरादा और गिलोय। इनको आध-आध पाव लेकर कूट ले। इन्हें रात्रि के समय मिट्टी के पात्र में या कलईदार बर्त्तन में १० सेर पानी डाल कर भिगो दे। प्रातःकाल उसे कलईदार कड़ाही में डाल कर धीमी-धीमी आँच से पकावे और जब चौथाई रह जावे तब नीचे उतार कर छान ले। अब इस जल में १ सेर मिश्री मिला कर आग पर चढ़ा दे और चाशनी को दूध से डाल कर साफ़ करता जावे। जब शर्बत की चाशनी आ जावे तब उतार कर उसे बोतल में भर ले। इसमें से एक या १॥ तोला शर्बत नित्य चाटने से प्रमेह अवश्य ही आराम हो जाता है। पित्तज-प्रमेहों के लिए यह रामबाण है।

(५०) प्रमेहान्तक चूर्ण—सूखे सिंघाड़े, ईसबगोल की भूसी, मैदा लकड़ी, कौंच के बीज, धनियाँ, गोखरू, बीजबन्द, सेमल का गोंद, ढाक का गोंद, बबूल का गोंद, समुद्र की सीप, शतावरी, ये सब २-२ तोले; ताड़ के बीज ६ तोले और मिश्री १५ तोले। इन सबको कूट-पीस कपड़-छान करके अमृतबान में भर कर

रख दे। प्रातःकाल १ तोला चूर्ण फाँक कर ऊपर से पाव डेढ़ पाव धारोष्ण गो-दुग्ध पान करे। कम से कम ४० दिन तो अवश्य ही सेवन करना चाहिए। जिनके मूत्र में वीर्य जाता हो, उनके लिए यह अक्सीर साबित हुआ है।

सूज़ाक

(५१) वहरोजा शुद्ध, शिलाजीत शुद्ध, सत्त गिलाय, इलायची के दाने सफेद, वंसलोचन, गेरू, कत्था, सङ्गजराहत-भस्म, शीशा-भस्म, शोरा-गन्धक-योग, फिटकरी-योग, वङ्ग-भस्म, सीप-भस्म, चना भुना हुआ, कपूर-जौहर, सङ्खिया-योग। सब समभाग लेकर मेंहदी के पत्तों के क्वाथ में खरल करके २-२ रत्ती की गोलियाँ बना ले। एक गोली सायं और एक गोली प्रातः मक्खन या मलाई के साथ खाने से कैसा भी सूज़ाक क्यों न हो, आराम हो जाता है। अगर केवल जलन हो तो दूध में पानी मिला कर, गोलियाँ खाने के बाद पीवे। परन्तु, मक्खन या मलाई के साथ सेवन न करे।

सूचना:—इन नुस्खों में कुछ दवाइयाँ ऐसी हैं. जिनको पाठक नहीं समझ सकते, अतएव उनका वर्णन कर देना आवश्यक है :—

वहरोजा-शुद्धि—१ सेर पानी में ६ माशे सिन्दूर घोल कर रखे। वहरोजा को पिघला, कपड़े से छान कर पानी में बुझा दे, इस तरह सात बार करने से वहरोजा शुद्ध हो जावेगा।

शोरा-गन्धक-योग—शोरा १२ तोले, आँवलासार गन्धक ३ तोले, दोनों को मिट्टी के नए पात्र में डाल कर कोयलों की आँच

से पिघलावे। ठण्डा होने पर पीस कर रख ले। स्मरण रहे, तेज आँच से इसमें आग लग जाती है।

फिटकरी-योग—फिटकरी १ छटाँक, मुलतानी मिट्टी २ छटाँक, दोनों को पानी में घोल दे और आग पर रखकर सुखा ले।

कपूर-जौहर—देशी कपूर को केले के पानी में एक दिन खरल करके टिकिया बना ले। बाद में दो कटोरियों के बीच में बन्द करके जौहर उड़ा ले।

सखिया-योग—सोहागा, फिटकरी, कल्मीशोरा, नौसादर, सीप, कलई चूना, सखिया, ये सब समभाग लेकर आक के दूध में ३ दिन तक खरल करे। बाद में २० सेर उपलों की अग्नि देकर तैयार कर ले। यह श्वेत-भस्म होगी।

(५२) फिटकरी कच्ची आधा माशा, अनार के छिलके २ तोले रात्रि के समय मिट्टी के एक कोरे बर्तन में पाव भर पानी डाल कर भिगो दे। प्रातःकाल मलत्याग कर दिन में ३ बार धीरे-धीरे पिचकारी लगावे। ४-५ दिन कुछ जलन होगी, अतएव फुलाई हुई फिटकरी २ रत्ती ताजे पानी के साथ दोनों वक्त खावे। २१ दिन में २० वर्ष का पुराना सूजाक भी जाता रहेगा। तेल, गुड़, खटाई, लालमिर्च, बिलकुल नहीं खानी चाहिए।

(५३) गोंद बबूल १ माशा, शीतलचीनी ४ रत्ती, बबूल की पत्तियाँ १ माशा। इन सबको सिल पर पीस कर आध पाव पानी में छान लो और २ तो० शक्कर को बूरा डाल कर नित्य सुबह सेवन करने से २१ दिन में सूजाक बिलकुल दूर होगा।

(५४) लाल गेरू और सङ्गजराहत दोनों को कूट-पीस कपड़-छान करके रख ले। यह चूर्ण ३ माशे, ४ तोले शर्बत बजूरी के साथ २१ दिन सेवन करने से सूज़ाक का नामोनिशान मिट जाता है।

(५५) गोरखमुण्डी के १ छटाँक स्वरस में ६ माशे जवाखार मिला कर दिन में २-३ बार पीने से अत्यन्त पुराना सूज़ाक भी जाता रहता है।

(५६) गोंद बबूल २॥ तोला, कबाब चीनी २॥ तोला, कपूर १। तोला। इन तीनों को चन्दन-तैल के साथ खरल कर ४-४ रत्ती की गोलियाँ बना ले। १ गोली सुबह के वक्त ठण्डे पानी के साथ सेवन करने से कैसा ही सूज़ाक क्यों न हो, आराम हो जाता है।

(५७) रेवन्द चीनी १ तोला, जवाखार १ तोला, इन्द्रजौ १ तोला, सफ़ेद ज़ीरा १ तोला, छोटी इलायची १ तोला, बंसलोचन १ तोला, कल्मीशोरा ६ माशे। इन सबको कूट-पीस कर चूर्ण बना ले। १ तोला प्रतिदिन धारोष्ण दूध के साथ सेवन करने से सूज़ाक शीघ्र ही नाश हो जाता है।

(५८) राल कल्मी १ माशा, शीतलचीनी २ रत्ती, शोरा कल्मी १ माशा, मिश्री १ माशा। इन सबको कूट-पीस कर फाँके (यह एक मात्रा है)। ऊपर से गो-दुग्ध में शक्कर डालकर पीना चाहिए। इस प्रकार दिन में २ बार २१ दिन पीने से सूज़ाक समूल नष्ट हो जाता है।

(५९) परमेंगनेट पोटाश (अङ्गरेज़ी दवा है), कुएँ का पानी

साफ करने के लिए यह कुओं में डाली जाती है। १ रत्ती भर १ छटाँक पानी में घोल कर छान ले। इस पानी की पिचकारी लिङ्गेन्द्रिय में देने से पुराना सूजाक भी आराम हो जाता है।

(६०) शुद्ध पारा १ तोला, शुद्ध गन्धक ४ तोले, दोनों को खरल में घोटकर कजली बना ले। इस कजली को कौड़ियों में भर कर ३ माशे सोहागे से उनका मुँह बन्द कर दे, फिर उनको एक बर्तन के सम्पुट में रख कर अग्नि में रख दे। जब शीतल हो जावे तब कौड़ियों में से उसे निकाल कर चूर्ण कर ले। इसे "लघु लोकेश्वर" रस भी कहते हैं। इसमें से ३ रत्ती भर २१ दाने कालीमिर्चों के चूर्ण में मिला कर १ तोले शहद में चाटे। ४ तोले चमेली की जड़ बकरी के दूध में औटा, शक्कर डाल कर पीने से सूजाक और मूत्रकृच्छ्र समूल नाश हो जाते हैं।

(६१) नूनिया ३ माशे, सफेद फिटकरी ६ माशे, सफेद कत्था १ तोला। इन सबको कूट कर आध सेर पानी में औटा ले। जब पाव भर पानी रह जावे तब छान कर दिन में तीन बार पिचकारी लेने से कुछ दिन में ही सूजाक और मूत्रकृच्छ्र बिलकुल नाश हो जाते हैं।

(६२) आम-वृक्ष की भीतरी छाल के २ तोले स्वरस में १॥ माशे शुभ्र बुझा कलई चूना डाल दे। अब काँच के एक गिलास में पाव भर धारोष्ण गो-दुग्ध लेवे और इस रस को उसमें डाल कर पी जावे। देर नहीं करना चाहिए। इसके सेवन

चाहे कैसा ही पुराना सूजाक क्यों न हो, ५ रोज में अवश्य ही नष्ट हो जाता है।

(६३) पाषाण भेद १ तोला, कबावचीनी १ तोला, सफेद जीरा १ तोला, देशी गोखरू १ तोला, छोटी इलायची के दाने १ तोला, बंसलोचन १ तोला, सत्त बिरोजा १ तोला, फुलाई हुई फिटकरी १ तोला, सङ्गजराहत १ तोला, सत्त शिलाजीत १ तोला, रेवन्द चीनी २ तोला, सफेद कत्था १ तोला, कल्मीशोरा १ तोला, सङ्ग सरमाही १ तोला, जवाखार १ तोला, खरिया १ तोला, इन्द्रजौ मीठा १ तोला और सफेद राल १ तोला। इन सबको कूट-छान कर चूर्ण बना लें। इसमें से ६ माशे नित्य सुबह-शाम फाँक कर ऊपर से गऊ अथवा बकरी का दूध पी ले। इससे सूजाक बिलकुल आराम हो जावेगा।

(६४) फुलाई हुई फिटकरी और सोंठ दोनों को समभाग लेकर कपड़-छान कर ले। इसमें से ३ माशे फाँक कर ऊपर से गो-दुग्ध पीने से सूजाक आराम हो जायगा।

(६५) शीतलचीनी, कल्मीशोरा, सत्त बिरोजा, भुनी हुई फिटकरी प्रत्येक ६-६ माशे और १ तोला मिश्री। इन सबको कूट कर चूर्ण कर ले। सुबह-शाम ६-६ माशे चूर्ण खाकर ऊपर से गो-दुग्ध पीने से नया सूजाक ८ ही दिन में छू हो जावेगा।

(६६) कपड़े धोने का रेह २ तोले, शोरा २ माशे। इन दोनों को रात्रि के समय मिट्टी के पात्र में ३ छटाँक पानी डाल कर भिगो

दें। सुबह पानी निथार कर पीलें। ३ दिन में ही सूजाक जाता रहेगा। खटाई, मिर्च, गुड़, तेल आदि से परहेज रखना चाहिए।

उपदंश

हस्त-मैथुन आदि अप्राकृतिक मैथुनों के करने से, हाथ की चोट लगने से, नख और दाँत के लगने से, लिङ्ग को नित्य न धोने से, स्त्री-गमन अधिक करने से, दुष्ट-विकृत योनि में तथा गर्मी रोग-युक्त योनि में मैथुन करने से उपदंश नामक रोग हो जाता है। ये उपदंश ५ प्रकार के होते हैं :—

(१) वातोपदंश (२) पित्तोपदंश (३) कफोपदंश (४) सन्निपातोपदंश (५) असाध्य उपदंश

वातोपदंश—लिङ्ग पर काले रङ्ग के फोड़े होते हैं। सुई चुभने का सा दर्द और उत्तेजना होती है।

पित्तोपदंश—लिङ्ग पर पीले रङ्ग के फोड़े होते हैं और उनमें से पानी निकलता है। जलन होती है और माँस सरीखे लाल रङ्ग के घाव हो जाते हैं।

कफोपदंश—लिङ्ग पर सफेद, मोटे, खाजयुक्त और गाढ़ी पीब लिए हुए घाव होते हैं।

सन्निपातोपदंश—लिङ्ग पर अनेक प्रकार के घाव, पीड़ा और ऊपर लिखे तीनों दोषों के लक्षणयुक्त फोड़े-फुन्सी होते हैं।

असाध्योपदंश—उपदंश होते ही जो लोग इसकी चिन्ता नहीं करते और मैथुनादि कार्यों में प्रवृत्त रहते हैं उनका लिङ्ग

शीघ्र ही सूज जाता है। कीड़े पड़ते तथा अत्यन्त वेदना और दाह होता है। अन्त में लिङ्ग बिलकुल सड़ कर गिर जाता है।

(६७) बड़ के अङ्कुर, फोह-वृक्ष की छाल, जामुन की छाल, हरड़, हल्दी, लोध। इन सबको समभाग लेकर पानी के साथ पत्थर पर घोट ले, बाद में कुछ गर्म करके लिङ्ग पर लेप करे तो उपदंश से पैदा हुई लिङ्ग की सूजन और पीड़ा शान्त होती है।

(६८) त्रिफला अथवा भाँगरे के रस से उपदंश के घावों को धोना बड़ा ही लाभदायक है। त्रिफला ३ तोले लेकर आध सेर पानी में भिगो दे। १०-१२ घण्टे बाद चूल्हे पर चढ़ा कर औटावे, जब पाव भर पानी रह जावे तब छान ले। इस पानी से उपदंश के घाव को धोने से बहुत आराम होता है।

(६९) सुपारी और हल्दी को पीस कर पानी में मिला ले, और लेप करे। इससे उपदंश की पीड़ा, खाज और सूजन को बहुत ही फ़ायदा होता है।

(७०) चिरायता, नीम, त्रिफला, पटोल-पत्र, करञ्ज के फल, कत्था। इन सबको २०-२० तोले लेकर १६ सेर जल में उबाले। जब ४ सेर पानी रह जावे तब उतार कर छान ले। फिर ऊपर लिखी दवाइयों का ४-४ तोले चूर्ण लेकर इस पानी में डाल दे और १ सेर गो-घृत डाल कर आग पर चढ़ा दे। जब पानी जल जावे तब उतार कर रख छोड़े। इस घृत के खाने तथा लगाने से गर्मी (उपदंश) बिलकुल आराम हो जाता है।

(७१) करञ्जादि घृत—करञ्जा के पत्ते और फल, नीम

के पत्ते, कोह की छाल, शाल की छाल, जामुन, बड़, पीपल, गूलर, पाकर, पिलखन, बेतस। इन सबकी छाल २०-२० तोले लेकर २४ सेर जल में डाल दे और आग पर चढ़ा कर चतुर्थांश पानी रख ले। फिर इस पानी में उपरोक्त वस्तुओं का दूसरी बार ५-५ तोले चूर्ण तथा १ सेर गो-घृत डाल कर आग पर चढ़ा दे। जब पानी जल जावे तब घी को नीचे उतार ले। इस घृत के खाने और लगाने से दाह, पाक, स्राव और लालीयुक्त उपदंश दूर होता है।

(७२) अर्क कपूर को लेकर डमरू यन्त्र द्वारा उड़ा लेवे। फिर इस अर्क कपूर को एक रत्ती अथवा आधी रत्ती गेहुओं की रोटी के अन्दर के गूदे में डाल कर गोली बनावे। गोली से बाहर जरा भी अर्क कपूर न रहना चाहिए। फिर इस गोली को लौंगों के महीन चूर्ण में लपेट कर साबित ही निगल जावे। मुँह में न लगने देवे। ऊपर से एक घूंट गुनगुना पानी पी जावे। नमक, मीठा छोड़कर केवल सूखी रोटी घी के साथ खावे। स्नान न करे, ब्रह्मचारी रहे। १४ रोज में ही उपदंश और फिरङ्ग समूल नष्ट हो जाता है। फिरङ्ग उपदंश का ही भेद है।

(७३) मलहम—नीलाथोथा, मोम, कबीला, सिन्दूर, मुर्दासङ्ग, सुपारी का कोयला, छोहारे का कोयला प्रत्येक ४-४ मासे और रस कपूर ४ रत्ती। सबको महीन पीस कर १०१ बार धुले हुए मक्खन में मिला कर उपदंश के जख्मों पर लगावे तो जख्म जल्दी ही अच्छे हो जाते हैं। यह मलहम अचूक है।

(७४) चोपचीनी-योग—चोपचीनी के ४ मासे चूर्ण को

शहद में मिला कर चाटे और नमक रहित रोटी घी के साथ खावे तो २१ दिन में उपदंश नाश हो जाता है।

(७५) उशबावलेह—उशबा २० तोले, चिरायता ९ तोले, उत्तम निशोथ १० तोले, सनाय ६ तोले, बड़ी हर्र का छिल्का ३ तो०, काबुली हर्रे का छिल्का ३ तो०, छोटी हर्रे ३ तो०, गुलाब का फूल १॥ तो० आकाशबेल (अफ़तीमून) १॥ तो०, नीलोफर १॥ तो०, पापड़ा १॥ तो०, एलुआ १॥ तो०, चोबचीनी ५ तो०, लाल चन्दन १ तोला। इन सबको कूट कपड़-छान करके २० तोले बादाम-रोग़न में मसल कर तिगुने शहद में मिला ले और चिकने पात्र में भर कर रख दे। १ तोला अथवा इससे कम-ज्यादा अपनी शक्ति के अनुकूल नित्य खाकर ऊपर से थोड़ा सा गुनगुना पानी पी लेवे। मूँग, चावल, घी आदि पथ्य भोजन करे। नमक, लालमिर्च, तेल, गुड़, खटाई उड़द की दाल इत्यादि से परहेज रक्खे। २१ दिन में उपदंश समूल नष्ट हो जाता है।

(७६) जम्बु आदि तैल—जामुन का छिल्का, बेत का छिल्का, आँवले के पत्ते, करञ्ज के पत्ते, नीलोफर, कमल, बला, अतिबला, आम की गुठली, मुलहटी, प्रियङ्गु के फूल, लाख, लोध, लाल चन्दन और निसोथ। ये सब १-१ तो० लेकर, गौ के बछड़े के मूत्र में पीस कर लुगदी बना ले। फिर १ सेर तिल के तेल में इसे रख कर खूब औटावे। औट जाने पर तेल को उतार कर छान ले। इस तेल के लगाने से सब तरह के उपदंश के फोड़े-फुन्सी, खाज और घाव वगैरह नष्ट हो जाते हैं।

(७७) कड़वी तोरई के बीज, कड़वी तूँबी के बीज और सोंठ तीनों २-२ तोले लेकर पानी के साथ घोट कर लुगदी बना ले और आध सेर तिल के तेल में डाल कर खूब उबाले बाद में नीचे उतार कर ठण्डा हो जाने पर छान ले। इस तैल के लगाने से भयङ्कर से भयङ्कर घाव भी आराम हो जाते हैं।

(७८) उपदंश-नाशक रस—शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और रूपा तीनों को १-१ तोला लेकर खरल में ३ दिन तक खूब रगड़े। जब कजली हो जावे तब इसमें हल्दी, केशर, इलायची, सफेद जीरा, काला जीरा, अजवायन, चन्दन, लाल चन्दन, पीपल, बंसलोचन, जटामाँसी और पत्रज। सब ६-६ माशे लेकर खरल करके सबको एकदिल कर ले। बाद में ५ तोले घृत और ८ तोले शहद डाल कर खूब घोटे। जब गोली बनाने योग्य मसाला हो जावे तब ६-६ माशे की गोलियाँ बना ले। १ गोली नित्य ही प्रातःसमय खावे। २१ दिन तक खाने से उपदंश बिल्कुल नष्ट हो जाता है। जब तक दवा खाई जावे तब तक नमक बिल्कुल नहीं खाना चाहिए। कोरी रोटी अथवा घी रोटी के सिवाय दूसरी कोई वस्तु नहीं खानी चाहिए।

(७९) छोटी इलायची ३ माशे, रूमी मस्तगी ३ माशे, [illegible] गेरू ३ माशे, नीलाथोथा ३ माशे और पुराना गुड़ १ तोला। इनको बारीक पीस कर ४ गोलियाँ बना ले। इस दवा को खाने के पूर्व तीन दिन नमक-रहित चने की रोटियाँ खावें। चौथे दिन १० तोले चने की दाल २५ तोले पानी में भिगो दे, फिर

छान कर इस पानी से एक गोली नित्य तीन दिन तक सेवन करे। इसके सेवन से ४-५ दस्त होंगे उनसे न डरना चाहिए। यदि तबियत बहुत घबरावे तो मिश्री खानी चाहिए। दवा खाने के दिनों में भी ३ दिन तक चने की रोटियाँ और घृत खाना चाहिए। अगर जख्म हों तो साफ रसौत और बड़ी हर्र की छाल घिस कर लेप करे, ३ दिन में ही फायदा हो जायगा।

(८०) मलहम—कपूर १ तोला, मुर्दाशङ्ख १ तोला, छोटी इलायची के दाने १ तोला, रस कपूर १ तोला, लसोढ़े के पत्ते १४ नग। इन सबको १ प्रहर तक खरल करके रसौत, कत्था, कबीला, चाँदी का मैल, तूतिया, भाँई, माजू, अनार का छिलका, कथावा, सफेद धूप, सोनामक्खी, सब १-१ तोला लेकर बारीक पीस ले। बस, दवा तैयार हो गई, इसे एक शीशी में भर कर रख ले जब लगाना हो तब एक तोले गौ के मक्खन को ३ बार पानी में धो डाले और इसमें ३ माशे उक्त चूर्ण मिला कर लेप करे। उपदंश के सब जख्म बिलकुल साफ हो जायँगे।

(८१) रूमी शिंगरफ एक तोला, रस कपूर एक तोला, सफेद सखिया १ तोला, दार चिकना १ तोला। सबको बीस तोले बराण्डी में खरल करके शराब-सम्पुट द्वारा जौहर उड़ाले। यह जौहर एक चावल भर मुनक्का या दूध की मलाई अथवा मक्खन में नित्य खाया करे। २१ दिन में ही उपदंश समूल नष्ट हो जायगा। जब तक दवा खाय तब तक नमक-रहित गेहूँ की रोटी घृत के साथ खावे।

(७७) कड़वी तोरई के बीज, कड़वी तूँबी के बीज और सोंठ, तीनों २-२ तोले लेकर पानी के साथ घोट कर लुगदी बना ले और आध सेर तिल के तेल में डाल कर खूब उबाले बाद में नीचे उतार कर ठण्डा हो जाने पर छान ले। इस तैल के लगाने से भयङ्कर से भयङ्कर घाव भी आराम हो जाते हैं।

(७८) उपदंश-नाशक रस—शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और कत्था तीनों को १-१ तोला लेकर खरल में ३ दिन तक खूब रगड़े। जब कजली हो जावे तब इसमें हल्दी, केशर, इलायची, सफेद चोंग, काला जीरा, अजवायन, चन्दन, लाल चन्दन, पीपल, वंसलोचन, जटामाँसी और पत्रज। सब ६-६ मारो लेकर खरल करके सबको एकदिल कर ले। बाद में ५ तोले घृत और ८ तोले शहद डाल कर खूब घोटे। जब गोली बनाने योग्य मसाला हो जावे तब ६-६ मारो की गोलियाँ बना ले। १ गोली नित्य ही प्रातःसमय खावे। २१ दिन तक खाने से उपदंश बिलकुल नाश हो जाता है। जब तक दवा खाई जावे तब तक नमक बिलकुल नहीं खाना चाहिए। कोरी रोटी अथवा घी रोटी के सिवाय दूसरी कोई वस्तु नहीं खानी चाहिए।

(७९) छोटी इलायची ३ मारो, मुर्दा सङ्ग ३ मारो, ग्वालियरी गेरू ३ मारो, नीलाथोथा ३ मारो और पुराना गुड़ १ तोला। इनको बारीक पीस कर ४ गोलियाँ बना ले। इस दवा को खाने के पूर्व तीन दिन नमक-रहित चने की रोटियाँ खावे। चौथे दिन १० तोले चने की दाल २५ तोले पानी में भिगो दे, फिर

छान कर इस पानी में एक गोली नित्य तीन दिन तक सेवन करे। इसके सेवन से ४-५ ही दस्त होंगे उनसे न डरना चाहिए। यदि तबियत बहुत घबरावे तो मिश्री खानी चाहिए। दवा खाने के दिनों में भी ३ दिन तक चने की रोटियाँ और घृत खाना चाहिए। अगर जख्म हों तो साफ़ रसौत और बड़ी हर्र की छाल घिस कर लेप करे, ३ दिन में ही फ़ायदा हो जायगा।

(८०) मलहम—कपूर १ तोला, मुर्दासङ्ग १ तोला, छोटी इलायची के दाने १ तोला, रस कपूर १ तोला, लसोढ़े के पत्ते १५ नग। इन सबको १ प्रहर तक खरल करके रसौत, कत्था, कवीला, चाँदी का मैल, तूतिया, भाँई, माजू, अनार का छिलका, कबाबा, सफ़ेद धूप, सोनामक्खी, सब १-१ तोला लेकर बारीक पीस ले। बस, दवा तैयार हो गई, इसे एक शीशी में भर कर रख ले जब लगाना हो तब एक तोले गौ के मक्खन को ३ बार पानी में धो डाले और इसमें ३ माशे उक्त चूर्ण मिला कर लेप करे। उपदंश के सब जख्म बिलकुल साफ़ हो जायँगे।

(८१) रूमी शिंगरफ एक तोला, रस कपूर एक तोला, सफ़ेद सङ्खिया १ तोला, दार चिकना १ तोला। सबको बीस तोले बराण्डी में खरल करके शराव-सम्पुट द्वारा जौहर उड़ाले। यह जौहर एक चावल भर मुनक़्क़ा या दूध की मलाई अथवा मक्खन में नित्य खाया करे। २१ दिन में ही उपदंश समूल नष्ट हो जायगा। जब तक दवा खाय तब तक नमक-रहित गेहूँ की रोटी घृत के साथ खावे।

(८२) शुद्ध शिंगरफ १ तोला नीम की लकड़ी के सिरे पर लगाकर रख दे। फिर एक तोला गो-घृत काँसे के बर्त्तन में डालकर उसे नीम की लकड़ी से घोटे। घोटते-घोटते जब शिंगरफ घुट जाय तब इस घी को काँच की शीशी में भर कर रख दे। इसमें से ४ रत्ती सुबह और ४ रत्ती सायङ्काल को चूना, कत्था, सुपारी रहित खाली नागर पान में रख कर खाय। उपदंश बहुत ही जल्द आराम हो जायगा। यही घृत जख्मों पर भी लगाना चाहिए।

(८३) रस कपूर १ तोला, लौंग १ तोला, पुराना गुड़ ६ माशे, इन तीनों को खरल करके चने के बराबर गोलियाँ बना कर रखले। एक गोली सुबह के वक्त खाकर ऊपर से ताजा पानी पीले। नमक बिलकुल न खाना चाहिए। गुड़, तेल, मिर्च, खटाई आदि से परहेज रखना चाहिए।

(८४) रेवन्द चीनी और मिश्री दोनों समभाग लेकर चूर्ण बना ले। यह चूर्ण आधा तोला प्रातः समय और आधा तोला सायं समय ठण्डे पानी के साथ १५ दिन तक सेवन करने से उपदंश आराम होगा। मिश्री मिलाकर दूध-भात के अतिरिक्त और कुछ भी न खाना चाहिए। नमक बिलकुल वर्जित है।

(८५) रस कपूर १ तोला, मुर्दाशङ्ख १ तोला, लौंग १ तोला, छोटी इलायची के बीज १ तोला, शिंगरफ १ तोला, अञ्जरेजी नील १ तोला। इन सबको बीस तोले गौ के मक्खन में डाल कर लोहे की कड़ाही में घोटे। इसे नीम की लकड़ी से घोटना चाहिए, मगर उस लकड़ी के नीचे एक पैसा जड़ा लेना

चाहिए। १६ पहर की घोटाई के बाद इस घी को शीशी में भर कर रख ले। सुबह-शाम ४ रत्ती कोरे पान में रखकर खाय और जख्मों पर भी यही घृत लगावे। इन दिनों नमक बिलकुल न खाना चाहिए। दूध, चावल, मिश्री खाना चाहिए। घृत कम से कम आध पाव रोज खाना चाहिए।

(८६) चने का सत्तू १ तोला थूहर के दूध में भिगो कर गौ के घृत में भूनले। इसकी २-२ रत्ती की गोलियाँ बनाले। एक गोली सुबह के वक्त खाकर ऊपर से ताजा पानी पीवे। ७ दिन के सेवन से ही आराम हो जायगा। केवल दूध-भात खाना चाहिए। नमक बिलकुल न खाना चाहिए।

(८७) दालचीनी १ तोला, सफ़ेद मिर्च एक तोला, शीतल-चीनी १ तोला, रस कपूर १ तोला, छोटी इलायची १ तोला। सबको कूट कर बकरी के दूध में खरल करे और २-२ रत्ती की गोलियाँ बनाले। १ गोली सुबह और १ गोली शाम के वक्त मलाई में रख कर इस तरह से खाय कि दाँत और तालू में न लगने पाये। यदि दाँत और तालू से लग जाय तो चमेली के पत्तों के रस का कुल्ला करना चाहिए। खटाई और नमक से बिलकुल बचना परमावश्यक है।

(८८) मलहम—सफ़ेदा २ तोले, मुर्गी के अण्डों की सफ़ेदी १ तोला, पारा ६ माशे, चमेली का असली तेल ५ तोले। तेल में थोड़ा सा मोम डाल कर आग पर चढ़ा दे। जब मोम गल जाय तब आग से नीचे उतार ले और पारे को छोड़ कर शेष औषधियों

(५) असगन्ध, मैनसिल, विदारीकन्द, हींग, रीछ की चर्बी। सब समभाग लेकर शहद में मिला ले। इस लेप को लिङ्ग पर लगा, ऊपर से कपड़ा लपेट कर बाँध दे। प्रातःकाल गर्म पानी से धोकर उस पर दूध की मलाई मलनी चाहिए।

(६) बालछड़, खाँड, चमेली का तेल और शहद समभाग लेकर लेप तैयार कर ले। तैयार हो जाने पर लिङ्ग पर लगाने से लिङ्ग बढ़ जायगा, और उसमें कड़ापन भी आ जायगा।

(७) बड़े-बड़े सात चींटे शीशी में भरकर, उसमें ऊपर से नरगिस का तेल भर दे। शीशी में काग लगा कर २४ घण्टे तक बकरियों की मेंगनियों दबा दे। पश्चात् शीशी को निकाल कर तेल को छान ले। सुपारी बचा कर इन्द्रिय पर इस तेल को मलने से लिङ्ग बढ़ जायगा।

(८) केवल बकरी का घी लिङ्गेन्द्रिय पर मलने से वह पुष्ट हो जाती है।

(९) शहद और बिल्वपत्र का स्वरस मिला कर लिङ्ग पर मलने से लिङ्ग मोटा और बलवान होता है।

(१०) शहद में सोहागा घोट कर लिङ्ग पर लेप करने से निश्चय ही इन्द्रिय मोटी और पुष्ट होती है।

(११) लिङ्ग की दुर्बलता नाश करने के लिए, शेर की चर्बी की मालिश करना लाभदायक है।

(१२) असली चमेली के तेल की मालिश लिङ्ग पर करने से

बड़ा ही लाभ होता है। जिनके लिङ्ग में कोई खराबी न हो, उन्हें भी यह तेल लगाने से लाभ ही होता है।

(१३) सफेद सरसों, कड़वाकूट, बड़ी कटेरी का फल और असगन्ध की जड़। सबको २-२ तोले लेकर कूट कपड़-छन कर ले। इसमें से २ तोले लेकर जल की सहायता से लेप बना ले। सुपारी को छोड़कर सारे लिङ्ग पर धीरे धीरे मले। जब लेप सूखने लगे तब लेप छुड़ा दे। इस प्रकार लगातार नित्य ४ दिन करने से ही कुछ कुछ लिङ्ग बढ़ जायगा।

(१४) २१ दिन तक नित्य ताजा दूध लिङ्गेन्द्रिय पर मले। दूध मलने के बाद एक घण्टे तक सूखे केचुओं के चूर्ण की मालिश करने से लिङ्ग मोटा हो जायगा।

(१५) भैंस के दूध में कायफल को पीसकर लेप करे और ऊपर से नागर पान बाँध दे। प्रातः गरम जल से छुड़ा ले। २१ दिन ऐसा करने से लिङ्ग मोटा हो जायगा।

(१६) समुद्रफल, दारू हल्दी, मुलहठी और शहद। सब समभाग लेकर गधे के पेशाब में घिसकर इन्द्रिय पर मले। इससे लिङ्ग बढ़ता और स्थूल होता है।

(१७) रीठे की छाल और अकरकरा समभाग लेकर तेज शराब में खरल करे। फिर सुपारी और सींवन छोड़ कर लिङ्ग पर मालिश करे। ऊपर से पान लपेट पर कच्चा डोरा बाँध दे। २१ दिन ऐसा करने से लिङ्ग मोटा हो जायगा।

(१८) ९ माशा इन्द्रजौ भैंस के ताजे दूध में भिगो, १२ घण्टे

तक खरल करे। फिर उसे आग पर गरम करके सुपारी बचाकर गुनगुना लेप कर दे। ऊपर से कपड़ा लपेट कर सो जाय। प्रातःकाल गरम पानी से लिङ्ग धो ले। यही क्रिया ३१ दिन तक करने से लिङ्ग कठोर, मोटा और बड़ा हो जाता है।

(१९) उटङ्गन के बीज कूट कपड़-छन कर ले। इसमें से लगभग ६ माशा चूर्ण गरम करके सुहाता-सुहाता लेप, सुपारी बचा कर लिङ्ग पर कर दे। लेप लगाने के पहिले लिङ्ग को गर्मजल से धो लेना चाहिए। इस लेप को सुबह-शाम दोनों वक्त करना चाहिए। २१ दिन में लिङ्ग अत्यन्त कठोर हो जायगा।

(२०) गोल मिर्च, सेंधा नमक, पीपल, कटेरी, कायफल, आँगा, तिल, कूट, जौ, उड़द, सरसों और नागौरी असगन्ध। इन सबको कूट, पीस, कपड़-छन कर ले और शहद में मिलाकर लिङ्ग पर कुछ समय लेप करने से लिङ्ग बड़ा हो जाता है।

(२१) असगन्ध, सतावर, कूट, बालछड़ और बड़ी कटेरी का फल। इन सबको समभाग लेकर पानी के साथ सिल पर पीस कर लुगदी बना ले। पीछे इस लुगदी को चौगुने दूध के साथ तिलों का तेल डाल कर पकावे। इस तेल की लिङ्ग पर मालिश करने से लिङ्ग बढ़ जाता है।

(२२) भिलावाँ, कूट, बड़ी कटेरी का फल, कमलिनी के पत्ते, सेंधा नमक, नेत्रवाला, शूक और असगन्ध की जड़। इन सब को बारीक पीसकर कपड़-छन करले। फिर इसे घी अथवा बकरी

के मक्खन में अच्छी तरह मिला ले। ७ दिन के लगाने से लिङ्ग खूब लम्बा और मोटा हो जायगा।

(२३) समुद्रफेन, देवदारु, हल्दी, मुलहठी और शहद। इन सब को २-२ माशा लेकर खरल कर ले; साथ ही गधे का पेशाव भी डालता जाय। घुट जाने पर सुपारी बचा कर, लिङ्ग पर इसका लेप करे। ४०-४५ दिन तक इस लेप के लगाने से लिङ्ग अवश्य ही बढ़ जाता है।

पाँचवाँ अध्याय

बाँझ होने के कारण

वन्ध्या अथवा बाँझ स्त्री वह है, जिसके गर्भ न रहे। यह वन्ध्या शब्द की मोटी व्याख्या है। वैद्यकशास्त्र में आठ प्रकार की वन्ध्याएँ मानी गई हैं। यथा :—

जन्मवन्ध्या काकवन्ध्या मृतवत्सा तथैव च।
स्रवद्गर्भा गलद्गर्भा कन्यापत्यं प्रसूयते॥
मूढगर्भा रजोहीना ह्यष्टौवन्ध्या प्रकीर्त्तिताः॥

जन्मवन्ध्या—जिस स्त्री के कभी भी कोई सन्तान न होती हो।

काकवन्ध्या—जिसे एक पुत्र हो कर रह जाय, फिर कोई सन्तान न हो।

मृतवत्सा—जिसके बालक तो पैदा हों, लेकिन जीयें नहीं।

स्रवद्गर्भा—जो गर्भ तो धारण करे, लेकिन दो महीने में गिर जाय।

गलद्गर्भा—जिसका गर्भ चार महीने से अधिक न रहे, अर्थात् चौथे महीने के अन्दर ही गर्भपात हो जाय।

कन्याप्रजा—जिसके गर्भ से कन्या ही कन्या उत्पन्न हों; पुत्र न हो।

मृद्गर्भा—जिसके गर्भ रह जाय लेकिन नियमानुसार गर्भाशय में बढ़े नहीं। दूसरा गर्भ भी धारण न हो।

रजोहीना—जिसे रजोदर्शन ही न हो। अर्थात् मासिक-धर्म ही न हो।

अब यहाँ पर हमें यह विचार करना है कि स्त्रियाँ वन्ध्या अर्थात् बाँझ क्यों होती हैं? इसका उत्तर यही है कि स्त्री-पुरुष के उत्पादक यन्त्र में इस प्रकार की कई त्रुटियाँ होती हैं, जिनसे स्त्रियों को श्वेत प्रदर, रजोऽवरोध अथवा रज-सम्बन्धी अनेक प्रकार के रोग अथवा जरायु-पतन आदि रोगों के हो जाने से गर्भाशय सन्तान उत्पन्न करने के अयोग्य हो जाता है। प्रदर की उपचार-चिकित्सा हम तीसरे अध्याय में विस्तारपूर्वक लिख आए हैं। यहाँ हम वन्ध्या-दोष पर विचार करेंगे।

जो स्त्री बहुत ही स्थूल (मोटे शरीर की) होती है अर्थात् जिसे मेद-वृद्धि रोग होता है, उसके सन्तान नहीं हो सकती। प्रत्येक स्त्री की योनि के ऊपर अर्थात् जरायु के मुँह से कुछ नीचे एक पतला परदा सा होता है। ऋतु-आरम्भ होते ही वह खुद फट जाता है। परन्तु, कभी कभी वह परदा इतना कठोर हो जाता है कि ऋतुकाल के रक्ताघात से भी नहीं फटता। इस प्रकार की स्त्रियों के सङ्ग जब मैथुन किया जाता है, तब कष्ट मालूम होता है। इस रोग से छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय यही है कि किसी

(२) कमलगट्टा, तगर, कूट, मुलहठी, सफेद चन्दन। इन्हें बकरी के दूध में पीस कर जब तक रज-स्राव हो, नित्य पिलाना चाहिए। इसके बाद लक्ष्मणा को दूध में रगड़ कर पिलावें, नस्य दें। इस से बन्ध्या स्त्री उत्तम सन्तान की माता होगी।

कफ-विकार—योनि से रज अधिक निकले, चिकना और गाढ़ा हो, अधिक लाल न हो। नाभि के पास अत्यन्त पीड़ा हो।

(३) आक की जड़, लौंग, प्रियङ्गु, बला, नागकेसर, और अतिबलाको बकरी के दूध में घोट कर जब तक रक्त-स्राव हो, पिलावे। बाद में लक्ष्मणा को गो-दुग्ध में पीस कर सेवन करने से बन्ध्या स्त्री पुत्र प्रसव करती है।

(४) हर्र, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और चित्रक को बकरी के दूध में घोट कर जब तक रक्त-स्राव रहे, पीना चाहिए। पश्चात् लक्ष्मणा को गो-दुग्ध में घिस कर सेवन करने से सन्तानहीना स्त्री के सन्तान होने लगती है।

सन्निपात-विकार—योनि से काले रङ्ग का गर्म, चिकना और गाढ़ा पानी निकले, कोख, पेट, योनि और कमर में दर्द हो। शरीर टूटे, ज्वर हो और निद्रा अधिक आवे।

(५) एरण्ड की छाल, आम की छाल, निशोथ, वकुल, तगर, कूट, चन्दन और मुलहठी। इन को बराबर-बराबर लेकर बकरी के दूध में घोट ले और जब तक रज बहता रहे तब तक पिलावे। इसके बाद आक की जड़, कटेरी (छोटी) की जड़, लक्ष्मणा की जड़, बाँझ ककोड़ा और विष्णु-क्रान्ता की जड़। इन

चित्र-नम्बर ७
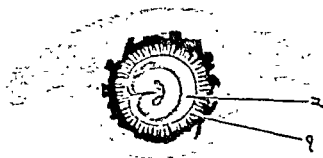
(बढ़ाया हुआ आकार)

वृद्धि-क्रम (दूसरे सप्ताह की समाप्ति पर)

चित्र-नम्बर १४

(घटाया हुआ आकार)

वृद्धि-क्रम (आठवाँ महीना)

Fine Art Printing Cottage, Allahabad.
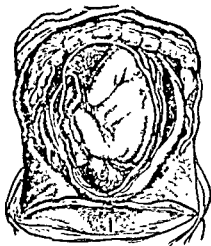
सबको गो-दुग्ध में पीस कर पिलावे और सुँघावे, तो अवश्य ही वन्ध्या स्त्री सन्तान प्रसव करे।

आयुर्वेद ने आठ प्रकार की और भी वन्ध्या कहा है। वे ये हैं:—

(१) त्रिपक्षी वन्ध्या (२) सज्ञा वन्ध्या (३) व्याघ्रिणी वन्ध्या (४) व्यक्तिनी वन्ध्या (५) शुभ्रती वन्ध्या (६) चक्री वन्ध्या (७) कमलिनी वन्ध्या (८) त्रिमुखी वन्ध्या।

(६) त्रिपक्षी वन्ध्या—जो स्त्री तीन पक्ष अर्थात् डेढ़ महीने में ऋतुमती हो, उसे "त्रिपक्षी वन्ध्या" कहते हैं। दोनों जीरे, सफ़ेद वच और ककोड़े के फल इन सबको समान भाग लेकर चावल के पानी में पीस, सूर्य के सामने खड़ा होकर इस औषधि को तीन दिन पीना चाहिए। जब तक दवा पीवे, तब तक सिर्फ़ गो-दुग्ध और चावल का भोजन करना चाहिए। ऐसा करने से अवश्य सन्तान पैदा होगी।

(७) सज्ञा वन्ध्या—अनियमित समय में, कभी जल्दी और कभी देर से, महीने में कई दफ़ा रजस्वला हो, उस स्त्री को "सज्ञावन्ध्या" कहते हैं। मजीठ, सफ़ेद जीरा, स्याह जीरा, वच, ककोड़ा, हड़जोड़ी इन सबको चावलों के पानी में घोट कर जो स्त्री सूर्य की ओर मुख करके तीन दिन पीती है, उसका यह दोष जाता रहता है और शीघ्र ही सन्तान प्रसव करती है। जब तक दवा सेवन की जावे, तब तक केवल गो-दुग्ध और चावल के भात का भोजन करना चाहिए।

(८) व्याघ्रिणी वन्ध्या—अधिक बड़ी उम्र में जिस स्त्री से एक

मात्र सन्तान होकर रह जाती है, उसे "व्याघ्रिणी वन्ध्या" कहते हैं। नं० ६ में जो त्रिपर्णी वन्ध्या के लिए नुस्खा लिखा है, वही नुस्खा इस वन्ध्या को भी सेवन कराने से और सन्तान हो सकती है।

(९) व्यक्तिनी वन्ध्या—योनि से प्रमेह की तरह सफेद पदार्थ गिरता है। लाल अपामार्ग के बीज, मिश्री, कौंच के बीज और रतनजोत इन सबको बारीक पीस कर गो-दुग्ध के साथ सात दिन पीवे। फिर काला अगर, नागकेशर, ककोड़ा, काला जीरा और सफेद जीरा इन सबको बछड़े वाली गाय के दुग्ध में सात दिन तक पीवे और तब तक दूध-चावल ही खावे, तो अवश्य ही सन्तान प्राप्त होगी।

इनके अतिरिक्त शुभ्रती, त्रिमुखी, चक्री और कमलिनी नामी वन्ध्याओं की कोई दवा नहीं है; लक्षण इस प्रकार हैं :—

शुभ्रती—इसका शरीर सकुचा-सा रहता है, देह में निन्य विवर्णता रहती है और गर्भ कभी नहीं रहता।

त्रिमुखी—इसके साथ मैथुन करने में योनि से पानी बहता है, यह भोजन और मैथुन में चपलता व स्नेह रखती है। इसके भी सन्तान नहीं होती।

चक्री—इसके आठवें-दसवें दिन सफेद धातु की तरह स्राव होता है। इस स्त्री के सन्तान नहीं होती।

कमलिनी—इसकी योनि से निरन्तर पानी बहता रहता है, यह भी निःसन्तान होती है।

अब हम आगे वन्ध्या स्त्रियों का वन्ध्या-दोष मिटाने के लिए उत्तमोत्तम योग लिखते हैं :—

(१०) लक्ष्मणा, बच, कूट, चन्दन, लोध, खस, कचूर, पद्माख, हल्दी, दारुहल्दी, कमल-केशर, कमल, दोनों सारीवा, बिडङ्ग, चमेली के फूल, बालछड़, देवदारु, गोखरू, रेणुका, कुमुदिनी, मुलहटी और सौंफ इन सबको एक-एक तोला लेकर जल की सहायता से घोंट कर लुगदी बना ले; फिर बकरी का घी एक सेर और दूध चार सेर लेकर उपरोक्त दवाइयों के दस सेर काढ़े में, जो पहिले से ही तैयार कर रखा हो, डाल कर आग पर पकावे। जब पानी जल चुके, तब घृत को छान कर रख ले। इस घृत को भोजन में सेवन करना चाहिए। शरीर पर भी इसकी मालिश करनी चाहिए। यह घृत वन्ध्या स्त्रियों को सन्तान का देने वाला है। यह बालकों के लिए भी लाभदायक है।

(११) फलघृत—दोनों प्रकार का पियावाँसा, त्रिफला, गिलोय, पुनर्नवा, स्योनाक, दोनों हल्दी, रास्ना, मेदा और सतावर इनको पीस कर लुगदी बना ले और इसे चार सेर गो-दुग्ध तथा एक सेर गो-घृत में डाल कर आग पर पकावे। जब दूध जल जावे, तब इसे नित्य शक्ति के अनुसार स्त्री को खिलावे। यह घृत योनि के समस्त रोगों को नाश करके पुत्र देने वाला है।

(१२) बृहत्फलघृत—मेदा, मजीठ, मुलहटी, कूट, त्रिफला, खरेंटी, सफ़ेद बिदारी कन्द, काकोली, चीरकाकोली, असगन्ध, अजवायन, हल्दी, हींग, कुटकी, नीलकमल, दाख, सफ़ेद चन्दन और

लाल चन्दन सब दो-दो तोले लेकर जल के साथ पीस कर लुगदी बना ले। इस लुगदी को कड़ाही में रख कर बछड़े वाली गौ का चार सेर घृत डाल दे और मन्द आँच से पकावे। जब घी कड़कड़ा जावे, तब नीचे उतार कर घृत को ठण्डा कर चार-चार सेर सतावर का रस डाल कर फिर आग पर चढ़ा दे। ज्यों-ज्यों सतावर का रस जलता जावे, त्यों-त्यों उसमें और सतावर का रस डालता जावे। जब सोलह सेर रस जल चुके, तब धीरे-धीरे बछड़े वाली गौ का दूध डालता रहे। जब चार सेर दूध भी जल जावे, तब आध सेर रस रहने दे और आग से नीचे उतार ले। इसे छान कर बोतल में रख ले। यह घृत अपनी शक्ति के अनुसार खाने से बाँझ स्त्री के भी पुत्र होता है। साथ ही योनि-रोग और हिस्टीरिया (पागलपन) आदि को भी समूल नष्ट कर देता है।

(१३) सतावरी घृत—सतावर, विदारीकन्द, उड़द, कौंच और गोखरू इन सबका चूर्ण एक-एक पाव लेकर चार-चार सेर पानी में अलग-अलग भिगो दे और इनका अलग-अलग एक-एक सेर क्वाथ (काढ़ा) तैयार कर ले। एक सेर गो-घृत में चार सेर गो-दुग्ध और एक-एक क्वाथ डाल आग पर चढ़ा कर घी बना ले। जब घृतमात्र बाक़ी रह जावे और दूध तथा क्वाथ जल जावे, तब इस घृत को छान कर किसी पात्र में रख दे। पीछे से इसमें दस तोले शहद और बीस तोले मिश्री मिला दे। अपनी शक्ति के अनुसार जो स्त्री नित्य इसे सेवन करेगी, वह निस्सन्देह बन्ध्या-दोष से मुक्त हो जावेगी।

(१४) वृद्धदारक घृत—पावभर विधारे की जड़ को चार सेर

जल में रात्रि के समय भिगो दे। सुबह आग पर चढ़ा कर एक सेर पानी रख ले। इस क्वाथ में एक सेर गो-घृत और दो सेर गो-दुग्ध डाल कर फिर आग पर चढ़ा दे। जब घृतमात्र रह जावे तो छान कर रख ले। जो वन्ध्या स्त्री इस घृत को अपनी शक्ति के अनुसार नित्य सेवन करती है, वह शीघ्र ही अपनी गोद में सन्तान को देखती है।

(१५) बृहत्कल्याण घृत—लक्ष्मणा की जड़, नागरमोथा, कूट, दोनों हल्दी, पीपल, कुटकी, दोनों काकोली, वायविडङ्ग, त्रिफला, वच, रास्ना, मेदा, असगन्ध, इन्द्रायण के फूल, प्रियङ्गु, दन्ती, सतावर, मुलहटी, कमल, अजमोदा, महामेदा, सफेद चन्दन, लालचन्दन, चमेली के फूल, बंसलोचन, मिश्री, हींग और कायफल सब समभाग लेकर पानी की सहायता से इनकी लुगदी बना ले। पुष्य नक्षत्र में इस घृत को बनाना चाहिए। ताँबे के बर्त्तन में दवा से चौगुने दूध को डाल कर उसमें इस लुगदी को रख एक सेर गो-घृत डाल दे और आग पर पकावे। जब दूध जल चुके, तो घृत को छान कर बोतल में रख ले। इस घृत को जो स्त्री नित्य सेवन करती है, वह कभी वन्ध्या नहीं रह सकती। जिसके पुत्रियाँ होती हों, उन्हें इससे पुत्र प्राप्त होगा। जिसके अल्पायु और मृत सन्तान होती हो, उसे शतायु पुत्र पैदा होगा।

(१६) खरेटी, कङ्घी, और मुलहटी छः-छः माशे, गौ का दूध एक पाव, मिश्री दो तोला और शहद दो तोला मिला कर नित्य पीने

से स्त्री गर्भवती होती है। जब तक इसका सेवन किया जावे, तब तक केवल भात और गो-दुग्ध ही खाना चाहिए।

(१७) नागकेशर, सुपारी और हाथी दाँत का बुरादा प्रत्येक दो-दो माशा लेकर चूर्ण बनावे, इसे कुछ दिन लगातार सेवन करने से "वन्ध्या-दोष" नाश हो जाता है और स्त्री अवश्य ही गर्भ धारण करती है।

(१८) दो तोला नागौरी असगन्ध को गो-दुग्ध में पीस कर लुगदी बना ले। इस लुगदी को पाव भर गो-दुग्ध में डाल कर औटावे। औटाते समय एक तोला गो-घृत भी डाल दे। जब दो-तीन उबाल आ जावें, तब कपड़े से छान कर वन्ध्या स्त्री को पिला दे। दिन भर दूध और भात का आहार करना चाहिए। यह दवा ऋतु के चौथे दिन प्रातःकाल ही सेवन करनी चाहिए। अवश्य सन्तान पैदा होगी।

(१९) पीपल, अदरक, कालीमिर्च और नागकेसर इन सब को समभाग लेकर चूर्ण बना ले। इसमें से छः माशे चूर्ण गो-घृत में मिला कर ऋतु-स्नान के चौथे दिन स्त्री को चाटना चाहिए। रात के समय भोग कराना चाहिए। अवश्य सन्तान होगी।

(२०) पुष्य नक्षत्र में लक्ष्मणा की जड़ उखाड़ ले और दो तोला जड़ गो-दुग्ध में अक्षत-योनि कन्या से पिसवा कर पका किये हुए गो-दुग्ध के साथ पीने से वन्ध्या स्त्री सन्तान-सुख देखती है।

(२१) जिपसोंत के बीज, पत्र और मूल इन्हें गो-दुग्ध के साथ रगड़ कर पीने से निःसन्तान स्त्री भी दीर्घायु सन्तान पैदा करने लगती है।

(२२) सफेद कटेरी की जड़ को गो-दुग्ध में घोट कर दाहिने नथुने द्वारा पीने से वन्ध्या स्त्री पुत्र को प्रसव करती है और यदि बाएँ नथुने से पीवे तो कन्या उत्पन्न होती है।

(२३) आध पाव तिलों के तेल में अड़ूसे के पत्तों का आधपाव काथ डालकर औटावे। जब पानी जल जावे, तब उस तेल को ठण्डा करके जो ऋतु-स्नाता वन्ध्या स्त्री पीवेगी, वह अवश्य ही गर्भवती होगी।

(२४) यड़ की जटा और विजयसार, मूँगे का चूर्ण, ऐसी बछड़े वाली गौ के दुग्ध के साथ वन्ध्या स्त्री को पीना चाहिए जिसके शरीर में दूसरे रङ्ग का तिलमात्र भी कहीं पर दाग न हो। सफ़ेद, काली या लाल किसी भी रङ्ग की गौ हो; लेकिन एक रङ्गी हो।

(२५) लक्ष्मणा की जड़ और सुदर्शन की जड़ को पुष्य नक्षत्र में उखाड़ कर गो के दूध में किसी कन्या से पिसवा ले और ऋतु-स्नाता स्त्री को पिला दे। अवश्य पुत्र होगा।

(२६) सफ़ेद कुलथी की जड़, गँगेरन की जड़ और अपराजिता की जड़ इन सबको समभाग ले गो-दुग्ध में पीस कर वन्ध्या ऋतु-स्नाता स्त्री इसे पीवे, तो निश्चय गर्भ धारण करे।

(२७) जिणपोते की जड़, विष्णुकान्ता, और शिवलिङ्गी इन तीनों को समभाग लेकर गौ के दूध में पीस ले। ऋतु से शुद्ध होने के बाद यदि वन्ध्या स्त्री इसे कुछ दिन पान करे, तो पुत्र ही हो।

(२८) लक्ष्मणा की जड़ और पत्ते दोनों समभाग लेकर

गो-दूध में पीस ले। ऋतु से शुद्ध होकर जो स्त्री इसे सेवन करती है, वह वन्ध्या-दोष से मुक्त होकर पुत्र प्रसव करती है।

(२९) कृत्तिका नक्षत्र में पूर्व दिशा की ओर मुँह करके बाँझ ककोड़े की जड़ को उखाड़ लावे। फिर उस जड़ को जल में पीसकर ऋतु से सात दिन तक पीवे, तो बाँझ औरत भी पुत्र उत्पन्न करे।

(३०) जो स्त्री बिजौरे नीबू की जड़ को दूध में पका कर और उसमें गो-घृत मिलाकर, ऋतु से शुद्ध होकर सेवन करे, तो उसको दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होता है।

(३१) देशी नील के बीज दो तोले, हींग असली दो तोले, सन के बीज दो तोले और गुड़ ९ माशे इन सब दवाइयों को कूट-पीस कर गुड़ में बेर के बराबर गोलियाँ बना ले। यदि गुड़ कम हो, तो और डाल लें। जब स्त्री रजस्वला हो, तब एक तोला नकछिकनी और दो तोले गुड़ इन दोनों को तीन छटाँक जल में औटा ले। जब पानी डेढ़ छटाँक रह जावे, तब छान कर स्त्री को पिला दे। इस तरह सात दिन तक दिन में दो बार इसे पिलावें। बाद में ऊपर लिखी हुई एक गोली नित्य ठण्डे पानी के साथ एक मास तक सेवन करावे। इन दिनों मैथुन, अधिक भोजन और गुरुपाक पदार्थ बिलकुल वर्जित हैं।

जब स्त्री फिर रजस्वला हो तब प्रातः समय दो दो गोलियाँ ठण्डे पानी के साथ खिलावें और मासस्राव को नहीं ऊपर लिखा हुआ काढ़ा सात दिन तक पिलावें। आठवें दिन से दवा बन्द कर दें

और सातवें, नवें तथा सोलहवें दिन स्त्री से विधिवत मैथुन करे; ईश्वर-कृपा से अवश्य ही गर्भ स्थापित हो जावेगा।

(३२) योनि-शुद्धिकरण—कभी-कभी योनि-दोष से भी गर्भ नहीं रहता, अतएव योनि की शुद्धि परमावश्यक है। प्रथम दिन चनों की, दूसरे दिन में घी की, तीसरे दिन भाँग की पोटली योनि में रखे और चौथे दिन निम्न-लिखित दवाइयों की गोली बना कर रखे।

इलायची, तज, तेजपात, जायफल, लौंग, जावित्री, कायफल, बेर की जड़ का छिल्का, हरड़, फिटकरी, धव के फूल, जटामासी कमल, मिश्री, करञ्ज के फूल, गुड़, और पारस पीपल के फल इन सबको समभाग लेकर कपड़-छन कर ले और शहद में मिला कर आँवले के बराबर गोली बना भग में रखे। इससे भग के समस्त दोष दूर होकर गर्भ धारण करने योग्य हो जावेगी।

(३) योनि-सङ्कोचन के नुस्खे

जिस प्रकार पुरुष का लिङ्ग मोटा और लम्बा होना आवश्यक है, उसी प्रकार स्त्री-योनि का सङ्कोचन परमावश्यक है। जिस स्त्री के योनि का मुख चौड़ा होता है, वह शीघ्र ही गर्भधारण नहीं कर सकती। सन्तान के पैदा होने से और अति मैथुन से योनि-द्वार चौड़ा हो जाता है। इस दोष को हटाने के लिए हम नीचे लिखे नुस्खे प्रयोग करने की सलाह देते हैं:—

(१) छोटी माँई, माजूफल, बड़ी हरड़, कपूर, समुद्रसोख,

और फिटकरी सब दो-दो माशे ले पानी में पीस कर योनि के भीतर लगाने से योनि सिकुड़ जाती है।

(२) थोड़ी सी लौंग को घोड़ी के दूध में भिगो कर बारीक पीस ले। इस चूर्ण को योनि में रखने से योनि-सङ्कोचन होता है।

(३) अनार के छिल्के, माजूफल और लौंग तीनों सम भाग लेकर शराब में घोट ले। इसे योनि में लगाने से योनि सङ्कुचित हो जाती है।

(४) जायफल, माजूफल, अफीम, छोटीमाँई और बड़ी हरड़ का छिल्का ये सब चार-चार माशे तथा लौंग और जावित्री दो-दो माशे इन सबको बराण्डी में खरल करके दो-दो माशे की गोलियाँ बना ले। एक गोली मैथुन से पहिले योनि में रक्खे। इससे योनि-सङ्कोचन तो होगा ही; लेकिन साथ ही योनि से पानी का बहना भी बन्द हो जाता है। मैथुन-समय गोली निकाल डालना चाहिए।

(५) कूट, धाय के फूल, बड़ी हरड़, भुनी हुई फिटकरी, माजूफल, हाऊबेर, लोध और अनार की छाल इन सबको कूट-कपड़छन कर ले और शराब में मिला कर स्त्री-योनि में लेप कर दे; इस लेप से योनि सिकुड़ जाती है।

(४) गर्भावरोधक-उपाय

(१) ताड़ के बीजों की राख और हींग दूध में मिला कर पीने से गर्भ नहीं रहता।

(२) शराब में बाज पक्षी की बीट १ तोले भर मिला कर खाने से गर्भ नहीं रहता।

(३) गजपीपल और पिस्ते का छिल्का समभाग लेकर पीस-छान ले। रोज छः माशा चूर्ण एक महीने तक खा लेने से गर्भ नहीं रहता।

(४) मैथुनोपरान्त स्त्री यदि उठ कर तत्काल पेशाब कर दे तो प्रायः गर्भ नहीं रहता। कभी-कभी रह भी जाता है; अतएव यह उपाय अचूक नहीं कहा जा सकता।

(५) रजस्वला होने के दिन से सोलह रात्रियाँ त्याग कर बाद में मैथुन करने से प्रायः गर्भ नहीं रहता; क्योंकि सोलह दिन के बाद गर्भ-स्थान का मुख इतना सङ्कुचित हो जाता है कि उसमें वीर्य-जन्तु घुस कर गर्भ स्थापित नहीं कर सकते, परन्तु यह अटल सिद्धान्त नहीं है, क्योंकि कई स्त्रियों को, मासिक-धर्म होने के दो-चार दिन पूर्व मैथुन करने से भी गर्भ स्थापित होता देखा जाता है।

(६) "केप" का प्रयोग करने से भी गर्भ नहीं रह सकता। ये केप बाजार में किसी अच्छे अङ्गरेजी दवा बेचने वालों की दूकान पर बड़े-बड़े शहरों में निकलते हैं। रबर अथवा मुलायम चमड़े के होते हैं। स्त्री-पुरुष दोनों के लिए मिलते हैं। भिन्न-भिन्न साइज के होते हैं। इस केप को पेस्सरी (Pesserj) कहते हैं। मूल्य भी अधिक नहीं होता। स्त्रियों को इसे जरायु के मुख पर पहनना पड़ता है और पुरुषों को अपनी लिङ्गेन्द्रिय पर। यदि किसी को पता न मालूम हो, तो हम एक पता बता सकते हैं। वहाँ

और फिटकरी सब दो-दो माशे ले पानी में पीस कर योनि के भीतर लगाने से योनि सिकुड़ जाती है।

(२) थोड़ी सी लौंग को घोड़ी के दूध में भिगो कर बारीक पीस ले। इस चूर्ण को योनि में रखने से योनि-सङ्कोचन होता है।

(३) अनार के छिल्के, माजूफल और लौंग तीनों सम भाग लेकर शराब में घोट ले। इसे योनि में लगाने से योनि सङ्कुचित हो जाती है।

(४) जायफल, माजूफल, अफ़ीम, छोटीमाँई और बड़ी हरड़ का छिल्का ये सब चार-चार माशे तथा लौंग और जावित्री दो-दो माशे इन सबको बराण्डी में खरल करके दो-दो माशे की गोलियाँ बना ले। एक गोली मैथुन से पहिले योनि में रक्खे। इससे योनि-सङ्कोचन तो होगा ही; लेकिन साथ ही योनि से पानी का बहना भी बन्द हो जाता है। मैथुन-समय गोली निकाल डालना चाहिए।

(५) कूट, धाय के फूल, बड़ी हरड़, भुनी हुई फिटकरी, माजूफल, हाऊबेर, लोध और अनार की छाल इन सबको कूट-कपड़-छन कर ले और शराब में मिला कर स्त्री-योनि में लेप कर दे; इस लेप से योनि सिकुड़ जाती है।

(४) गर्भावरोधक-उपाय

(१) ढाक के बीजों की राख और हींग दूध में मिला कर पीने से गर्भ नहीं रहता।

(२) शराब में बाज पक्षी की बीट १ तोले भर मिला कर खाने से गर्भ नहीं रहता।

(३) गजपीपल और पिस्ते का छिल्का समभाग लेकर पीस-छान ले। रोज छः माशा चूर्ण एक महीने तक खा लेने से गर्भ नहीं रहता।

(४) मैथुनोपरान्त स्त्री यदि उठ कर तत्काल पेशाब कर दे तो प्रायः गर्भ नहीं रहता। कभी-कभी रह भी जाता है; अतएव यह उपाय अचूक नहीं कहा जा सकता।

(५) रजस्वला होने के दिन से सोलह रात्रियाँ त्याग कर बाद में मैथुन करने से प्रायः गर्भ नहीं रहता; क्योंकि सोलह दिन के बाद गर्भ-स्थान का मुख इतना सङ्कुचित हो जाता है कि उसमें वीर्य-जन्तु घुस कर गर्भ स्थापित नहीं कर सकते, परन्तु यह अटल सिद्धान्त नहीं है, क्योंकि कई स्त्रियों को, मासिक-धर्म होने के दो-चार दिन पूर्व मैथुन करने से भी गर्भ स्थापित होता देखा जाता है।

(६) "कैप" का प्रयोग करने से भी गर्भ नहीं रह सकता। ये कैप बाजार में किसी अच्छे अङ्गरेजी दवा बेचने वालों की दूकान पर बड़े-बड़े शहरों में मिलते हैं। रबर अथवा मुलायम चमड़े के होते हैं। स्त्री-पुरुष दोनों के लिए मिलते हैं। भिन्न-भिन्न साइज के होते हैं। इस कैप को पेस्सरी (Pesserj) कहते हैं। मूल्य भी अधिक नहीं होता। स्त्रियों को इसे जरायु के मुख पर पहनना पड़ता है और पुरुषों को अपनी लिङ्गेन्द्रिय पर। यदि किसी को पता न मालूम हो, तो हम एक पता बता सकते हैं। वहाँ

से जो कुछ भी पूछना हो, पूछ सकते हैं। कैप पहिनने के पूर्व इस विषय का ज्ञान होना बड़ा आवश्यक है; पता:—

Messrs. Butta Kristo Paul & Co.,
1—3 Bonsfield Lane, Calcutta

(७) गर्भ न रहने का एक उपाय यह भी है कि जब वीर्य-स्खलन का समय आवे, तब पुरुष अपने शिश्न को बाहर निकाल कर योनि के बाहर वीर्यपात करे, लेकिन यह काम ज़रा टेढ़ी खीर है। साथ ही, इस क्रिया से रोगों के पैदा होने की भी आशङ्का रहती है।

(८) स्त्रियाँ प्रायः इस बात को जानने लगती हैं कि मैथुन-काल में पुरुष का वीर्य कब स्खलित होगा। ज्यों ही स्त्री को वीर्य-स्खलन का समय मालूम हो, त्योंही उसे अपनी फैली हुई जङ्घाओं को समेट कर मिला लेना चाहिए। ऐसा करने से भी गर्भ नहीं रहता। यह उपाय अचूक है, यह नहीं कहा जा सकता।

(९) अस्त्र-क्रिया द्वारा डिम्ब-कोष कटवा देने पर, कदापि गर्भ-स्थापन नहीं हो सकता, इससे सदा के लिए सन्तानोत्पत्ति का कार्य बन्द हो जाता है।

(१०) पाश्चात्य देशों में "क्यूरा क्रिया" द्वारा भी गर्भ-प्रतिरोध किया जाता है; किन्तु हमारे विचार से भारतवासियों के लिए यह तरीक़ा ठीक नहीं है। यह क्रिया बड़ी ही असुविधा-जनक और साथ ही स्वास्थ्यनाशक है।

(११) एक्सरे नामक बिजली के यन्त्र द्वारा भी चिरकाल

के लिए गर्भधारण करने की शक्ति लुप्त हो जाती है; परन्तु इसके विषय में भी अभी कुछ निश्चय नहीं कहा जा सकता।

हमने गर्भावरोधक कुछ उपाय यहाँ बतलाएँ हैं, इन पर बहुत से पुराने जमाने के लोग कर्मकाण्ड के प्रकाण्ड योद्धा और दिखाने मात्र के धर्मध्वजी बहुत कुछ नाक-भौं सिकोड़ेंगे, लेकिन इसमें कोई पाप नहीं है; बल्कि महान पुण्य है। गर्भ के स्थिति हो जाने पर उसे गिराना अवश्य पाप है; परन्तु गर्भ ही न रहे, इस उपाय का बतलाना पाप नहीं हो सकता। किसी वस्तु के उत्पन्न हो जाने पर उसे नाश करना बुरा है; लेकिन उस वस्तु को पैदा ही न होने देना पाप नहीं है। यद्यपि इस विषय को विस्तारपूर्वक हम अगले अध्याय में समझावेंगे, तथापि थोड़ा सा यहाँ लिख देना उचित समझते हैं।

अल्पायु, जीर्ण-शरीर, रोगी और निर्बल सन्तान से कुल, जाति, समाज, देश और राष्ट्र किसी को भी लाभ नहीं हो सकता। ऐसी सन्तानों से लाभ के बदले हानि अधिक होती है। यदि कोई स्वस्थ और बलवान सन्तान उत्पन्न कर अपना और अपने समाज का मुख उज्वल कर सके, तभी उसे सन्तान उत्पन्न करना चाहिए; अन्यथा सन्तानोत्पत्ति की चेष्टा करना भयङ्कर पाप है। यदि सन्तान पैदा हो गई और उसके भोजन-वस्त्र, लालन-पालन और शिक्षा आदि के खर्च के लिए सामर्थ्य नहीं, तो ऐसी सन्तान का न होना ही हजार दर्जे अच्छा है। देश में आज करोड़ों बच्चे बिना भोजन-वस्त्र के दिखाई पड़ते हैं। शिक्षा तो दूर रही, उनका पेट भरने

तक की सामर्थ्य उनके पैदा करने वालों में नहीं है। परिणाम यह हो रहा है कि मूर्ख और ग़ुलामों की संख्या बढ़ती जा रही है और देश की दशा दिनोंदिन गिरती जा रही है। कमाने वाले कम और खाने वाले ज्यादा हो गए। देश में दुर्भिक्ष ताण्डव-नृत्य कर रहा है। करोड़ों हमारे देश-बन्धु भूख से छटपटा कर नित्य अपने जीवन का अन्त * कर रहे हैं। हम लोग देखा करते हैं कि सन्तान पैदा होने से बहुधा लोग कठिनाई में पड़ते जाते हैं। स्त्री-पुरुष रात-दिन ईश्वर से यही प्रार्थना किया करते हैं—भगवान! अब हम लोगों को सन्तान मत दे। जब एक साधारण स्थिति के पुरुष के घर में सन्तान ही सन्तान पैदा होने लगती है, तब उसके दुख की सीमा नहीं रहती। चिन्ता के कारण उसका शरीर चर्मवेष्ठित अस्थि-पञ्जर बन जाता है। अगर लड़कियाँ पैदा हो गईं, तो सारे घर में रोना पड़ गया। इस तरह के बालकों को जन्म देने से क्या लाभ है? इसमें तो सिवाय बुराई के एक तिलमात्र भलाई नहीं; यह काम अर्थात् सन्तान पैदा न करना पाप नहीं, बल्कि पुण्य है। इसी लिए हमने यहाँ "गर्भावरोधक-उपाय" बताए हैं।

---

* इस विषय में यदि अधिक जानना हो, तो मेरी लिखी हुई "भारत में दुर्भिक्ष" नाम्नी पुस्तक देखो। हिन्दी पुस्तकों के किसी भी अच्छे विक्रेता के यहाँ से मिलेगी।

—लेखक

छठा अध्याय

(१) विवाह-काल

मारा देश भारतवर्ष एक ऐसा देश है, जिसमें पृथ्वी पर के समस्त देशों का सा जल-वायु और स्थान मौजूद है; अतएव सारे देश के लिए विवाह करने का समय एक ही होना ठीक नहीं मालूम देता। जल-वायु के भेद से यौवन भिन्न-भिन्न प्रान्तों में आगे-पीछे आता है, अतएव सभी प्रान्तों के लिए विवाह-काल एक नहीं हो सकता। अत्यन्त ग्रीष्म-देश में बालिकाओं को नौ-दस वर्ष में ही यौवन के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। जिन-जिन जगहों में सर्दी और गर्मी की अतिशय अधिकता होती है, वहाँ पर बालिकाओं को साधारणतया तेरह वर्ष की अवस्था में यौवन-चिह्न दिखाई देते हैं। बालकों को पन्द्रह से अठारह वर्ष के भीतर यौवन-लक्षण विकसित होते हैं। इसके अतिरिक्त खान-पान, सङ्ग-साथ के कारण भी युवावस्था के आगमन में अन्तर पड़ जाता है। जल-वायु के कारण अथवा अन्य किसी कारण यदि बहुत ही छोटी उम्र में यौवन का आगमन

हो जावे, तो वह व्यक्ति बहुत ही अल्पायु हो जावेगा और कुछ भी सुख-शान्ति प्राप्त न कर सकेगा। जिसके शरीर में यौवन का आगमन धीरे-धीरे होता है और शरीर का सङ्गठन भी धीरे धीरे होता है, वह चिरकाल पर्यन्त अनन्त शान्ति और सुख का आनन्द भोग करता हुआ, दीर्घ काल तक जीवित रहता है। तात्पर्य यह है कि शरीर पर यौवन-चिह्नों का विकास धीरे-धीरे होना ही उत्तम है। शीघ्रता से यौवन का आगमन अत्यन्त बुरा है।

जब यौवन के चिन्हों का विकास मानव-शरीर में दृष्टि आने लगे, तब लोगों को यह नहीं समझ लेना चाहिए कि अब विवाह का समय है। बालिका के पहिले-पहिल रजोदर्शन को देख कर घबरा जाना और यमराज के दरबार की दारुण सजा का दृश्य आँखों के आगे आ जाना बड़ी भारी अज्ञानता है। रजोदर्शन केवल इस बात का सूचक है कि अब यौवन-काल का आरम्भ हो गया है। जिस प्रकार बढ़ते हुए वृक्ष को छेड़ने से, हिलाने-डुलाने से अथवा उसकी वृद्धि को किसी प्रकार रोक देने से वह अल्पकाल में नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार विकास पाते हुए यौवन को रोकने की चेष्टा करने से अथवा उसका उपभोग करने में मनुष्य अल्पायु होकर दुख का घर बन जाता है। यह बात भूलने की नहीं है कि कन्या रजोदर्शन के तीन वर्ष बाद ही गर्भ-धारण करने के योग्य होती है। हमारे धर्मशास्त्रों में इसी कारण छत्तीस बार पिता के घर कन्या का ऋतुमती होने के पश्चात् विवाह करने का विधान है।

अब यहाँ पर यह प्रश्न पैदा होता है कि आजकल के बाल-विवाह के कारण भी देश में खूब बाल-बच्चे पैदा हो रहे हैं और सृष्टि उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है। यहाँ तक कि पिछली मनुष्य-गणना से कुछ न कुछ संख्या अधिक ही बढ़ती जा रही है। इसका उत्तर यह है—माना कि जन-संख्या बढ़ रही है; लेकिन साथ ही इस असमय विवाह के कारण बालकों की मृत्यु-संख्या बढ़ रही है। विधवाओं और विधुरों की संख्या भी उन्नति पा रही है। मनुष्य अल्पायु, रोगी और निर्धन होते जा रहे हैं। अज्ञान-वश प्राकृतिक नियमों को लाँघ कर, छोटी-छोटी बालिकाएँ गर्भ धारण कर देश में अल्पायु और रोगी सन्तान प्रसव कर रही हैं। जो मनुष्य पूर्ण यौवन प्राप्त होने के पूर्व ही उसका उपभोग आरम्भ कर देते हैं, उनका जीवन घुने हुए बाँस की तरह हो जाता है।

जब गर्भ में बालक होता है, तब गर्भवती की अधिकांश शक्ति उस गर्भस्थ नवीन जीव के पालन-पोषण में व्यय होती है। विचारशील पुरुषों के लिए यह विचारने की बात है कि एक अल्प वयस्का गर्भवती अपने गर्भस्थ जीव को किस प्रकार पूर्णता प्रदान कर सकती है; जब कि स्वयँ उसका ही शरीर अभी अपूर्ण है। ऐसे गर्भ में रहने वाला बालक क्या खाक पुष्टि प्राप्त कर सकता है? इसका परिणाम दोनों के लिए बुरा होता है; जननी भी पुष्ट नहीं हो सकती और बच्चे भी रोगी, दुबले तथा अल्पायु पैदा होते हैं। ऐसे बच्चों के लिए पैदा होते ही डॉक्टर, वैद्य और

हकीमों की आवश्यकता पड़ने लगती है। हा, कैसी दुर्दशा है! जिनको संसार में पदार्पण करते ही रोग ने घेर रक्खा है, जिनके जच्चाखाने में ही दवाइयों की बोतलें पहुँच चुकी हैं, वे कैसे अपना जीवन-काल पूर्ण करेंगे? ऐसी सन्तानों से कौन सुख प्राप्त कर सकता है?

यदि भगवत्कृपा से एक-दो बच्चे कहीं सबल और पुष्ट देखे भी जाते हैं, तो वे पूर्ण यौवन प्राप्त होने के पूर्व ही अपनी जीवन-लीला की यवनिका डाल कर चल बसते हैं। अल्पायु में पिता और माता बनने वाले पुरुष और स्त्री सर्वदा के लिए श्री और सौन्दर्य से हाथ धो बैठते हैं। उनके शरीर में अनेक प्रकार के रोग अपना अड्डा जमा लेते हैं। जो अपरिणामदर्शी युवक और युवतियाँ विवाह-काल के ही पूर्व ही व्याह दिए जाते हैं, उन लोगों का सुख स्वप्न की भाँति अल्प समय में ही नष्ट हो जाता है। इन्द्रिय-लालसा की पूर्ति के लिए समय से पहिले जो लोग विवाह करते हैं, उनकी दशा ठीक वैसी ही होती है, जैसी कि विचारशून्य कर्णधार के हाथ में तूफ़ान के समय नाव में बैठने वाले की दशा होती है। ऐसे समय यदि मनुष्य सावधान न होगा, तो उसे दुख झेलना पड़ेगा; और कोई भी उसे दुख के पञ्जे से नहीं छुड़ा सकेगा।

विवाह थोड़े समय के लिए किया हुआ स्त्री-पुरुष का समझौता (Agreement) नहीं है। विवाह विषय-सुख प्राप्ति का सट्टा नहीं है; बल्कि आमरण साथ में रह कर उत्तम कार्य करने के लिए, और उत्तम सन्तान पैदा करने के लिए ही एक धार्मिक

पवित्र किया है। यह वह किया है, जिसके द्वारा एक वार मन, वचन और कर्म से जुड़े हुए शरीर पृथक् नहीं हो सकते; और यदि पृथक् हो जावें, तो वह विवाह नहीं कहा जा सकता। विवाह एक अत्यावश्यक कार्य अथवा कर्त्तव्य है। विवाह-समय आने पर स्त्री-पुरुषों को विवाह करना ही चाहिए, यह प्रकृति की पवित्र आज्ञा है। संसार में पुरुष अथवा स्त्री कोई भी एकाकी नहीं रह सकता। विना स्त्री का पुरुष आधा मनुष्य है—अपङ्ग है। मनु ने कहा है :—

न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते।
तयाहि सहितः सर्वान् पुरुषार्थान् समश्नुते॥

हिन्दू-धर्मशास्त्रकारों ने गृहस्थाश्रम को अन्य समस्त आश्रमों से उच्च माना है; लेकिन यह आश्रम तभी उच्च है, जब कि विवाह, विवाह योग्य उम्र में किया जावे। अनमेल विवाह कदापि विवाह नहीं कहा जा सकता। छोटे-छोटे बालकों का विवाह एक खेल है। ऐसे विवाहों से देश की दुर्गति होती जा रही है। सर्वत्र हाहाकार का कोलाहल-मच रहा है!

अज्ञानता ने देश को इस प्रकार धर दबोचा है कि आज हिन्दू-जाति और किसी अंश में अन्य जातियाँ भी अपनी छोटी-छोटी सन्तानों का विवाह करने की चिन्ता में निमग्न देखी जाती हैं। सात-आठ वर्ष की अवस्था तक अपनी पुत्री की यदि सगाई न हो गई तो उसके मूर्ख माता-पिता को भोजन भी अच्छी तरह नहीं भाता; और यदि कन्या १२-१३ वर्ष की हो गई और

उसका विवाह न हुआ, तो माता-पिता सिर पकड़ कर रोने बै
जाते हैं। कैसा अन्याय है? मूर्खता के कारण आज माता-पि
अपनी सन्तानों को किस प्रकार वर्बाद कर रहे हैं? तात्पर्य य
है कि आजकल विवाह-काल निश्चित नहीं है। कहीं दुधमुँहे बच्च
का विवाह हो रहा है, तो कहीं साठ वर्ष के बुड्ढे के साथ आ
वर्ष की बालिका ब्याही जा रही है। इससे बढ़ कर सर्वनाश क
ढङ्ग और क्या हो सकता है?

हमारे मत से पूर्ण यौवन-काल में ही विवाह होना परमावश्यक
है। यौवन आरम्भ होने के पूर्व या आरम्भ होते ही विवाह करके
वृद्धि-क्रम में बाधा नहीं पहुँचानी चाहिए। बालिका को जब से
ऋतु-दर्शन आरम्भ हो, तब से ३ साल बाद विवाह के योग्य
समझना चाहिए और बालक को यौवन-चिह्नों के प्रकट होने के
५-६ वर्ष बाद विवाह के योग्य मानना चाहिए। इस अवस्था तक
बालक-बालिकाओं के शरीर की वृद्धि होती रहती है। वृद्धि-काल
में उसके नाश का कार्य आरम्भ कर देना बड़ी भारी ग़लती
है। वैद्यकशास्त्रों में लिखा है :—

पूर्ण षोडशवर्षा स्त्री पूर्ण विंशेन सङ्गता।
शुद्धे गर्भाशये मार्गे रक्ते शुक्रेऽनिलेहृदि॥
वीर्यवन्तं सुतं सूते............................॥

अर्थात्—बीस वर्ष की अवस्था का पुरुष १६ वर्ष की स्त्री में गर्भाधान
करे।

महर्षि सुश्रुत लिखते हैं :—

अथास्मैपञ्चविंशति वर्षाय षोडश वर्षां ।

पत्नीभावहेतु पित्र्य धर्मार्थ काम प्रजाःप्राप्स्यतीति॥

अर्थात्—विवाह काल में २५ वर्ष का पुरुष और १६ वर्ष की स्त्री होनी चाहिए।

हमारे विचार से २५ वर्ष की अवस्था तक पुरुष का वृद्धि-विकास और १६ वर्ष की अवस्था तक स्त्री का वृद्धि-विकास भली प्रकार हो जाता है। इसी उम्र में विवाह होना चाहिए। यही विवाह का असली समय है। जो इस अवस्था में विवाह करते हैं, वे दीर्घायु, सुख, ऐश्वर्य, आनन्द, स्वास्थ्य, श्री और दीर्घायु सन्तान आदि का जीवन पर्यन्त सुखभोग करते हैं और भावी सन्तान के लिए भी सुख-सामग्री प्रदान कर जाते हैं।

यदि आप सुखी रहना चाहते हैं, गृहस्थाश्रम को स्वर्ग का नन्दन-वन बनाना चाहते हैं और इस आश्रम में रह कर शान्ति चाहते हैं, तो विवाह-काल में ही विवाह करना चाहिए। समय से पहिले विवाह-क्षेत्र में कूद कर अपना और अपने वंश का नाश नहीं करना चाहिए।

मनुष्य के लिए विवाह-काल कौनसा है ? अर्थात् किस उम्र में विवाह करना चाहिए, यह हमने अच्छी तरह इस प्रकरण में समझाने का प्रयत्न किया है। अब हम अगले प्रकरण में यह बतलावेंगे कि लड़के-लड़कियों का निर्वाचन किस तरह होना चाहिए ?

(२) वर-कन्या निर्वाचन

यह बात हम पीछे लिख आए हैं कि पुरुष को २४-२५ व की अवस्था के पूर्व विवाह कदापि न करना चाहिए। ज पुरुष विवाह योग्य हो जावे, तब उसे अपनी सहधर्मिणी तला करनी चाहिए। यह काम साधारण नहीं है, बाजार का सौ नहीं है, चार दिन का काम नहीं है, यह तो एक ऐसे साथी व निर्वाचन-कार्य है, जिसके साथ सारा जीवन बिताना है और जिस सहयोग से अपने कुल की रक्षा के निमित्त कुल-तन्तु उत्पन्न कर है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का उपाय है। इस चुना में यदि ज़रा सी भी भूल हो गई, तो सारा मज़ा किरकिरा हो जावेगा विवाह के द्वारा जो सुख और शान्ति मिलनी चाहिए, वह दुख औ घोर अशान्ति के रूप में परिणत हो जावेगी। आज यह पवित्र आश्र इतना दुखदायी और अशान्ति का घर इसीलिए बना हुआ है कि "निर्वाचन" कार्य ठीक नहीं है। आजकल निर्वाचन होता ही नहीं यदि यह कह दें तो अत्युक्ति न होगी। निर्वाचन-कार्य आजकल स्वार्थी, लोलुप और मूर्ख माता-पिताओं के हाथ में होने के कारण सर्वत्र हाहाकार मचा हुआ है। इस निर्वाचन से हम लोग धीरे-धीरे सर्वनाश की ओर बढ़ते जा रहे हैं! अपनी सन्तान का विवाह करने में माँ-बाप बारम्बार अपनी सुविधा अथवा लोभ में फँसकर चुनाव की ओर ध्यान नहीं देते। आज इस देश में ऐसे अधम माँ-बापों की कमी नहीं है, जो अपनी १०-१२ वर्ष की लड़कियाँ

को रुपया लेकर जर्जर शरीर वृद्ध पुरुषों को सौंप देते हैं। स्वार्थ-सिद्धि के लिए अपने बालक-बालिकाओं के गले पर यह अनमेल विवाह रूपी भोंठी छुरी चलाते हुए उन्हें जरा भी लज्जा और दुख नहीं होता। कोई पैसे के लोभ से, कोई प्रतिष्ठा के लोभ से, कोई नौकरी-पेशे के लोभ से और कोई किसी दबाव से अपने पुत्र-पुत्रियों को बिना आगा-पीछा सोचे, आँखें मूँद कर एक-दूसरे के साथ ब्याह देते हैं। लड़की को लड़का ढूँढ देना और लड़के के लिए लड़की तलाश करके उनकी आपस में खोपड़ी भिड़ा देना ही आजकल विवाह का उद्देश मान लिया है। इसमें सारे निर्वाचन-कार्य की इतिश्री हो जाती है।

आजकल देखने में आता है कि धनवान व्यक्ति किसी धन-वान के यहाँ ही अपनी लड़की देगा। मानो वह अपनी लड़की का विवाह रुपये-पैसे के साथ कर रहा हो। छोटी-छोटी उम्र में सगाई मँगनी कर दी जाती है, अतएव बचपन में लड़की-लड़के के भले बुरे, मूर्ख-विद्वान, सच्चरित्र और दुश्चरित्र होने का कुछ भी अनुमान नहीं किया जा सकता। कुछ लोग नाई और ब्राह्मण को अपना प्रतिनिधि बना कर वर-कन्या के चुनाव के लिए भेज देते हैं और जो कुछ भी वे कह देते हैं, उसी पर विश्वास करके विवाह कर देते हैं। इसके अतिरिक्त जन्म-पत्री भी एक ऐसा साधन मान लिया गया है, जिसके द्वारा प्रायः निर्वाचन होता है। राशि, गण, वर्ग और ग्रह मिला लिए; बस लड़के-लड़की का चुनाव हो गया। इस कार्य को कभी-कभी ऐसे निरक्षर भट्टाचार्य महाराज

तक भी करते हैं, जिन्हें इस विषय का कुछ भी ज्ञान नहीं होता। जन्मपत्रियाँ देख कर ही दोनों का चुनाव कर लिया जाता है। वैसे भले ही दोनों का जोड़ा अच्छा हो; लेकिन यदि जन्मपत्री का जोड़ा न मिला, तो सब काम धूल हो जाता है। जब से देश में इस प्रकार का अज्ञान बढ़ गया, तभी से गृहस्थाश्रम हाहाकार का अखाड़ा हो गया।

न जाने मनुष्य आजकल निर्वाचन के विषय में इतने निराश क्यों हो गए हैं ? देखने में आता है कि लोग अपनी गायों के लिए अच्छा साँड तलाश करते हैं, घोड़ियों के लिए अच्छा घोड़ा ढूँढ़ते हैं; यहाँ तक कि अपनी कुतियों के लिए अच्छा कुत्ता खोजते हैं, किन्तु हा ! खेद कि अपनी सन्तान का जोड़ा ढूँढ़ते वक्त उनकी अक़्ल पर पानी फिर जाता है ! एक पैसे की मिट्टी की हाँडी ख़रीदते वक्त मनुष्य अपनी सारी बुद्धि उसके ख़रीदने में ख़र्च कर डालता है; लेकिन अपनी सन्तान के लिए जोड़ा तलाश करने में न जाने उसकी अक्ल पर क्यों अज्ञान का परदा गिर जाता है ? इस बेजोड़ विवाह का जो भयङ्कर परिणाम हो रहा है, उससे कोई भी घर अछूता नहीं रहा है। राँडों और रँडुओं की संख्या इसी का परिणाम है। मूर्ख, अल्पायु, रोगी और निकम्मी सन्तान का पैदा होना इसी का फल है। स्त्री-पुरुषों के आत्मघात का मूल कारण यही है। बालकों की मृत्यु-संख्या में वृद्धि होना इसी का प्रसाद है। व्यभिचार का प्रचार, वेश्याओं की वृद्धि इसी सबब से हो रही है। कहाँ तक कहें, हमारे सर्वनाश का मूल इसी में मौजूद है।

निर्वाचन स्वयँ करना चाहिए या माता-पिता करें ; यह बात अब यहाँ विचारणीय है। स्वयँ करने की अपेक्षा यदि माता-पिता निःस्वार्थ-भाव से अपनी मङ्गल-कामना के लिए निर्वाचन करें, तो बहुत ही अच्छी बात है। कारण कि नवयुवक उतना अनुभवशील नहीं होता, जितना कि उसके माता-पिता इस विषय में अनुभव कर चुके हैं। इसीलिए जो काम अनुभवी व्यक्ति करेगा, वह अनुभव-शून्य व्यक्ति के कार्य से लाख दर्जा उत्तम होगा। माता-पिता का यह पवित्र कर्त्तव्य है कि वे अपनी वंश-रक्षा के लिए और अपनी कीर्त्ति के लिए बहुत ही सोच-समझ कर निर्वाचन करें। नाई और ब्राह्मणों के भरोसे वर-कन्या का सिर भिड़ा देना अब ठीक नहीं है। इन लोगों पर अब विश्वास करने का समय नहीं है। ब्राह्मणों को रिश्वत लेकर नई जन्म-पत्रियाँ बनाते हुए देखा जाता है। ब्राह्मणों की भाँति नाई भी घूस-पथ्थर से बड़े-बड़े अनर्थ करते हैं। निर्वाचन के लिए इनकी सहायता लेने की जरूरत नहीं है; स्वयँ इस कार्य को करना चाहिए। अपनी सन्तान के स्वभाव, गुण, कर्म आदि के अनुकूल जोड़ा तलाश करना चाहिए। अत्यन्त ख़ूबसूरत लड़की के लिए बदसूरत लड़का कदापि उचित नहीं है और न अत्यन्त रूप-सम्पन्न लड़के के लिए बदसूरत लड़की ही ठीक है। विद्वान पुरुष के साथ रूप-सम्पन्न, किन्तु महा मूर्ख स्त्री का जोड़ा मिलाना अनुचित है। इसी प्रकार विदुषी नारी के साथ अपढ़ पुरुष का विवाह असङ्गत है। चालीस वर्ष के बुड्ढे को आठ-दस वर्ष की लड़की देना और पन्द्रह-सोलह वर्ष की लड़की के

साथ बारह-तेरह वर्ष का लड़का मिलाना घोर अन्याय है। अतएव माता-पिता को इन सब बातों का ध्यान रख कर ही चुनाव करना चाहिए। यदि वे अपने को इस योग्य न समझें, तो व्यर्थ ही इस उलझन में न पड़ें। जब लड़के-लड़की होशियार होंगे, तब स्वयं अपना जोड़ा तलाश कर लेंगे।

विवाह एक अत्यन्त पवित्र एवं उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य है। यह खेल नहीं है, जैसा कि आजकल होता है। माँ-बाप खेल की शक्ल में इसे करते हैं। बागबाड़ी, आतिशबाजी, बाजा-गाजा, रण्डी, भाँड, भड़ुवे, धूमधड़ाका यह सब कुछ खिलवाड़ है। नाम कमाने के लिए मिष्टान्न-भोजन में रुपया बर्बाद कर दिया जाता है। सारांश यह है कि माता-पिता खेल, कूद, तमाशे आदि में विवाह के बहाने अपना समय और पैसा गँवाते हैं; लेकिन जिनका विवाह हो रहा है, उनकी उन्हें सिवाय खिलाने-पिलाने के और कोई चिन्ता ही नहीं है। चाहे कन्या वर से दो फीट ऊँची हो या वर कन्या से चार फीट ऊँचा हो! कोई कैसा हो, लँगड़ा, लूला, रोगी, कोढ़ी, गूँगा, अन्धा, बहरा, काना, कुबड़ा, मूर्ख, विद्वान, मर्द और नामर्द आदि कैसा भी क्यों न हो, पुरुष और स्त्री को पास बिठा कर पाणिग्रहण करा देने से काम है।

जो पुरुष अपने लिए स्वयं अपनी अर्धाङ्गिनी ढूँढ़ना चाहें, वे अवश्य ढूँढ़ें। यह सबसे अच्छी बात है; क्योंकि अपनी पसन्द की हुई वस्तु सबको अच्छी लगती है। भले ही उसे दूसरे लोग बुरी कहें। खुद जोड़ा तलाश करें, इससे बढ़ कर

दूसरी कोई बात नहीं है। यह ऊँचे दर्जे का निर्वाचन है। कन्या की केवल यौवन-श्री और रूप-लावण्य पर ही लट्टू हो जाने से काम नहीं चलेगा। जिस प्रकार अच्छे रङ्ग वाले, देखने में खूबसूरत आम कभी-कभी खट्टे और बेस्वाद निकल जाते हैं, उसी प्रकार रूप-यौवनसम्पन्ना स्त्री भी कभी-कभी कुलटा निकल जाती है। उसका स्वास्थ्य, शिक्षा, गुण, स्वभाव, कार्य और वंश के विषय में अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए। इस विषय में प्राचीन ऋषियों ने लिखा है :—

नोद्वहेत्कपिलां कन्यां नाधिकाङ्गी न रोगिणीम्।
नालोमिकां नातिलोमां न वाचाटां न पिङ्गलाम्॥
नर्क्षवृक्षनदीनाम्नीं नान्त्यपर्वतनामिकाम्।
नपक्ष्यहिप्रेष्यनाम्नीं न च भीषणनामिकाम्॥
अव्यङ्गाङ्गीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम्।
तनुलोमकेशदशनां मृद्वङ्गीमुद्वहेस्त्रियम्॥

अर्थात्—पीले केशवाली, अधिक अङ्गवाली, रोगिणी, जिसके शरीर पर रोम न हों अथवा अधिक रोम हों, बहुत बोलने वाली, पीले नेत्र वाली। नक्षत्र, वृक्ष, नदी, म्लेच्छ, पर्वत, पक्षी, सर्प और दासत्व सूचक जिसका नाम हो अथवा भयङ्कर नाम हो, ऐसी कन्या से कदापि विवाह न करे। जो अङ्गहीन न हो, जिसका सुन्दर, सीधा, प्रिय नाम हो, जिसकी चाल हंस और हाथी के समान हो, जिसके रोम और दाँत छोटे हों, ऐसी कोमलाङ्गी कन्या से विवाह करना चाहिए।

कैसे पुरुष के साथ विवाह न करना चाहिए, इस विषय में भी लिखा है :—

हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोम शार्शसम्।
क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रि कुष्ठि कुलानि च॥

अर्थात्—जो पुरुष क्रियाशून्य (नामर्द) हो, जिसके कुल में पुत्र न उत्पन्न होता हो, बेपढ़ा हो, जिसके शरीर पर रोम हों, जिसके कुल में बवासीर, क्षयी, मन्दाग्नि, मृगी, श्वेत कुष्ठ और दूसरे प्रकार के कुष्ठ हों ; ऐसे पुरुष के साथ भूल कर भी विवाह न करना चाहिए।

उपरोक्त सब बातें निर्वाचन-समय में जानने योग्य हैं। इसके अतिरिक्त और भी बातें ध्यान में रखने की हैं। जैसे—मादक पदार्थों के सेवन करने वाले पुरुष को, कन्या को चाहिए कि कदापि अपना पति न बनावे। शराब, अफ़ीम, गाँजा, भाँग, चण्डू, चरस, तमाखू, कोकेन प्रभृति मादक पदार्थों के खाने-पीने वाले को विवाह की इच्छा नहीं करनी चाहिए। मादक पदार्थों का परिणाम सन्तान पर अवश्य होता है। हम यहाँ एक शराबी कुटुम्ब का चित्र देते हैं, जिससे उसके भयङ्कर परिणामों का पता लगता है।

इस चित्र से कोई यह अनुमान न करले कि शराब के अतिरिक्त अन्य नशे अच्छे हैं। नशे सभी नाश करने वाले हैं। गाँजा, भाँग, अफ़ीम, तमाखू आदि सब नशे क्षणिक उत्तेजक, किन्तु वास्तव में नपुंसकता पैदा करने वाले हैं। नशेबाजों के साथ विवाह करना कदापि अच्छा नहीं है।

एक शराबी माता-पिता की सन्तानों का उदाहरण

पिता
जन्म १८३०
वंशपरम्परा में कोई भी शराबी या पागल नहीं था।
बचपन से ही बहुत शराब पीने लग गया था।

पागलख़ाना
भरती हुआ १२-६-७१, १६-१-९२
छूटा ११-७-७६, ८-२-९२

माता
वंशपरम्परा में कोई भी पागल अथवा शराबी नहीं था।

पुत्री	पुत्री	पुत्र	पुत्री	पुत्र	पुत्री पुत्री पुत्री
जन्म सन् १८५६ पागलख़ाने में २४-१०-७४ को भरती हुई और फिर छूट कर कई बार गई।	जन्म १८६० पागलख़ाने में ६-१०-७४ को भरती हुई। कई बार छूटी और फिर भरती हुई।	जन्म १८६२ पागलख़ाने में २६-६-७७ को गया और छूटकर फिर एक बार पागलख़ाने में भरती हुआ।	जन्म १८६७ ता० २-१-९२ को पागलख़ाने में भरती हुई। छूटकर फिर एक बार पागलख़ाने में गई।	जन्म १८७२ ता० २४-११-८८ को पागलख़ाने में भरती हुआ और ४-६-१९०२ में क्षय रोग से मर गया।	कोई भी पागलख़ाने में नहीं गई।

स्त्री-पुरुषों में से किसी को वंशपरम्परागत कोई रोग तो नहीं है; इस वात की छान-बीन निर्वाचन के समय वड़ी ही युक्ति से करनी चाहिए। वंशपरम्परा में जो वात चली आती है, वह पीढ़ियों तक पीछा नहीं छोड़ती। वहुतेरे ऐसे भयङ्कर रोग होते हैं जो पीढ़ियों तक चले जाते हैं। यदि निर्वाचन के समय इन बातों का ध्यान न रक्खा जावेगा, तो वहुत से रोग कई कुलों में पहुँच जावेंगे और एक समय वह आ जावेगा जब कि समस्त संसार रोग-ग्रस्त हो जावेगा। रोग ही वंशपरम्परा तक पीछा नहीं छोड़ता, यह वात नहीं है; वल्कि यहाँ तक भी देखा गया है कि स्वभाव और वर्ण भी वंशपरम्परा तक चला जाता है। डॉक्टर मेण्डले ने वहुत ही खोज और अनुभव के वाद यह सिद्ध किया है कि वर्ण का प्रभाव भी सन्तान पर होता है। इस वात को मि० वेस्टन ने वहुत ही अच्छी तरह समझाया है। उन्होंने सफ़ेद और काले रङ्ग के मुर्गे-मुर्गियों को मिला कर उदाहरण दिया है। हम भी पाठकों को नीचे के चित्र द्वारा इस विषय को स्पष्ट करके वतावेंगे।

ये मुर्गे-मुर्गी दोगले नहीं थे। काले और सफ़ेद मुर्गे-मुर्गी का जोड़ा मिलाने से कुछ भूरे रङ्ग के वच्चे पैदा हुए। अब इनसे जो वंश चला, उससे काले, भूरे और सफ़ेद वच्चे पैदा हुए, अर्थात् पूर्व की दो पीढ़ियों का वर्ण फिर इनमें आ गया। तात्पर्य यह है कि वंशपरम्परागत गुण, कर्म, स्वभाव, वर्ण, रोग आदि चले ही जाते हैं; अतएव निर्वाचन के पूर्व वहुत-कुछ सोचने-विचारने की आवश्यकता है। निम्न-लिखित वातें वंशपरम्परागत हो सकती हैं:—

(१) निर्बल यकृत (२) निर्बल वातरज्जु (३) निर्बल आमाशय (४) विलासिता (५) वर्ण (६) शारीरिक दोष (७) रोग (८) गर्मी (उपदंश) (९) कैंसर (१०) उन्माद (११) बधिरता (१२) रक्तपात प्रवृत्ति (१३) हड्डियों की निर्बलता (१४) मोतिया बिन्दु (१५) प्रमेह (१६) मद्यजात रोग (१७) आधासीसी (१८) मृगी (१९) मानसिक निर्बलता (२०) सन्धिवात (२१) हाथ-पैर का कम्प (२२) कोढ़ (२३) अँगुलियों का छोटा होना (२४) अधिक अँगुलियाँ होना (२५) पागलपन इत्यादि।

निर्वाचन के समय इन बातों का विचार करना बहुत ही जरूरी है, बाह्य सौन्दर्य पर मुग्ध होकर ही विवाह न कर लेना चाहिए। रूप-यौवन पर मोहित होकर विवाह करने वालों का विवाह-सुख चिरस्थायी नहीं हो सकता; क्योंकि रूप-यौवन अस्थायी है। एक न एक दिन उसका अन्त होगा; और साथ ही रूप-यौवन के पुजारियों के मन से प्रेम भी कूच कर जावेगा। अतएव चुनाव में बड़ी ही सावधानी की आवश्यकता है। रुग्ण व दोषपूर्ण स्त्री-पुरुषों को कदापि विवाह न करना चाहिए। "जो अपना दोष छिपाकर विवाह करते हैं, वे चिरकाल पर्यन्त कुम्भीपाक नरक में पड़कर असह्य दुख सहते हैं" ऐसा हमारे शास्त्रों में लिखा है।

जो स्त्रियाँ कृत्रिम उपायों द्वारा अपने शरीर को प्रकृति के विरुद्ध साँचे में ढालती हैं, उनके साथ विवाह नहीं करना चाहिए। कई देशों की स्त्रियाँ अपनी कमर को कस कर पतली बनाती

हैं। कुछ देशों में छोटे पैर रखने के लिए पैरों में लोहे की जूतियें पहना दी जाती हैं। सौन्दर्य-प्राप्ति के लिए इन कृत्रिम उपायों का अवलम्बन करने से स्वास्थ्य को बड़ा भारी धक्का पहुँचता है। इस विलासिता में मग्न होने के कारण, जो स्त्रियाँ रोग का घर बन जाती हैं, उनके साथ कदापि विवाह नहीं करना चाहिए।

लम्बे-चौड़े, हट्टे-कट्टे पुरुषों को नाटे क़द की स्त्रियों के साथ विवाह नहीं करना चाहिए। यदि इस प्रकार का निर्वाचन हो भी गया, तो सन्तान प्रायः अल्पायु होती है। जो लोग बाल-विवाह करते हैं, उन्हें यह बात जरा सोचनी चाहिए; क्योंकि बचपन में लड़के-लड़की के डील-डौल का अन्दाज़ लगा लेना असम्भव है। लम्बे क़द का पुरुष यदि नाटे क़द की औरत के साथ विवाह कर ले, तो सिवाय दुख के और कुछ भी नहीं मिलता। कभी-कभी तो प्रसव-काल में स्त्री के प्राण तक चले जाते हैं। हाँ, लम्बी क़द वाली स्त्रियों को सभी तरह के पुरुष उपयुक्त हो सकते हैं।

अशिक्षित और आलसी स्त्रियों के साथ विवाह करना ठीक नहीं। अशिक्षित स्त्रियों के कारण ही आज सर्वत्र हाहाकार और अशान्ति का साम्राज्य है। शिक्षित से मतलब पढ़ी-लिखी स्त्री से नहीं है; बल्कि समझदार और कार्य-कुशल से है। अगर पढ़ी-लिखी हो, तो कहना ही क्या है; सोना और सुगन्ध मिल जावे। पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ अपने पति के प्रति अपना कर्त्तव्य जानने लगती हैं, अतएव अशिक्षिता को कभी अपनी अर्द्धाङ्गिनी नहीं बनाना चाहिए। इसी प्रकार आलस्य स्त्रियों का दूषण है। जो स्त्री आलसी

चित्र-नम्बर ६

(बढ़ाया हुआ आकार)
वृद्धि-क्रम (तीसरा सप्ताह)

चित्र-नम्बर १०

(बढ़ाया हुआ)
४ सप्ताह का भ्रूण

Fine Art Printing Cottage, Allahabad.
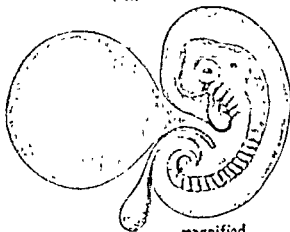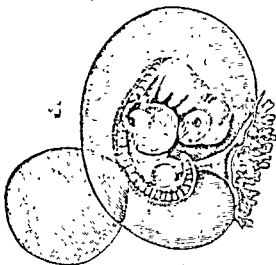
होती है, वह अपने परिवार में महान् अशान्ति उत्पन्न कर देती है। ऐसी स्त्रियाँ कभी भी सुगृहिणी नहीं हो सकतीं। जो स्त्री सुस्त्री नहीं, वह सुसन्तान उत्पन्न नहीं कर सकती; क्योंकि जैसी बेल होती है, वैसे ही फल भी लगते हैं।

स्वगोत्र तथा सपिण्ड स्त्रियों के साथ विवाह न करना चाहिए। हमारे दूरदर्शी ऋषियों ने कहा है :—

असपिण्डाच या मातुरसगोत्राच या पितुः।
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने॥

अर्थात्—स्वगोत्र तथा सपिण्ड की कन्या विवाह के लिए वर्जित है। इस प्रकार का विवाह कदापि सुखप्रद नहीं हो सकता। किसी को भी ऐसा विवाह नहीं करना चाहिए। जो ऐसा विवाह करते हैं, उनका कुल एक-दो पीढ़ी आगे चल कर नष्ट हो जाता है। इस बात की परीक्षा कुत्ते आदि प्राणियों पर करके देखी गई, तो ऐसा निर्वाचन कुलनाशक सिद्ध हुआ।

जिन कन्याओं की माता अपने पति को छोड़ कर दूसरे पति के साथ रहती हों, उनके साथ भी विवाह करना ठीक नहीं है। जिन स्त्रियों के हृदय में धार्मिक विचार न हों, जो माता-पिता और ईश्वर से न डरती हों, जो कलह-प्रिय हों, जिन्हें बालक न सुहाते हों, जो अपने शरीर को कपड़े और जेवरों से सजाने एवम् आमोद-प्रमोद में ही दिन बिताने में समय खोती हों, जो नाचने-गाने में ही मस्त रहती हों, ऐसी स्त्रियों से भूल कर भी विवाह न करना चाहिए।

जो स्त्रियाँ अपने दाँतों को साफ़ नहीं रखतीं, जिनके वस्त्रों से बदबू आती हो, जो स्नान न करती हों, जो रात-दिन सोने में ही व्यतीत करती हों, जिनकी नींद कुम्भकर्ण के समान हो, जिन्हें घूमना पसन्द हो, जो बहुत बोलती हों, जो उम्र में बड़ी अथवा बहुत ही छोटी हों, जो निर्दयी हों, ऐसी स्त्रियों से विवाह न करना चाहिए। ऐसी स्त्रियों को अपनी अर्द्धाङ्गिनी बना कर जो पुरुष गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है, वह अपने हाथों अपने को नरकाश्रम में निवास कराता है।

विवाह करने के पूर्व उपरोक्त बातों पर प्रत्येक पुरुष अथवा स्त्री को खूब बारीक नजर से विचार कर लेना चाहिए; क्योंकि यह निर्वाचन २-४ दिन की बात नहीं है, यह तो उम्र भर के लिए अपना जोड़ा ढूँढ़ना है। विवाह का उद्देश इस स्थूल शरीर का मेल-मिलाप नहीं है; बल्कि एक आत्मा का दूसरी आत्मा के साथ अभिन्नता स्थापित करना है। हम जोर देकर कह सकते हैं कि जो व्यक्ति हमारे लिखे अनुसार बहुत ही सोच-समझ कर, देख-सुन कर अपने लिए अपना जोड़ा चुनेगा, वह इस संसार में गृहस्थाश्रम को स्वर्गीय सुख से भी अधिक भोग सकेगा। आजकल की वैवाहिक-पद्धति एकदम निन्दनीय और अभाग्य है। निर्वाचन-काल में वर-कन्या की उम्र का भी ध्यान रखना चाहिए। ऊँट-बकरी का जोड़ा मिलाना बड़ा भारी पाप है। विवाह के समय स्त्री-पुरुष की उम्र में कम से कम ७-८ वर्ष का और अधिक से अधिक १० वर्ष का अन्तर, अर्थात् पति पत्नी से

इतना बड़ा होना आवश्यक है। यदि पत्नी से पति कम से कम सात-आठ वर्ष भी बड़ा न होगा, तो इच्छित सन्तान का उत्पन्न होना बिलकुल असम्भव है। प्रत्येक पुरुष को चाहिए कि चौबीस वर्ष के पहिले कदापि मैथुन न करे, और प्रत्येक स्त्री को चाहिए कि सोलह वर्ष के पूर्व कदापि प्रसङ्ग न करे। जब तक इस प्रकार का निर्वाचन न होगा, तब तक उत्तम सन्तान उत्पन्न न हो सकेगी।

विवाह के लिए किस प्रकार निर्वाचन होना चाहिए, किस उम्र में विवाह होना चाहिए, यह बात हम इस प्रकरण में अच्छी तरह समझा चुके। अब हम अगले प्रकरण में "स्त्री-प्रसङ्ग" पर विचार करेंगे।

(३) स्त्री-प्रसङ्ग

उस विश्व-सूत्रधार परमात्मा ने स्त्री और पुरुष की रचना इसीलिए की है कि उसकी मानवी सृष्टि चली जावे। अगर उसकी यह इच्छा न होती, तो पुरुष ही पुरुष अथवा स्त्री ही स्त्री उत्पन्न करता; किन्तु इस रचना में उसका आदेश है कि "स्त्री-पुरुष मैथुन द्वारा सृष्टि-क्रम को चालू रक्खें।" आज विषयान्ध पुरुषों ने ईश्वरीय आज्ञा को भङ्ग कर, इस पवित्र क्रिया को अपवित्र कर डाला। आज स्त्री-प्रसङ्ग नित्य का खेल सा हो गया है। आज स्त्री-प्रसङ्ग सृष्टि की वृद्धि के लिए नहीं; बल्कि ऐशो-आराम का सामान बन गया है। सौभाग्य से ही कोई भाग्यवान्

ऐसा मिलेगा, जो केवल अपत्योत्पादन के लिए ही स्त्री-प्रस
करता हो ! आज सन्तान पैदा करने के लिए स्त्री-प्रसङ्ग नहीं कि
जा रहा है; वल्कि अपना वीर्यपात करने के लिए किया जाता है
रात-दिन के वीर्यपात से कभी एकाध दिन पुरुष का निकम
निर्वल, निस्सार वीर्य गर्भाशय में जा गिरता है; जिससे गर्भ स्थापि
हो जाता है। इस प्रकार गर्भ रह जाता है और समय पर ए
क्षीणकाय, दुर्वल, रोगी और अल्पायु वालक उस गर्भ से इ
संसार में पैदा हो जाता है। उत्तम सन्तान अथवा इच्छित सन्त
पैदा करने के लिए आज स्त्री-प्रसङ्ग नहीं रहा। आजकल इस दे
में ऐसे अधम, पापी, नारकी स्त्री-पुरुषों की संख्या असंख्य है,
गर्भ रह जाने पर भी आपस में व्यभिचार करते रहते हैं। क्या
इसे सन्तान प्राप्ति के लिए स्त्री-प्रसङ्ग कहें या अपने वंश का स
नाश ! मानव-जाति आज पशुओं से भी गई वीती हो चुकी है
हम लोगों से तो पशु ही अच्छे हैं; क्योंकि वे जो ऋतुगामी है
गर्भधारण के पश्चात् पशुवर्ग मैथुन नहीं करता। धिक्कार है हमा
मनुष्यता पर !! पशुओं से भी गए-बीते कार्य करके हम अप
को मनुष्य कहलाने का दावा करते हैं, कितनी लज्जा की बात है
। वहुत से पुरुष अपनी मर्दुमी जाहिर करने के लिए नि
स्त्री-प्रसङ्ग करते हैं। वहुत से जवानी के जोश में आकर ए
रात्रि में कई वार अपना सर्वनाश करते हैं। ऐसे लोग अपने
मर्द कहा करते हैं और दूसरे लोग भी शायद ऐसे लोगों को म
समझते हों; किन्तु हमारे विचार से नित्य स्त्री-प्रसङ्ग करने वा

न तो मर्द ही हैं, और न मनुष्य ही। हमारे विचार में ऐसे लोग नामर्द हैं; क्योंकि वे अपनी इन्द्रिय को वश में रखने की शक्ति नहीं रखते। इतने नामर्द हो जाते हैं कि उनमें स्वयं अपने ऊपर ही प्रभुत्व स्थापित करने की शक्ति नहीं रहती। वीर्य-रक्षा न कर सकने की शक्ति का लोप हो जाना, नामर्दी का सूचक है। ऐसे लोग हमारे विचार में मनुष्य-श्रेणी में गिने जाने योग्य नहीं हैं। इन्हें राक्षस, नर-पिशाच, नराधम कह दिया जावे तो कोई दोष न होगा।

आजकल स्त्री-प्रसङ्ग का मुख्योद्देश नष्ट हो गया। इसका दोष हमारी समझ में पुरुषों के ही सिर है। आजकल के पुरुष ही अधिक मैथुनाभ्यासी हैं। यद्यपि स्त्रियाँ ऐसे पुरुषों को घृणा की दृष्टि से देखती हैं, तथापि मूर्ख पुरुष कुछ भी नहीं समझते। नित्य-मैथुन से स्त्रियाँ पूर्ण स्खलित नहीं होतीं और बिना पूर्ण स्खलित हुए मैथुन का आनन्द नहीं आता। जिस प्रकार नित्य आधा भूखा रहने से मनुष्य दुखी रहता है, उसी प्रकार नित्य के मैथुन से स्त्री अत्यन्त दुखी रहती है। मर्द समझता है कि मैं अपनी स्त्री से नित्य प्रसङ्ग करता हूँ, अतएव वह मुझसे सन्तुष्ट रहती है—ऐसा समझना भूल है। नित्य-प्रसङ्ग से स्त्री घबरा कर अपने पति से घृणा करती है। अन्त में अपने ऐसे बेशर्म और नराधम पति को छोड़ कर वह परपुरुष पर अपनी दृष्टि डालती है। सारांश यह है कि "स्त्री-प्रसङ्ग" के विषय में अनभिज्ञ होने के कारण मूर्ख पुरुष अपनी स्त्री को अपने हाथों व्यभिचारिणी, रोगिणी,

कुलटा और अनाचारिणी बना लेते हैं। इसमें स्त्रियों का कुछ भी दोष नहीं, यह पुरुषों का ही उनके साथ अत्याचार है। हमारे शास्त्रकारों ने लिखा है :—

प्रजननार्थं स्त्रियः सृष्टाः सन्तानार्थञ्चमानवाः॥

अर्थात्—गर्भाधान करने के लिए पुरुष और गर्भधारण करने के लिए स्त्रियाँ उत्पन्न की गई हैं।

इसके विरुद्ध जो स्त्री-पुरुष प्राकृतिक नियमों को तोड़ कर सहवास करते हैं, वे महान् दुख और अशान्ति-रूप से फल भोगते हुए नरकगामी होते हैं।

स्त्री-प्रसङ्ग एक अत्यन्त पवित्र कार्य है। जिस प्रकार किसी पुण्य-कार्य को करने के समय हमारे विचारों में पवित्रता आ जाती है, उसी तरह सम्भोग के समय भी दोनों के मन में पवित्र विचार होने चाहिए। स्त्री-प्रसङ्ग अज्ञानी पुरुषों के लिए अश्लील और अरुचिकर हो सकता है; लेकिन जो लोग सभ्य हैं और मनुष्यता के तत्वों को जानते हैं, वे कभी इसे बुरा नहीं कह सकते। यह बुरा क्योंकर हो सकता है ? यह तो जीवन-सृष्टि का एकमात्र कारण है—इसीमें जगत् का विकास और वृद्धि है। स्त्री-प्रसङ्ग से ही सन्तान उत्पन्न होती है। वाग्भट्ट में लिखा है :—

अच्छायः पूतिकुसुमः फलेनरहितो द्रुमः।
तथैकश्चैकशाखश्च निरपत्यस्तथानरः॥

अर्थात्—जिस प्रकार छायाहीन, दुर्गन्धित फूलों वाला तथा एक शाखा

वाला वृक्ष अच्छा नहीं मालूम होता, उसी प्रकार सन्तानहीन पुरुष भी अच्छा नहीं लगता।

प्राचीन काल में भारतवासी केवल सन्तान पैदा करने के लिए ही शादी करते थे। आजकल की भाँति विषय-वासना की पूर्त्ति के लिए वे गृहस्थाश्रम में प्रवेश नहीं करते थे। प्राचीन इतिहास के पढ़ने वालों को स्थान-स्थान पर ऐसे प्रमाण मिलेंगे। महाकवि कालिदास ने महाराज दिलीप के लिए लिखा है :—

स्थित्यै दण्डयतो दण्डयान् परिणेतुः प्रसूतये।
अप्यर्थकामौ तस्यास्तां धर्म एव मनीषिणः॥

अर्थात्—सन्तान के लिए महाराजा दीलीप ने अपना विवाह किया था।

सन्तान होने पर जब वे देखते कि हम पितृ-ऋण से मुक्त हो गए और गृस्थाश्रम का उद्देश पूर्ण हो गया—पुत्र कुल का कार्य-भार चलाने योग्य हो गया, तब वे गृहस्थ त्याग कर वन में चले जाते थे और वानप्रस्थी होकर अपना जीवन सुख-चैन से व्यतीत करते थे। आजकल की भाँति बहुत से बच्चे पैदा करके बुढ़ापे तक गृहस्थाश्रम में नहीं घुसे रहते थे। आजकल देखने में आता है कि पुत्र के पुत्र पैदा हो गया; लेकिन खुद भी बच्चे पैदा कर रहे हैं। स्त्री-प्रसङ्ग क्या हुआ, बच्चे पैदा करने की मैशीनें चलने लगीं। बाप भी बच्चे पैदा कर रहा है, तो पुत्र भी बच्चे पैदा कर रहे हैं, इस प्रकार सन्तान पैदा करने वाली कई मैशीनें एक घर में चलती देखी जाती

हैं। इस प्रकार स्त्री-प्रसङ्ग द्वारा बच्चे पैदा करते चले जाना धर्म नहीं; बल्कि पाप है।

प्राचीन काल में लोग बच्चा पैदा करना अपना धर्म समझते थे और इसीलिए वे स्त्री-प्रसङ्ग करते थे। चूँकि ऋतुकाल में स्त्रियों को अन्य समय की अपेक्षा काम-भाव कुछ अधिक रहता है, इसलिए सन्तान की इच्छा रखने वालों को ऋतु-स्नान के बाद स्त्री-प्रसङ्ग करना चाहिए। स्त्री-प्रसङ्ग के विषय में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए:—

(१) स्त्री-पुरुष को चाहिए कि शीतल जल से खूब अच्छी तरह स्नान करें।

(२) पुरुष सफ़ेद, धुले हुए स्वच्छ कपड़े पहने। यदि स्त्री सफ़ेद कपड़े न पहन सके तो हल्के रङ्ग के कपड़े पहिनने चाहिए। काले, गहरे लाल रङ्ग के, नीले, ऐसे कपड़ों को कदापि न पहनना चाहिए।

(३) मकान भी कलई से पुता हुआ साफ़, स्वच्छ और खाली होना चाहिए। प्रायः लोग गन्दे और अश्लील चित्र ऐसी जगह रखते हैं; लेकिन यह अनुचित है। तात्पर्य यह है कि जिस चित्र के द्वारा मन में विकार उत्पन्न हों, ऐसे चित्र शयनागार में कदापि न रखने चाहिए। महात्माओं के चित्र रखना अच्छा है, अथवा ऐसे खूबसूरत चित्र होने चाहिए, जिनसे सन्तान के रूपवती होने में सहायता मिले।

(४) मकान के भीतर दुर्गन्धित वायु कदापि न होनी चाहिए। मकान इतना अच्छा हो, जिसमें वायु और प्रकाश भली-भाँति आ-जा सके।

(५) प्रसङ्ग के समय न तो बिलकुल अँधेरा ही होना चाहिए, जिसमें एक दूसरे को ढूँढ़ता-टटोलता फिरे और न इतना प्रकाश ही हो जो आँखों को भी असह्य हो। स्थान बिलकुल शान्त और निस्तब्ध होना चाहिए। भय और शङ्का का वहाँ नामोनिशान न होना चाहिए। जहाँ भय और शङ्का हो, वह स्थान स्त्री-प्रसङ्ग के लिए उपयोगी नहीं है।

(६) निर्लज्जता और निरङ्कुशता को पास नहीं फटकने देना चाहिए। अधिक लज्जा भी ठीक नहीं है। महाभारत के पाठकों को मालूम है कि महाराजा विचित्रवीर्य की महाराणी ने लज्जावश आँखों को हाथ से मूँद लिया था। उसका परिणाम यह हुआ कि उसके गर्भ से महाराजा धृतराष्ट्र जन्मान्ध पैदा हुए थे।

(७) भोजन सुपच और बलदायक करना चाहिए, और दिन की अपेक्षा प्रसङ्ग के दिन कम खाना चाहिए। भूखे, खाली पेट अथवा बिलकुल भरे पेट प्रसङ्ग न करना चाहिए। प्रसङ्ग में आनन्द आवेगा, इस इच्छा से किसी प्रकार का मादक द्रव्य न खाना चाहिए। प्यास में अथवा पानी पीकर के भी प्रसङ्ग नहीं करना चाहिए।

(८) दिन भर थकान पैदा करने वाला कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

(९) स्त्री-पुरुषों में से जो अधिक खूबसूरत हो, उसी की सुन्दरता का ध्यान रखना चाहिए। यदि दोनों ही खूबसूरत न हों तो किसी चित्र की मूर्ति के सौन्दर्य पर विचार रखना चाहिए।

(१०) सन्तान को जिस विषय में दक्ष बनाने की इच्छा हो, उसी विषय पर दोनों को अच्छी तरह मनन करना चाहिए। हिरण्यकश्यप देव-द्रोही और विश्व-विख्यात असुर था; लेकिन उसकी स्त्री ने प्रह्लाद जैसे परम भक्त बालक को प्रसव किया था। कारण यह था कि जिस समय प्रह्लाद जी गर्भ में थे, उस समय उनकी माता ने नारद जी से उपदेश श्रवण किया था।

आजकल देखने में आता है कि स्त्री-प्रसङ्ग के लिए कुछ भी नियम नहीं है। समय का भी कोई ध्यान नहीं रक्खा जाता! प्रातः, मध्याह्न, सायं और रात्रि के समय जब जी चाहा तब स्त्री-पुरुष मैथुन में प्रवृत्त हो जाते हैं। उन्हें वक्त-बेवक्त का कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। इस अज्ञानता का परिणाम यहाँ तक होता है कि वे रोगी हो जाते हैं और मर जाते हैं। एक महाशय रात्रि के समय साढ़े नौ बजे भोजन करके दस बजे सो जाया करते थे और दस अथवा साढ़े दस बजे के क़रीब ही मैथुन से भी निपट जाते थे। फल यह हुआ कि स्त्री चिर-रोगिणी बन गई और पुरुष के पेट में ऐसा भयङ्कर रोग हुआ कि मृत्यु के बाद ही उससे पीछा छूटा। डॉक्टर-हकीम दवा करते-करते थक गए; लेकिन रोग ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। सारांश यह है कि स्त्री-प्रसङ्ग के लिए ऋतु, दिन, समय आदि का ध्यान रखना एक आवश्यकीय बात है; लेकिन

अज्ञानी लोग उसे नहीं समझते या उनका अज्ञान उन्हें समझने ही नहीं देता। हम स्त्री-प्रसङ्ग का उपयोगी समय बताने का प्रयत्न करेंगे। आशा है, इससे लोगों को लाभ होगा।

(१) हेमन्त और शिशिर ऋतु में अपनी शक्ति के अनुसार मैथुन करना चाहिए।

(२) वसन्त ऋतु स्त्री-प्रसङ्ग के लिए सर्वोत्तम ऋतु है। जब स्त्री-पुरुष को बिना काम-चेष्टा किए ही काम सतावे, तब मैथुन करना चाहिए।

(३) ग्रीष्म-ऋतु में स्त्री-प्रसङ्ग करना बहुत ही बुरा है। यदि रहा ही न जावे, तो पच्चीस-तीस दिन में एक बार मैथुन करना चाहिए।

(४) वर्षा ऋतु में पन्द्रहवें दिन स्त्री-प्रसङ्ग करना ठीक है। बादल घुमड़ रहे हों, मन्द-मन्द वर्षा हो रही हो, ऐसे समय स्त्री-प्रसङ्ग में विशेष आनन्द आता है। इन दिनों नित्य ही मैथुन करना अत्यन्त बुरा है।

(५) शरद्‌ऋतु में जब कामोत्तेजन हो, तभी स्त्री-प्रसङ्ग करना चाहिए।

(६) ठण्ड के दिनों में रात के वक़्त, ग्रीष्म ऋतु में दिन के वक़्त, वसन्त ऋतु में दिन अथवा रात में किसी भी समय जब चाहे, तब स्त्री-प्रसङ्ग करना चाहिए। वर्षा ऋतु में जब बादल गर्जें, पानी बरसे और बिजली चमके तभी प्रसङ्ग करना उचित है।

(७) ऋतुकालाभिगामी स्यात् स्वदारनिरतःसदा।
पर्ववर्जं व्रजेच्चैनां तद्व्रतो रतिकाम्यया॥

अर्थात्—पुरुष को चाहिए कि अपनी स्त्री के साथ ऋतुकाल में ही सहवास करे। अमावस्या, पूर्णिमा, चतुर्दशी आदि पर्व रात्रियों में स्त्री-प्रसङ्ग न करना चाहिए। रजोधर्म होने के दिन से १६ रात्रियाँ ऋतु-काल की हैं। इनमें से भी पहिली, दूसरी, तीसरी, चौथी, सातवीं, ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रि स्त्री-प्रसङ्ग के लिए वर्जित हैं।

(८) ऋतु के प्रथम दिन स्त्री-प्रसङ्ग से जन्मी हुई सन्तान बचपन में ही मर जाती है। और ऐसा पुरुष भी जो रजस्राव के दिनों में अपना मुँह काला करता है, जल्दी ही मर जाता है।

(९) ऋतु के दूसरे दिन स्त्री-प्रसङ्ग करने से गर्भ रह जावे तो सन्तान गर्भ में ही मर जाती है।

(१०) ऋतु के तीसरे दिन स्त्री-प्रसङ्ग करने से जो सन्तान पैदा होती है, वह जन्म भर रोगी रहती है।

(११) बहुत से लोग चौथे दिन को स्त्री-प्रसङ्ग का उचित दिन मानते हैं; लेकिन यह दिन भी निषिद्ध है। यदि चौथे दिन के स्त्री-प्रसङ्ग से सन्तान पैदा [illegible] वह भिक्षुक और मूर्ख [illegible]

(१२) पाँचवें दि[illegible] [illegible]ने से कन्या उ[illegible] जो सुशीला एवम् सधी[illegible]

([illegible] से निश्चय ही [illegible] होता [illegible] होगा।

(१४) सातवीं रात्रि में स्त्री-प्रसङ्ग करने से कोई सन्तान पैदा नहीं होती।

(१५) आठवीं रात्रि में प्रसङ्ग करने से कीर्त्तिशाली और भाग्यवान् पुत्र उत्पन्न होता है।

(१६) नवें दिन स्त्री-प्रसङ्ग करने से कन्या पैदा होती है, और वह भाग्यशीला होती है।

(१७) दसवीं रात्रि को मैथुन करने से पुत्र ही उत्पन्न होता है। वह बलशाली और ऐश्वर्य-सम्पन्न होगा।

(१८) ग्यारहवीं रात्रि को स्त्री-प्रसङ्ग से कन्या उत्पन्न होती है और वह दुश्चरित्रा तथा कुलटा होती है। इसीलिए यह रात्रि वर्जित है।

(१९) ऋतु की बारहवीं रात्रि में सम्भोग करने से सुन्दर पुत्र उत्पन्न किया जा सकता है।

(२०) तेरहवीं रात्रि वर्जित है। यदि किसी मूर्ख ने अपना आपा गँवाया भी तो लड़की पैदा होगी। वह भी बड़ी ही पापिनी होगी। वह पापिन ऐसे-ऐसे नीच कार्य करेगी, जिन पर संसार घृणा प्रदर्शित करेगा।

(२१) ऋतु की चौदहवीं रात्रि में स्त्री-प्रसङ्ग करने से सुशीला और धार्मिक पुत्र उत्पन्न होता है।

(२२) पन्द्रहवीं रात्रि में गमन करने से कन्या पैदा होती है। वह कन्या परम सुन्दरी और पति-भक्तिपरायणा होती है।

(७) ऋतुकालाभिगामी स्यात् स्वदारनिरतःसदा।
पर्ववर्जं व्रजेच्चैनां तद्वृत्तो रतिकाम्यया॥

अर्थात्—पुरुष को चाहिए कि अपनी स्त्री के साथ ऋतुकाल में ही सहवास करे। अमावस्या, पूर्णिमा, चतुर्दशी आदि पर्व रात्रियों में स्त्री प्रसङ्ग न करना चाहिए। रजोधर्म होने के दिन से १६ रात्रियाँ ऋतु-काल की हैं। इनमें से भी पहिली, दूसरी, तीसरी, चौथी, सातवीं, ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रि स्त्री-प्रसङ्ग के लिए वर्जित है।

(८) ऋतु के प्रथम दिन स्त्री-प्रसङ्ग से जन्मी हुई सन्तान बचपन में ही मर जाती है। और ऐसा पुरुष भी जो रजस्राव के दिनों में अपना मुँह काला करता है, जल्दी ही मर जाता है।

(९) ऋतु के दूसरे दिन स्त्री-प्रसङ्ग करने से गर्भ रह जावे, तो सन्तान गर्भ में ही मर जाती है।

(१०) ऋतु के तीसरे दिन स्त्री-प्रसङ्ग करने से जो सन्तान पैदा होती है, वह जन्म भर रोगी रहती है।

(११) बहुत से लोग चौथे दिन को स्त्री-प्रसङ्ग का उचित दिन मानते हैं; लेकिन यह दिन भी निषिद्ध है। यदि चौथे दिन के स्त्री-प्रसङ्ग से सन्तान पैदा हो, तो वह भिक्षुक और मूर्ख होगी।

(१२) पाँचवें दिन स्त्री-प्रसङ्ग करने से कन्या उत्पन्न होगी, जो सुशीला एवम् सशरित्रा होगी।

(१३) छठी रात्रि में मैथुन करने से निश्चय ही पुत्र पैदा होता है; किन्तु वह मध्यम गुण सम्पन्न होगा।

(१४) सातवीं रात्रि में स्त्री-प्रसङ्ग करने से कोई सन्तान पैदा नहीं होती।

(१५) आठवीं रात्रि में प्रसङ्ग करने से कीर्त्तिशाली और भाग्यवान् पुत्र उत्पन्न होता है।

(१६) नवें दिन स्त्री-प्रसङ्ग करने से कन्या पैदा होती है, और वह भाग्यशीला होती है।

(१७) दसवीं रात्रि को मैथुन करने से पुत्र ही उत्पन्न होता है। वह बलशाली और ऐश्वर्य-सम्पन्न होगा।

(१८) ग्यारहवीं रात्रि को स्त्री-प्रसङ्ग से कन्या उत्पन्न होती है और वह दुश्चरित्रा तथा कुलटा होती है। इसीलिए यह रात्रि वर्जित है।

(१९) ऋतु की बारहवीं रात्रि में सम्भोग करने से सुन्दर पुत्र उत्पन्न किया जा सकता है।

(२०) तेरहवीं रात्रि वर्जित है। यदि किसी मूर्ख ने अपना आपा गँवाया भी तो लड़की पैदा होगी। वह भी बड़ी ही पापिनी होगी। वह पापिन ऐसे-ऐसे नीच कार्य करेगी, जिन पर संसार घृणा प्रदर्शित करेगा।

(२१) ऋतु की चौदहवीं रात्रि में स्त्री-प्रसङ्ग करने से सुशीला और धार्मिक पुत्र उत्पन्न होता है।

(२२) पन्द्रहवीं रात्रि में गमन करने से कन्या पैदा होती है। वह कन्या परम सुन्दरी और पति-भक्तिपरायणा होती है।

(२३) सोलहवीं रात्रि में मैथुन करने से धार्मिक, सुशील और कुलदीपक पुत्र उत्पन्न होता है।

(२४) शारीरिक तत्वों के वेत्ता चरक ने लिखा है—यदि स्त्री अत्यन्त भूखी अथवा प्यासी हो, भयातुर हो, शोकयुक्त हो, क्रुद्ध हो अथवा परपुरुष में अपना मन लगाए हो, तो उससे मैथुन न करना चाहिए; क्योंकि वह गर्भधारण नहीं करेगी। यदि दैवयोग से गर्भ रह भी गया, तो सन्तान अङ्गहीन उत्पन्न होती है। यह बात स्त्रियों के लिए ही नहीं; बल्कि पुरुषों के लिए भी है। ऐसी हालत में पुरुष को भी मैथुन न करना चाहिए।

(२५) महर्षि मनु ने कहा है—ऋतु के प्रथम चार दिन, तथा ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रि स्त्री-प्रसङ्ग के लिए वर्जित है। युग्म अर्थात् छठीं, आठवीं, दसवीं, बारहवीं, चौदहवीं और सोलहवीं रात्रि में मैथुन करने से पुत्र और पाँचवीं, सातवीं, नवीं, ग्यारहवीं, तेरहवीं और पन्द्रहवीं रात्रि में स्त्री-प्रसङ्ग करने से कन्या उत्पन्न होती है।

(२६) डॉक्टर आर० एम० डी० ने लिखा है—स्त्री-पुरुष की मानसिक उत्तेजना के समय, गुरुपाक भोजन के पश्चात् शीघ्र ही शोक-सन्तप्त हृदय से और कठिन परिश्रम के बाद स्त्री-प्रसङ्ग कभी न करना चाहिए।

(२७) डॉक्टर ए० ए० फिनिरा, एम० बी० सी० एस० ने कहा है—जब स्त्री-पुरुष की मानसिक अथवा शारीरिक अवस्था

ठीक न हो, कठिन परिश्रम के बाद जब थकान आ जाने से शरीर में सुस्ती मालूम हो, जब भोजन पेट में पच रहा हो, ऐसे समय में स्त्री-प्रसङ्ग करना बहुत ही बुरा है।

(२८) सात वारों में सोमवार, बृहस्पतिवार और शुक्रवार स्त्री-प्रसङ्ग के लिए बहुत ही अच्छे हैं।

(२९) सोमवार के दिन मैथुन करने से जो सन्तान पैदा होती है, वह कुशाग्र बुद्धि और मातृभक्त होती है।

(३०) मङ्गल को सहवास करने से यदि गर्भ रह जावे, तो सन्तान मरी हुई पैदा होगी।

(३१) बुध के दिन स्त्री-प्रसङ्ग तो दूर रहा, औरत से बातचीत भी करना बुरा है।

(३२) बृहस्पतिवार की रात्रि सबसे अच्छी रात है। इस दिन के गर्भ रहने से जो बालक पैदा होगा, वह सर्वगुण-सम्पन्न और निर्दोष होगा।

(३३) शुक्रवार स्त्री-प्रसङ्ग के लिए अच्छा है। इस रात्रि में जो गर्भ रहता है, वह बालक विद्वान् और तपस्वी निकलता है।

(३४) शनिवार और रविवार स्त्री-प्रसङ्ग के लिए ठीक नहीं हैं। इन वारों में स्त्री-गमन कदापि न करना चाहिए।

(३५) सुबह, शाम, पर्व-दिन, आधी रात, गौओं के छोड़ने के वक्त और दोपहरी में मैथुन करना अत्यन्त हानिकारक है। इनमें से प्रभात-काल का मैथुन नाश कर देता है।

(३६) भोजन के तीन या चार घण्टे बाद मैथुन करना

चाहिए। जो लोग रात्रि के पहिले प्रहर में स्त्री-प्रसङ्ग करना चाहें, उन्हें चाहिए कि सूर्यास्त के पहिले ही भोजन से निवृत्त हो जावें।

(३७) रात्रि का तीसरा प्रहर मैथुन के लिए बड़ा ही अच्छा है। हमारे शास्त्रकारों ने इसे ही अच्छा बताया है। स्त्री-प्रसङ्ग के घण्टे भर बाद स्नानादि क्रियाओं से निवृत्त होना जरूरी बताया है। इससे शक्ति नहीं घटती, और वीर्यपात की कमी पूरी हो जाती है।

(३८) मैथुन के बाद थोड़ा विश्राम जरूर करना चाहिए। जो लोग मैथुन के बाद किसी काम में लग जाते हैं, वे अन्त में हानि उठाते हैं।

(३९) सन्ध्या समय अर्थात् सुबह, शाम, मध्य रात्रि और मध्य दिन स्त्री-प्रसङ्ग के लिए बहुत ही बुरे हैं। कश्यप और अदिति जैसे सर्वगुण-सम्पन्न दम्पति से भी, सन्ध्या समय मैथुन करने से राक्षस पैदा हुए थे।

(४०) सायङ्काल के छः बजे यदि भोजन कर लिया जाय तो नौ बजे से ग्यारह बजे तक और एक बजे से चार बजे तक रात्रि में मैथुन का समय सबसे अच्छा है। बाक़ी समय में गर्भाधान करने से सन्तान निकम्मी पैदा होती है।

हमने यहाँ तक समय, ऋतु, वार, दिन, तिथि, प्रहर आदि का विवेचन किया, अब हम आगे यह बतलावेंगे कि स्त्री-प्रसङ्ग कैसे करना चाहिए।

हरेक कार्य स्वाभाविक रीति से करने पर ही अच्छा होता है।

जो कार्य अस्वाभाविक ढङ्ग से किया जाता है, वह कदापि श्रेष्ठ नहीं हो सकता। यही बात स्त्री-प्रसङ्ग के लिए भी है। अस्वाभाविक मैथुन बहुत ही बुरा है; किन्तु आजकल के नवयुवक काम-उमङ्ग में नाना भाँति के अस्वाभाविक उपायों द्वारा मैथुन करते हैं। परिणाम यह होता है कि शीघ्र ही स्वयं रोगी बन जाते हैं और अपनी सन्तान को निकम्मी बना कर अपने हाथों अपना वंश नाश कर देते हैं। अस्वाभाविक उपायों को एकदम त्याग देना चाहिए। योग-विद्या के विख्यात चौरासी आसनों को मूढ़ लोगों ने अपनी रति-क्रिया में सम्मिलित कर, आसनों के पवित्र नाम को भ्रष्ट कर दिया है। लोगों में आज यहाँ तक भ्रम फैल गया है कि "आसन" अर्थात् मैथुन करते समय स्त्री-पुरुषों के अङ्ग की तोड़ा-मरोड़ी! यह कितना भ्रम है! आज जो "कोकशास्त्र" का विज्ञापन देता है, वह चौरासी आसनों का उल्लेख कर देता है। अगर उसने विज्ञापन में "सचित्र" लिख दिया तो हमारे नवयुवक उसके लिए ऐसे लालायित हो उठते हैं, जैसे गृद्ध-पक्षी मुर्दे के लिए। ऐसी गन्दी और अश्लील पुस्तकों के प्रकाशक लोग बहुत पैसा कमाते हैं। इन पुस्तकों में नाना प्रकार की शारीरिक अवस्था में मैथुन की व्यवस्था लिखी हुई होती है। काम-वेग से लोग पशु हो जाते हैं और उनके कर्त्तव्याकर्त्तव्य का विवेक नष्ट हो जाता है; किन्तु काम की शान्ति के लिए मैथुन नहीं है। मैथुन केवल सन्तान प्राप्ति के लिए ही है, अतएव उस समय स्त्री-पुरुष को स्थिर और धीर रहना चाहिए। उस समय चञ्चलता, चपलता और मूर्खता अत्यन्त बुरी बात है।

मैथुन के लिए शय्या अत्यन्त कोमल, स्वच्छ, निर्मल और सफ़ेद रङ्ग की होनी चाहिए। सुगन्धित पुष्प अथवा सुगन्धित जल आदि से शय्या सुवासित होनी चाहिए। स्त्री-पुरुषों को गन्ध माला आदि से अपने शरीर को अलङ्कृत कर, शय्या पर जाना चाहिए। किसी के शरीर से किसी तरह की दुर्गन्ध नहीं आनी चाहिए, अन्यथा उसके प्रति एक दूसरे के मन में घृणा के भाव पैदा हो जाना सम्भव है। तम्बाखू, बीड़ी आदि के पीने वालों के मुख से इतनी बुरी बदबू आती है कि न पीने वाले व्यक्ति का जी मिचलाने लगता है और वमन होने की सी दशा हो जाती है। इसी तरह जो लोग दोनों वक्त अपने मुँह और दाँतों को दातून अथवा किसी प्रकार के मञ्जन से शुद्ध नहीं रखते, उनके मुख भी बुरी तरह सड़ते हैं। पास जाना तो दूर रहा, हाथों दूर बदबू आया करती है। अतएव स्त्री-पुरुष को अपने अङ्गों की सफ़ाई पर खूब ध्यान रखना चाहिए। स्त्री को चाहिए कि अपने पति के चित्त को आनन्द देने वाली पोशाक और जेवर पहिने। जिस वेष-भूषा से पति नाराज़ हो, उसे अपनी इच्छा होने पर भी नहीं करना चाहिए। बहुत सी स्त्रियाँ अपने कपाल के बाल गोंद लगा कर चिपकाती हैं, यह बात कई पुरुषों को नापसन्द आती है; अतएव जिनके पति को जो बात पसन्द न आवे, वह बात इन्हें त्याग देनी चाहिए। इसी प्रकार पुरुषों को भी चाहिए कि उनके जिस बुरे काम से उनकी श्रीमती जी अप्रसन्न रहती हों, वह काम न करें। बहुत सी स्त्रियाँ अपने सिर के बालों में घी लगा कर

ग्रौंध रखती हैं; इस प्रकार कई दिन के बँधमय आवे, तब पुरुष को
ऐसी दुर्गन्ध आने लगती है कि उनके पतिस ठहरा देना चाहिए।
घृणा पैदा हो जाती है। ऐसी बातों से स्त्री-प्रमें जा सके। यह ध्यान
को जैसा आनन्द आना चाहिए, वैसा नहीं चार-पाँच बार धड़कन
छोटी-मोटी बातों पर अवश्य ध्यान रखना ज्ञाक मालूम पड़ती है।
मैथुन के समय स्त्री-पुरुष को सब तरह न वीर्य के रङ्ग का एक
आनन्दित होना चाहिए। क्रोध, शोके भरा रस होता है। दूसरी
कपट, लज्जा, चिन्ता, आदि विकारों का दोनों धड़कनों में वीर्य
नहीं होना चाहिए। जिधर देखो उधर हीाय के अन्दर तक जा
उत्सुकता और सद्विचारों का साम्राज्य होते उनका वीर्य इधर-
वस्तु आनन्द देने वाली ही उस शयनागार में के समय बहुत थोड़ा
फुलेल, लवेन्डर, सुगन्धित तैल आदि मन त ही गाढ़ा होता है।
वाली वस्तुओं का व्यवहार इसी समय कना ही वीर्य अधिक
होता है। स्त्री-प्रसङ्ग के समय बहुत अधिक रे स्थिर होते हैं, वे
चाहिए। जहाँ तक हो कम वस्त्र पहिनना एक नष्ट नहीं करते।
लोग एकदम वस्त्ररहित होकर मैथुन करते हैं, हो, उस समय स्त्री
यद्यपि बिलकुल नग्न दशा में मैथुन करने रहना चाहिए। स्त्री
आनन्द अधिक आता है, तथापि हानिप्रद ने ऐसा सहज ही हो
स्त्री-पुरुष में कामोत्तेजन करने वाले कार्य—ी को भी निश्चल
मर्दन आदि होने चाहिए। जब एक दूसरे से ड़ी देर के लिए
अत्यन्त व्यग्र हो जावें, तब मैथुन करना चाहिए रा पुरुष-वीर्य को
मैथुन के समय स्त्री को शय्या पर उत्तान इ

मैथुन के पश्चात् स्त्री-पुरुष को फौरन ही उठ खड़ा नहीं होना चाहिए। यदि सङ्गम के बाद तत्काल ही उठ खड़े हुए तो वह स्त्री-पुरुष का रज-वीर्य जो गर्भ स्थापन करता, गर्भाशय में प्रवेश न करके योनि से बाहर निकल जाता है, अतएव स्त्री-पुरुष को तत्काल ही न तो अलग-अलग हो जाना चाहिए और न उठ बैठना चाहिए। पुरुष के तत्काल अलग हो जाने से वायु के आघात द्वारा वीर्य का बाहर निकल जाना सम्भव है। पुरुष को चाहिए कि जब तक स्त्री स्वयं अलग न होना चाहे, तब तक अलग न हो। यदि पुरुष जल्दी हट जावे तो स्त्री को उसी तरह चित लेटी रहना चाहिए। इस समय स्त्री को अपना शरीर ढीला रखना चाहिए। ऐसा करने से वीर्य को गर्भाशय की ओर बढ़ने में सहायता मिलती है। स्त्री को कमर में किसी प्रकार का तङ्ग बन्धन न रखना चाहिए। मैथुन के बाद स्त्री को शान्त भाव से खूब देर तक आराम करना चाहिए, जिससे गर्भाशय में वीर्य अच्छी तरह स्थित हो सके।

बहुत से लोगों का ऐसा ख्याल है कि गर्भ में गया हुआ वीर्य फिर वापस नहीं आ सकता; परन्तु ऐसा समझना बहुत बड़ी भूल है। गर्भाशय में गया हुआ वीर्य अनुचित आहार-विहार से बाहर निकल जाता है। बोझ उठाना, दौड़ना, कूदना, फाँदना, घोड़े अथवा बाईसिकल की सवारी करना, जल्दी-जल्दी चलना, सीढ़ियों पर चढ़ना-उतरना, नाचना, खाँसना, छींकना, नीचे की तरफ झुक कर देखना, खूब हँसना, मैथुन करना आदि कार्य स्थित गर्भ के

भी नष्ट कर देते हैं। बहु-मैथुन इन सब में अत्यन्त ही हानिकारक है। जहाँ तक हो सके, मास में एक बार अर्थात् ऋतुकाल में ही मैथुन करना चाहिए। रजस्वला होने से आठवें अथवा नवें दिन गर्भाधान करना चाहिए। सोलहवीं रात्रि के बाद गर्भाशय का मुख बन्द हो जाता है, इसलिए फिर मैथुन करना व्यर्थ ही है। कई शरीरशास्त्र-वेत्ताओं का कहना है कि ऋतु आरम्भ होने के कुछ दिन पूर्व कई स्त्रियों के गर्भाशय का मुख खुल जाता है; किन्तु यह बात सर्व-सम्मत नहीं है। यदि इन दिनों गर्भ रह भी जावे तो सन्तान उत्तम नहीं हो सकती।

स्त्री-प्रसङ्ग के समय स्त्री और पुरुष दोनों को यह दृढ़ विश्वास और निश्चय कर लेना चाहिए कि हम सन्तानोत्पत्ति के लिए मैथुन कर रहे हैं। इस विश्वास में जरा भी संशय को स्थान न देना चाहिए। दोनों को अपने विचार मैथुन के आनन्द की तरफ़ से हट कर गर्भाधान की ओर लगा देने चाहिए। स्त्री-प्रसङ्ग के बाद पुरुष को चाहिए कि स्त्री के पेट पर जिस जगह गर्भाशय होता है, हाथ धर कर यह निश्चय कर लेवे कि गर्भ-स्थापन हो गया, और उस समय स्त्री को भी इसी बात का ध्यान रखना चाहिए।

केवल मैथुन के समय प्रेम और फिर रात-दिन कलह करने से गर्भ-स्थापन में बड़ी ही कठिनाई होती है। ऐसी दशा में गर्भ रहता ही नहीं और यदि रह भी गया तो सन्तान पृथ्वी का भार-रूप उत्पन्न होती है। सब प्रेमों में दाम्पत्य-प्रेम ही उच्च प्रेम

है। इस प्रेम से दो हृदय एक बन कर संसार में नन्दन-वन की सृष्टि करते हैं। जिस परिवार में दाम्पत्य-प्रेम नहीं, उसमें कुछ शान्ति भी नहीं। प्रति दिन अशान्ति के हाहाकार से सारा परिवार श्मशान सा बन जाता है। पारिवारिक अनेक ज्वालाओं से दग्ध होकर जब मनुष्य पागल-सा हो जाता है, उस समय एकमात्र दाम्पत्य-प्रेम ही उसे शान्ति प्रदान करता है। दाम्पत्य-प्रेम के बिना सृष्टि चल नहीं सकती। यदि ऐसा कह दें, तो अत्युक्ति न होगी। दाम्पत्य-प्रेम प्रत्येक मनुष्य का धर्म है। इस प्रेम को बनाए रखने के लिए चित्त-संयम की आवश्यकता है। जिन्हें चित्त-संयम नहीं आता और जिनकी कामवृत्ति प्रबल है, वे खाक भी दाम्पत्य-प्रेम नहीं रख सकते। वे शीघ्र ही अल्पायु सन्तान के माता-पिता बन कर सांसारिक समस्त सुखों पर पानी फेर देते हैं। दाम्पत्य-प्रेम में जो लापरवाही करते हैं, वे फिर आजन्म पछताते देखे जाते हैं। दाम्पत्य-प्रेम का अन्तिम और पवित्र उद्देश सृष्टि का सौन्दर्य बढ़ाना तथा सुख-शान्ति से गृहस्थ-धर्म का पालन करना है। केवल कामवृत्ति की शान्ति के लिए गृहस्थ और दाम्पत्य-प्रेम नहीं है। विधाता की भी यही इच्छा है कि स्त्री-पुरुष प्रेम की अटूट पाशोर में सर्वदा बँधे रहें। सभी प्रेम चाहते हैं, सभी प्रेम के भिखारी हैं; लेकिन सच्चा प्रेम आज बहुत कम देखने में आता है। यदि सच्चा प्रेम हो तो दुःख उसके पास फटक नहीं सकता। अर्थात् जो संसार में सुखी है, वही सच्चा प्रेमी भी है। प्रेम एक मधुर वस्तु है। अज्ञानियों ने इसे विषाक्त कर डाला है।

ान के प्रकाश से फिर उसे मधुर बनाना चाहिए। मनुष्य प्रेम ऐसे की, उसका प्रेम पशुवृत्ति चरितार्थ करने वाला नहीं होना चाहिए।

आजकल दाम्पत्य-प्रेम का अभाव है, यही कारण है कि शुवृत्ति चरितार्थ करने के लिए जो स्त्री-प्रसङ्ग किया जाता है ससे देश में मूर्ख और भिखारी सन्तानें पैदा हो रही हैं। यदि च्चे प्रेम का दम्पति में अभाव ही रहा तो एक न एक दिन देश हा अधोगति को पहुँच जावेगा। हमारा लिखने का यह तात्पर्य कि जो अच्छी सन्तान उत्पन्न करना चाहते हैं, उन्हें आपस में सा प्रेम रखना चाहिए कि "दो शरीर और एक प्राण" की हावत चरितार्थ हो जावे।

अब हम आगे थोड़ा बहुत परस्त्री-प्रसङ्ग, वेश्या-गमन आदि अतीव हानिकारक दोषों का वर्णन करेंगे। मनु महाराज ने हा है:—

ऋतुकालाभिगामीस्यात्स्वदारे निरतः सदा।
ब्रह्मचर्येव भवति यत्रतत्राश्रमेवसन्॥

अर्थात्—जो पुरुष अपनी स्त्री से सन्तुष्ट रहता है और ऋतुकाल में पनी ही स्त्री से सङ्गम करता है, वह गृहस्थाश्रम में रह कर भी ब्रह्मचारी समान होता है।

जो लोग अपनी भार्या को छोड़ कर परस्त्री-गमन अथवा श्या-गमन करते हैं, उन्हें इस संसार में क्षण भर भी सुख नहीं मेलता। भाई-बन्धु, नाते-रिश्तेदार, अड़ोसी-पड़ोसी उनकी निन्दा

है। इस और घर की स्त्री दुखी होकर उन्हें कोसती है तथा सूब सृष्टि करती है। जिस घर में कलह होता है, उस घर का शीघ्र सर्वनाश हो जाता है। महाराज मनु कहते हैं :—

शोचन्ति यामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।

अर्थात् —जिन घरों में स्त्रियाँ दुखी होकर रात-दिन शोक करती हैं, वे घर शीघ्र ही नाश हो जाते हैं।

इसी लिए कहा गया है:—

मातृवत् परदारेषु।

अर्थात्—पर-स्त्री के लिए मन में मातृ-भाव रखना चाहिए।

जो लोग इसके विरुद्ध आचरण करते हैं, उनकी अत्यन्त दुर्गति होती है। जो पुरुष बिना स्त्री के होते हैं, अधिकांश वे ही परस्त्री-गमन करते हैं। ऐसे लोगों को अपना विवाह करना चाहिए। विवाह-बन्धन मनुष्य को बड़े-बड़े पापों से मुक्त रखता है। जो लोग विवाह नहीं करना चाहते, उन्हें नहीं करना चाहिए और यथाविधि वीर्य-रक्षा द्वारा अपने जीवन को उच्च, पवित्र और आदर्श बनाना चाहिए। जो लोग विवाहित हैं और फिर भी पर-स्त्री-गमन करते हैं, वे पामर और नीच हैं। युवावस्था आने पर बहुत से लोग इन्द्रिय की उत्तेजना से उत्तेजित होकर अपना चाल-चलन खराब कर लेते हैं। यौवन में जब सम्पूर्ण अङ्ग पूर्णता प्राप्त कर लेता है, तब मनुष्य अपनी काम-पिपासा शान्त करने के लिए बिना वेश्या के अन्य कोई उपाय नहीं पाता; क्योंकि परस्त्री की खोज करना

जरा कठिन और कष्टसाध्य बात है, लेकिन वेश्या तो पैसे की चीज है। उसे पैसे से गरज है, चाहे जवान हो अथवा बूढ़ा, स्वस्थ हो अथवा रोगी, ब्राह्मण हो चाहे भङ्गी, उसे इस भेद-भाव से कोई प्रयोजन नहीं।

वेश्याओं का प्रेम केवल पैसे का और बनावटी होता है। मूर्ख लोग उनके कृत्रिम प्रेम पर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दीन, मलीन और दरिद्री बन जाते हैं। इस दशा में वेश्या उन्हें अपने द्वार पर नहीं फटकने देती। तब इन मूर्खों की आँखें खुलती हैं, लेकिन—"तब पछताये होत का, जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत ?" वाली कहावत चरितार्थ हो जाती है। जहाँ सच्चा प्रेम नहीं, वहाँ आनन्द नहीं। जो रूप-यौवन के प्रेमी होते हैं, उनका प्रेम धिक्कारने योग्य है। वेश्याओं का प्रेम बनावटी होता है और वेश्यागामी उनके रूप-यौवन के प्रेमी होते हैं। ऐसे मैथुन में क्या आनन्द आता होगा ?

वेश्यागमन से बढ़कर दूसरा और कोई पाप नहीं है। वेश्या पैसा कमाने के लोभ से ऋतु-स्राव के दिनों में भी पर-पुरुष से आलिङ्गन करती है। अब हमारे वेश्या-प्रेमी स्वयं विचार लेवें कि उनकी क्या अधोगति होनी चाहिए ? आयुर्वेद में लिखा है:—

रजस्वलां गतवतो नरस्या संयतात्मनः।
दृष्ट्यायुस्तेजसां हानिरधर्मश्चततो भवेत्॥

अर्थात्—रजस्वला के साथ प्रसङ्ग करने से दृष्टि, आयु और तेज नाश होता है तथा घोर पाप लगता है।

वेश्याओं के यहाँ तो ऋतुकाल में अथवा जब इच्छा हो, तब सर्वदा यह व्यापार चलता ही रहता है। उन्हें तो अपने पैसे बनाने से ग़रज़ है। कोई जीवे अथवा मरे, इससे उन्हें कोई प्रयोजन नहीं होता। वेश्यागमन से अनेक व्याधियाँ देह में प्रवेश करती हैं। ये व्याधियाँ सिर्फ़ वेश्यागामी के शरीर ही के साथ नष्ट हो जाती हैं, सो नहीं; बल्कि परम्परा से पीढ़ियों दर पीढ़ियों तक चली जाती हैं। पिता के दोष से सन्तान रोगी बन कर आमरण क्लेश भोगती रहे, इससे बढ़ कर दुख की बात और क्या हो सकती है?

आज ऐसा कोई देश नहीं, ऐसा कोई समाज नहीं जहाँ वेश्याएँ न हों। यद्यपि वेश्याओं के द्वारा संसार का उपकार होता है, तथापि उपकार की अपेक्षा अपकार अधिक होता है, जिसे लिख कर समझाया जाना कठिन है। यदि आज संसार में वेश्याएँ न होतीं तो लोग काम-प्रवृत्ति की ताड़ना से ज्ञान-शून्य होकर, अपनी पाप-दृष्टि सती स्त्रियों पर डालते और उनके सतीत्व को नष्ट करने में ज़रा भी कोर-कसर न करते। वेश्याओं से थोड़ा सा उपकार अवश्य होता है, परन्तु वेश्यागमन में दोष बहुत हैं, अतएव प्रत्येक पुरुष को चाहिए कि वेश्यागमन से सदा दूर रहे।

वेश्याओं का कार्य खुल्लमखुल्ला है, किन्तु ऐसी बहुत सी नारियाँ देश में मौजूद हैं, जो अपने पति के रहते हुए भी अथवा उच्चकुल में रहते हुए भी वेश्या-वृत्ति करती हैं। ये स्त्रियाँ समाज की आँखों में धूल झोंक कर अपना पाप-कार्य करती हैं। भले-भले घरों में ऐसा दुष्कृत्य देखा जाता है। इसमें स्त्री-पुरुष दोनों

का ही दोष है। कुछ कामी लोग स्त्रियों को ऐसा करने के लिए बाध्य करते हैं। कोमल और सरल स्वभाव वाली स्त्री-जाति बिना कुछ आगा-पीछा सोचे इस पाप-पङ्क में फँस जाती है। फिर क्या है :—

एक नारि जब दो से फँसी, जैसे दो वैसे असी।

विधवा स्त्रियाँ प्रायः पर-पुरुषों के चङ्गुल में शीघ्र ही आ जाती हैं। फल यह हो रहा है कि नित्य हजारों गर्भ गिराए जाते हैं। जार-कर्म से उत्पन्न बालक मार डाले जाते हैं। इस तरह देश में भ्रूण-हत्या जैसे महान् पाप की उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। इस पाप से देश का धीरे-धीरे सर्वनाश हो रहा है। लिखते हुए लेखनी काँपती है और हृदय धड़कता है कि "आज इस देश में ऐसे चाण्डाल, नारकी मनुष्यों की कमी नहीं है, जो अपने घर में अपनी भौजाई, छोटे भाई की स्त्री, काकी, बहिन, पुत्री आदि के साथ अपना मुँह काला करते हैं।" प्यारे पाठको! यह काम-वृत्ति की पराकाष्ठा है। इससे बढ़ कर और पाप क्या हो सकता है? पर-स्त्री-गमन ने यहाँ तक पहुँचा दिया कि हम अपनी माता, बहिन, और पुत्री तुल्य नारियों को भी नहीं छोड़ते। ऐसे पुरुषों को स्वयं चाहिए कि तत्काल ऐसा करने के पहले थोड़ा जहर खाकर मर जावें।

जिस प्रकार कुछ पुरुष परस्त्री-गामी होते हैं, उसी प्रकार अनेक स्त्रियाँ भी परपुरुष-गामिनी होती हैं। यदि स्त्रियाँ ऐसी न होतीं तो

आज संसार में वेश्याओं का नाम ही न होता। कुछ तो खुल्लमखुल्ला वेश्यावृत्ति स्वीकार कर लेती हैं और कुछ छुक-छिप कर व्यभिचार में रत हो जाती हैं। ऐसी पतिवञ्चक स्त्रियाँ एक-दो नहीं, लाखों-करोड़ों हैं। जो कुछ आज़ाद होती हैं, वे तो बाहिरी पुरुषों से भी प्रेमालिङ्गन करती हैं, लेकिन जो थोड़ी-बहुत बन्धन में होती हैं, वे अपने घर में आने-जाने वाले नौकर आदि के साथ अपना आपा गँवाती हैं। गाड़ीवान, कोचवान, चौकीदार, रसोइये, पुजारी, कुँजड़े, पानी वाले, फेरी वाले, चूड़ी वाले, साधू, फ़क़ीर, गोटे वाले, खोमचे वाले, धोबी, तेली, तम्बोली, कहार आदि आज़ादी के साथ स्त्रियों में आते-जाते हैं। घर के लोग इनके आने-जाने में उदारचेत्ता रहते हैं। स्त्रियाँ इन लोगों के साथ हँस-हँस कर बातें करती हैं; उनके पतिदेव बैठे-बैठे देखा-सुना करते हैं, लेकिन कुछ भी विचार नहीं करते। पाठको ! आप लोग मेरे इस कथन पर शायद ही विश्वास लावेंगे, लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अपने पति के सामने पातिव्रत्य का ढोंग दिखाने वाली नारियाँ इन लोगों के साथ अपना आपा गँवाती हैं। स्त्रियों को ऊँच-नीच का कुछ भी विवेक नहीं रहता। यदि आपको मेरी इस बात पर बिलकुल ही अविश्वास हो तो मैं इस समय का उदाहरण आपको न देकर महाराजा भर्तृहरि की महारानी पिङ्गला की कथा पढ़ जाने का अनुरोध करता हूँ।

परस्त्री-गमन और परपुरुष-गमन स्त्री-पुरुष के पवित्र दाम्पत्य प्रेम के लिए पैनी छुरी है। वेश्यागमन तो अपने आप अपना

सर्वनाश करता है। जो पुरुष विवाह करके अच्छी सन्तान पैदा करना चाहते हैं, उन्हें स्वप्न में भी वेश्याओं के घर की ओर मुख नहीं करना चाहिए। जो स्त्रियाँ अच्छे बालकों की माता बनना चाहती हों, उन्हें चाहिए कि स्वप्न में भी परपुरुष पर प्रेम-दृष्टि न करें। डॉक्टरों का कहना है कि एक क्षेत्र में कई प्रकार के वीर्यपात से उपदंश रोग पैदा होता है। यही कारण है कि परस्त्री-गामी और परपुरुष-गामिनी एक न एक दिन उपदंश रोग के चुङ्गुल में अवश्य ही फँस जाते हैं। उपदंश रोग भयानक और संक्रामक है। वेश्यागामी प्रायः इस रोग में फँसे देखे जाते हैं। उपदंश रोग से इन्द्रिय सड़-गल कर नष्ट हो जाती है तथा सारे शरीर में इस रोग के जन्तु प्रवेश कर जाते हैं। कभी-कभी इससे सारा शरीर सड़ जाता है और मृत्यु हो जाती है। वेश्यागमन से केवल उपदंश ही नहीं होता, बल्कि प्रमेह, सूजाक, मज्जागत ज्वर, शुक्र तारल्य, रक्त विकृति, पथरी और गठिया, बादी आदि रोग भी हो जाते हैं। वेश्यागमन के फल से और भी कितने ही सर्वनाशकारी कार्य होते हैं; जिन्हें हम लिख कर समाप्त नहीं कर सकते। सारांश यह कि पुरुषों को कभी भी परस्त्री-गमन अथवा वेश्यागमन नहीं करना चाहिए और इसी भाँति स्त्रियों को भी कभी परपुरुष के साथ सम्भोग नहीं करना चाहिए। इस प्रकार जो स्त्री-पुरुष अपना पवित्र जीवन व्यतीत करते हैं, उन्हें फल-स्वरूप अत्यन्त सुन्दर और सर्वगुण-सम्पन्न सन्तान प्राप्त होती है।

यहाँ तक हमने स्त्री-प्रसङ्ग पर लिखा और इस विषय को यथा-

शक्ति समझाने का प्रयत्न किया। अब हम आगे "गर्भ रहा अथवा नहीं" इसके जानने के उपाय बतलावेंगें।

(४) गर्भ पहिचानने की रीति

स्त्री को गर्भ रहा या नहीं, इस बात को मैथुन के पश्चात् ही चतुर मनुष्य जान लेते हैं। मैथुनोपरान्त गर्भाधान हो जाने के तात्कालिक लक्षण वाग्भट्ट में इस प्रकार लिखे हैं :—

तृप्तिर्गुरुत्वं स्फुरणं शुक्रास्त्रानुबन्धनम्।
हृदयस्पन्दनं तन्द्रा तृड्ग्लानिर्लोमहर्षणम्॥

अर्थात्—संयोग के बाद ही, मैथुन से तृप्ति, थकान, योनि का फड़कना, गर्भाशय में भार और कम्प, तृषा, तन्द्रा आदि स्त्री को मालूम होने लगता है। गर्भ रह जाने पर छाती फड़कने लगती है, जी मिचलाने लगता है, रोम खड़े हो जाते हैं, वीर्य और आर्तव बाहर नहीं आता, ये लक्षण गर्भ रह जाने के हैं।

यदि ध्यानपूर्वक इन बातों का विचार रक्खा जावे तो बिना कठिनाई के चतुर स्त्री मालूम कर सकती है कि गर्भ रहा या नहीं।

कुछ दिनों बाद यह मालूम करने के लिए कि स्त्री गर्भवती है या नहीं—बहुत से तरीक़े हैं। ये तरीक़े स्त्रियों को मालूम होते हैं और प्रायः स्त्रियाँ मालूम भी कर लेती हैं। हम भी यहाँ कुछ चिह्नों का उल्लेख करते हैं :—

गर्भ रहने के पश्चात् ज्यों-ज्यों गर्भ बढ़ने लगता है, त्यों-त्यों गर्भवती के शरीर में भी परिवर्तन होने लगता है। जिस समय

चित्र-नम्बर ११
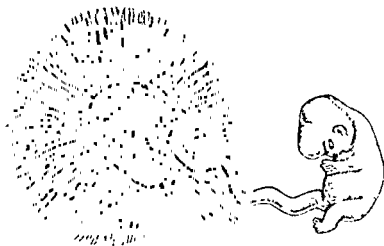
असली आकार
वृद्धि-क्रम (दूसरा महीना)

चित्र नं० ३ (शुक्राशय)
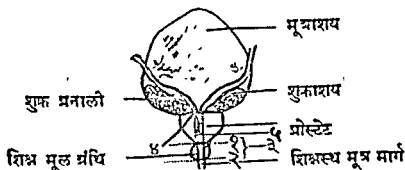
१-२=दो कलाएँ
३=कलाओं के बीच में रहने वाला मूत्रमार्ग का भाग
४=शुक्र-स्रोत
५=प्रोस्टेट में रहने वाला मूत्र-मार्ग का भाग

Fine Art Printing Cottage, Allahabad.

गर्भ रहता है, उस समय बहुत ही कम स्त्रियाँ समझ सकती हैं कि मुझे गर्भ रहा या नहीं। इसीलिए गर्भ निश्चय करने के लिए ऐसे लक्षणों की जानकारी होनी चाहिए, जिसे सर्व-साधारण सहज ही में समझ सकें।

गर्भाशय में गर्भ रहने के पश्चात् और उस गर्भ के बढ़ने के साथ-साथ, गर्भवती के शरीर में अधिक तेज दिखाई पड़ने लगता है। तेज के साथ उत्साह भी दृष्टि आता है। उत्साह इतना बढ़ता है कि मानो गर्भस्थ बालक में चेतनता प्रदान करने के लिए ही उसकी वृद्धि हुई है। शरीर पहिले की अपेक्षा गर्भकाल में अधिक शक्तियुक्त और पुष्ट हो जाता है। अत्यन्त नाँज़ुक और दुर्बल शरीर वाली स्त्री में उपरोक्त लक्षण अधिक स्पष्ट होता है। इसके अतिरिक्त सगर्भा होने पर थोड़ा-बहुत परिवर्त्तन प्रत्येक स्त्री के शरीर में अवश्य होता है, जिसे सगर्भा स्त्री सहज ही में मालूम कर लेती है।

गर्भवती स्त्री का प्रातःकाल बिछौने से उठते ही जी मचलाता है, अगले महीने में मासिक-धर्म नहीं होता, दोनों स्तन पुष्ट हो जाते हैं और स्तनों के मुख पहिले की अपेक्षा अधिक काले हो जाते हैं। स्तनों से दूध के समान तरल टपकने लगता है। पेट पर रोएँ उठे रहते हैं। आँखों की पलकें अधिक मिचने लगती हैं। बिना कारण ही क़ै (वमन) का होना, सुगन्ध का बुरा मालूम होना, मुँह में थूक अधिक आना, हमेशा थकान मालूम होना, पेट बढ़ना इत्यादि लक्षण गर्भवती के हैं।

गर्भावस्था में स्त्रियाँ बड़ी ही अस्वस्थ जान पड़ती हैं। ऋतु-धर्म न होना गर्भ का सबसे सच्चा प्रमाण है। जिन स्त्रियों को अनियमित रूप से मासिक-धर्म होता है, उनके लिए यह लक्षण ठीक नहीं कहा जा सकता। कभी-कभी स्त्रियों का मासिक-धर्म डेढ़-दो महीने के लिए रुक जाता है, जिससे गर्भ रहने का भ्रम हो जाता है। कभी-कभी ऐसा भी देखने में आया है कि गर्भवती स्त्रियों को भी मासिक-धर्म चालू रहता है। अतएव रज-स्राव का बन्द हो जाना गर्भ-धारण का ठीक लक्षण नहीं कहा जा सकता। इसके विपरीत कई स्त्रियाँ बिना रजोदर्शन के ही गर्भवती होती देखी गई हैं; किन्तु ऐसा बहुत कम होता है।

गर्भ-धारण का दूसरा चिह्न क़ै होना, जी मचलाना इत्यादि है; लेकिन ये लक्षण समस्त स्त्रियों को नहीं होते। गर्भिणी स्त्रियों को जो वमन होता है, वह गर्भ-धारण के दूसरे अथवा तीसरे सप्ताह से होता है; और कभी-कभी गर्भ रहने के दूसरे-तीसरे दिन से ही क़ै होने लगती है। इस प्रकार जी का मचलाना किसी-किसी स्त्री को बच्चा पैदा होने तक रहता है; परन्तु साधारणतः प्रसव के ४ महीने पहिले ही बन्द हो जाता है। जो स्त्रियाँ कमज़ोर और रोगिणी होती हैं, उन्हें बिना गर्भ रहे ही क़ै होना, जी मचलाना आदि रोग होते रहते हैं। यद्यपि हरेक गर्भवती स्त्री का जी मचलाता है; यह बात ठीक नहीं है, तथापि स्वस्थ और सबल स्त्री का जी मचलाना, क़ै होना इत्यादि लक्षण गर्भ-स्थिति की सूचना देते हैं। कई स्त्रियों का न तो जी मचलाता और न क़ै होती है;

लेकिन मुँह में थूक अधिक आता है। कई स्त्रियों को प्रसव के समय क़ै होती है। क़ै होना उत्तम लक्षण माना गया है। जिन स्त्रियों को क़ै नहीं होती, प्रायः उनका गर्भ स्राव हो जाता है, अथवा यों कहा जा सकता है कि जिस स्त्री को क़ै अधिक होती है; उसे गर्भ-स्राव का भय नहीं रहता। सगर्भा स्त्री की क़ै अजीर्ण अथवा बदहज़मी की क़ै नहीं होती। गर्भिणी को सुबह उठते ही क़ै होने लगती है और क़ै के बाद कुछ खाने की इच्छा होती है।

स्तनों में परिवर्त्तन होना गर्भवती का एक लक्षण माना है। गर्भ धारण के चौथे सप्ताह से, १२ वें सप्ताह के अन्दर स्तन का आकार बढ़ता है। स्तन का मुँह काला होने लगता है और उन पर नीले रङ्ग की बड़ी-बड़ी नसें दिखाई देती हैं। स्तन कठोर हो जाते हैं। गर्भवती स्त्री के स्तन का अग्रभाग कुछ बड़ा और सख़्त हो जाता है। उसके आस-पास चारों ओर काले बिन्दु-दाग़ दिखाई पड़ने लगते हैं। प्रति मास ये दाग़ संख्या और आकार में बढ़ते ही जाते हैं। इनके कारण त्वचा का रङ्ग कुछ विचित्र सा हो जाता है। स्तनों में परिवर्त्तन कब होता है, यह कुछ निश्चय नहीं कहा जा सकता। किसी के जल्दी और किसी के देर से कुचों में परिवर्त्तन होता है।

स्तनों में दूध का पैदा होना भी एक लक्षण है। गर्भिणी के स्तनों की दुग्ध-ग्रन्थियों में गर्भ-स्थिति के दूसरे मास से दूध बनने लगता है। प्रथम बार की गर्भिणी के स्तनों के अग्रभाग को दबाने

से यदि सफ़ेद पानी सा निकले तो उसे गर्भ रह गया है; ऐसा निश्चय मानना चाहिए। जो स्त्री एक-दो बालक की माता हो, उसके गर्भ पहिचानने का यह तरीक़ा है कि उसका स्तन बालक के मुँह में दिया जावे। यदि उसके मुँह में दूध न आवे तो समझना चाहिए कि गर्भ रह चुका है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि गर्भ नहीं रहता और स्तन बड़े हो जाते हैं, तथा थोड़ा दूध भी निकलता है।

पेट का बड़ा होना गर्भ की सूचना देता है। यह लक्षण अकाट्य है; परन्तु कभी-कभी रोग से पेट बढ़ने लगता है। गर्भिणी का पेट तीसरे महीने से बढ़ने लगता है और नाभी का गड्ढा भरने लगता है। पाँचवें महीने तक नाभी का गड्ढा बिलकुल भर जाता है और बहुत ध्यान देने पर थोड़ा दिखाई देता है; किन्तु छठे मास वह पेट के साथ मिल जाता है। छः मास तक गर्भ नाभि के नीचे रहता है, परन्तु सातवें महीने से वह ऊपर बढ़ने लगता है। गर्भवती का उदर तीसरे महीने से आठवें महीने तक बढ़ता है। जलोदर, गुल्म वायु आदि से बढ़े हुए पेट में और गर्भयुक्त पेट में इतना ही अन्तर होता है कि गर्भिणी का पेट बीच में से उठा रहता है और रोगाक्रान्त पेट चारों ओर से बढ़ता है।

उदर में बालक का फड़कना भी गर्भ-स्थिति का लक्षण है। तीसरे महीने के अन्त में अर्थात् चौथे महीने गर्भ फड़कने लगता है। उदर में बच्चे का फड़कना गर्भ का स्पष्ट चिह्न है, इसमें सन्देह के

लिए कोई स्थान ही नहीं रह जाता। कई स्त्रियों के छः-सात महीने तक भी गर्भ नहीं फड़कता। कई बार बालक पेट के भीतर कूदता हुआ दिखाई पड़ता है। कभी-कभी कई दिनों के लिए फड़कना बन्द हो जाता है और फिर फड़कने लगता है। गर्भिणी जब भूखी-प्यासी होती अथवा जब उसे किसी अन्य प्रकार की बेचैनी होती है, तब गर्भ अधिक फड़कता है; क्योंकि क्षुधा, तृषा, बेचैनी आदि का प्रभाव गर्भस्थ बालक पर तत्काल होता है।

गर्भिणी होने के इतने लक्षण बताए गए हैं; परन्तु कभी-कभी इन लक्षणों में से एक लक्षण भी नहीं होता और स्त्रियाँ गर्भिणी होती हैं। स्त्री गर्भिणी है या नहीं, कभी-कभी इसका ज्ञान लेना बहुत ही कठिन हो जाता है। अब हम यहाँ यह जानने की तरकीब बतलावेंगे कि गर्भ में लड़का है या लड़की!

जिस स्त्री के गर्भ में लड़का होता है, उसके गर्भाशय में दूसरे महीने गोल पिण्ड-सा प्रतीत होने लगता है। गर्भवती की दाहिनी आँख कुछ बड़ी मालूम होती है और पहिले-पहिल दाहिने स्तन में ही दूध आता है। दाहिनी जङ्घा मोटी हो जाती है, मुख प्रसन्न रहता है। पुरुष-नाम वाली चीज़ों की इच्छा होती है, और स्वप्न में भी पुरुष-वाचक वस्तु मिले; ऐसी इच्छा होती है। लड़का दाहिनी कोख में रहता है। स्त्री जो कुछ भी कार्य करेगी, वह दाहिने अङ्ग से ही करेगी। उठते वक़्त दाहिना हाथ टेक कर उठेगी। चलते वक़्त पहिले दाहिना पैर आगे बढ़ावेगी। अच्छी-अच्छी वस्तु खाने की इच्छा होगी।

जिसके गर्भ में कन्या होती है, उसके गर्भाशय में दूसरे महीने माँस का लम्बा पिण्ड प्रतीत होता है। गर्भिणी की रुचि स्त्री-संबंधी वस्तुओं पर अधिक होती है। हरेक कार्य में बाएँ अङ्ग से काम लेती है। मिट्टी, कोयले आदि खाने की रुचि होती है। रक्त फीका हो जाता है। भयङ्कर स्वप्न आते हैं। निद्रा बहुत आती है। मैथुन की इच्छा होती है इत्यादि लक्षण गर्भ में कन्या होने के हैं। और भी पुत्र अथवा पुत्री जान लेने के कई उपाय हैं; किन्तु जिनमें हमें विश्वास था वे ही हमने यहाँ लिखे हैं।

सातवाँ अध्याय

(१) गर्भ का वृद्धि-विकास
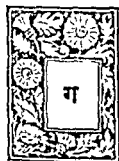
र्भाधान किस प्रकार होता है, यह बात हम पीछे भली-भाँति समझा चुके हैं। अब हम यहाँ गर्भ में जीव की शारीरिक वृद्धि किस प्रकार होती है, यह समझाने की चेष्टा करेंगे। गर्भस्थली से अन्दर भ्रूण किस प्रकार बढ़ता है, इस बात का ज्ञान हुए विना सन्तान-शास्त्र का ज्ञान अधूरा ही रह जाता है। उत्तम सन्तान पैदा करने के लिए पाठकों को बालक का वृद्धि-क्रम खूब ध्यान में रखना चाहिए। गर्भाशय में गर्भ किस प्रकार बढ़ता है, यह अद्भुत और विचित्र क्रिया पुरुष की अपेक्षा स्त्री को विशेष ध्यानपूर्वक समझ लेनी चाहिए। इस विषय का ज्ञान प्राप्त किए विना कोई भी स्त्री माता बनने की अधिकारिणी नहीं है। स्त्रियाँ नौ-दस महीने तक अपने पेट में गर्भ का भार उठाती हैं; किन्तु गर्भ क्या वस्तु है, वह कहाँ पर रहता है और कैसे बढ़ता है इत्यादि बातों की जानकारी के लिए अव्वल नम्बर की मूर्खा होती हैं।

गर्भ के जीव का प्रारम्भ एक जीवयुक्त अण्डे से होता है।

यह अण्डा क्या है, शुक्राणु क्या है इत्यादि बातें हम इसी पुस्तक के दूसरे अध्याय में अच्छी तरह समझा आए हैं। यह अण्डा स्त्री के अण्डाशय की एक पेशी में रहता है। वहाँ से वह अण्डाशय और गर्भाशय के बीच की नली के मुख पर आता है। यहाँ यह प्रवेश करता और फूट जाता है। यहाँ पर यह अण्डा एक सप्ताह तक रहता है। एक सप्ताह के बाद वह धीरे-धीरे गर्भस्थान की थैली अर्थात् कमल में आने लगता है और वहाँ पर गर्भस्थान की खाली थैली के एक भाग में चिपक जाता है। वहाँ पर थैली की सूक्ष्म त्वचा बढ़ कर इस अण्डे को आच्छादित कर लेती है।

गर्भधारण करने के पश्चात् गर्भाशय की श्लैष्मिक कला मोटी होने लगती है। उसकी नलियों की आकार वाली ग्रंथियाँ अधिक लम्बी हो जाती हैं। श्लैष्मिक कला अण्डे को अर्थात् भ्रूण को चारों ओर से आच्छादित कर लेती है, अर्थात् भ्रूण के चारों ओर श्लैष्मिक कला का एक वेष्ट बन जाता है। अब गर्भाशय की कला गर्भकला कहलाती है। जब गर्भ गर्भाशय से बाहर निकलता है, तब इसका अधिकांश उखड़ कर बाहर निकल जाता है। इस कारण इस कला को "पतनशील गर्भकला" कहते हैं। इस उखड़ी हुई कला के स्थान में फिर नवीन कला तैयार हो जाती है। धीरे-धीरे भ्रूण बड़ा होता है। उसके ऊपर सेलों तथा मौलिक तन्तुओं से बने हुए दो आवरण बन जाते हैं। एक आवरण बाहर होता है और पतनशील गर्भकला से मिला रहता है। इसे "भ्रूण-बाह्यावरण"

कहते हैं (देखो चित्र नं० ७ में १)। दूसरा आवरण इसके भीतर होता है, इसे भ्रूण-अन्तरावरण कहते हैं (देखो चित्र नं० ७ में २)।

बाह्यावरण धीरे-धीरे बढ़ कर मोटा हो जाता है और उसके बाह्य-पृष्ठ पर बहुत से छोटे-छोटे बाल जैसे अङ्कुर निकल आते हैं (देखो चित्र नं० ७ और चित्र नं० ८ में १)। इन अङ्कुरों द्वारा बच्चे के लिए गर्भाशय के लसीका से पोषक-पदार्थों का आचूषण होता है।

ज्यों-ज्यों गर्भस्थ जीव बड़ा होता जाता है, त्यों-त्यों वह गर्भाशय के अन्दर स्थान रोकता है। जिस स्थान पर भ्रूण लगा रहता है, वहाँ बाह्यावरण के अङ्कुर अधिक और घने बनते हैं, बाक़ी और जगहों में ये छोटे और थोड़े होते हैं। दूसरे मास के पश्चात् उस स्थान को छोड़ कर, जहाँ भ्रूण दीवार से लगा हुआ है, बाक़ी सब जगहों में अङ्कुर बनने बन्द हो जाते हैं। जो अङ्कुर बन चुके थे, वे सिकुड़ कर छोटे बनने लगते हैं और आख़िर में बिलकुल ही जाते रहते हैं; परन्तु जहाँ भ्रूण लगा हुआ है, वहाँ के अङ्कुरों की संख्या बढ़ जाती है और वे अधिक लम्बे तथा बड़े हो जाते हैं। गर्भकला के इस भाग में छोटे-छोटे आशय बन जाते हैं, जिनमें रक्त भरा रहता है। इस रक्त में बाह्यावरण के अङ्कुर डूबे रहते हैं। चौथे-पाँचवें सप्ताह में भ्रूण और उसके अन्तरावरण के बीच में कुछ द्रव इकट्ठा होने लगता है। इस द्रव को "गर्भोदक" कहते हैं। गर्भोदक के दबाव से अन्तरावरण, बाह्यावरण से जा मिलता है और उससे ख़ूब चिपट जाता है। छठे-सातवें महीने तक इस

गर्भोदक की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ती है। नवें मास में कोई सेर सवा सेर के लगभग गर्भोदक एकत्र हो जाता है।

जिस दिन गर्भाधान होता है, उस दिन बीज $\frac{1}{200}$ के बराबर होता है। दूसरे सप्ताह के आख़ीर तक बीज का वज़न लगभग एक ग्रेन के और आकार $\frac{1}{12}$ इञ्च के लगभग हो जाता है (देखो चित्र नं० ७)। तीसरे सप्ताह के आख़ीर में भ्रूण का आकार बाजरे के दाने के बराबर अथवा लाल चींटी के बराबर होता है (देखो चित्र नं० ९)।

चौथे सप्ताह अथवा पहिले महीने के समाप्त होते-होते भ्रूण के सिर तथा पैरों का आकार बनने लगता है। लम्बाई लगभग $\frac{1}{2}$ इञ्च और भार $1\frac{1}{4}$ से $1\frac{1}{2}$ माशा तक। एक सिरा, जो मोटा होता है, वह सिर बनेगा। दूसरा सिरा पतला और नोकीला होता है, इधर नाल लगा है; यहाँ पैर बनेंगे। मुख के स्थान पर एक दरार दिखाई दे रहा है। आँखों की जगह दो काले तिल के निशान हैं (देखो चित्र नं० १०)।

छठे सप्ताह भ्रूण के सिर और धड़ अलग-अलग दिखाई पड़ने लगते हैं। सिर में चेहरा भी साफ़ मालूम होने लगता है। नाक, आँख, कान, मुँह के छिद्र बन गए हैं। हाथों की अँगुलियाँ बन गई हैं। इस वक़्त लम्बाई इञ्च से $1\frac{1}{2}$ इञ्च तक और वज़न ३ माशे से ५ माशे तक होता है।

दूसरे महीनेमें नाक, कान, ओंठ आँखें आदि साफ़ मालूम होने लगते हैं। जननेन्द्रिय की रचना आरम्भ हो

जाती है; परन्तु वह लड़का है या लड़की, यह साफ़ रीति से मालूम नहीं किया जा सकता। गुदा-मार्ग दिखाई पड़ने लगा है। फुस्फुस, प्लीहा, उपवृक्क दिखाई पड़ते हैं। अन्त्र का वह भाग, जो नाल में चला गया था, अब उदर में आने लगा है। नाल में वल पड़ने लग गए हैं। इस वक्त लम्बाई १$\frac{1}{5}$ इञ्च के लगभग और वजन ८ से २० माशे तक होता है। (देखो चित्र नं० ११)।

तीसरे महीने—गर्भ में भ्रूण की आँखों की पलकें तो बन जाती हैं; किन्तु बन्द रहती हैं, खुलतीं नहीं। नाक के नथुने और ओंठ बराबर साफ़ दिखाई देते हैं; मुँह बन्द रहता है। इसी महीने में स्त्री-पुरुष का भेद बताने वाले अवयव बनते हैं और वे साफ़ मालूम होने लगते हैं। सिर बड़ा, किन्तु कठोर नहीं होता। कमर का भाग भी प्रायः ऐसा ही होता है। इस मास में उपवृक्क की ग्रन्थियाँ बन जाती हैं। कलेजा कुछ बड़ा रहता है। हाथ-पैर परिपूर्ण हो जाते हैं। लम्बाई २-३ इञ्च और वजन २॥ छटाँक के लगभग होता है। (देखो चित्र नं० १२)।

चौथे महीने—गर्भस्थ बालक लम्बाई में ६ इञ्च के लगभग हो जाता है। सिर की लम्बाई सारे शरीर की लम्बाई से लगभग $\frac{1}{4}$ होती है। टटरी पर तथा अन्य कई स्थानों में रोएँ-से दिखाई देने लगे हैं। गर्भ का लिङ्ग स्पष्ट हो गया है। हाथों और पाँवों में कुछ गति होने लगी है। अँगुलियों पर नाख़ून बनने लगे हैं। मस्तक और कलेजे की अपेक्षा दूसरे अवयवों में वृद्धि अधिक दिखाई पड़ रही है। सिर पर छोटे-छोटे बाल निकलने लगे हैं।

बालों में कोई रङ्ग नहीं मालूम पड़ता। त्वचा कुछ कठोर हो
है और गुलाबी रङ्ग की है। ठुड्डी अब अच्छी तरह बन गई है।
हाथों और पावों की लम्बाई अब लगभग बराबर ही है (दे
चित्र नं० १३)।

पाँचवें महीने—गर्भ में भ्रूण की लम्बाई लगभग १० इं
और भार लगभग एक पौण्ड के हो जाता है। रोएँ कुछ बढ़ जा
हैं। यकृत अच्छी तरह बन चुकता है। आँत में कुछ-कुछ म
जमा होने लगता है। त्वचा पर एक चिकना पदार्थ बनने लग
है, जो गर्भोदक से त्वचा की रक्षा करता है। हाथों की अपे
पाँव लम्बे हो गए हैं। भ्रूण अब अच्छी तरह हरकत करता है
जो गर्भवती को स्पष्ट-रूप से मालूम होती है। सिर अब भी बड़ा
ही है। नाखून भाक दिखाई देने लगे हैं।

छठे महीने—सिर से एड़ी तक भ्रूण की लम्बाई लगभग एक
फुट और वजन दो पौण्ड होता है। त्वचा में सल पड़ने लगे हैं
कहीं-कहीं त्वचा के नीचे वसा आ गई है। आँखों की पलकें और
भौंहें बनने लगी हैं। सिर के बालों में रङ्ग आ रहा है।
पलक अभी जुड़ी ही रहती हैं। यदि इस महीने में भ्रूण, गर्भ से
बाहर आ जाय तो वह कुछ देर श्वास लेकर मर जायगा।

सातवें महीने—गर्भस्थ शिशु की लम्बाई १४ इञ्च और भार
३ पौण्ड के लगभग होता है। पलकें खुल गई हैं। सिर पर
बाल खूब निकल आए हैं। त्वचा के नीचे वसा अधिक हो जाने
से शरीर अधिक मोटा हो गया है। अन्त्र में मल इकट्ठा हो

गया है। बसा बढ़ जाने से शरीर की सब झुर्रियाँ मिट गई हैं। इस मास के अन्त में यदि बच्चा गर्भ से बाहर आ जाय, तो वह अधिक सावधानी से पालन करने पर भी विरले ही जीते हैं। इस महीने में बच्चा गर्भ में उलट जाता है अर्थात् सिर नीचे और पैर ऊपर हो जाते हैं।

आठवें महीने—गर्भ में बालक की लम्बाई १६ तथा १७ इञ्च और वजन ४ तथा ४½ पौण्ड के लगभग होता है। नख अँगुलियों के छोर तक पहुँच गए हैं। त्वचा का लाल रङ्ग बदल कर माँस के समान हो रहा है। खोपड़ी पर अब बाल अधिक बढ़ गए हैं। शरीर के अन्य अवयवों पर जो रोएँ निकल आए थे, वे गायब होने लगे हैं। इस महीने में बच्चा लम्बाई तथा मोटाई में एक समान बढ़ता है। पसली, हाथ, पाँव पूर्ण रूप से बन चुके हैं। (देखो चित्र नं० १४)। इस महीने में उत्पन्न हुआ बच्चा होशियारी से पालन करने पर जी सकता है। प्रायः अठमासे बालक जीते देखे गए हैं।

नवें महीने—भ्रूण की लम्बाई डेढ़ फीट और वजन सवा दो सेर अथवा २॥ सेर के लगभग होता है। इस महीने में अण्ड, अण्ड-कोष में पहुँच जाते हैं। त्वचा का रङ्ग पीला और शरीर बहुत कोमल होता है।

दशवें महीने—गर्भस्थ बालक २० इञ्च के क़रीब लम्बा और ३। सेर तथा ३॥ सेर के लगभग वजन में होता है। शरीर सम्पूर्ण बन चुका है। हाथ के नाख़ून अँगुलियों से आगे निकले हुए हैं।

पैरों की अँगुलियों के नख आगे नहीं हैं। रोएँ गायब हो गए लेकिन कन्धों पर मौजूद हैं। समग्र मल आँत में एकत्र हो ग है। नाल शरीर के मध्य से लगभग ¾ इञ्च नीचे लगा हुआ है यदि बच्चा जीवित उत्पन्न होता है तो वह ज़ोर से चिल्लाता और यदि उसके ओठों के बीच में कोई वस्तु दे दी जाती है। वह उसे चूसता है।

पाठक समझ गए होंगे कि गर्भस्थ शिशु गर्भाशय में एक झि के भीतर जिसमें लगभग सवा सेर गर्भोदक होता है, रहता है कमल माता के गर्भाशय के किसी भाग में लगा हुआ है। माता कमल-द्वारा माता से शुद्ध पोषक पदार्थ पाकर बढ़ता रहा औ अशुद्ध पदार्थ माता को लौटाता गया। कमल-नाल उदर में जुड़ा हुआ है, यहाँ नाभि बनेगी। गर्भस्थ बालक का जीवन कमल औ नाल पर निर्भर है, अतएव यहाँ कमल और नाल पर भी थोड़ा सा विचार करना ज़रूरी है।

(२) कमल और नाल

गर्भस्थ भ्रूण गर्भाशय की दीवार से एक रज्जु (रस्सी) द्वारा लटकता रहता है, इसी रज्जु का नाम "नाल" अथवा नाभि नाल है। नाल का एक सिरा बच्चे की नाभि से लगा रहता है और दूसरा सिरा कमल अर्थात् गर्भाशय से। नाल एक ही नली नहीं है। यह कई छोटी-छोटी नलियों से बना होता है। इसके मुख्य अवयव दो धमनियाँ और शिरा हैं। इनके अतिरिक्त और भी

कई चीजें होती हैं। ये सब चीजें एक लसदार पदार्थ नि बहुत ही
में मिली रहती हैं और इनके ऊपर एक खोल चढ़ा रहता
की लम्बाई लगभग बच्चे की लम्बाई के बराबर ही हो
कभी यह बहुत ही छोटा और कभी अधिक लम्बा गा हुआ
है। रक्त-वाहिनियाँ कमल में पहुँच कर अनेक शाखाओं में । है तो
हो जाती हैं। वाह्यावरण के प्रत्येक अङ्कुर में ये छो हर नहीं
जैस तरह
शाखाएँ रहती हैं।

इस बात को सब लोग जानते हैं कि गर्भस्थ शिशु को ाहिए।
के द्वारा पोषण प्राप्त होता है। बालक माता के रक्त से पोषक ाय में
प्राप्त करता है। यह पोषण कमल और नाल के द्वारा प्राप्त हो
है। नाल को अङ्गरेजी भाषा में (Embilical Cord) कहते हैं। कमल नरम स्पञ्ज के समान गोलाकार अवयव होता है। जहाँ नाल का अन्त होता है, उसे कमल कहते हैं। यह कमल गर्भकला से, जिससे अङ्कुर विशिष्ट आवरण चिपटा रहता है, बनता है। कमल में रक्त से भरे हुए बहुत से छोटे-छोटे स्थान होते हैं; वाह्यावरण के अङ्कुर इन्हीं रक्तपूर्ण स्थानों में डूबे रहते हैं। अङ्कुरों के भीतर सूक्ष्म रक्त-वाहिनियाँ रहती हैं। कमल साधारणतः गर्भाशय के गात्र में ऊपर की ओर या उसकी अगली अथवा पिछली दीवार में बनता है। कभी-कभी वह गर्भाशय के अन्तर्मुख के निकट बनता है। इस जगह कमल का बनना अच्छी बात नहीं है; क्योंकि प्रसव-काल में अधिक रक्त बहने से जननी की मृत्यु का भय है।

पैरों की तीसरे महीने बनता है, तब तक नाल की रक्त-वाहिनि
लेकिन के गड्ढों से रक्त चूस कर बालक को पोषक-तत्त्व प्र
है। ना। कमल तीसरे महीने अच्छी तरह बन चुकता है। क
यदि की रक्त-वाहिनियाँ केवल कमल से ही पौष्टिक पदार्थों
और करती हैं। जब तक बच्चा गर्भ में रहता है, तब तक व
वह उसेयवा नाक से साँस नहीं लेता—फुफ्फुस अपना कार्य न
क जिस तरह पोषण-कार्य कमल द्वारा होता है, उसी प्रका
के श्वास का कार्य भी इसी के द्वारा होता है। कमल एक भ्रू
कन्क अङ्ग है। इसके द्वारा भ्रूण माता के शरीर से जुड़ा रहत
ा। कमल भ्रूण के गर्भस्थ रहने तक फुफ्फुसों का काम करता है
नाल में दो धमनियाँ और एक शिरा होता है। धमनियाँ भ्रूण के
शरीर से कमल में रक्त पहुँचाती हैं और शिरा कमल से भ्रूण के
शरीर में शुद्ध रक्त और पौष्टिक तत्त्वों को पहुँचाती है।

कमल को "और", "आँवल", "औल" भी कहते हैं। अङ्गरेजी
भाषा में Placenta कहते हैं। कमल छः इञ्च लम्बा बीच में १॥
इञ्च मोटा और वज़न में लगभग १॥ पौण्ड होता है। जिस प्रकार
पृथ्वी से जड़ द्वारा वृक्ष पोषक-तत्त्व प्राप्त करता है, उसी तरह
जननी-रूपी पृथ्वी से कमल-रूपी जड़-द्वारा वृक्ष-रूप बालक पोषण
प्राप्त करता है। पाठकों ने चित्रों में देखा होगा तथा पुराणादि
ग्रन्थों की कथाओं में सुना होगा कि विष्णु भगवान क्षीर-सागर में
सोए हुए हैं, कमलनाल नाभि से जुड़ा हुआ है, उसी कमल से
चतुरानन पैदा हुए हैं, जिनके द्वारा यह संसार उत्पन्न होता है।

सङ्गठन कार्य होता है और छठे महीने से आगे जन्म होने तक उसके मस्तिष्क का विकास होता है। अतएव माता को बालक की शारीरिक तन्दुरुस्ती और ख़ूबसूरती के लिए छः महीने तक अच्छी तरह ध्यान देना चाहिए, और उसे बुद्धिमान तथा विचारशील बनाने के लिए अन्त के तीन महीनों में प्रयत्न करना चाहिए।"

तात्पर्य यह है कि माता अपने आचरणों द्वारा गर्भस्थ भ्रूण के शरीर तथा मन पर जैसा चाहे, वैसा प्रभाव उत्पन्न कर सकती है। गर्भवती के किए आचरण, उदरस्थ बालक के शरीर में बीज-रूप बन कर जम जाते हैं और समयानुकूल तद्विषयक उत्तेजना तथा अनुकूलता पाते ही ये बीज रूप संस्कार पल्लवित और कुसुमित होते हैं। उग्रसेन बड़े ही धार्मिक और आर्य पुरुष थे; किन्तु पत्नी के दुष्ट आचरणों के कारण उनके कुल में एक पापी तथा अनार्य पुत्र पैदा हुआ, जिसका नाम कंस था। इसी प्रकार हिरण्यकश्यप के घर में भक्त-शिरोमणि प्रह्लाद का जन्म हुआ। हमारी आँखों देखी बात है कि एक नीच विचारों की जननी से जितने भी बालक उत्पन्न हुए, सभी नीचाशय, कुकर्मी और चोर उत्पन्न हुए। एक लड़का तो सन १९२३ में फाँसी की सज़ा पा चुका है। यदि माता पिता सच्चरित्र होते, तो उनका पुत्र फाँसी कदापि न पाता। लेकिन लेखक की देखी हुई बात है कि माता-पिता ने उसे चोर बनाया। अन्त में उसने रुपयों के लोभ से एक धनी की हत्या कर डाली, जिसके फल-स्वरूप उसने अपनी अल्पायु में ही फाँसी पाई! कहने का तात्पर्य यह है कि जैसे आचरण माता के होते हैं

सब उसकी औलाद में ज्यों की त्यों प्रतिबिम्बित हो जायँगे। माता फोटो का केमरा है और गर्भस्थ बालक एक शुद्ध प्लेट के समान है। प्लेट पर वे ही निशान पड़ते हैं, जो केमरे के अन्दर पहुँच जाते हैं। इसी प्रकार माता के विचारों का, कार्यों का प्रभाव गर्भस्थ शिशु पर पड़े बिना नहीं रह सकता। पड़ना ही चाहिए; क्योंकि पोषक-तत्व उसे माता के रक्त से ही तो प्राप्त होते हैं। बालक माता-पिता के आचरणों का जीता-जागता चित्र होता है। पुत्र के आचरणों से माता-पिता के आचरणों का अन्दाज किया जा सकता है।

हम पहिले कह आए हैं कि बालक की सुन्दरता तथा स्वास्थ्य माता के रक्त पर अवलम्बित है। यदि माता का रक्त शुद्ध अथवा निरोगी हुआ, तो बालक सर्वाङ्ग सुन्दर हो सकता है। इसलिए माता को चाहिए कि उसका रक्त शुद्ध और निर्दोष रहे। रक्त-शुद्धि के लिए सर्वदा शुद्ध तथा पोषक भोजन करना चाहिए। स्मरण रहे, अधिक पौष्टिक भोजन भी गर्भिणी को नहीं देना चाहिए, अन्यथा प्रसव के समय उसे अत्यन्त पीड़ा होगी। भोजन में सादापन होना चाहिए। अधिक चरपरी, अधिक खट्टी, अधिक नमकीन और अधिक मीठी वस्तुएँ भोजन में नहीं होनी चाहिए। गुरुपाक भोजन, बादी पदार्थ और चरपरे मसाले खून को बिगाड़ देते हैं। जब कि माता के रक्त में ही दोष उत्पन्न हो जाय, तो गर्भस्थ शिशु कैसे बच सकता है? गर्भवती स्त्री को दाल, भात, रोटी, साग, दूध, थोड़ा घी आदि खाना चाहिए। गर्भवती को

दूध अवश्य ही पिलाना चाहिए। बच्चा पैदा होने के निकटवर्ती दिनों में थोड़ा-थोड़ा करके कई बार दूध पिलाना चाहिए।

दूध कैसा हो, यहाँ इस बात का विचार करना आवश्यक है, अन्यथा लाभ की जगह हानि हो जाने की आशङ्का है। हमेशा ताजा ही दूध पीना चाहिए। दूध को उबाल कर पीना अच्छा नहीं है। दूध में पशु के थनों से दुहते वक्त, तत्काल ही कीटाणु गिर जाते हैं। उबालने से यद्यपि ये कीटाणु नष्ट हो जाते हैं; तथापि दूध का पोषक-तत्त्व नष्ट हो जाता है। स्तनों को मुँह में लेकर दूध पीने से ही उसका असली गुण प्राप्त हो सकता है; किन्तु गाय-भैंस का दूध थनों को मुँह में लेकर चूसना असम्भव है। इसलिए दूध को दुहने के बाद यथासम्भव अत्यन्त शीघ्र ही पी जाना चाहिए। दुहने के पश्चात् दूसरे क्षण से ही दूध बिगड़ने लगता है। दूध में कई तरह के कीटाणु पाए जाते हैं, जो कई मार्गों से दूध में आ मिलते हैं। कुछ तो दूध में मौजूद ही रहते हैं और कुछ दुहते वक्त हवा में उड़ती हुई धूल के साथ आ गिरते हैं। मैले हाथ, मैले और लम्बे नाखून, दुर्गन्धित वायु, मैली गोशाला आदि दूध को दुहते वक्त खराब कर देते हैं। पशु के मूत्र के छींटे भी दूध में कीटाणु उत्पन्न कर देते हैं। दूध दुहने के पात्र में, तन्दुरुस्त पशु के थनों में भी अनेक रोग-कीटाणु छिपे रहते हैं। अतएव दुहने के पात्र तथा थनों को पहिले गर्म जल से धो डालना चाहिए। दूध के विषय में हम लोग लापरवाही कर रहे हैं, यही कारण है कि भारतवर्ष में क्षय, टाइफाइड फीवर, स्कार्लेट

फीव्हर, डिपथिरिया आदि भयानक रोगों की उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है।

दूध सदा ऐसे ही पशुओं का पीना चाहिए, जो बीमार न हों; जिन्हें अथवा जिनके थनों में किसी तरह का औपसर्गिक रोग न हो; जो पशु खुली हवा में, जङ्गल में न जाता हो, जिसे अच्छा चारा खाने को न दिया जाता हो; जिसे स्नान न कराया जाता हो; जिसे दाना वग़ैरह पौष्टिक ख़ूराक न दी जाती हो; जिसका बच्चा कमजोर तथा दुर्बल हो; जो स्वयं दुर्बल और रोगी हो; जो लीद, पाख़ाना, मूत्र आदि खाता-पीता हो; जिसे पीने के लिए गन्दा पानी मिलता हो; जिसे किसी प्रकार का रोग हो, ऐसे पशु का दूध कदापि न पीना चाहिए। दूध बहुत देर तक रखा रहने से गुण-हीन हो जाता है, अतएव यदि दूध पीना हो तो ताजा ही पीना चाहिए। बड़े-बड़े नगरों में मक्खन निकाल कर दूध बेचा जाता है, ऐसा दूध स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक सिद्ध हुआ है। ग्वालों और हलवाइयों के यहाँ का दूध प्रायः निकम्मा ही होता है। ये लोग दूध में पानी मिला देते हैं। दुहते वक़्त तथा उसको सुरक्षित रखते समय पवित्रता का कुछ भी ध्यान नहीं रखते। उन्हें इससे प्रयोजन भी क्या है? उन्हें तो पैसे ऐंठने से मतलब है, कोई भी जिए अथवा मरे। सबसे अच्छी तरकीब उत्तम दूध पीने के लिए यह है कि अपने घर में ही एक-दो दूध देने वाले पशु रक्खे जावें; और इच्छानुसार दूध प्राप्त किया जावे। दूध दुहते वक़्त पात्र पर कपड़ा लगा देना चाहिए। कीटाणुओं से बचने

का यह सबसे सरल उपाय है। और फिर उस दूध को बिना विलम्ब किए पी लेना चाहिए। गर्भिणी स्त्री को जो दूध दिया जावे, वह सब तरह से उत्तम और अवगुण-रहित होना चाहिए।

भारतवासियों ने मिठाई को सर्वोत्तम खाद्य मान रखा है। बात-बात में मिठाई का प्रयोग होता है। जहाँ देखिए, वहाँ मिठाई की चर्चा होती है। मिठाई खाना भाग्यशीलों का चिह्न समझा जाने लगा है। जब स्त्रियाँ गर्भवती होती हैं, तो उनके पुरुष उन्हें बाजार से मिठाइयों के दोने ला-लाकर चटाया करते हैं, यह बहुत ही बुरी बात है। गर्भस्थ बालक के लिए इससे बढ़ कर और कोई हानिकारक बात नहीं हो सकती। जहाँ तक हो, स्त्रियों को मिठाई मत दो और यदि उसे खाने की अधिक रुचि हो, तो घर में ही कोई मिष्ठान्न बना कर थोड़ा-थोड़ा खाने को देना चाहिए। अधिक मिठाई खाने वाली स्त्रियों को अजीर्ण, कब्ज, सिर-दर्द आदि की शिकायतें हो जाती हैं। ऐसी स्त्रियों की सन्तानें निर्बल, दुर्बल, पीली और चिड़चिड़े स्वभाव की होती हैं।

दिन भर कुछ न कुछ खाते रहना गर्भिणी के लिए बहुत ही बुरी बात है। समय पर भोजन में जो कुछ भी खाना हो, वह एक बार ही खा लिया जाय। कोयले, मिट्टी, राख, ठीकरी आदि अखाद्यों को न खाना चाहिए। गर्भिणी स्त्रियों को फल तथा हरा शाक अवश्य खाना चाहिए। जो स्त्रियाँ फल खाती हैं, उन्हें कब्ज की शिकायत नहीं होगी। जिन स्त्रियों को फल तथा हरे शाक खाने के लिए नहीं दिए जाते, उन्हें "स्कर्वी" नामक रोग हो

जाता है। स्त्री-जाति को, गर्भिणी हो तभी नहीं; बल्कि आमरण शराब, भाँग, गाँजा, चण्डू, चरस, अफ़ीम, कोकेन, तम्बाकू, चाय आदि मादक द्रव्यों का सेवन भूल कर भी न करना चाहिए; और न इन वस्तुओं के सेवन करने वाले पुरुषों से गर्भाधान ही कराना चाहिए।

खुली और स्वच्छ वायु, रक्त-शुद्धि के लिए प्रधान वस्तु है। गर्भवती स्त्री को ख़ास करके खुली हवा की परमावश्यकता है; क्योंकि उसे अपने और अपने उदरस्थ भ्रूण के लिए, अर्थात् दो के लिए हवा चाहिए। गर्भिणी को अपने घर में घुस कर बैठे रहना ठीक नहीं है। साधारण स्त्री की अपेक्षा गर्भवती स्त्री को अधिक श्वासोच्छ्वास की जरूरत पड़ती है; यदि उसे स्वच्छ और खुली वायु न मिले, तो वह गर्भस्थ शिशु को ताजा खून नहीं दे सकती। भारत में शहरों की अपेक्षा गावों की संख्या अधिक है। गाँवों में पर्दे की प्रथा बहुत कम है, इसलिए ग्रामीण स्त्रियों को दिन-रात घरों में क़ैदी की तरह नहीं रहना पड़ता—वे बाहर आती-जाती रहती हैं। देहातों के घर भी पक्के छतदार नहीं होते। वहाँ घास-फूस, पत्ते-खपरैल आदि की छतें होती हैं। ऐसी छतों से शुद्ध वायु अच्छी तरह आती-जाती रहती है। पटावदार मकान जिनमें खिड़कियाँ नहीं होतीं, ऐसे "मौत के पिञ्जरे" मकानों में शुद्ध वायु का दुर्भिक्ष ही रहता है। यदि घर साफ़ रक्खे जावें, घरों के आस-पास की सफ़ाई का पूरा-पूरा ध्यान रक्खा जावे और ढोरों को अपने रहने के घरों से कुछ दूर रक्खा जावे, तो ग्राम्य-जीवन

वास्तव में स्वर्गीय जीवन है। गर्भिणी स्त्रियों को बन्द मकानों में, जिनमें वायु के आने-जाने के मार्ग न हों, कदापि न सोना चाहिए।

शहरों का वायुमण्डल निरन्तर कल-कारखानों के चलने और धूल उड़ने के कारण दूषित रहता है। कल-कारखानों का दूषित धुआँ सारे नगर पर अपने छोटे-छोटे कण बरसाया करता है। नगरवासियों के नासिका-रन्ध्रों तथा कण्ठों के निकले हुए कफ से यह अच्छी तरह सिद्ध होता है कि वह श्वासोच्छ्वास द्वारा मनुष्यों के शरीर में जाता है। आज बड़े-बड़े नगरों में शुद्ध हवा का मिलना अत्यन्त कठिन हो गया है। इतने पर भी नगरों में बेचारी स्त्रियाँ जो परदे में रहती हैं, उनकी दशा तो दया करने योग्य है। जो स्त्रियाँ नगरों में रहती हैं, उन्हें बरामदों तथा ऐसे कमरों में रहना चाहिए, जहाँ शुद्ध वायु बेरोक-टोक आती-जाती हो। उन्हें सायं-प्रातः पक्की छतों पर तथा बरामदों में थोड़ा-बहुत टहलना भी चाहिए। ठण्डे दिनों में लोग मकान के सब दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द करके सोते हैं, इतना ही नहीं; मोटी रूई की रजाई सिर से पैर तक ढँक कर सो जाते हैं। यह स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त ही हानिकारक है। खास कर गर्भिणी स्त्री के लिए तो यह बड़ी ही घातक बात है। गर्भिणी को सोते समय भूल कर भी मुख न ढँकना चाहिए और कमरे में स्वच्छ वायु आ-जा सके, इसलिए खिड़कियाँ खुली रखनी चाहिए।

गर्भिणी स्त्री को हमेशा ढीले वस्त्र पहनने चाहिए। तंग वस्त्र

स्त्री की कमर और छाती को दबाते हैं। ईश्वर की कृपा है कि हमारी भारतीय स्त्रियों ने पुरुषों की भाँति पाश्चात्य पहनावे को नहीं अपनाया; अन्यथा कमर पर पट्टा बाँधना बड़ा ही घातक होता! यद्यपि भारतीय महिलाएँ पाश्चात्य रमणियों की तरह अपनी कमर को खींच तान कर नहीं बाँधतीं, तथापि बहुत तथा भारी वस्त्र खूब ही पहनती हैं। भारी और तङ्ग वस्त्र पहनने से श्वासोछ्वास की क्रिया में बाधा पड़ती है। गर्भवती स्त्री को हलके और ढीले वस्त्र पहिनने चाहिए। हमारे घरों की स्त्रियाँ प्रायः चटकीले और भड़कीले वस्त्र पहिनती हैं; लेकिन वे स्वच्छ धुले हुए नहीं होते। वस्त्रों को धोने से रेशम की चमक, उनकी भड़क, गोटा किनारी, सलमे, सितारे और रङ्ग इत्यादि बिगड़ जाने के भय से स्त्रियों के वस्त्र अधिकांश मैले ही रहते हैं। बजाज के यहाँ से जैसा वस्त्र आता है, स्त्रियाँ उसमें दिया हुआ चर्बी आदि का कलप तक भी नहीं धोतीं और पहिनती रहती हैं। ऐसे घाँघरे, लूगड़े, चोली, आँगी आदि अनेक होते हैं, जिन्हें वे आमरण नहीं धोतीं! कपड़ों का रङ्ग भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है और प्रायः चर्म-रोग उत्पन्न कर देता है। पाठकों ने अनुभव किया होगा कि स्त्रियों के शरीर से हमेशा दुर्गन्ध निकलती रहती है। नीचे दर्जे की स्त्रियों की देह और वस्त्र मैले रहने के कारण वे दुर्गन्धयुक्त होती हैं और ऊँचे दर्जे की स्त्रियों के वस्त्रों से चर्बी आदि के कलप की बदबू आती रहती है। स्त्रियों को चाहिए कि वस्त्र स्वच्छ, पवित्र, दुर्गन्ध-रहित, सादा, हलके रङ्ग में रँगे हुए पहिनें। हमारे

वास्तव में स्वर्गीय जीवन है। गर्भिणी स्त्रियों को बन्द मकानों में, जिनमें वायु के आने-जाने के मार्ग न हों, कदापि न सोना चाहिए।

शहरों का वायुमण्डल निरन्तर कल-कारखानों के चलने और धूल उड़ने के कारण दूषित रहता है। कल-कारखानों का दूषित धुआँ सारे नगर पर अपने छोटे-छोटे कण बरसाया करता है। नगरवासियों के नासिका-रन्ध्रों तथा कण्ठों के निकले हुए कफ से यह अच्छी तरह सिद्ध होता है कि वह श्वासोच्छ्वास द्वारा मनुष्यों के शरीर में जाता है। आज बड़े-बड़े नगरों में शुद्ध हवा का मिलना अत्यन्त कठिन हो गया है। इतने पर भी नगरों में बेचारी स्त्रियाँ जो परदे में रहती हैं, उनकी दशा तो दया करने योग्य है। जो स्त्रियाँ नगरों में रहती हैं, उन्हें बरामदों तथा ऐसे कमरों में रहना चाहिए, जहाँ शुद्ध वायु बेरोक-टोक आती-जाती हो। उन्हें सायं-प्रातः पक्की छतों पर तथा बरामदों में थोड़ा-बहुत टहलना भी चाहिए। ठण्डे दिनों में लोग मकान के सब दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द करके सोते हैं, इतना ही नहीं; मोटी रूई की रजाई सिर से पैर तक ढँक कर सो जाते हैं। यह स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त ही हानिकारक है। खास कर गर्भिणी स्त्री के लिए तो यह बड़ी ही घातक बात है। गर्भिणी को सोते समय भूल कर भी मुँह न ढाँकना चाहिए और कमरे में स्वच्छ वायु आ-जा सके, इसलिए खिड़कियाँ खुली रखनी चाहिए।

गर्भिणी स्त्री को हमेशा ढीले वस्त्र पहिनने चाहिए। तङ्ग वस्त्र

स्त्री की कमर और छाती को दवाते हैं। ईश्वर की कृपा है कि हमारी भारतीय स्त्रियों ने पुरुषों की भाँति पाश्चात्य पहनावे को नहीं अपनाया; अन्यथा कमर पर पट्टा बाँधना बड़ा ही घातक होता! यद्यपि भारतीय महिलाएँ पाश्चात्य रमणियों की तरह अपनी कमर को खींच तान कर नहीं बाँधतीं, तथापि बहुत तथा भारी वस्त्र खूब ही पहनती हैं। भारी और तङ्ग वस्त्र पहनने से श्वासोच्छ्‌वास की क्रिया में बाधा पड़ती है। गर्भवती स्त्री को हलके और ढीले वस्त्र पहिनने चाहिए। हमारे घरों की स्त्रियाँ प्रायः चटकीले और भड़कीले वस्त्र पहिनती हैं; लेकिन वे स्वच्छ धुले हुए नहीं होते। वस्त्रों को धोने से रेशम की चमक, उनकी भड़क, गोटा किनारी, सलमे, सितारे और रङ्ग इत्यादि बिगड़ जाने के भय से स्त्रियों के वस्त्र अधिकांश मैले ही रहते हैं। बजाज के यहाँ से जैसा वस्त्र आता है, स्त्रियाँ उसमें दिया हुआ चर्बी आदि का कलप तक भी नहीं धोतीं और पहिनती रहती हैं। ऐसे घाँघरे, लुगड़े, चोली, आँगी आदि अनेक होते हैं, जिन्हें वे आमरण नहीं धोतीं! कपड़ों का रङ्ग भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है और प्रायः चर्म-रोग उत्पन्न कर देता है। पाठकों ने अनुभव किया होगा कि स्त्रियों के शरीर से हमेशा दुर्गन्ध निकलती रहती है। नीचे दर्जे की स्त्रियों की देह और वस्त्र मैले रहने के कारण वे दुर्गन्धयुक्त होती हैं और ऊँचे दर्जे की स्त्रियों के वस्त्रों से चर्बी आदि के कलप की बदबू आती रहती है। स्त्रियों को चाहिए कि वस्त्र स्वच्छ, पवित्र, दुर्गन्ध-रहित, सादा, हलके रङ्ग में रँगे हुए पहिनें। हमारे

देश में विधवा स्त्रियों के अतिरिक्त अन्य स्त्रियाँ सफ़ेद वस्त्र पहिनना बुरा समझती हैं। इस अज्ञान के कारण बड़ा नुक़सान हो रहा है।

वस्त्रों की शुद्धता के साथ ही साथ अन्य प्रकार की शुद्धता भी होनी चाहिए। बाह्य शुद्धि और आन्तरिक शुद्धि दोनों की बड़ी ही आवश्यकता है। बाह्य शुद्धि के लिए जल की परम आवश्यकता है। शरीर को जल से धो-पोंछ कर हमेशा शुद्ध रखना चाहिए। ग्रीष्मकाल में दो बार और शेष ऋतुओं में एक बार अच्छी तरह विपुल जल से स्नान करना चाहिए। स्नान करते समय शरीर के प्रत्येक भाग खूब अच्छी तरह मल-रहित करके धो डालना चाहिए। शरीर पर जल डालने का नाम स्नान नहीं है। इस प्रकार के स्नान से सिवाय हानि के लाभ बिलकुल नहीं है। अविद्या की कृपा से भारतवर्ष में ऐसे मत-पन्थ भी हैं, जिनमें स्नान करना पाप माना गया है। आयुर्वेद की दृष्टि से ऐसे मत-मतान्तर संसार में रोग फैलाने में मुख्य हैं। जिस धर्म में पवित्रता से रहना मना हो, वह धर्म नहीं; बल्कि धर्म का आडम्बर है। क्योंकि शौच अर्थात् पवित्रता धर्म का लक्षण है। लोगों को चाहिए कि धर्म के मिथ्या ढकोसलों में पड़ कर अपना स्वास्थ्य बर्बाद न करें और आवश्यकतानुसार जल-प्रयोग द्वारा शरीर को पवित्र रक्खा करें।

मुख की पवित्रता गर्भिणी के लिए बहुत ही ज़रूरी है; क्योंकि गर्भस्थ भ्रूण के लिए जो कुछ भी ख़ूराक मिलती है, वह गर्भिणी के रक्त-द्वारा मिलती है। ऐसी दशा में मुख का पवित्र होना

परमावश्यक है। इसके अतिरिक्त मुख में लार पैदा होती रहती है, जो मुँह को तर रखती है और उदर में जाकर खाए हुए भोजन को पचाने में सहायता देती है। यदि मुख गन्दा रहा, तो सारा पेट खराब हो जावगा और गर्भस्थ भ्रूण पर इसका इतना बुरा प्रभाव पड़ेगा; जिसे यहाँ लिखकर समझाना कठिन है। इसलिए गर्भवती को चाहिए कि मुख, तालु, जिह्वा, दाँत, कण्ठ आदि मुख के अवयवों को दतून तथा अन्य किसी प्रकार के दन्त-मञ्जन द्वारा सर्वदा शुद्ध रक्खे।

आन्तरिक शुद्धि के लिए मन की पवित्रता आवश्यक है। मन की शक्ति का वर्णन हम आगे चल कर किसी प्रकरण में स्वतन्त्र-रूप से लिखेंगे। तो भी यहाँ इतना लिख देना ठीक समझते हैं—उत्तम सन्तान चाहने वाली स्त्री को चाहिए कि सर्वदा अपने मन को पवित्र रक्खे। कपट, ईर्ष्या, द्वेष, पर-निन्दा, पर-छिद्रान्वेषण, वञ्चकता, क्रोध, लोभ, मोह, काम, दम्भ, मद, मात्सर्य आदि मानसिक विकारों से गर्भवती स्त्री को सदा दूर रहना चाहिए। इन मानसिक विकारों का गर्भस्थ शिशु पर इतना गहरा प्रभाव पड़ता है कि जिसे गुरु तो क्या, सौ ब्रह्मा भी नहीं हटा सकते। उक्त विकारों के कारण खून में गर्मी पैदा होती है। गर्मी पैदा होने से रक्त दूषित हो जाता है, जिसका प्रभाव गर्भ में सन्तान पर हुए बिना नहीं रह सकता। दुष्ट स्वभाव और असत्य विचार भी रक्त को दूषित कर देते हैं। चिड़चिड़े स्वभाव की माता से चिड़चिड़ी सन्तान पैदा होती है। क्रूर स्वभाव की जननी निर्दय बालक

प्रसव करती है। माता की आन्तरिक पवित्रता ही बालक को उत्तम स्वभाव वाला बनाती है; अतएव माता को चाहिए कि अपने मानसिक विचारों को कदापि कलुषित न होने दे।

प्राणियों के जीवन और स्वास्थ्य का एकमात्र आधार सूर्य-प्रकाश है। जैसे सूर्य-प्रकाश के न मिलने पर वृक्ष-वनस्पति नष्ट हो जाती हैं और उनका वृद्धि-विकास रुक जाता है, उसी तरह मनुष्य भी सूर्य-प्रकाश के न मिलने से रोगी और विवर्ण हो जाता है। भारतवर्ष पर ईश्वर की बड़ी कृपा है, जो सर्वत्र अच्छी तरह से सूर्य-प्रकाश होता है। कई ऐसे अभागे देश भी इस भूतल पर हैं, जहाँ के निवासी सूर्य-प्रकाश के लिए तरसा करते हैं। यहाँ तो वर्षा-ऋतु में कभी-कभी दो-चार दिन के लिए सूर्य का प्रकाश नहीं मिलता। बाक़ी ऋतुओं में दस से तेरह-चौदह घण्टे तक सूर्य-प्रकाश मिलता है। सूर्य-प्रकाश रोगों का कट्टर शत्रु है। इससे वे गन्दे स्थान जो रोग पैदा करते हैं, साफ़ होते रहते हैं। सूर्य-प्रकाश से वायु शुद्ध होकर बहता है और प्राणियों को स्वास्थ्य प्रदान करता है।

गर्भिणी स्त्रियों को स्वास्थ्य-रक्षा के लिए सूर्य के प्रकाश में अवश्य रहना चाहिए। बड़े-बड़े नगरों में ऐसे अनेक घर हैं, जिनमें सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँच सकता। ऐसे मकान रोग—टापुओं के दुर्ग हैं। इन्हें मकान नहीं; बल्कि "मौत के पिंजरे" कह दिया जाय, तो अतिशयोक्ति न होगी। गर्भिणी स्त्रियों के लिए सूर्य-प्रकाश रहित मकान बड़े ही घातक होते हैं। अतएव गर्भिणी स्त्री को चाहिए

कि ऐसे मकानों में भूल कर भी न रहे। स्वच्छ हवा तथा सूर्य-प्रकाशयुक्त मकानों में ही रहे।

गर्भवती स्त्री को सर्वदा छना हुआ, शुद्ध, हलका, मीठा, कुएँ का पानी पीना चाहिए। नदी, तालाब, पोखर, बावली, झील आदि का पानी गर्भवती को न पीना चाहिए। निथरा हुआ, कूड़ा-कचरा रहित, पारदर्शी, निर्मल जल, जो कि वस्त्र से अच्छी तरह छाना गया हो, पीना चाहिए। यदि जल उबाल कर ठण्डा कर लिया जावे और वह गर्भिणी को पीने के लिए दिया जावे, तो और भी अच्छा हो। उबालते वक्त २० सेर जल में यदि ३ माशे फिटकिरी डाल दी जावे, तो वह और भी शुद्ध हो जावेगा; जो कुछ भी उसमें कूड़ा-कचरा अथवा तेल का अंश होगा, वह शुद्ध हो जावेगा।

गर्भवती को परिश्रम अवश्य करना चाहिए। इन दिनों श्रम करना हानिकारक नहीं; बल्कि लाभदायक होता है। यद्यपि भारतीय स्त्रियों को गृह-कार्यों के करने में, जैसे रोटी बनाना, बर्त्तन माँजना, पीसना-कूटना आदि शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है; तथापि उन्हें खुली हवा में थोड़ी देर अवश्य टहलना चाहिए। ऐसा करने से कब्ज की शिकायत कभी नहीं होने पाती। गर्भिणी को श्रम करने से रोकना ठीक नहीं है। उन्हें आरामतलब बनाना और रोगी की तरह चारपाई पर बिठा छोड़ना उचित नहीं है। जो सुस्त और अमीर-स्त्रियाँ हैं, उन्हें हमारा यह उपदेश जरा खलेगा; किन्तु हमारे कथन की अवहेलना से उन्हें सिवाय दुख के और

नहीं है। जब कब्ज हो, तब भूल कर भी विरेचक दवा नहीं देनी चाहिए। जुलाब से गर्भ गिर जाता है। गर्भपात स्त्री के लिए बड़ी ही विपत्तिजनक बात है; क्योंकि इससे कभी-कभी गर्भिणी की मृत्यु तक हो जाती है। जिन स्त्रियों को एक-दो बार गर्भपात हो चुका हो, उन्हें कम से कम दो-तीन वर्ष तक मैथुन नहीं कराना चाहिए।

गर्भस्थ शिशु को अनेक रोगों के बीज गर्भवती से ही प्राप्त होते हैं, अतएव गर्भिणी स्त्री को रोगों से बचना चाहिए। चेचक, हैजा, प्लेग, कुष्ठ तथा अन्य छूत की बीमारियों के बीमारों से गर्भवती को दूर रहना चाहिए। आयुर्वेद कहता है :—

भयाभिघातात्तीक्ष्णोष्णपानाशन विवेषणात्।
गर्भः पतति रक्तस्य सशूलं दर्शनं भवेत् ॥

अर्थात्—भय से, चोट लगने से, तीक्ष्ण और गर्म वस्तु के खाने पीने से गर्भस्राव अथवा गर्भपात होता है। उस वक्त बहुत दर्द होता है तथा बहुत खून गिरता है।

गर्भो विघातविषमाशनपीडनाद्यैः।
पक्वं द्रुमादिव फलं पतति क्षणेन ॥

अर्थात्—जैसे वृक्ष में लगे हुए पके फल हिलने से अथवा चोट लगने से नीचे गिर जाते हैं, अथवा ज़ोर के आघात से कच्चा फल भी गिर पड़ता है, उसी तरह चोट से, अनुचित बैठने-उठने तथा चलने-फिरने से खान-पान की असावधानी करने से और किसी प्रकार के दबाव से गर्भपात हो जाता है।

चित्र-नम्बर १२

(असली आकार)

भ्रूण-क्रम (तीसरा महीना)

इसलिए गर्भिणी स्त्री को बहुत ही सावधानी से रहना चाहिए। जरा सी ग़लती से भयङ्कर हानि होने की सम्भावना रहती है।

गर्भवती स्त्री को ये सब बातें अपनी रक्षा के लिए ही नहीं, बल्कि गर्भ के भ्रूण की रक्षा के लिए हमेशा ध्यान में रखनी चाहिएँ। गर्भिणी को अपने मन में पवित्र सङ्कल्प कर लेना चाहिए कि मेरा गर्भस्थ बालक सदाचारी, धर्मात्मा, तेजस्वी, बुद्धि-विचक्षण, उदार, सत्यवक्ता, धीर, क्षमाशील, जितेन्द्रिय, विद्वान, वीर, उत्साही, साहसी, परोपकारी, और गुणवान उत्पन्न होगा। ऐसे विचार रखने से सन्तान अवश्यमेव सर्वगुण-सम्पन्न पैदा होगी। इस विषय पर हम आगे अच्छी तरह प्रकाश डालेंगे। सन्तान निरोगी और अच्छी पैदा करने के लिए गर्भवती स्त्री को चाहिए कि सदा सादा खान-पान, शुद्ध वायु, शुद्ध जल, सूर्य-प्रकाश का सेवन करे और बाहरी-भीतरी शुद्धि का पूर्ण ध्यान रक्खे।

हमारी बताई हुई उपरोक्त बातों के अतिरिक्त बहुत सी ऐसी बातें हैं जिन्हें गर्भवती स्त्री को ध्यान में रखना चाहिए। ऐसी बातें घर की बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ बता दिया करती हैं। हमने तो यहाँ केवल मोटी-मोटी उन्हीं बातों का उल्लेख किया है जिनकी तरफ़ से हमारा स्त्री-समाज बिलकुल अनजान-सा हो गया है। अब हम अगले प्रकरण में "गर्भवती के रोग और उनकी चिकित्सा" लिखेंगे।

(४) गर्भवती के रोग और उनकी चिकित्सा

गर्भवती के लिए "गर्भस्राव" और "गर्भपात" जितने भयङ्कर रोग हैं, उतने अन्य रोग नहीं। गर्भस्राव और गर्भपात में थोड़ा सा ही भेद है। इन दोनों शब्दों का अर्थ गर्भ गिरना है। चौथे महीने तक जो गर्भपात होता है, उसे गर्भस्राव कहते हैं, क्योंकि इस अवधि में गर्भ का रुधिर रूप में स्राव होता है। पाँचवें अथवा छठे-सातवें महीने जो गर्भ गिरता है, उसे गर्भपात कहते हैं। हम यहाँ पर प्रत्येक मास के गर्भपात की चिकित्सा लिखेंगे:—

(१) पहिले महीने—मुलहटी, सागौन के बीज, क्षीर-काकोली, देवदारु इनको एक-एक तोले लेकर जौकुट करले और आध सेर जल में डालकर आग पर चढ़ा दे, जब एक पाव जल रह जावे, तब छान कर ठण्डा होने पर पिला देवे। अथवा इन चारों दवाओं को पानी में पीस कर लुगदी बना ले और आध सेर गौ के दूध में पका ले। एक-दो उबाल आने पर उतार ले और ठण्डा होने पर छान कर पिला दे।

(२) दूसरे महीने—अश्मन्तक, (अम्ललोन) काले तिल मजीठ, सतावर इन चारों को ७-७ माशे लेकर, गो-दुग्ध में पीसकर लुगदी बना ले और आध सेर गौ के दूध में उबाल कर छान लेवे। ठण्डा होने पर गर्भिणी को पिला दे।

(३) तीसरे महीने—चौंदा, क्षीर काकोली, लताप्रियङ्गु, अनन्तमूल, कमल और सारिवा प्रत्येक एक-एक तोले लेकर शीतल

जल से पीस ले और फिर उसको १० तोले दूध में डालकर औटावे। ठण्डा होने पर पिला देवे।

(४) चौथे महीने—अनन्तमूल, सारिवा, रास्ना, ब्रह्मदण्डी और मुलहटी इन्हें एक-एक तोला लेकर शीतल जल में पीसकर लुगदी बना लेवे और १० तोले दूध में औटाकर ठण्डा करके पीने से गर्भस्राव अथवा गर्भशूल बन्द हो जाता है।

(५) पाँचवें महीने—छोटी कटेरी और बड़ी कटेरी १-१ तोला, कँभारि के फल एक तोला, बरोटे की कलियाँ और छाल ६-६ मासे और कमल की जड़ एक तोला। इन सबको पत्थर पर पानी से बाँटकर १० तोले गौ के दूध में डालकर आग पर चढ़ा दे। उबाल आने पर उतार कर ठण्डा कर ले। बाद में छान कर पिला देने से गर्भपात तथा गर्भशूल का उपद्रव शान्त हो जाता है।

(६) छठे महीने—पृश्नपर्णी, खरेंटी, सहजना, गोखरू और मुलहटी १-१ तोला लेकर ठण्डे पानी से पीस कर लुगदी बना ले। फिर आधपाव गौ के दूध में इस लुगदी को रखकर आगपर चढ़ा दे। उबल जाने पर नीचे उतार कर ठण्डा कर ले और छान कर पिला दे। इससे गर्भपात तथा गर्भशूल नहीं होता।

(७) सातवें महीने—सिंघाड़े, कमल की जड़, मुनक्का, दाख, कसेरू, मुलहटी, और मिश्री ये सब एक-एक तोला लेकर, पानी डाल कर पत्थर पर पीस ले। इसकी लुगदी १५ तोले दूध में डालकर औटावे। बाद में नीचे उतार कर छान ले और ठण्डा

होने पर पिला दे। इसके सेवन से गर्भपात नहीं होता और गर्भशूल नाश हो जाता है।

(८) आठवें महीने—बड़ी कटेरी, कैथ, बेल, पटोल, ईख और छोटी कटेरी इन सबकी जड़ दो-दो तोले लेकर चूर्ण कर ले। इस चूर्ण को बीस तोले गौ के दूध में डाल कर आग पर पकावे। उबाल आने पर नीचे उतार ले, फिर ठण्डा होने पर छान कर पी जावे। इसके सेवन से गर्भपात और गर्भशूल का उपद्रव शान्त हो जाता है।

(९) नवें महीने—मुलहटी २ तोला, अनन्त मूल २ तोला, क्षीर काकोली २ तोला और सारिवा २ तोला इन सबको पानी में पीस कर लुगदी बना लेवे और पाव भर गौ के दूध में डाल कर औटावे। बाद में नीचे उतार कर ठण्डा करले और छान कर पिला दे।

(१०) दसवें महीने—सोंठ २ तोला और क्षीर काकोली २ तोला इन दोनों को पीस कर चूर्ण करले। फिर २० तोले गाय का दूध लेकर उसमें इस चूर्ण को डाल दे और आग पर चढ़ा दे। एक-दो उबाल आने पर नीचे उतार कर ठण्डा होने दे। जब ठण्डा हो जावे तब छान कर पिला दे।

(११) ग्यारहवें महीने*—क्षीर काकोली, कमलगट्टे, आमले

---

* यहाँ पर ग्यारह महीने के गर्भ का भी हमने वर्णन किया है, इस पर पाठक आश्चर्य-चकित न हों। कभी-कभी स्त्रियों को इतने समय तक गर्भ रहता है, इसलिए हमें यहाँ उसकी चिकित्सा भी लिखनी पड़ी। चारों महीने से जो दूध की मात्रा बताई है, उसमें उतना ही पानी मिलाना चाहिए और पानी को आग पर ही जला देना चाहिए।

और लाजवन्ती की जड़ हरेक २-२ तोले लेकर चूर्ण करले और फिर इस चूर्ण को पाव भर गो-दुग्ध में डाल कर गर्म करे। उबल जाने पर नीचे उतार कर छान ले। जब ठण्डा हो जावे तब पिला दे। गर्भपात तथा गर्भशूल रोकने के लिए यह अनुभूत है।

(१२) कसेरू, सिंघाड़े, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीर काकोली, माषपर्णी, मुग्दपर्णी, जीवन्ती, मुलहटी, कमल, कमोदिनी, सतावर, अरण्ड इन सबको तीन-तीन माशे लेकर एक पाव दूध और एक पाव पानी में मिलाकर आग पर चढ़ा दे। जब पानी जल जावे, तब नीचे उतार कर छान ले। ठण्डा हो जाने पर खाँड मिलाकर पीने से गर्भपात नहीं होता और सब प्रकार का गर्भशूल मिट जाता है।

(१३) कसेरू, सिंघाड़े, पद्माख, कमल, मुग्दपर्णी और मुलहटी ६-६ माशे मिश्री ३ तोले इनका चूर्ण कर ले। एक तोला चूर्ण फाँक कर ऊपर से ठण्डा दूध पीवे। इससे गर्भस्राव, गर्भपात आदि विकार दूर होते हैं। इस दवा के साथ सिर्फ दूध और भात ही खाना चाहिए।

(१४) चलित गर्भ का उपाय—गऊ के दूध में कच्चे गूलरों को पका कर ठण्डा करले। बाद में गर्भवती को पिला दे। इससे स्थान से हटा हुआ गर्भ ठीक जगह आ जाता है।

(१५) गर्भस्थानान्तर हो जाने का यत्न—कुश, काँस, अरण्ड, गोखरू इन चारों की जड़ को गौ के दूध में उबाल कर गर्भवती स्त्री को पिलाने से उपद्रव शान्त हो जाता है। दूध को ठण्डा करके और मिश्री मिला के पिलाना चाहिए।

(१६) हटे हुए गर्भ को जगह पर लाने का उपाय—गोखरू, मुलहटी, कटेरी, वाणपुष्प इन सबको एक-एक तोला लेकर चूर्ण करे, फिर पाव भर गो-दुग्ध में डालकर खूब औटावे। और जाने पर चूल्हे से नीचे उतार कर ठण्डा कर ले और छान ले। में मिश्री मिलाकर पिला दे।

(१७) गर्भपात के बाद—गर्भपात के उपद्रवों की शान्ति के लिए स्त्री को तेज शराब पिलानी चाहिए। शराब की मात्रा अधिक न हो। जो स्त्रियाँ शराब न पीती हों, उन्हें पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ का काढ़ा पिलाना चाहिए। अथवा विल घी, तेल, नमक का यवागू पिलाना चाहिए।

(१८) मूढ़गर्भ चिकित्सा—मूढ़गर्भ के समय अथवा जब गर्भ में बालक मर जावे, ये दोनों बातें बड़ी ही भयङ्कर हैं। इसके लिए योग्य चिकित्सक अर्थात् चीर-फाड़ की क्रिया में कुशल डॉक्टर को बुलाकर शीघ्र ही दिखाना चाहिए। इस समय सबसे अच्छा उपाय चीर-फाड़ ही है। कभी-कभी कुशल दाइयाँ भी बड़ी सावधानी से गर्भ को पेट से निकाल लेती हैं।

(१९) गर्भिणी के ज्वर का यत्न—गर्भिणी को ज्वर में किनाइन नहीं देनी चाहिए अन्यथा गर्भपात हो जायेगा। मुलहटी, चन्दन, रास, सारिवा, पद्माख प्रत्येक ६-६ माशा लेकर पाव भर पानी में औटावे। जब आधा रह जावे तब मिश्री और शहद मिलाकर गर्भिणी को पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

(२०) दूसरा उपाय—चन्दन, मिश्री, लोध और दाख एक-

एक तोला लेकर पाव भर पानी में इनका क्वाथ बनावे, जब पानी आधा रह जावे तब मिश्री मिलाकर पिला दे।

(२१) गर्भिणी के विषम ज्वर की चिकित्सा—एक तोला भर सोंठ को पाव भर बकरी के दूध में पकाकर पिलाने से विषम ज्वर नाश हो जाता है।

(२२) गर्भिणी की संग्रहणी-नाशक उपाय—आम के वृक्ष की छाल एक तोला, जामुन के वृक्ष की छाल १ तोला दोनों को आध-पाव जल में उबालकर क्वाथ बना ले। जब ३-४ तोला जल रह जावे तब चावल की खीलों का चूर्ण उस काढ़े में मिलाकर चाटने से संग्रहणी-रोग तत्काल दूर हो जाता है।

(२३) अतिसार, रक्तश्राव और ज्वर की औषधि—सुगन्धवाला, अरल, लाल चन्दन, खरेटी, धनियाँ, गिलोय, मोथा, खस, जवासा, पापड़ा, अतीस प्रत्येक ४-४ माशा लेकर पाव-भर पानी में उबाले, जब डेढ़ छटाँक अथवा आध पाव जल रह जावे तब छान कर ठण्डा करके गर्भिणी को पिला देवे।

(२४) वातशुष्क गर्भ चिकित्सा—यदि गर्भ, गर्भवती के उदर में गर्भ की बादी से सूख जावे और बढ़ने से रुक जावे तो पौष्टिक औपधियों से सिद्ध किया हुआ दूध, घृत मिला कर पिलाना चाहिए।

(२५) नागोदर चिकित्सा—जिसका पेट बढ़ जावे और गर्भ नहीं रहा हो उसे नागोदर कहते हैं। देखने पर मालूम होता है कि गर्भ में बालक है, लेकिन वास्तव में गर्भ नहीं होता। ऐसी

स्त्री से मैथुन करना, उसे जुलाब देना, इच्छित वस्तु देना और पुष्टिकारक पदार्थ खिलाने चाहिएँ तथा ऊखल-मूसल से अन्न कूटने का काम कराना चाहिए।

(२६) *गर्भिणी को कब्ज*—कब्ज हटाने के लिए कभी उटपटाँग जुलाब नहीं लेना चाहिए। साधारण-सा जुलाब पेट साफ करने के लिए लिया जा सकता है। कालीमुनक्का, शहद, अञ्जीर अथवा इनके सिरप (Syrup) थोड़ा-थोड़ा लेने से कब्ज की शिकायत नहीं रहती। अथवा बार-बार अरण्डी का अच्छा तेल थोड़ा-थोड़ा दूध में डाल कर पीने से भी कब्ज नहीं रहती। श्रम भी कब्ज की अचूक दवा है।

(२७) जुलाब लगना—कब्ज के कारण कभी-कभी दस्त लगने लगते हैं। इस समय दस्तों को रोकने के लिए दवा देना हानिकारक होता है। इस समय तो आँतों को साफ करने के लिए और थोड़ा सा हल्का जुलाब दे देना चाहिए। यदि पेट में दर्द होने लगे तो नमक से सेंक करना चाहिए। पाँवों को गरम रख कर पेट पर गर्म पट्टा बाँध देना चाहिए। कभी-कभी ठण्ड से भी दस्त शुरू हो जाते हैं।

(२८) छाती में दाह—अपचन के कारण कभी-कभी छाती में जलन होने लगती है। इसके लिए भी हल्का जुलाब देना चाहिए और बाद में पथ्य पदार्थ खाने की व्यवस्था रखनी चाहिए।

(२९) पाँवों की सूजन—गर्भाशय का भार पाँवों की अशुद्ध

रक्त-वाहनियों पर पड़ता है तो पाँव सूज जाते हैं। गर्भवती के पाँव के नाप का, रबर का मोज़ा पहिनाने से यह उत्पात मिट जाता है। यदि रबर का मोजा न मिले तो पट्टियाँ बाँध देनी चाहिएँ। इतने पर भी लाभ न हो तो किसी योग्य चिकित्सक को बताना चाहिए।

(३०) पेट—मोटी अथवा उस स्त्री को जिसके कई बालक पैदा हो चुके हों, इससे बहुत तकलीफ़ होती है। इसलिए उसके पेट को सहारा देने के लिए उसके नाप का पट्टा पेट पर बाँध देना चाहिए। पट्टे बने-बनाए शहरों में मिल जाते हैं।

(३१) वमन—गर्भिणी को पहिले तीन महीनों में प्रायः उल्टी होने की शिकायत रहा करती है। सुबह सोकर उठते ही जी मचलाने लगता है। यह औषधि से अथवा अन्य किसी उपाय से नहीं हट सकता। इससे यदि गर्भिणी को अधिक कष्ट होता हो तो उसे बिछौने से उठने के पहिले ही गर्म काफ़ी पिला देना चाहिए। रात के समय खाने को कम देना चाहिए। कब्ज़ से बचाना चाहिए। मिर्च-मसाले का भोजन न देकर सादा भोजन देना चाहिए। इतने पर भी वमन न रुके तो नित्य शय्या से उठते ही ताज़ा जल पीने का अभ्यास डाल लेना चाहिए। इस पानी के पीते ही उल्टी हो जावेगी और घबराहट मिट जावेगी। यदि उल्टियों का उत्पात बढ़ जावे तो किसी चतुर वैद्य से सलाह लेनी चाहिए।

(३२) रक्तस्राव—पहिले दो-तीन महीने तक गर्भिणी स्त्री

को कभी-कभी नियमित समय पर रक्तस्राव होता रहता है। इस मौके पर गर्भस्राव का भी भय होता है, इसलिए इन दिनों गर्भिणी को जहाँ तक हो सके सुलाए रखना चाहिए—बिलकुल न उठने देना चाहिए। किसी-किसी स्त्री को रक्तस्राव होता ही रहता है। ऐसी दशा में योग्य चिकित्सक से उपचार कराना चाहिए।

(३३) लार गिरना—गर्भिणी के मुख से लार गिरने लगती है। यह भी एक प्रकार का रोग है। यह रोग आरम्भ के २-३ महीनों में ही होता है। इससे कभी-कभी गर्भवती को बहुत ही तकलीफ होती है। कभी-कभी तो औषधि का कुछ भी असर नहीं होता, अतएव डॉक्टर की सम्मति लेनी चाहिए।

(३४) Anæmia—साधारणतया गर्भावस्था में रक्त के रक्त-पिण्ड कम हो जाते हैं। कभी-कभी उल्टी अधिक होने से तथा पाचन-शक्ति निर्बल हो जाने से रक्त पतला हो जाता है, जिससे गर्भवती के हाथ-पाँव और मुँह सूज जाते हैं। ये चिह्न अच्छे नहीं होते। इस दशा में शीघ्र उपचार की आवश्यकता है।

(३५) हिस्टीरिया—जो स्त्रियाँ हिस्टीरिया रोग से रोगी होती हैं, उन्हें गर्भावस्था में इससे अधिक तकलीफ होती है। इसलिए इस वक्त खाने-पीने की उचित व्यवस्था रखनी चाहिए।

(३६) दीर्घायु बालकदाता उपाय—जिनके बालक जीवित नहीं रहते और मर जाते हैं, उन्हें ३ माशा वंशलोचन प्रातःकाल और सायङ्काल गो-दुग्ध में डाल कर पीना चाहिए। दूध की मात्रा

एक छटाँक से आठ छटाँक तक ली जा सकती है। धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाना लाभप्रद है। दूध को स्वादिष्ट बनाने के लिए उसमें छोटी इलायची, केशर और मिश्री मिलाई जा सकती है। जिनके बालक जीवित नहीं रहते उन्हें चाहिए कि उक्त रीति से गर्भिणी स्त्री को वंसलोचन अवश्य सेवन करावें।

यहाँ तक हम गर्भिणी के रोगों का वर्णन कर चुके; अब हम आगे के प्रकरण में "दौहृद" विषय में विचार करेंगे।

(५) दौहृद

चतुर्थे सर्वाङ्गप्रत्यङ्गविभागो हृदयप्रव्यक्तभावाच्चेतन। धातुरभिव्यक्तो भवत्यतः नारीं दौर्हृदिनी माचक्षते॥

अर्थात्—गर्भाधान के बाद चौथे महीने गर्भस्थ भ्रूण के अङ्ग-प्रत्यङ्गों का विभाग होता है। भ्रूण का हृदय बनने से स्पष्ट मालूम होने लगता है। चौथे महीने से एक तो गर्भस्थ का हृदय और दूसरा स्त्री का हृदय होने से स्त्री को दौहृदिनी कहा जाता है। दो :—

दौहृदिनी के इच्छित को दौहृद कहते हैं। आयुर्वेद कहता है :—

दौहृदविमाननात् कुब्जं खञ्जं जडं वामनं विकृताक्षं नारी जनयति। तस्मात् सा यद्यदिच्छेत् तत्तत् तस्मै दापयेत्॥

अर्थात्—स्त्री को दौहृद न मिलने से, कुबड़ा, खञ्ज, पाँगुला, बौना, मूर्ख विकारयुक्त नेत्रों वाला बालक पैदा होता है। इसलिए दौहृदा स्त्री जिस चीज की इच्छा करे उसको पूर्ण करना चाहिए।

सुश्रुत ने भी यही बतलाया है कि "गर्भस्थ सन्तान के गर्भिणी के लाभार्थ गर्भवास के दिनों में पैदा होने वाली उसकी इच्छाओं को अवश्य पूर्ण करना चाहिए"। लिखा है :—

लब्धदौहृदा हि वीर्यवन्तं चिरायुषं पुत्रं जनयति॥

अर्थात्—स्त्री को दौहृद मिलने से पराक्रमी और बड़ी उम्र का बालक पैदा होता है।

स्त्री को जैसे दौहृद की इच्छा होती है उसकी सन्तान भी वैसी ही होती है। या यों कहिए कि जिस स्वभाव की अथवा जैसे विचार की स्त्री होती है उसे वैसे ही दौहृद की इच्छा होती है। आयुर्वेद में कहा है :—

रजः-संदर्शने यस्या दौहृदं जायते स्त्रियाः।
अर्थवन्तं महाभागं कुमारं सा प्रसूयते॥
आश्रमे संयतात्मानं धर्मशीलं प्रसूयते।
दर्शने व्यालजातीनां हिंसाशीलं प्रसूयते॥

अर्थात्—जिस गर्भिणी का मन राजा के दर्शनों का इच्छुक हो उसके गर्भ से भाग्यवान तथा धनी बालक उत्पन्न होता है। जिसका मन तीर्थ और महात्माओं के दर्शन के लिए लालायित हो उसके गर्भ से धर्मात्मा बालक पैदा होता है, और जो सर्पादि हिंसक प्राणियों को देखना चाहेगी तो उसका बालक क्रूर स्वभाव वाला निर्दयी और हिंसक पैदा होगा।

यद्यपि पाठकों ने ऐसे कई उदाहरण देखे-सुने होंगे; तथापि

हम भी यहाँ २-४ उदाहरण दिए विना आगे बढ़ना ठीक नहीं समझते। पुराणों में कथा है :—

एक जगह गोमेधयज्ञ के लिए गोवध किया गया। वहाँ उस मांस पर एक गर्भवती ऋषि-पत्नी का मन ललचाया। उसने अपनी इच्छा अपने पति को कही। दौहृदा होने से ऋषि ने गोमांस चुरा कर उसे खाने के लिए ला दिया। उसने गोमांस खाकर अपनी इच्छा पूरी की। उस गर्भ से जो बालक उत्पन्न हुआ वह राक्षस था।

मर्यादा-पुरुषोत्तम महाराजा श्रीरामचन्द्र जी की पत्नी श्री सीता देवी जिन दिनों गर्भवती थीं, उन दिनों उन्होंने दौहृदा होने के कारण सीता जी से पूछा :—

अपत्य लाभो वैदेहि त्वव्ययं समुपस्थितः।
किमच्छसि वरारोहे कामः किं क्रियतां तव॥

अर्थात्—"प्रिये! आजकल तुम गर्भवती हो। कहो, तुम किस वस्तु की इच्छा करती हो? मैं तुम्हारी कौन सी कामना पूरी करूँ?"

अपने पति के मुख से यह बात सुनकर सीता देवी ने कहा :—

तपोवनानि पुण्यानि द्रष्टुमिच्छामि राघव!
गङ्गातीरोपविष्टानामृषीणामुग्रतेजसाम्॥

अर्थात्—"स्वामिन्! मेरी इच्छा गङ्गा-तटवासी, उग्र तेजस्वी ऋषियों के पवित्र तपोवन में जाने की है। मैं वहाँ ऋषियों के तथा ऋषि-पत्नियों के दर्शन-पूजन करूँगी, उन्हें भेंट दूँगी।"

श्रीरामचन्द्र जी ने उसकी बात मान ली और दूसरे दिन उन्हें

जङ्गल में भेज दिया। यद्यपि प्रजा-अपवाद के भय से श्रीरामचन्द्र जी ने सीता को फिर अपने घर में नहीं आने दिया; तथापि दौहद के लिए श्रीरामचन्द्र जी का प्रयत्न करना यहाँ हमारे विषय का पोषक अवश्य है।

एक सगर्भा स्त्री को "जिन" नाम की शराब पीने की उत्कट इच्छा हुई; किन्तु कारणवश उसकी इच्छा पूर्ण नहीं हो सकी। प्रसव-काल निकट आ गया और बालक पैदा हुआ। वह बालक पैदा होते ही लगातार सात-आठ दिन तक रोता रहा। उसके बहुत इलाज किए गए; परन्तु सभी निष्फल हो जाने से उसे शराब पिलाने लगे, लेकिन कुछ भी फ़ायदा नहीं हुआ। अन्त में उसे जब "जिन" नामक शराब दी गई तब उसका रोना बन्द हो गया; वह अच्छा हो गया।

समस्त यूरोप-खण्ड को थर्राने वाला "महान् वीर नेपोलियन बोनापार्ट" दौहद के कारण ही विश्व-विख्यात हो गया। जिन दिनों यह वीर अपनी माता के गर्भ में था, उन दिनों उसकी माता की इच्छा वीर साहित्य पढ़ने तथा वीरता के दृश्य देखने की थी।

"...............The mother of Napoleon read Plutarch's lives and heroic literature and that her moods of mind were transferred to her son."

Joseph Cook

नेपोलियन की माता ने गर्भवती दशा में प्लूटार्क के लिखे हुए जीवन-चरित्रों और ग्रीसियन वीर-साहित्य को पढ़ा था।

उसके इस पठन-पाठन का प्रभाव गर्भस्थ शिशु नेपोलियन पर पड़ा। डॉक्टर फ़ाउलर लिखते हैं :—

"Because of his mother's state of pregnancy she was carrying him all the time in exercising queenly power over her spirited charger and the subordinates of her husband, and coming with the army. Had her state of mind nothing to do with his ruling passion which was even strong in death?"

इसका भावार्थ यह है; जिस समय नेपोलियन गर्भ में था, उस समय उसकी माता तेज घोड़े की सवारी करती, घोड़े तथा अपने पति के अधीन सैनिकों पर रानी के समान अधिकार रखती और हुकूमत करती थी। क्या उसके इन कार्यों का प्रभाव उसकी गर्भस्थ सन्तान पर न हुआ होगा ?

चार्ल्स किंग्स्ली जिस समय माता के गर्भ में था, उस समय उसकी माता का मन धर्म-वृत्तियों की ओर आकर्षित हुआ। इस कारण वह सांसारिक सुखों से मुख मोड़ कर साधु-स्वभाव से, नगर छोड़ कर देहात में रहने लगी और अपना अधिक समय प्राकृतिक सौन्दर्य को देखने में बिताने लगी। उसके मन में पूर्ण वैराग्य और धार्मिक भावों का भले प्रकार उदय हो गया। फलरूप "किंग्स्ली" पैदा हुआ, जिसने सृष्टि-सौन्दर्य पर एक बड़ा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा और प्रतिष्ठित धर्माध्यक्ष का यश प्राप्त किया।

एक स्त्री को गर्भकाल में व्याख्यान सुनने की इच्छा हुई और जब तक वह गर्भवती रही, तब तक उसने प्रसिद्ध वक्ताओं के व्याख्यान सुने। सुयोग्य वक्ताओं के पुस्तकाकार व्याख्यान, कविताएँ और लेख पढ़े। इस गर्भ से जो बालक पैदा हुआ उसमें वक्तृत्व-शक्ति का आशातीत विकास हुआ। इस बालक की डॉक्टर फाउलर ने परीक्षा की और बतलाया कि इसके मस्तिष्क में वक्तृत्व-शक्ति, प्रदर्शन-शक्ति, अनुकरण-शक्ति, बोलने में माधुर्य तथा बुद्धि और स्मरण-शक्ति ने बड़ी अच्छी तरह विकास पाया है।

पाठकों के लिए यहाँ इतने ही उदाहरण काफी होंगे। अधिक उदाहरणों द्वारा पुस्तक के कलेवर को रँगने से कोई लाभ नहीं होगा। तात्पर्य यह है कि गर्भवती स्त्री की इच्छा पूर्ण करना परमावश्यक है। जो लोग गर्भवती की इच्छाओं को पूर्ण करने में असमर्थ हैं वे उत्तम सन्तान कदापि नहीं प्राप्त कर सकते। आजकल लोग दौहृद पर ध्यान नहीं देते अथवा जो देना चाहते हैं वे वर्त्तमान काल की बढ़ी-चढ़ी भारतीय दरिद्रता के कारण कुछ भी नहीं कर सकते। हमारे अज्ञानी पुरुष अपनी गर्भवती की इच्छा-पूर्त्ति के लिए उन दिनों हलवाई के दोने, फल-फूल आदि ला-लाकर अपनी अर्द्धांगिनी की सुश्रूषा किया करते हैं। इसी को वे दौहृद समझते हैं और इतने पर ही वे अपने कर्त्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं; किन्तु इसमें कोई लाभ नहीं, बल्कि हानि ही हानि होती है।

प्राचीनकाल में "सन्तान-शास्त्र" के ज्ञाता प्रत्येक मनुष्य

होते थे; अतएव वे लोग गर्भवती के दौहृद का बहुत ध्यान रखते थे। यही कारण था कि प्राचीनकाल में जो प्रजा उत्पन्न होती थी, वह सर्वगुण-सम्पन्न और इच्छानुसार होती थी; परन्तु आज देश में इस शास्त्र का अभाव ही हम लोगों की दुर्दशा का मूल कारण है। जो लोग देश को स्वतन्त्र और उन्नत देखना चाहते हैं, उन्हें सबसे पहले इस मूल कारण की ओर ध्यान देना चाहिए। यहाँ तक हम दौहृद के विषय में विवेचन कर चुके, अब अगले अध्याय में "क्या इच्छानुसार सन्तान पैदा की जा सकती है?" इस पर विचार करेंगे।

आठवाँ अध्याय

क्या सन्तान इच्छानुसार पैदा की जा सकती है

स्तुत विषय एक ऐसा विषय है, जिसे ईश्वराधीन बात समझते हैं। यदि कहा जावे कि पुत्र, पुत्री, नपुंसक, विद्वान्, चित्रकार, वक्ता, गणि आविष्कारक, वीर, कायर, वैज्ञानि खूबसूरत, बदसूरत जैसी इच्छा हो, वै ही सन्तान उत्पन्न की जा सकती है, लोग इस बात पर हजारहा समझाने पर भी विश्वास नहीं लावें मूर्खों की बात जाने दीजिए, यदि यही बात कुछ पढ़े समझदार लोगों को कही जावे, तो वे भी इस पर कदापि विश्व नहीं लावेंगे। यद्यपि पुत्र-पुत्री अथवा इच्छानुसार सन्तान उत्प करने का विषय गूढ़ है; तथापि यह विषय इन्द्रिय-विज्ञान की के बाहर नहीं है। प्राचीन समय के लोग इस रहस्य को प्रकार जानते थे, कारण कि वे लोग विद्वान् होते थे। आज के ऐसे-ऐसे विद्वान् जिन्हें ह्रस्व-दीर्घ अक्षर तक का ज्ञान नहीं । विषय पर आश्चर्य करें और नाक-भौं चढ़ावें, तो आश

ही क्या ? पहले और आजकल के विद्वानों में जमीन आसमान का अन्तर है। हमारे पूर्वज बुद्धिवर्द्धनार्थ और उत्तम ज्ञान की प्राप्ति के लिए विद्याभ्यास करते थे, जिनका प्रमाण ब्राह्मण, उपनिषद्, दर्शन, स्मृति, इतिहास, पुराण, ज्योतिष, वैद्यक, ग्रन्दशास्त्र आदि हैं। आजकल के विद्वानों की विद्या उतनी ही है, जितनी से कि वे अपना तथा अपने कुटुम्ब का पालन कर सकें। इस अविद्या के युग में लोग "इच्छानुसार पुत्र-पुत्री उत्पन्न की जा सकती है ?" इस विषय को देख कर चौंक उठें, तो आश्चर्य की बात ही क्या है ?

"प्रत्यक्षे किं प्रमाणम् ।"

के अनुसार हम इस विषय पर अधिइच्छानुसार पुत्र-पुत्री अब सप्रमाण ऐसे उपायों को लिखेंगे, जिन यदि असत्य मालूम होता उत्पन्न की जा सकती है। हमारे कथन करके देख लें। पहले हो, तो परीक्षा द्वारा सत्यासत्य न पर हिन्दू-जाति की अटल हम अपने ऋषियों के व त करेंगे। शुक्ल यजुर्वेदीय श्रद्धा और विश्वास लेखा है :— संहिता के पिता का वीर्य अधिक बलवान् है, तो गर्भा वीर्य अधिक बलवान् है, तो पुत्री उत्पन्न होती है :— पुत्र; औ कधर्म से लगा कर सोलह रात्रियाँ गर्भाधान के लिए है। सु

स

इन दिनों स्त्री-वीर्य बहुत ही बलवान् होता है; और उसमें पे
तत्व भी अधिक होता है। ज्यों-ज्यों मासिकधर्म के दिन
होते जाते हैं; त्यों-त्यों स्त्री-वीर्य निर्बल होता जाता है और दस
दिन तो निर्बल ही हो जाता है। यदि इस समय गर्भाधान कि
जावे तो पुत्र उत्पन्न होता है। डॉक्टर सीक्स्ट ने लिखा है-
पुरुष की दक्षिण गोली (अण्ड) का वीर्य स्त्री के दक्षिण
के स्त्री-वीर्य में मिलता है, तो पुत्र उत्पन्न होता है; और पुरुष
बाईं गोली का वीर्य स्त्री के बाम अण्ड के वीर्य में मिलता है,
कन्या पैदा होती है।

डॉक्टर सेंक का कहना है—स्त्री के भोजन पर पुत्र और
पुत्री का उत्पन्न होना निर्भर है। जिन स्त्रियों के पेशाब
शर्करा का भाग अधिक होता है, वे पुत्रियाँ प्रसव करती हैं; और
जिनके पेशाब में शर्करा नहीं जाती, वे पुत्र उत्पन्न करती हैं।
जिनके पेशाब में शर्करा जाती है, उनके स्त्री-वीर्य अच्छी तरह
परिपक्व नहीं होते। अतएव ऐसे अपक्व और निर्बल स्त्री-वीर्य
पुत्री पैदा होती है। पेशाब में शर्करा कम करने के लिए
मांस खान-पान रखना चाहिए।

चार्ल्स डार्विन का कहना है—हरेक अपनी वृद्धि करता है
यदि पुरुष की वय स्त्री से अधिक है, तो यह प्राकृतिक नियमानुसार
अपनी जाति की रक्षा के लिए पुरुष-जाति का घातक
करेगा। अतएव पुत्र की कामना रखने वाले पुरुष को कम
स्त्री से रमण करना चाहिए। मि० सेडलर का कहना है :—

स्त्री-वीर्य पूरा परिपक्व होने से पुत्र उत्पन्न करता है, और पुत्र की अपेक्षा पुत्री के अवयव निर्बल—कोमल होते हैं; अतएव अपरिक्व वीर्य पुत्री उत्पन्न करता है। प्रत्येक जाति अपने प्रतिकूल जाति उत्पन्न करती है; Cross Haredity नियम के अनुसार स्त्री पुत्र और पुरुष पुत्री को उत्पन्न करता है।

डॉक्टर वेलहिंग लिखते हैं—एक स्त्री को लगातार नौ पुत्र उत्पन्न हुए, कन्या एक भी नहीं हुई। अन्तिम सन्तान पैदा होने के वक्त उसकी मृत्यु हो गई। मैंने उसका गर्भाशय चीर कर देखा, तो मालूम हुआ कि उसका दक्षिण अण्डकोप सबल है और बायाँ सूखा हुआ निकम्मा है। इससे स्पष्ट हो गया कि स्त्री का दक्षिण अण्डकोप पुत्र पैदा करता है और बायाँ पुत्री।

पुरुष के दाहिने अण्डकोप से निकला हुआ वीर्य स्त्री के दाहिने अण्डकोप के वीर्य के साथ मिलता है; और बायाँ का वीर्य बाएँ से। दाहिने का बाएँ के साथ; और बाएँ का दाहिने के साथ कभी भी मिश्रण नहीं होता। डॉक्टर सिक्स्ट इसका इस प्रकार समर्थन करते हैं :—

मैंने सन् १७८२ई० में दो खस्सी किए हुए सुअर के बच्चे खाने के लिए खरीदे। इनके बड़े होने पर मैं ने एक दिन देखा कि उनमें एक सुअर अच्छी तरह खस्सी नहीं हुआ है। उसका बायाँ अण्ड-कोप कटने से रह गया था। मैं ने ऐसे मौक़े को हाथ से नहीं जाने दिया और प्रयोग करने के लिए एक सुअरी खरीदी, और दाहिने अण्डकोप कटे पशु से मिलाया। दिसम्बर मास में उससे आठ

बच्चे पैदा हुए जो सब के सब स्त्री-जाति के थे। दूसरी बार फिर इसी जोड़े से ग्यारह बच्चे पैदा हुए, वे भी सब नारी-जाति के थे। इसके बाद मैं ने कुत्तों पर प्रयोग किया। दो कुत्तों के दाहिने अण्ड-कोष ता० २ सितम्बर सन् १७८६ को काटे गए। इन कुत्तों को एक-एक कुतिया के साथ कमरों में अलग-अलग बन्द किया गया। बड़ी देख-रेख रक्खी गई। तारीख ८ जनवरी सन् १७८७ को एक कुतिया ने आठ बच्चे दिए, जो सब की सब कुतियाएँ ही थीं, कुत्ते नहीं थे। फिर खरगोशों को पाला और उन पर प्रयोग किया। तीन खरगोशों के दाहिने अण्डकोष काट कर इन्हें तीन मादा खरगोशों के साथ एक मकान में रक्खा। प्रत्येक जोड़े से हर पाँचवें-छठे सप्ताह बच्चे पैदा होने लगे। ये बच्चे सबके सब स्त्री-जाति के थे। अब नारी-जाति पर प्रयोग करने की मेरी प्रबल इच्छा हुई; लेकिन यह कार्य ज़रा कठिन था; क्योंकि नारी-जाति के अण्डकोष गर्भाशय में होते हैं। अन्त में पेट चीर कर अण्डकोषों को काटा गया। बहुत से प्राणी मर गए; किन्तु अन्त में दो कुतियाएँ जीवित रहीं। ७ अगस्त सन १७८८ को इन कुतियों का पेट चीर कर अण्डकोष काटा गया। १६ अगस्त सन १७८८ को उनसे कुत्तों को मिलाया गया। १८ फरवरी सन १७८९ को पाँच बच्चे पैदा हुए, जो सब नारी-जाति के थे। इस प्रकार मैं अपने सिद्धान्त को सिद्ध करने में पूर्णतया कृतकार्य हुआ।

श्रीमद्भागवत में लिखा है—१३, १४, १५, १६ रात्रि में गर्भ रह तो सकता है; परन्तु इन रात्रियों को छोड़ देना चाहिए;

क्योंकि इन तिथियों में गर्भाधान करने से बालक स्वस्थ उत्पन्न नहीं होता (ये रात्रियाँ रजस्वला होने के दिन से गिननी चाहिए)। दारुदाही एक बड़े प्रसिद्ध वैद्य हो गए हैं, वे लिखते हैं :—

भोग के समय यदि पुरुष पहिले स्खलित हो, तो पुत्र उत्पन्न होता है; और यदि स्त्री पहिले स्खलित हो, तो पुत्री पैदा होती है। यदि दोनों एक साथ स्खलित हुए, तो नपुंसक पैदा होता है। गर्भाधान के लिए स्त्री का स्खलित होना जरूरी बात नहीं है। स्त्री के वीर्य के साथ रज भी निकलता है, और वही गर्भाधान का हेतु है। इसी कारण यदि स्त्री स्खलित न हो, तो भी बच्चा पैदा हो सकता है, बशर्ते कि रज मिल जावे।

यदि जोड़ा इस प्रकार मिलाया जावे—

स्त्री	१६	वर्ष की	और पुरुष २४ वर्ष का
,,	१८	,,	,, ३० ,,
,,	२०	,,	,, ३६ ,,
,,	२२	,,	,, ४० ,,
,,	२४	,,	,, ४८ ,,

तो सम और विषम रात्रियों का सिद्धान्त सत्य होने में कोई आशङ्का नहीं रह जाती। इस प्रकार मिलाया हुआ जोड़ा, यदि युग्म रात्रियों में गर्भाधान करेगा, तो अवश्य पुत्र उत्पन्न होगा और जो अयुग्म रात्रियों में गर्भाधान करेगा, उसके कन्या पैदा होगी। विषम रात्रियों में यदि वीर्य पैदा करने वाले पदार्थ खाकर पुरुष गर्भाधान करे, तो भी पुत्र उत्पन्न हो सकता है; लेकिन वह पुत्र

बनाना तबीयत का होगा। यही बात स्त्री के विषय में भी समझनी चाहिए।

भोज ऋषि लिखते हैं—युग्म रात्रियों में गर्भाधान करने से पुत्र, विषम रात्रियों में गर्भाधान करने से पुत्री और सायं तथा प्रातः समय भोग करने से नपुंसक सन्तान उत्पन्न होती है।

चन्द्रवली ऋषि कहते हैं—योनि में तीन नाड़ियाँ हैं। समीरणा, चान्द्रमुखी और गौरी। समीरणा नाम्नी नाड़ी में वीर्य जाने से वीर्य निष्फल हो जाता है। चान्द्रमुखी में यदि बाईं ओर वीर्य गिरे, तो कन्या उत्पन्न होती है और गौरी नाम्नी नाड़ी में दाहिनी ओर वीर्य गिरे, तो पुत्र उत्पन्न होता है। चान्द्रमुखी नाड़ी थोड़े सम्भोग से ही खुलती है; तथा गौरी स्त्री के अधिक काम-पीड़िता होने पर खुलती है। इसी प्रकार भाव मिश्र का भी कथन है।

एक चिकित्सक का कहना है—रजस्वला होने से पाँचवें दिन तक गर्भाधान करने से लड़का होता है। छठे से आठवें दिन तक लड़की होती है, फिर नवें से ग्यारहवें दिन तक लड़का और १२ वें दिन से रजस्वला होने तक नपुंसक होता है।

एक अनुभवी पुरुष का लिखना है—यदि स्त्री-पुरुष दोनों गर्भाधान के लिए दाहिने पैर को प्रथम रख कर चारपाई पर चढ़ेंगे, तो पुत्र उत्पन्न होगा; और यदि दोनों बाएँ से चढ़ेंगे तो पुत्री उत्पन्न होगी।

स्त्री को सम्भोग की प्रबल इच्छा हो; और मैथुन के बाद भी उसकी कुछ इच्छा बाकी रह जावे, तो अवश्य ही पुत्र उत्पन्न होगा।

पुत्र चाहने वाले पुरुष को बहु-मैथुन से बचना चाहिए। बहुत अमीरी घरों में लड़कियाँ अधिकतर पाई जाती हैं। इसका कारण यह है कि विषय-भोग और आलस्य से शरीर के पट्ठे निर्बल हो जाते हैं।

सोम, बुध और शुक्रवार को गर्भाधान करने से पुत्र पैदा होता है; और शेष दिनों में कन्या उत्पन्न होती है।

अमेरिकन पत्र "मेडिकल वर्ल्ड" में एक लेडी डॉक्टर ने एक निबन्ध लिखा था। उसमें उसने बतलाया था—यदि रजस्वला से मैथुन किया जावे, तो पुत्र उत्पन्न होता है। इस लेडी ने बड़े दावे से लिखा है कि जिसके बाल-बच्चे न होते हों, वे यदि रजस्वला से मैथुन करेंगे, तो अवश्य ही बालक उत्पन्न होगा। इस पर अमृतधारा के आविष्कारक पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा अपनी सम्मति इस प्रकार प्रकट करते हैं—रजस्वला से भोग करना निस्सन्देह हानिकारक है। मेरी सम्मति यही है कि उक्त लेडी का कथन शायद कुछ स्त्रियों के लिए ठीक हुआ हो; परन्तु यह सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता। रजस्वला स्त्री में यदि गर्भाधान किया गया; तो सन्तान बदसूरत होगी।

कुछ शरीर शास्त्रज्ञों का कहना है—यदि भोग-काल में पुरुष का प्रेम अधिक होगा, तो पुत्र; और स्त्री का प्रेम अधिक होगा, तो कन्या उत्पन्न होगी। एक का कहना है—गर्भिणी को गर्भ रहने के पश्चात् नर या नारी, जिसका ध्यान होगा वही उत्पन्न होती है।

डॉक्टर डेविस (Davis) का कहना है—कन्या का गर्भ

रजस्वला होने के तीन दिन पूर्व से आठ दिन पश्चात् तक रहता है। रज के पश्चात् दसवें दिन से सोलह दिन तक पुत्र उत्पन्न करने के लिए गर्भाधान किया जा सकता है। नवें दिन कन्या और पुत्र अथवा जोड़ेले बालक उत्पन्न हो सकते हैं।

एक लेडी डॉक्टर (Francis Mammitor Yeory) का कहना है :—

पाँच रत्ती सोडा दस छटाँक गर्म जल में डाल कर सोल्यूशन तैयार कर लें। इस नियाये पानी से स्त्री को अपनी योनि धोकर साफ करनी चाहिए। ऋतु-काल से तीन दिन पहले मैथुन करें। शय्या पर सोने के पहिले ही मैथुन में प्रवृत्त हो जाना चाहिए। *स्खलित होने के बाद स्त्री-पुरुष पाँच मिनट तक उसी दशा में रहें।* स्त्री को चाहिए कि अपने दाहिने कुच पर हाथ रखे रहे। पुरुष के अलग होते ही दाहिनी करवट होकर यथासम्भव इसी करवट पड़ी रहे। पुत्री की इच्छा करने वालों को पिछली रात में मैथुन करना चाहिए और दाहिनी करवट के स्थान पर बाईं करवट से उपरोक्त क्रिया करनी चाहिए।

हम पीछे कह आए हैं कि गर्भ के तीसरे महीने में नर-नारी-सूचक अवयव प्रकट होते हैं। इसलिए यदि गर्भवती दो महीने तक निम्नलिखित तरकीब करेगी, तो अवश्य ही पुत्र की जननी होगी। गर्भाधान के दूसरे दिन, लक्ष्मणा पद की कोंपल, पीले फूल वाली कन्धी (गुलशकरी), सफेद फूल वाली कटेरी; इनमें से कोई भी भी एक जो मिल सके ले ले। गौ के दूध में पीस कर दाहिने नासिका-

रन्ध्र में डाल दे। इस वक्त दवा को थूकना नहीं चाहिए। यदि कन्या उत्पन्न करनी हो; तो बाएँ कान में दवा डाले। लक्ष्मणा बड़ी ही अच्छी वस्तु है। इसे पुत्रदा कहते हैं। वन्ध्या-चिकित्सा में हमने इसे प्रत्येक औषधि के साथ सेवन करने के लिए लिखा है। इसे सफेद कँडियारी भी कहते हैं।

सोने, चाँदी अथवा लोहे का एक पुतला बनावे और उसे आग में डाल करके गो-दुग्ध में बुझावे। इस दूध को प्रतिदिन बिला नागा पिलाने से पुत्र ही पैदा होता है; और स्वस्थ होता है।

वट वृक्ष की आठ कोंपलें गो-दुग्ध में मिला कर पीने से दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होता है।

पिछले प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि दाहिने अण्डकोष से निकला हुआ वीर्य पुत्र; और बाएँ अण्डकोष से निकला हुआ वीर्य पुत्री उत्पन्न करता है। जिस वक्त वीर्य जाता है, उस समय जिस अण्ड से वीर्य निकलता है, वह थोड़ा सा ऊपर की ओर उठ जाता है। इस विषय पर डॉक्टर ट्राल कहते हैं कि यदि पुत्री उत्पन्न करना हो, तो वीर्यपात के समय अपना बायाँ अण्डकोष अपने हाथ से ऊपर उठा दिया जावे; और पुत्र उत्पन्न करना हो, तो दाहिना अण्ड-कोष ऊपर उठा दिया जावे। ऐसा करने से जिस अण्ड को ऊपर उठाया जावेगा उसी से वीर्य निकलेगा। लँगोट के द्वारा यह क्रिया अत्यन्त सुगमतापूर्वक हो सकती है। वह अण्डकोष जिससे वीर्य निकालने की इच्छा हो, उसे लँगोट की पट्टी में ऊपर की ओर फँसा रहने देना चाहिए बाकी दूसरा अण्ड और लिङ्ग लँगोट से निकाल

रजस्वला होने के तीन दिन पूर्व से आठ दिन पश्चात् तक रहता है। रज के पश्चात् दसवें दिन से सोलह दिन तक पुत्र उत्पन्न करने के लिए गर्भाधान किया जा सकता है। नवें दिन कन्या और पुत्र अथवा जोड़ेले बालक उत्पन्न हो सकते हैं।

एक लेडी डॉक्टर (Francis Mammitor Yeory) का कहना है :—

पाँच रत्ती सोडा दस छटाँक गर्म जल में डाल कर सोल्यूशन तैयार कर लें। इस निवाये पानी से स्त्री को अपनी योनि धोकर साफ करनी चाहिए। ऋतु-काल से तीन दिन पहले मैथुन करें। शय्या पर सोने के पहिले ही मैथुन में प्रवृत्त हो जाना चाहिए। स्खलित होने के बाद स्त्री-पुरुष पाँच मिनट तक उसी दशा में रहें। स्त्री को चाहिए कि अपने दाहिने कुच पर हाथ रखे रहे। पुरुष के अलग होते ही दाहिनी करवट होकर यथासम्भव इसी करवट पड़ी रहे। पुत्री की इच्छा करने वालों को पिछली रात में मैथुन करना चाहिए और दाहिनी करवट के स्थान पर बाईं करवट से उपरोक्त क्रिया करनी चाहिए।

हम पीछे कह आए हैं कि गर्भ के तीसरे महीने में नर-नारी-सूचक अवयव प्रकट होते हैं। इसलिए यदि गर्भवती दो महीने तक निम्नलिखित तरकीब करेंगी, तो अवश्य ही पुत्र की जननी बनेंगी। गर्भाधान के दूसरे दिन, लक्ष्मणा बड़ की कोंपल, पीले फूल वाली कटाई (गुलराफटी), सफेद फूल वाली कटेरी; इनमें से कोई भी एक जो मिल सके ले ले। गौ के दूध में पीस कर दाहिने नासिका-

रन्ध्र में डाल दे। इस वक्त दवा को थूकना नहीं चाहिए। यदि कन्या उत्पन्न करनी हो; तो बाएँ कान में दवा डाले। लक्ष्मणा बड़ी ही अच्छी वस्तु है। इसे पुत्रदा कहते हैं। वन्ध्या-चिकित्सा में हमने इसे प्रत्येक औषधि के साथ सेवन करने के लिए लिखा है। इसे सफेद कँडियारी भी कहते हैं।

सोने, चाँदी अथवा लोहे का एक पुतला बनावे और उसे आग में डाल करके गो-दुग्ध में बुझावे। इस दूध को प्रतिदिन बिला नागा पिलाने से पुत्र ही पैदा होता है; और स्वस्थ होता है।

वट वृक्ष की आठ कोंपलें गो-दुग्ध में मिला कर पीने से दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होता है।

पिछले प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि दाहिने अण्डकोष से निकला हुआ वीर्य पुत्र; और बाएँ अण्डकोष से निकला हुआ वीर्य पुत्री उत्पन्न करता है। जिस वक्त वीर्य जाता है, उस समय जिस अण्ड से वीर्य निकलता है, वह थोड़ा सा ऊपर की ओर उठ जाता है। इस विषय पर डॉक्टर ट्राल कहते हैं कि यदि पुत्री उत्पन्न करना हो, तो वीर्यपात के समय अपना बायाँ अण्डकोष अपने हाथ से ऊपर उठा दिया जावे; और पुत्र उत्पन्न करना हो, तो दाहिना अण्ड-कोष ऊपर उठा दिया जावे। ऐसा करने से जिस अण्ड को ऊपर उठाया जावेगा उसी से वीर्य निकलेगा। लँगोट के द्वारा यह क्रिया अत्यन्त सुगमतापूर्वक हो सकती है। वह अण्डकोष जिससे वीर्य निकालने की इच्छा हो, उसे लँगोट की पट्टी में ऊपर की ओर फँसा रहने देना चाहिए बाक़ी दूसरा अण्ड और लिङ्ग लँगोट से निकाल

कर मैथुन करना चाहिए। दूसरा उपाय एक यह भी है कि जिस अण्डकोष को ऊपर उठने से रोकना हो, उसमें एक रबर का छल्ला डाल देना चाहिए और दूसरे को खुला छोड़ देना चाहिए। रबर का छल्ला बाजार में मिल जाता है। इस विधि को यदि ध्यानपूर्वक किया जावे, तो अवश्यमेव सफलता मिलेगी।

एक इससे भी सुगम उपाय है। यदि दाहिने नथुने से साँस चलते वक्त स्त्री-प्रसङ्ग किया जावे और गर्भ रह जावे, तो पुत्र उत्पन्न होगा। इसी तरह बाएँ नथुने से साँस चलते वक्त गर्भाधान करने से पुत्री उत्पन्न होगी। इसमें ऊपर बताई हुई बात ही है। जिस समय दक्षिण नासिका-रन्ध्र से साँस चलता है, उस वक्त के वीर्य-पात में दाहिना अण्डकोष ही ऊपर उठता है, बायाँ नहीं। इसी तरह बाएँ नासिका-रन्ध्र से साँस चलते समय, यदि वीर्यपात होगा, तो बायाँ अण्डकोष ही ऊपर उठेगा। इस सिद्धान्त के अनुसार चलने से रबर के छल्ले की तथा लँगोट बाँधने की ज़रूरत ही नहीं रहती। यह अटल सिद्धान्त है; पाठक इसका स्वयं अनुभव करके देख सकते हैं। दाहिनी करवट सोने से बायाँ और बाएँ करवट सोने से दाहिना स्वर चलने लगता है। हिन्दू-शास्त्रकारों ने स्त्रियों को बाईं ओर स्थान दिया है। यह बात बड़ी महत्वपूर्ण है। बाईं ओर स्त्री होने से पुरुष को बाईं करवट ही सोना पड़ेगा। इससे पुरुष का दक्षिण स्वर चलने लगेगा और इस वक्त के गर्भाधान से जो सन्तान होगी, वह पुत्र ही होना चाहिए। एक योरोपियन पादरी लिखता है

मैं हमेशा अपनी स्त्री को अपने बाईं ओर लेकर सोया करता था। इस समय मेरे तीन सन्तानें उत्पन्न हुईं, जो तीनों ही लड़के थे। कुछ काल के लिए कारणवश मुझे स्त्री के बाएँ तरफ़ सोने का मौक़ा आया। इस वक्त मेरे दो सन्तानें हुईं, जो लड़कियाँ थीं। हमारे इतने लिखने से यह बात निष्पन्न होती है कि बाईं करवट सोने से दाहिना स्वर चलने लगता है, दाहिना श्वास चलने से गर्भाधान के समय दाहिना अण्डकोष ऊपर को उठता है और दाहिने अण्डकोष से पुत्रोत्पादक वीर्य गर्भाशय में जाता है। स्त्री के विषय में इस नियम की कोई आवश्यकता नहीं है। इस वक्त स्त्री का बायाँ स्वर चलना चाहिए।

पुरुष-वीर्य के बलवान् होने से पुत्र, और स्त्री-वीर्य के बलवान् होने से पुत्री उत्पन्न होती है। इस सिद्धान्त में भी कुछ सार अवश्य है। पुरुष के अवयव सबल और दृढ़ होते हैं; किन्तु स्त्री के निर्बल और कोमल होते हैं; अतएव पुरुष-शरीर की रचना के सबल वीर्य की तथा स्त्री-शरीर की रचना के लिए निर्बल वीर्य की आवश्यकता है।

गर्भाधान के समय जिसकी मनोवृत्ति अधिक प्रबल होती है, उसका वीर्य अधिक बलवान् माना जाता है। जो लोग पुत्र-प्राप्ति के इच्छुक हैं, उन्हें चाहिए कि मैथुन के समय पुरुष की मनःशक्ति प्रबल हो; साथ ही स्त्री को अधिक उत्तेजना भी हो। यदि पुरुष की मनःशक्ति प्रबल हो, तो स्त्री का वीर्य कितना ही

कर मैथुन करना चाहिए। दूसरा उपाय एक यह भी है कि जिस अण्डकोष को ऊपर उठने से रोकना हो, उसमें एक रबर का छल्ला डाल देना चाहिए और दूसरे को खुला छोड़ देना चाहिए। रबर का छल्ला बाज़ार में मिल जाता है। इस विधि को यदि ध्यानपूर्वक किया जावे, तो अवश्यमेव सफलता मिलेगी।

एक इससे भी सुगम उपाय है। यदि दाहिने नथुने से साँस चलते वक़्त स्त्री-प्रसङ्ग किया जावे और गर्भ रह जावे, तो पुत्र उत्पन्न होगा। इसी तरह बाएँ नथुने से साँस चलते वक़्त गर्भाधान करने से पुत्री उत्पन्न होगी। इसमें ऊपर बताई हुई बात ही है। जिस समय दक्षिण नासिका-रन्ध्र से साँस चलता है, उस वक़्त के वीर्य-पात में दाहिना अण्डकोष ही ऊपर उठता है, बायाँ नहीं। इसी तरह बाएँ नासिका-रन्ध्र से साँस चलते समय, यदि वीर्यपात होगा, तो बायाँ अण्डकोष ही ऊपर उठेगा। इस सिद्धान्त के अनुसार चलने से रबर के छल्ले की तथा लँगोट बाँधने की ज़रूरत ही नहीं रहती। यह अटल सिद्धान्त है; पाठक इसका स्वयं अनुभव करके देख सकते हैं। दाहिनी करवट सोने से बायाँ और बाएँ करवट सोने से दाहिना स्वर चलने लगता है। हिन्दू-शास्त्रकारों ने स्त्रियों को बाईं ओर स्थान दिया है। यह बात बड़ी महत्वपूर्ण है। बाईं ओर स्त्री होने से पुरुष को बाईं करवट ही सोना पड़ेगा। इससे पुरुष का दक्षिण श्वास चलने लगेगा और इस वक़्त के गर्भाधान से जो सन्तान होगी, वह पुत्र ही होना चाहिए। एक योरोपियन पादरी लिखता है :—

मैं हमेशा अपनी स्त्री को अपने बाईं ओर लेकर सोया करता था। इस समय मेरे तीन सन्तानें उत्पन्न हुईं, जो तीनों ही लड़के थे। कुछ काल के लिए कारणवश मुझे स्त्री के बाएँ तरफ़ सोने का मौक़ा आया। इस वक़्त मेरे दो सन्तानें हुईं, जो लड़कियाँ थीं। हमारे इतने लिखने से यह बात निष्पन्न होती है कि बाईं करवट सोने से दाहिना स्वर चलने लगता है, दाहिना श्वास चलने से गर्भाधान के समय दाहिना अण्डकोष ऊपर को उठता है और दाहिने अण्डकोष से पुत्रोत्पादक वीर्य गर्भाशय में जाता है। स्त्री के विषय में इस नियम की कोई आवश्यकता नहीं है। इस वक़्त स्त्री का बायाँ स्वर चलना चाहिए।

पुरुष-वीर्य के बलवान् होने से पुत्र, और स्त्री-वीर्य के बलवान् होने से पुत्री उत्पन्न होती है। इस सिद्धान्त में भी कुछ सार अवश्य है। पुरुष के अवयव सबल और दृढ़ होते हैं; किन्तु स्त्री के निर्बल और कोमल होते हैं; अतएव पुरुष-शरीर की रचना के सबल वीर्य की तथा स्त्री-शरीर की रचना के लिए निर्बल वीर्य की आवश्यकता है।

गर्भाधान के समय जिसकी मनोवृत्ति अधिक प्रबल होती है, उसका वीर्य अधिक बलवान् माना जाता है। जो लोग पुत्र-प्राप्ति के इच्छुक हैं, उन्हें चाहिए कि मैथुन के समय पुरुष की मनःशक्ति प्रबल हो; साथ ही स्त्री को अधिक उत्तेजना भी हो। यदि पुरुष की मनःशक्ति प्रबल हो, तो स्त्री का वीर्य कितना ही

बलवान् क्यों न हो, पुत्र ही उत्पन्न होगा। प्रबल मनःशक्ति के समय निकला हुआ पुरुष-वीर्य अवश्य पुत्र उत्पन्न करता है।

स्त्री-वीर्य मासिकधर्म होने पर उत्पन्न होता है; किन्तु परिपक्व नहीं होता। वह मासिकधर्म के आठ-नौ दिन बाद परिपक्व दशा में पहुँचता है। यही कारण है कि रजोधर्म के पिछले दिन गर्भ धारण के लिए अच्छे माने गए हैं। स्त्री-वीर्य की परिपक्वता सन्तान का बल, बुद्धि और तेजस्विता आदि की वृद्धि करती है।

पुत्र-पुत्री के इस भेद का निर्णय करने के लिए कई आधुनिक खोज करने वाले डॉक्टरों ने विचार किया है। एक डॉक्टर ने पुत्र और पुत्री की उत्पत्ति माता-पिता की उम्र पर मानी है। इस विषय में हम जर्मनी के डॉक्टर डाकेकर की सम्मति उद्धृत करते हैं:—

१—माता की अपेक्षा यदि पिता छोटा हो, तो १०० पुत्री के पीछे ९०'६ पुत्र उत्पन्न होते हैं।

२—माता और पिता की उम्र समान हो, तो सौ पुत्रियों के पीछे ९०'० पुत्र होते हैं।

३—माता से पिता १ से ६ वर्ष बड़ा हो, तो १०० पुत्री के पीछे १०३'४ पुत्र होते हैं।

४—माता की अपेक्षा पिता ६ वर्ष से ९ वर्ष तक बड़ा हो, तो १०० पुत्रियों के पीछे १२४'७ पुत्र होते हैं।

५—माता की अपेक्षा पिता ८ से १८ वर्ष अधिक बड़ा हो, तो १०० पुत्रियों के पीछे १४३'७ पुत्र उत्पन्न होते हैं।

चित्र-नम्बर १२

असली आकार

वृद्धि-क्रम (चौथा महीना)

Fire Art Printing Cottage, Allahabad

चित्र-नम्बर १२

असली आकार

वृद्धि-क्रम (चौथा महीना)

Free Art Printing Cottage, Allahabad
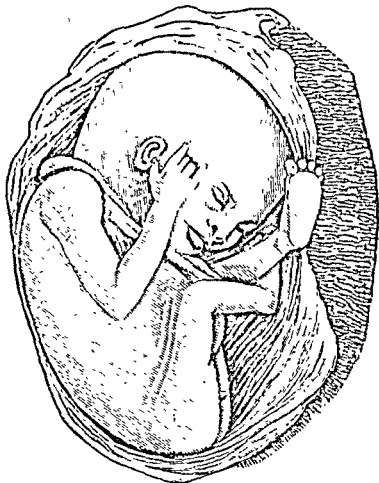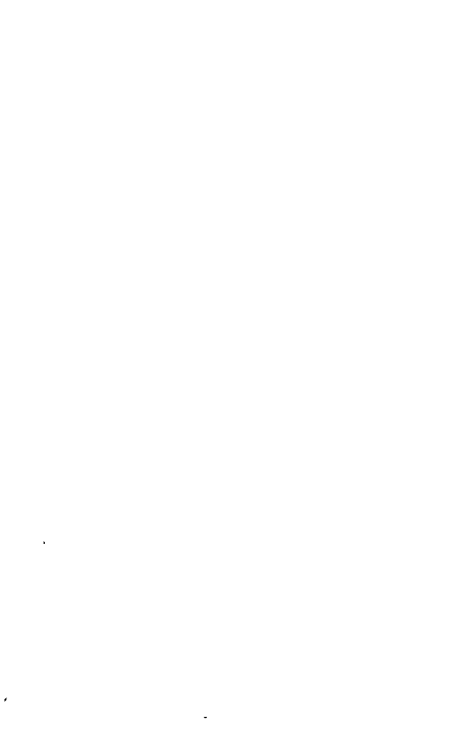
६—माता की अपेक्षा पिता १८ वर्ष से अधिक बड़ा होता है, तो १०० पुत्रियों के पीछे २००'० पुत्र उत्पन्न होते हैं।

७—पिता से १ से ३ वर्ष बड़ी माताओं में पुत्रोत्पत्ति का प्रमाण १०० पुत्रियों के पीछे ९४'३ है।

८—पिता से माता २ से ५ वर्ष बड़ी ७७ माताओं में पुत्रोत्पत्ति का प्रमाण १०० कन्याओं के पीछे ८८'८ है।

९—पिता की अपेक्षा माता ५ से १० वर्ष बड़ी ६६ माताओं में पुत्रोत्पत्ति का प्रमाण एक सौ कन्याओं के पीछे ७७'१ है।

१०—पिता से माता १० से १५ वर्ष बड़ी ४३ माताओं में पुत्रोत्पत्ति का प्रमाण एक सौ कन्याओं के पीछे ६०'६ है।

११—पिता की अपेक्षा १५ से २२ वर्ष बड़ी १७ माताओं में पुत्रोत्पत्ति का प्रमाण सौ कन्याओं के पीछे ४२'३ है।

इन उपरोक्त ११ प्रमाणों से यह सिद्ध हो रहा है कि पिता की उम्र अधिक होगी, तो पुत्र अधिक पैदा होंगे; और यदि माता की उम्र ज्यादा होगी, तो कन्याएँ अधिक उत्पन्न होंगी। विवाह-शादी करते समय, यदि इस बात पर ध्यान रक्खा जावे, तो बहुत कुछ भला हो सकता है; किन्तु यहाँ तो ६० वर्ष के बुड्ढे खूसटों को दस ग्यारह वर्ष की कन्याएँ द्रव्य-लोभी पिता दे देते हैं!! कहीं-कहीं दस-बारह वर्ष की लड़कियाँ आठ-दस वर्ष के दुधमुँहे बच्चे के पल्ले बाँध दी जाती हैं!!! शिव, शिव!

"हम पिछले अध्याय में कह आए हैं कि स्त्री-पुरुष का भेद सूचित करने वाले अङ्ग बालक के गर्भावस्था में तीसरे महीने

उसे मूर्च्छित करके ज्योंही उसका शरीर खोला गया, तो हमें यह देख कर महान् आश्चर्य हुआ कि उसके शरीर में स्त्री और पुरुष दोनों के चिह्न मौजूद हैं। ये दोनों अवयव नाममात्र के लिए मुर्दा नहीं थे; बल्कि दोनों ठीक दशा में सबल और सजीव थे। जब वह व्यक्ति होश में लाया गया; तब उससे पूछा गया, तो उसने कहा कि मैं ने दोनों अवयवों का उपयोग किया है; किन्तु गर्भ रह जाने के भय और लज्जा के कारण उसने स्त्री-अवयव से काम लेना छोड़ दिया है!"

एक दूसरी ऐसी ही बात और भी लिखी है :—

"मेरवाड़ा डिस्ट्रिक्ट (Merwara District) में एक व्यक्ति के लड़का पैदा हुआ। उसने वयस्क होने पर अङ्गरेजी भाषा में मेट्रिक पास किया—इन्हीं दिनों उसके बाप ने उसका एक कन्या के साथ विवाह कर दिया; क्योंकि उसके पुरुष होने में किसी तरह का किसी को भी शक नहीं था। विवाह हो चुकने पर मालूम हुआ कि वह स्त्री के काम का नहीं है। उसकी डॉक्टरी परीक्षा कराने पर मालूम हुआ कि वह वास्तव में स्त्री है। स्त्री-चिह्न पर नाममात्र के लिए पुरुष-चिह्न बना हुआ है। पुरुष-चिह्न निरर्थक होने के कारण काट दिया गया। इस कृत्रिम पुरुष-चिह्न के हटाते ही शुद्ध, निर्दोष स्त्री-चिह्न प्रकट हो गया। वह व्यक्ति अब पुरुष से स्त्री हो गया; अतएव वह और उसकी विवाहिता स्त्री दोनों की एक अन्य पुरुष से शादी कर दी गई।"

स्त्री के मन में निर्बलता आ जाने के कारण ही ऐसे बच्चे

बनते हैं। बच्चे की जाति नर किंवा नारी तो गर्भाधान के समय ही निश्चित हो जाती है; किन्तु तीसरे महीने उस निश्चित जाति के अनुसार उसके अवयव की रचना होती है। गर्भाधान यदि पुत्र की इच्छा से किया गया, तो तीसरे महीने तक उसे नर-जाति के अवयव बनने में सहायता देनी चाहिए; और गर्भाधान यदि पुत्री के लिए किया गया हो, तो स्त्री-जाति के अवयव बनने में उसे सहायता पहुँचानी चाहिए। जाति-सूचक अवयव बनने के समय यदि मानसिक सहायता पहुँचाई जावेगी, तो अङ्गों का अच्छी तरह विकास होगा और वे सरलतापूर्वक निर्दोष बन जावेंगे।

गर्भ के तीसरे महीने में यह भी हो सकता है कि यदि पुत्र का गर्भ है, तो कन्या बनाई जा सकती है; और यदि कन्या का गर्भ है, तो पुत्र बनाया जा सकता है; लेकिन यह बात तभी हो सकती है, जब कि स्त्री की सङ्कल्प-शक्ति खूब बढ़ी हुई हो; अन्यथा एक नई तीसरी बात ही तैयार हो जावेगी। "मानव-सन्तति-शास्त्र" पुस्तक के लेखक मुन्शी हीरालाल जी जालोरी उक्त पुस्तक में लिखते हैं :—

मेरे परम मित्र डॉक्टर शिवप्रसाद जी जिस समय कोटा अस्पताल में थे, अपनी आँखों से देखा हुआ हाल इस प्रकार बयान करते हैं—कोटा राज्य के चीफ मेडिकल ऑफीसर मि० मेकवाट साहब के समय में एक व्यक्ति को क्लोरोफार्म सुँघा कर मूर्च्छित किया गया; क्योंकि उसका ऑपरेशन करना था।

उसे मूर्च्छित करके ज्योंही उसका शरीर खोला गया, तो हमें यह देख कर महान् आश्चर्य हुआ कि उसके शरीर में स्त्री और पुरुष दोनों के चिह्न मौजूद हैं। ये दोनों अवयव नाममात्र के लिए मुर्दा नहीं थे; बल्कि दोनों ठीक दशा में सबल और सजीव थे। जब वह व्यक्ति होश में लाया गया: तब उससे पूछा गया, तो उसने कहा कि मैं ने दोनों अवयवों का उपयोग किया है; किन्तु गर्भ रह जाने के भय और लज्जा के कारण उसने स्त्री-अवयव से काम लेना छोड़ दिया है!"

एक दूसरी ऐसी ही बात और भी लिखी है :—

"मेरवाड़ा डिस्ट्रिक्ट (Merwara District) में एक व्यक्ति के लड़का पैदा हुआ। उसने वयस्क होने पर अङ्गरेजी भाषा में मैट्रिक पास किया—इन्हीं दिनों उसके बाप ने उसका एक कन्या के साथ विवाह कर दिया; क्योंकि उसके पुरुष होने में किसी तरह का किसी को भी शक नहीं था। विवाह हो चुकने पर मालूम हुआ कि वह स्त्री के काम का नहीं है। उसकी डॉक्टरी परीक्षा कराने पर मालूम हुआ कि वह वास्तव में स्त्री है। स्त्री-चिह्न पर नाममात्र के लिए पुरुष-चिह्न बना हुआ है। पुरुष-चिह्न निरर्थक होने के कारण काट दिया गया। इस कृत्रिम पुरुष-चिह्न के हटाते ही शुद्ध, निर्दोष स्त्री-चिह्न प्रकट हो गया। वह व्यक्ति अब पुरुष से स्त्री हो गया; अतएव वह और उसकी विवाहिता स्त्री दोनों की एक अन्य पुरुष से शादी कर दी गई।"

स्त्री के मन में निर्बलता आ जाने के कारण ही ऐसे बच्चे

उत्पन्न होते हैं, इसलिए पुत्र या पुत्री उत्पन्न करने के लिए मनःशक्ति की प्रबलता परमावश्यक है। अपनी सन्तान का वर्ण, सौन्दर्य और गुण का इच्छानुसार उत्पन्न करना मनःशक्ति पर ही अवलम्बित है। मनःशक्ति, आत्मशक्ति, इच्छाशक्ति, एक ही बात है। अब हम यहाँ इच्छाशक्ति पर थोड़ा सा विवेचन करके आगे बढ़ेंगे।

इच्छाशक्ति की व्याख्या करना बहुत ही कठिन बात है। मुझे भय है कि इस शक्ति के विषय में मैं अपने पाठकों को कुछ समझा सकूँगा या नहीं; क्योंकि इस विषय में मैं अपने को अधिकारी नहीं समझता। यद्यपि यह विषय कठिन अवश्य है; तथापि इस कारण से इसको छोड़ देना भी ठीक नहीं है। हमारे शास्त्रकारों ने लिखा है :—

मन एव मनुष्याणाम् कारणं बन्धमोक्षयोः।

अर्थात्—जीवनमुक्त होने के लिए अथवा बन्धनयुक्त होने के लिए मुख्य मन ही है।

शारीरिक शक्ति से इस शक्ति का दर्जा बहुत ही ऊँचा है। शारीरिक महान शक्ति वह कार्य नहीं कर सकती, जोकि सङ्कल्प-शक्ति द्वारा किया जा सकता है।

"यदि हमारे हृदय में एक राई के दाने के बराबर भी दृढ़ सङ्कल्प-शक्ति हो, तो इच्छा-द्वारा एक बड़े से बड़े वट के वृक्ष को समूल समुद्र में फेंका जा सकता है।"

—ईसा

यह झूठ नहीं है, गण्डूखाने की गप्प नहीं है—सत्य की

तरङ्ग नहीं है; बल्कि अक्षरशः सत्य है। हमारे इतिहास इस बात के साक्षी हैं कि दृढ़ सङ्कल्प-शक्ति-सम्पन्न हमारे ऋषि लोग इच्छा मात्र से अपने महान् से महान कार्यों को एक क्षण में कर लेते थे। शाप और वरदान केवल इच्छाशक्ति के ही खेल थे। इस शक्ति का प्राचीनकाल में बड़ा ही मान था। आजकल के लोग तो इसे केवल गप्पमहापुराण की कथा समझते हैं; हम इच्छाशक्ति के कुछ उदाहरण यहाँ देते हैं :—

अर्बी वैद्य एवीसेना लिखता है—एक मनुष्य अपनी इच्छाशक्ति द्वारा अपने शरीर के चाहे जिस स्नायु को जड़ बना देता था।

सेण्ट आगस्टाइन का लिखना है—एक साधू सङ्कल्पमात्र से बेहोश हो जाता था। इस दशा में उसके चुटकियाँ भरो, सुइयाँ चुभा दो अथवा जलता हुआ आग का अङ्गार उसके शरीर पर रख दो, उसे कुछ भी नहीं मालूम होता था।

' प्लीनी का कहना है—एक मनुष्य का जीव उसके शरीर से बाहर निकाल कर, इच्छानुसार जगहों में भ्रमण करके फिर उसके शरीर में लौट आता था; और फिर उन जगहों का वर्णन करता, जिन्हें कि उसके जीवात्मा ने देखा था।"

यङ्ग स्टीलिङ्ग लिखता है—एक अमरीकन अपनी सङ्कल्प-शक्ति के द्वारा दूर-दूर के स्थानों में तत्काल चला जाता था; और उसका शरीर शव के रूप में वहीं पड़ा रहता था। एक जहाज का कप्तान कहीं चला गया था; और बहुत दिनों तक वह नहीं लौटा। उस कप्तान की स्त्री ने इस पुरुष से अपने पति क

वृत्तान्त पूछा। वह पुरुष तत्काल ही पास वाली कोठरी में गया, और वहाँ पहुँच कर उसने अपने शरीर को मूर्च्छित कर दिया। कुछ देर बाद वह जागृत हुआ और कहा कि मैं लन्दन गया था और तुम्हारे पति से मिला था। उसने कहा है कि मैं अब जल्दी ही वापस लौटूँगा। जब उसका पति लौट आया, तब उसने इस सिद्ध पुरुष को देख कर कहा कि यह पुरुष मुझे अमुक दिन लन्दन में मिला था। उसके पति की बताई हुई तारीख ठीक उस दिन से तथा उस समय से मिलती थी, जिस दिन कि उसने उसके पति का सन्देश सुनाया था।

यङ्ग स्टीलिङ्ग लिखता है—सन १७५९ ई० के सितम्बर महीने के आखीर सप्ताह में स्विडनवर्ग एक दिन सायङ्काल के ४ बजे इङ्गलैण्ड से आया और गोथेनवर्ग में ठहरा। सायङ्काल के समय स्विडनवर्ग बाहर गया और उदास मुँह से वापिस लौट आया। इस समय वह मि० स्टेकले के यहाँ भोजन करने गया था; किन्तु उसका दिल भोजन में न लगता था। इस व्याकुलता का कारण पूछने पर उसने कहा—स्टॉकहोम में आग लगी हुई है और धीरे-धीरे भीषण रूप धारण करती जा रही है। इस जगह से स्टॉकहोम ३०० मील की दूरी पर था। वह बहुत घबरा गया और बारम्बार बाहर जाता और भीतर आता। उसने कहा कि इस समय मेरे एक मित्र के घर में आग लगी हुई है और उसका घर जल-बल कर राख हो गया है। अब आग मेरे घर के पास पहुँच चुकी है। रात के आठ बजे वह फिर घर से बाहर गया और

अत्यन्त प्रसन्नमुख से लौटा और बोला—ईश्वर की बड़ी कृपा हुई, अब आग बुझ चुकी है। मेरा घर जलने में एक घर ही बीच में था। तीसरे दिन स्टॉकहोम से आग लगने की खबर लेकर एक आदमी आया। उस आदमी का कथन और स्विडनवर्ग की बात अक्षर-अक्षर मिली।

इङ्गलैण्ड में जॉर्ज केट्लिन ने अफ्रीका के आए हुए एक सिंह को इच्छाशक्ति से अपने आधीन कर लिया था। वह सिंह बड़ा ही खूँख्वार था; और हाल ही में वन से पकड़ कर लाया गया था। लोगों ने जॉर्ज केट्लिन को सिंह के पिंजरे में घुस कर उस पर अपना अधिकार जमाने के लिए १५ लाख रुपयों की शर्त्त बदी थी। अन्त में निश्चित तिथि पर लन्दन के बड़े-बड़े आदमी निर्दिष्ट स्थान पर आ गए, वहाँ जॉर्ज केट्लिन ने सिंह के पिंजरे के निकट जाकर सिंह पर टकटकी लगा कर देखना आरम्भ किया। सिंह की आँखें मिचने लगीं। ऐसी दशा में उसने शेर के पिंजरे का फाटक खोला। शेर पर से दृष्टि हट गई थी; अतएव सिंह ने दिल को दहलाने वाली घोर गर्जना की और पिंजरे में क्रोधपूर्वक घूमने लगा। जॉर्ज केट्लिन उसके पिंजरे में घुस गया। उसे देखते ही सिंह थर-थर काँपने लगा, और डर के मारे एक कोने में घुस गया। उसकी आँखें मिच गई थीं; परन्तु उसने केट्लिन की तरफ़ मुँह फाड़ा और भयङ्कर गर्जना की। तब उसने उसके नाक पर चाबुक मारा और जोर से डाट कर कहा—चुप। इतने पर सिंह ने उसकी तरफ़ से मुँह फेर लिया।

केट्लिन ने चाबुक से उसके चारों ओर गोल रेखा बनाई और सिंह ने उसकी आज्ञानुसार उस रेखा पर गोल चक्कर लगाया। इसके बाद वह पिंजरे से बाहर निकल आया और उसका दरवाजा बन्द कर दिया।

आजकल भी कहीं-कहीं हमारे पाठकों ने मोहिनी-विद्या अर्थात् Hypnotism (हिप्नाटिज्म) और प्राणविनिमय-विद्या अर्थात् Mesmerism (मेस्मेरिज्म) के प्रयोग कहीं-कहीं पर अवश्य देखे होंगे। यदि देखे न होंगे, तो सुने तो अवश्य ही होंगे। हिप्नाटिज्म मन की एकाग्रता और इच्छाशक्ति का खेलवाड़ है। हमारे देश में इसका प्रचार बहुत ही कम है। अमरीका, फ्रान्स आदि देशों में इसकी घर-घर चर्चा है।

हमारे इतने लिखने का तात्पर्य यह है कि आत्मविश्वास—जिसे इच्छाशक्ति, सङ्कल्पशक्ति, आत्मशक्ति, मनःशक्ति, श्रद्धा, विश्वास कुछ भी कहो—में बड़ी भारी ताक़त है। मन-स्थैर्य अर्थात् दृढ़ निश्चय (Firm determination) के द्वारा ऐसे-ऐसे अद्भुत कार्य किए जा सकते हैं, जिन्हें कि दूसरे शब्दों में दैवी-कार्य कहा जा सकता है। इच्छित सन्तान प्राप्त करने के लिए इच्छाशक्ति का प्रबल होना आवश्यक है। हमारे प्राचीन भारतवासियों में यह शक्ति अच्छी तरह पाई जाती थी; वे लोग इसके गूढ़ तत्त्वों को भले प्रकार समझ सकते थे। मनःशक्ति के द्वारा उनके कार्यों को होता देख कर हम लोग उन्हें दैव, अवतार, महर्षि आदि कहते हैं। वास्तव में वह आत्मशक्ति का कार्य था। मनःशक्ति

के महत्त्व को जानने वाले लोगों की सन्तान भी उनकी इच्छानुसार होती थीं। पुराणों में सैकड़ों ऐसी कथाएँ मिलती हैं, जिनमें लिखा है—अमुक स्त्री ने अमुक प्रकार की सन्तान की इच्छा की और ईश्वर-कृपा से उसके गर्भ से उसकी इच्छानुसार बालक उत्पन्न हुआ। महाराजा पाण्डु की पत्नी कुन्तीदेवी ने धर्मवेत्ता बालक की इच्छा की, तो उस गर्भ से धर्मराज युधिष्ठिर का जन्म हुआ। तत्पश्चात् महाबली पुत्र की इच्छा की, तो महावीर भीमसेन उत्पन्न हुआ। अतीव शास्त्र-प्रवीण रणशूर बालक की इच्छा की, तो उससे महान् धनुर्द्धर गाण्डीवधन्वा अर्जुन उत्पन्न हुआ। इस तरह के हजारों उदाहरण हैं, जो हमारे कथन की पुष्टि करते हैं। इस प्रकार के भी हजारों उदाहरण हैं कि गर्भ में ही बालक को बीज-रूप में सब कुछ समझाया जा सकता है। महाभारत ग्रन्थ की यह प्रसिद्ध कथा है कि अर्जुन ने अपने पुत्र अभिमन्यु को गर्भ में ही चक्रव्यूह तोड़ने की विधि बता दी थी। फल-स्वरूप में उस बालक ने महाभारत के युद्ध में चक्रव्यूह तोड़ा और उसमें घुस कर घोर युद्ध किया। अर्जुन ने निकलने की वधि नहीं समझा पाई थी, इसी कारण अभिमन्यु चक्रव्यूह से निकल नहीं सका; और मारा गया। इससे बढ़ कर और क्या प्रमाण हो सकता है। एक नया उदाहरण लीजिए :—

अमरीका में दो स्त्री-पुरुषों ने अपनी भावी सन्तान का नाम चार अक्षरों का चुना। जब लड़का पैदा हुआ तो वे चुने हुए चारों नाम के अक्षर उसकी आँखों में दीख पड़े। उस बच्चे की आँखें डॉक्टर

को दिखाई गई, तो डॉक्टर ने कहा कि ये अक्षर देखने में रुकावट नहीं कर सकते ("शिक्षा" बाँकीपुर ३१ आक्टोबर १९१२)।

इच्छाशक्ति को बलवती बनाने के लिए सङ्कल्प की दृढ़ता, एकान्त और एकाग्रता की अत्यन्त आवश्यकता है। मन की वृत्तियों को अपने क़ाबू में रख कर इच्छित विषय में दृढ़तापूर्वक लगाए रहना चाहिए। चित्त बड़ा ही चञ्चल है; यह मदोन्मत्त हाथी की भाँति इधर-उधर भटकता ही फिरता है। मनःशक्ति प्रबल बनाने वाले को निर्भयता का अभ्यास करना चाहिए। किसी के डर अथवा दबाव से अपने विचारों को नहीं छिपाना चाहिए। दुष्कर्म से हमेशा बचना चाहिए; क्योंकि पाप-कार्यों से मन की शक्ति क्षीण हो जाती है। पछताने का कोई कार्य न करना चाहिए; और यदि कभी हो भी जाय, तो उस पर पश्चात्ताप न करके भूल जाना चाहिए। जिस विषय में इच्छाशक्ति को बलवान करना हो, उसी विषय का नित्य एक-दो घण्टा एकान्त में बैठ कर मनन करना चाहिए। प्रातःकाल सूर्योदय के वक्त अथवा सोने से पूर्व का समय इसके लिए बड़ा ही अच्छा होता है। चित्त की वृत्तियों को रोकना ही योग है, और जो योगाभ्यासी हैं; अर्थात् चित्त की वृत्तियों को अपने अधीन कर लेते हैं, वे ही योगी हैं। योगशास्त्र में कहा है:—

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।

यद्यपि आरम्भ में कठिनाइयाँ मालूम होती हैं, तथापि जो कठिनाइयों को लाँघ कर आगे बढ़ते हैं, वे नया आनन्द प्राप्त करते

हैं। इच्छाशक्ति को सबल बनाने के लिए पहले-पहल साधारण कार्यों को हाथ में लेना चाहिए; और बिना सफलता पाए चुप नहीं होना चाहिए। इसके विपरीत जो अपनी शक्ति से अधिक कार्य हाथ में लेंगे, वे सफलता न पाकर निराश हो जायँगे। इससे मनःशक्ति प्रबल होने के बजाय निर्बल हो जावेगी। कष्ट, दुख, शोक, खेद, चिन्ता, भय, ईर्ष्या, क्रोध आदि विकार मानसिक उन्नति के कट्टर शत्रु हैं; अतएव इनसे बचने का ध्यान रखना चाहिए। इच्छानुसार सन्तान उत्पन्न करने के लिए, इस विषय का बार-बार मनन करके मनःशक्ति को उन्नत करना चाहिए। ज्यों-ज्यों आप इस विषय में कृतकार्य होते जायँगे, त्यों-त्यों आप अपनी सन्तान को उत्तम बनाने में समर्थ होते जायँगे। जब मनशक्ति उन्नत हो जाय, तब निम्न-लिखित उपायों द्वारा इच्छित सन्तान प्राप्त कर सकते हैं।

इस पृथ्वी पर अगणित मनुष्य हैं। इतने पर भी रूप-रङ्ग आकार-प्रकार गुण-प्रकृति और चाल-चलन में एकसाँ नहीं हैं। क्या आपने कभी इस विचित्रता तथा भिन्नता पर भी विचार किया है? एक ही देश के, एक ही प्रान्त के, एक ही नगर के, एक ही जाति के, एक ही कुटुम्ब के, यहाँ तक कि एक ही माता से उत्पन्न हुए मनुष्यों में भी भिन्नता पाई जाती है। रङ्ग-रूप की भिन्नता ही नहीं; बल्कि स्वभाव और बुद्धि की भी भिन्नता होती है। इसका क्या कारण है? मनुष्यों के सतोगुणी, रजोगुणी, तमोगुणी, सदाचारी, दुराचारी, पवित्र, यती, व्यभिचारी, आस्तिक, नास्तिक, मूर्ख, बुद्धिमान्, शिल्पी, व्यापारी, चित्रकार, शूर, कायर, धार्मिक, पापी,

कवि, गणितज्ञ आदि होने का क्या कारण है ? इसका उत्तर शायद आप यह दें कि जैसी शिक्षा दी गई, वैसी ही उनकी बुद्धि बन गई। इस पर यह प्रश्न हो सकता है कि एक क्लास में कई विद्यार्थी हैं; लेकिन कोई तो शीघ्र ही किसी विषय को समझ लेता है; और कोई लाख सिर-पची करने पर भी समझने में असमर्थ ही रहता है। इसका क्या कारण है ? व्यापार में जैसी बुद्धि व्यापारी कुटुम्ब की चलती है, वैसी एक शस्त्रधारी क्षत्रिय की नहीं चलती। बढ़ई का काम बढ़ई का लड़का जितनी जल्दी सीख लेता है, उतनी जल्दी ब्राह्मण अथवा वैश्यका बालक नहीं सीख सकता। एक लड़का अत्यन्त मन्दबुद्धि है; और एक कुशाग्र बुद्धि, एक डरपोक है तो एक बहादुर, एक शान्त है तो एक क्रोधी, इसका क्या कारण है ? बहुतेरे मनुष्य अपनी सारी जिन्दगी में एक काम भी पूर्ण नहीं कर सकते, बहुतेरे प्रत्येक कार्य में कृतकार्य होते रहते हैं, इसका क्या कारण है ? जहाँ-तहाँ दुःख, पाप, अकालमृत्यु देख रहे हैं, इसका क्या कारण है ? युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, शिखण्डी, धृष्टद्युम्न, सात्यकि आदि महारथी जिस चक्रव्यूह को तोड़ कर घुस नहीं सके, तोड़ना तो दूर रहा; अभिमन्यु के साथ-साथ चक्रव्यूह के भीतर क़दम भी न रख सके, उसी अभेद्य चक्रव्यूह को अल्पवयस्क बालक अभिमन्यु ने तोड़ दिया। इसका क्या कारण है ? रावण, कुम्भकर्ण दोनों अत्यन्त नीच राक्षस थे; लेकिन इनका भाई विभीषण धर्मात्मा और भगवद्भक्त क्यों था ? राक्षस-राज हिरण्यकश्यप के पाँच पुत्र थे—(१) प्रह्लाद,

(२) संह्राद, (३) अनुह्राद, (४) शिवि, और (५) वाष्कल. इन सभों में से एक प्रह्राद ही परम भक्त क्यों हुआ? क्या इन बातों पर कभी विचार किया है?

इन सब बातों का उत्तर उतना कठिन नहीं है, जितना हम समझे बैठे हैं। "राई की ओट पहाड़" की मिसाल ऐसे मौक़े के लिए ही है। उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर केवल एक ही दिया जा सकता है कि :—

सन्तान-शास्त्र से अनभिज्ञ माता-पिता इस संसार में सन्तान उत्पन्न कर रहे हैं। वे बुद्धि-प्रभव शास्त्र को तथा महाबुद्धि के नियमों को भूल गए हैं। सन्तान-शास्त्रोक्त नियमों के अनुसार नहीं चलते। माता-पिता बुद्धिपूर्वक सन्तान पैदा नहीं करते।

यही कारण है कि दस हज़ार बालकों में एक बालक भी माता-पिता की इच्छा के अनुकूल उत्पन्न नहीं होता। आज इस संसार में मूर्ख माता-पिता के पापाचरण, उनकी दुष्ट और मलिन मनोवृत्तियों को लेकर इस जगत् में जन्म लेते हैं! जिस संसार में ऐसी सन्तानें उत्पन्न हों, वहाँ पाप, रोग, व्यभिचार, व्यसन, अल्पायु, मूर्खता, दारिद्र, दुर्भिक्ष, ग़ुलामी आदि उत्पात हों, तो आश्चर्य ही क्या है? पिछले प्रकरणों में कहे अनुसार गर्भ-वृद्धि के समय जब तक बालक गर्भ में रहे, तब तक माता-पिता को और ख़ास कर माता को उत्तम सन्तान तथा इच्छित सन्तान प्राप्त करने के लिए तदनुकूल आचरण कर सुसन्तान उत्पन्न करनी चाहिए।

जब तक इस विषय पर ध्यान नहीं दिया जायगा, तब तक लाखों प्रयत्न करने पर भी देश की सच्ची उन्नति नहीं हो सकेगी।

महात्मा सुश्रुत लिखते हैं—गर्भाधान की तैयारी के वक्त माता पिता जैसा आहार करेंगे, वैसी ही सन्तान होगी। उस समय माता पिता के जैसे आचरण होंगे, उसी के मुताबिक सन्तान पैदा होगी। गर्भाधान के वक्त अथवा गर्भावस्था में यदि माता-पिता व्यसनी होंगे, तो उनकी सन्तान अवश्य व्यसनी होगी। माता-पिता तामसी खुराक खावेंगे, तो तमोगुणी, प्रमादी और अज्ञानी सन्तान उत्पन्न होगी; और यदि व्यभिचारी होंगे, तो सन्तान व्यभिचारी होगी। चोर माता-पिता की औलाद अवश्य चोरी करेगी। सदाचारी माँ-बाप की सन्तान धार्मिक, आस्तिक और दयालु होती है। चाल-चलन, बोल-चाल, आकृति, चेष्टा, रङ्ग-रूप, हाव-भाव और स्वभाव भी माता-पिता के द्वारा ही बालक को मिलते हैं। जैसे वृक्ष, वैसे फल। कड़वी बेलि के कड़वे और अच्छी के अच्छे फल लगते हैं। जैसे माता-पिता होते हैं, वैसी ही सन्तान होती है। यह एक साधारण नियम है; किन्तु अधिक सत्य और निश्चित नियम तो यही है कि गर्भावस्था के समय माता-पिता इनमें से मुख्यतः माता के मन की जैसी स्थिति होगी, जैसे विचारों का मनन और जैसे सङ्कल्पों को मन में धारण करेगी, वैसी ही सन्तान उत्पन्न होगी। बुद्धि के नियमानुसार हम अपनी भावी सन्तान को इच्छानुसार बना सकते हैं। आप चाहें तो इतिहास-लेखक अथवा उपन्यास-लेखक बना सकते हैं। चाहें तो अपनी सन्तान

को सुरेन्द्र के समान वक्ता, और देशभक्त दादाभाई नौरोजी के समान देशभक्त बना सकते हैं। आप चाहें तो अपनी सन्तान को स्वामी दयानन्द सरस्वती के समान कर्माचार्य और अफ्रीका के ट्रान्सवाल जैसे दूर देशवासी भारतवासियों के निमित्त सत्याग्रह की रणवेदी पर समस्त स्वार्थों का बलिदान करने वाले प्रातः स्मरणीय महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गाँधी जैसे स्वार्थ-त्यागी अचल सत्याग्रही के समान उत्पन्न कर सकते हैं।

इच्छानुसार बालक पैदा करने में जितना उत्तरदायित्व माताओं पर है, उतना पिता पर नहीं। इसलिए यहाँ बहिनों से कुछ पूछना चाहता हूँ :—

बहिनो ! क्या आपका यह दृढ़ विश्वास है कि आपके उदर में जो बच्चे पैदा होते हैं, वे भाग्य के बल पर पैदा होते हैं ? क्या आपका यह ख्याल है कि सन्तान के गुण-दोषों का उत्तरदाता वह बालक या ईश्वर है ? भाग्य कोई स्वतन्त्र पदार्थ तो है ही नहीं ! और न आपके कृत्यों का उत्तरदायी ईश्वर ही है ! रोगी और दुराचारी बालक उत्पन्न करने में ईश्वर का हाथ नहीं होता। सतत उद्योग से जो कुछ भी प्राप्त होता है, वह कर्मों का फल है। सदुद्योग का फल अच्छा; और निरुद्योग का बुरा होता है। अतएव भाग्य की बात मन से निकाल कर अपनी विचारशक्ति और मन-शक्ति द्वारा अपनी भावी सन्तान में उत्तम संस्कार पैदा करके इच्छानुसार सन्तान पैदा करने के नियमों का पालन करना चाहिए।

अधमोद्धारक बुद्ध व क्राइस्ट जैसे महापुरुषों को जन्म देने

वाली आप ही में से थीं। आप ने ही ध्रुव और प्रह्लाद के समान भगवद्भक्तों को इस जगत् में जन्म दिया था। धर्मोद्धारक भगवान शङ्कराचार्य और पैग़म्बर मुहम्मद साहब ने आप लोगों ही के गर्भ से जन्म पाया था। नेपोलियन तथा अलक्जेण्डर जैसे वीर पुरुषों की उत्पादिका वीर ललनाएँ ही थीं। बलि, शिवि, दधीचि, कर्ण, हरिश्चन्द्र आदि दानी पुरुषों को आप ने ही जन्म दिया था। राम जैसे आज्ञापालक, युधिष्ठिर जैसे धर्मतत्त्ववेत्ता, श्रवण समान पितृ-भक्तों की जन्मदात्री बहिनें ही थीं। महाराणा प्रताप, वीर शिवा जी जैसे रणशूरों का जन्म बहिनों से ही था। सीता, अनुसूया, द्रौपदी, सावित्री, रुक्मिणी, गान्धारी, कुन्ती, तारा, अहिल्या, मन्दोदरी आदि देवियाँ भी स्त्री-जाति के उदर से ही उत्पन्न हुई थीं। आप जानती होंगी कि ये सब माताओं के मनोबल और प्रेम के फल थे। ऐसे-ऐसे अनेक उदाहरणों से सिद्ध होता है कि इच्छानुसार सन्तान पैदा करना हमारी बहिनों के हाथ में है।

वाग्भट्ट कहते हैं :—

> इच्छेतां यादृशं पुत्रं तद्रूपचरितांश्च तौ।
> चिन्तयेतां जनपदांस्तदाचारपरिच्छदौ॥

अर्थात्—जैसे पुत्र की इच्छा हो वैसे रूप और चरित्र वाले मनुष्यों का चिन्तन करना चाहिए।

सन्तान को जिस विषय में प्रवीण करने की इच्छा हो उसके लिए जब से गर्भ में बालक हो, तभी से चेष्टा करनी चाहिए।

डॉक्टर—यदि अपनी सन्तान को डॉक्टर बनाने की इच्छा हो, तो गर्भिणी को चाहिए कि गर्भाधान के पूर्व से लगा कर प्रसव पर्यन्त वैद्यक-सम्बन्धी विषयों का मनन करे। डॉक्टर के घर में अथवा लेडी डॉक्टर के गर्भ से ही डॉक्टर पैदा होता है, या डॉक्टर उत्पन्न करने के लिए डॉक्टरी पढ़ने की आवश्यकता है, यह बात नहीं है। जरूरत इस बात की है कि गर्भस्थ भ्रूण की वृत्तियों को डॉक्टरी विद्या की ओर आकर्षित करने के लिए माता को वैद्य-विद्या से प्रेम रखना चाहिए। शरीर-शास्त्र पर विचार करना चाहिए। स्वास्थ्य-सम्बन्धी बातों पर ध्यान देना चाहिए। डॉक्टरी, वैद्यक, चिकित्सा-शास्त्र आदि विषय के ग्रन्थों को पढ़ना या सुनना चाहिए। यदि भय और घृणा उत्पन्न न हो, तो डॉक्टरों को चीर-फाड़ करते हुए देखना चाहिए। यदि यह न हो सके, तो पुस्तकों द्वारा शरीर और उसके अवयवों को ध्यानपूर्वक देखना और समझना चाहिए। प्रसिद्ध डॉक्टरों के जीवन चरित्रों को पढ़ना अथवा सुनना चाहिए। वैद्यों, हकीमों और डॉक्टरों के व्याख्यान सुनने चाहिए। बीमार मनुष्यों की दवा-दारू से सेवा-सुश्रूषा करनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि वैद्यक से पूर्ण प्रेम रखते हुए सदैव तत्सम्बन्धी विचारों को हृदयङ्गम कर लेना चाहिए। इस प्रकार के विचारों के बाद उत्पन्न हुआ बालक डॉक्टरी सिखलाने पर एक असाधारण बुद्धि का डॉक्टर बनेगा।

चित्रकार—गर्भ से ही चित्रकार बालक उत्पन्न करने के लिए, गर्भाधान के पूर्व ही स्त्री-पुरुष को इस बात का दृढ़ सङ्कल्प कर लेना चाहिए कि हम चित्रकार सन्तान उत्पन्न करने के लिए आज मैथुन करते हैं। गर्भ रह जाने पर यदि पिता या माता चित्रकार हो, तो कहना ही क्या है; नहीं तो माता को चाहिए कि अच्छे-अच्छे चित्रकारों के बनाए हुए चित्रों को बड़े चाव से देखे। केवल चित्रों को आँखों से देखने से ही काम नहीं चलेगा; बल्कि बारीक नज़र से चित्रकार के हस्त-कौशल की बारीकियाँ देखनी चाहिए। चित्रकार ने दृश्य को किस प्रकार कागज़ पर व्यक्त किया है, यह बात देखनी चाहिए। माता भी, यदि अधिक नहीं तो फूल-पत्तियाँ ही बनाया करे। किसी म्यूज़ियम (वस्तु-संग्रहालय) में जाकर चित्र-विभाग के चित्रों को देखना चाहिए; अथवा किसी अमीर के सुसज्जित कमरे का, जिसमें बढ़िया-बढ़िया चित्र खिंचित हों, अवलोकन करना चाहिए। इस प्रकार के आचार-विचार से पैदा हुई सन्तान चित्रकारी सिखलाने पर बढ़िया चित्रकार होगी।

कवि—कवि उत्पन्न करने के लिए, काव्य-प्रेमी माता-पिता की ज़रूरत है। स्वयम् माता-पिता कवि हों, तो उन्हें अधिक कष्ट की बात न होगी; लेकिन जो माता कवि न हो, उसे चाहिए कि प्राचीन कवियों की कविताओं को प्रेम से पढ़े-सुने और मनन करे। सूरदास, तुलसीदास, भूषण, केशव, गङ्ग, रहीम, रसखान, बिहारी, मतिराम, देव, वृन्द, गिरधर, पद्माकर, मैथिली-शरण, अयोध्यासिंह उपाध्याय, नाथूराम शङ्कर शर्मा आदि कवियों

की कविताओं का रात-दिन पठन करे। संस्कृत भाषा के समझने की शक्ति हो, तो वाल्मीकि मुनि की रचना, कालिदास, घटकर्पर, वाराहमिहिर आदि संस्कृत कवियों के काव्य देखना चाहिये। छन्दशास्त्र और अलङ्कारशास्त्र का भी थोड़ा बहुत स्वाध्याय करना चाहिए। कवि-समाज, कविसम्मेलन आदि उत्सवों में जाकर कवियों के काव्य माधुर्य का रसास्वादन करना चाहिए। ऐसे मासिक पत्र और पुस्तकें पढ़नी चाहिए जिनमें काव्य चर्चा रहती हो। इस प्रकार के आचरण वाली माता से निस्सन्देह कवि बालक उत्पन्न होगा।

वीर—शूरवीरों की जननी होने की इच्छा करने वाली स्त्रियों को, यह इच्छा गर्भाधान से पूर्व ही अपने मन में दृढ़ कर लेनी चाहिए। गर्भ-स्थिति के बाद वीर साहित्य को पढ़ना और सुनना चाहिए। वीर पुरुषों के जीवनचरित्र पढ़ने चाहिये। वीरों की गाथाएँ सुननी चाहिये। लड़ाइयों की तस्वीरें तथा वीर पुरुषों की तस्वीरें आँखों के सामने रहनी चाहिए। युद्ध की कथा पढ़नी चाहिए। रामायण आरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड और उत्तरकाण्ड पढ़ना सुनना चाहिए। महाभारत के वीर पुरुषों का चरित्र सुनना चाहिए। यदि इस कार्य में स्त्री असमर्थ हो, तो पुरुष को चाहिए कि वह ऐसे चरित्र स्त्री को अच्छी तरह सुनाया करे। इसके अतिरिक्त स्त्री को चाहिए कि हिम्मत रखे। कभी भय को पास न आने दे। भय का मौका उपस्थित होने पर उसका सामना करे। हमारे घरों की स्त्रियाँ प्रायः चूहे, बिल्ली, मेंढक, कुत्ते,

बरे आदि प्राणियों से भी डरती हैं। यदि साँप या बिच्छू घर में आ गया: तो बस उनके शरीर से पसीना छूटने लगता है। भला ऐसी माताओं से क्या कभी वीर सन्तान पैदा हो सकती है? वीर पुत्रों की जननी को पहिले खुद वीर बनना चाहिए। भय का समय उपस्थित होने पर प्राणों की चिन्ता छोड़ कर भय का सामना करना चाहिए। वीर नेपोलियन का उदाहरण हम पीछे दे आए हैं। वह एक वीर जननी का पुत्र था। वीर विचारों वाली गर्भवती के उदर में अवश्य वीर सन्तान उत्पन्न होगी।

व्यापारी—व्यापार-कुशल सन्तान की इच्छा वाले दम्पति को गर्भाधान से पूर्व यह दृढ़ सङ्कल्प कर लेना चाहिए कि अब की बार जो सन्तान उत्पन्न करेंगे, वह व्यापार-कला में प्रवीण होगी। ऐसा दृढ़ सङ्कल्प करके गर्भाधान करना चाहिए। जब गर्भ रह जावे, तब प्रसव पर्यन्त माता को व्यापार विषयक ज्ञान प्राप्त करने में और इसी विषय में रात-दिन अपना मन लगाए रहने में संलग्न रहना चाहिए। व्यापार क्या है, व्यापारी किसे कहते हैं; और वह किस प्रकार किया जाता है इत्यादि बातों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। व्यापारी शब्द का अर्थ आजकल लोगों ने नमक, तेल, गुड़, घी, आटा, दाल आदि की एक छोटी सी दूकान तक को समझ रखा है। वास्तव में यह व्यापार नहीं है; व्यापार की व्याख्या बहुत बड़ी है। आज हमारे देश में अँगुलियों पर गिने जाने लायक ही व्यापारी हैं। व्यापार तो विलायत वालों का है, जो उसके द्वारा आज करोड़पति बने बैठे हैं। अमेरिका में ऐसे बहुत से धनी

हैं, जो केवल व्यापार के कारण ही संसार के सब धनियों में ऊँचे गिने जाते हैं। मि० कारनेगी का नाम अमेरिका के धनियों में उल्लेखनीय है। व्यापार-सम्बन्धी साहित्य और व्यापारी पुरुषों के जीवनचरित्रों का पठन करना चाहिए। यदि हमारे देश की माताएँ व्यापारी सन्तान उत्पन्न करें, तो भारतवर्ष का दुःख दरिद्र शीघ्र ही नाश हो सकता है। व्यापारी सन्तान उत्पन्न करने की इच्छा से जो गर्भाधान होगा; और जो गर्भवती अपनी सन्तान को व्यापारी पैदा करने की प्रबल इच्छा से सन्तान उत्पन्न करेगी, उनकी सन्तान व्यापारी ही बनेगी।

गणितज्ञ—सन्तान को गणितज्ञ उत्पन्न करने के लिए गर्भाधान के पूर्व से बच्चे के पैदा होने तक माता-पिता को गर्भस्थ शिशु के वैसे ही संस्कार करने चाहिए। माता को गणित-विषय से प्रेम करना चाहिए और रात-दिन गणित के गुरु दिल में चालू रहने चाहिए। गणित के गूढ़ प्रश्नों को हल करने की चेष्टा करनी चाहिए। प्रत्येक कार्य करते समय गणित की सहायता लेनी चाहिए। गणित की बारीकियों को समझना चाहिए। गणित कई प्रकार का होता है। जिसमें गर्भवती की रुचि हो, वही गणित उसे अध्ययन और मनन करना चाहिए। इस प्रकार जो बालक जन्म लेगा, वह महान् गणितज्ञ होगा।

गवैया—गायक बालक पैदा करने की इच्छा रखने वाले दम्पति को गर्भाधान के समय इस धारणा को दृढ़ कर लेना चाहिए कि इस गर्भ से सङ्गीत-प्रेमी बालक उत्पन्न होगा। गर्भ-

काल में माता को चाहिए गायनवादन कला से प्रेम करे। अच्छे अच्छे मशहूर गवैयों के गानों को बड़े ही प्रेम से ध्यानपूर्वक सुने। राग-रागिनियों के भेदों का यथासम्भव ज्ञान प्राप्त करे। नाटकों में जावे; और पात्रों के गायनों को अच्छी प्रकार सुने। गानों की तर्जें याद रखे। रात-दिन इसी विषय में तल्लीन रहे। गायनों की पुस्तकों का मनन करे। गवैयों के जीवनचरित्रों को पढ़े। स्वर-सागर, सङ्गीत-रत्नाकर, सङ्गीत-पारिजात, भरतसूत्र इत्यादि पुस्तकें इस समय पढ़ना या सुनना अधिक उपयोगी है। हार्मोनियम, तम्बूरा, सितार, बेला, सारङ्गी, ताऊस, बाँसरी, पियानो आदि बाजों को बजाना अथवा सुनना चाहिए। इस प्रकार नियमपूर्वक यदि स्त्री अपना गर्भ-काल व्यतीत करेगी, तो अवश्य उसके गर्भ से सङ्गीत-प्रेमी बच्चा उत्पन्न होगा।

आज से कई वर्ष पूर्व हमने पढ़ा था कि कलकत्ते में मास्टर मदन नामक एक ७-८ वर्ष का बालक इतना बढ़िया गाता था कि उसके समान अच्छे-अच्छे गवैये नहीं गा सकते थे। उसने छोटी सी उम्र में ही कई सोने के तमगे प्राप्त कर लिए थे। इसका कारण यह बताया गया था कि उसका पिता गवैया था; और हार्मोनियम बहुत ही अच्छा बजाता था। जहाँ पिता का गुण पुत्र में आ गया, तो माता का गुण पुत्र में न आवे, यह असम्भव बात है।

एक विलायती रमणी ने गर्भकाल में सङ्गीतशास्त्र का अभ्यास किया था। उस गर्भ से जो कन्या पैदा हुई, उसने गायन और पियानो बजाने में आश्चर्यजनक निपुणता प्राप्त की।

आविष्कारक—सन्तान की प्राप्ति के लिए, जबकि बालक गर्भ में हो तब माता-पिता को और खास करके माता को चाहिए कि नई-नई बातों को ढूँढ़ निकालने में बुद्धि खर्च किया करे। यन्त्रों की बारीकियों को तथा उनके कल-पुर्जों को ध्यानपूर्वक देखना और समझना चाहिए। उनमें गति किस प्रकार उत्पन्न होती है और वे किस तरह काम करते हैं, यह रहस्य अच्छी तरह जान लेना चाहिए। उन्हीं यन्त्रों से कोई सा नया अथवा अधिक कार्य लेने के लिए और कैसा सुधार किया जावे इत्यादि बातों को बुद्धि द्वारा हल करना चाहिए। जिन-जिन पुरुषों ने खोज द्वारा नए-नए आविष्कार कर के दुनिया को आश्चर्य-सागर में डाल दिया है, उन पुरुषों के जीवनचरित्र और उनकी खोज विषयक कथा को अच्छी तरह समझते हुए पढ़ना अथवा सुनना चाहिए। रेल, तार, मोटर, घड़ी, ग्रामोफ़ोन, बिजली, वायुयान आदि वस्तुओं के कार्यों का रहस्य समझने का प्रयत्न करना चाहिए। जो स्त्रियाँ गर्भिणी दशा में इस प्रकार का आचरण करेंगी, उनके गर्भ से जो बालक पैदा होगा, उसे यदि इसी विषय की शिक्षा दी गई, तो विख्यात वैज्ञानिक-आविष्कारक होगा। यहाँ उदाहरणों को देकर व्यर्थ ही पृष्ठ बढ़ाना है। उदाहरण के लिए योरोप सामने है। वहाँ अनेक हैं; लेकिन भारतवर्ष में अभाव है, कारण कि भारतीय सन्तानशास्त्र से अनभिज्ञ हैं।

धार्मिक—धर्मात्मा-भगवद्भक्त सन्तान के इच्छुक दम्पति को चाहिए कि अपने मानसिक विकारों को दूर कर के मन को

सर्वदा पवित्र रखे। अधर्म के कामों से बचते रहें। परोपकार, जीवदया, अहिंसा, औदार्य, सत्य, धैर्य, क्षमा, इन्द्रिय-निग्रह, पवित्रता, अस्तेय आदि सद्गुणों को अपनावें। नीचता, शठता, ओद्धापन, क्रन्दन, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, मद, मात्सर्य, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दुष्कर्मों से सर्वदा बचना चाहिए। रात-दिन ईश्वर-स्मरण में तल्लीन रहना चाहिए। धर्माचार्यों के पवित्र जीवन-चरित्रों को पढ़ना तथा सुनना चाहिए। ध्रुव, प्रह्लाद, नारद, पराशर, पुण्डरीक, व्यास, अम्बरीष, शुक, शौनक, भीष्म, रुक्माङ्गद, वसिष्ठ, विभीषण आदि भागवत पुरुषों के जीवन-चरित्रों को सुनना चाहिए। इतिहास, पुराणों में जहाँ भक्ति की कथाएँ हों, उन्हें पढ़ कर भगवद्भक्ति में तल्लीन हो जाना चाहिए। वेद, वेदान्त, अध्यात्मशास्त्र, उपनिषद्, दर्शन आदि सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय करना चाहिए। जितने भी धार्मिक पुरुष हुए हैं, उनकी माताओं के गर्भ में जब उन्होंने वास किया था, तब उनकी माताओं ने पवित्र धार्मिक आचरणों का अवलम्बन किया था। इसके उदाहरण हम पीछे लिख आए हैं। जो माता इस प्रकार के आचरणों द्वारा अपना गर्भकाल व्यतीत करेगी, उसके गर्भ से अवश्य सत्यवादी, परोपकारी, सदय और धर्मात्मा सन्तान पैदा होगी।

हमारे इतने लिखने से पाठक समझ गए होंगे कि इच्छित गुणों वाली सन्तान कैसे उत्पन्न की जा सकती है। अब यहाँ हरेक विषय को लेकर लिखने में व्यर्थ ही पुस्तक का आकार

बढ़ जावेगा। जिस विषय में पारङ्गत सन्तान उत्पन्न करनी हो, उसी विषय का ध्यान गर्भाधान-क्रिया से पहले ही स्त्री-पुरुष को अपने मन में दृढ़ कर लेना चाहिए। गर्भाधान के समय भी पति-पत्नी को वही विचार बिना किसी सन्देह के मन में दृढ़ रखना चाहिए। फिर मुख्यतः माता को वैसा ही आचरण करना चाहिए, जैसी वह सन्तान उत्पन्न करना चाहती हो। पीछे सातवें अध्याय के "गर्भ का वृद्धि-विकास" नामक प्रकरण में हम गर्भस्थ भ्रूण का कौन सा अवयव किस मास में बनता है, यह बात बता आए हैं। उसी के अनुसार माता-पिता को गर्भावस्था में व्यवहार करना चाहिए। जिस मास में जिस अवयव का वृद्धि-विकास हो, उसी महीने में, उसी अवयव का ध्यान रख कर, उसके सुधार की एवम् उसे सुडौल बनाने की इच्छा मन में धारण की जावे तो बालक सर्वाङ्ग सुन्दर, पुष्ट, सबल, सतेज, नीरोग और इच्छानुसार पैदा होगा। अब हम इच्छानुसार रङ्ग-रूप का बालक उत्पन्न करने की विधि सोदाहरण लिखने के पश्चात् इस विषय को समाप्त करेंगे।

गोरा, काला, कुरूप, रूपवान् बालक—हमारी पिछली बातों पर पाठक शङ्का कर रहे होंगे; और यहाँ इच्छानुसार रूप-रङ्ग का बालक उत्पन्न करने की विधि देख कर तो अवश्य ही कहेंगे कि ये सब दैवी बातें हैं। ईश्वराधीन बातों में मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। स्वभाव, गुण आदि तो माता-पिता की इच्छानुकूल हो सकते हैं; किन्तु रङ्ग-रूप भी इच्छानुसार हो सके, यह बात

हमारे हाथ में नहीं है; बल्कि विधाता के हाथ में है। विधाता के अक्षर माता के गर्भस्थान में ही लिखे जाते हैं, यह बात सत्य है; परन्तु विधाता कौन है? वह विधाता उस बालक की माता ही है। परन्तु बोल-चाल में लोग बेमाता कहते हैं। यह बेमाता उसकी जननी ही है; दूसरा कोई नहीं है। एक बालक के मस्तक में अच्छे-बुरे लेख लिखने वाली उसकी जननी ही है। विधाता कपाल में लेख लिखता है, ऐसा लोग कहते हैं। इसका मतलब यही है कि कपाल अर्थात् माथा ही सब प्रकार के विचार एवम् वृत्तियों का उद्गमस्थान है। बालक के अच्छे-बुरे गुण उसके कपाल में तैयार होते हैं। इन विचारों और वृत्तियों को उत्पन्न करने वाली उसकी माता ही है। सद्गुणी माताओं के गर्भ से सद्गुणी बालक उत्पन्न हुए हैं। दुर्गुणी बालकों को पैदा करने वाली माताओं ने गर्भावस्था के समय बुरे विचारों को हृदय में स्थान दिया था। एक उदाहरण है:—

"एक सुशीला स्त्री जिन दिनों गर्भवती थी, उन दिनों ली (Lee) के सैनिकों ने उसका घर लूटा। गर्भिणी ने सैनिकों से प्रार्थना की कि उसे कष्ट न पहुँचाया जाये। सैनिकों ने उसकी एक भी न सुनी और उसे सताने लगे। गर्भिणी को क्रोध आया और उसने सैनिकों की लात, घूँसों से खूब ही मरम्मत की। इस गर्भ से जो बालक पैदा हुआ वह भी ऐसा ही था। वह बड़े भाई और पिता की खूब ही लात-घूँसों से पूजा करता था। डॉक्टर फाउलर ने इस बच्चे के मस्तक की परीक्षा करके बतलाया कि लात

के पीछे ऊपर की ओर जो संहारक शक्ति का स्थान है, वह अधिक विकसित है।"

पाठक समझ गए होंगे, यही भाग्य का रहस्य है। भाग्य की निर्माता उसकी माता है। अब इस विषय में शङ्का करने की जगह नहीं रही। माता-पिता चाहे जिस रङ्ग-रूप की औलाद उत्पन्न कर सकते हैं। वैद्यकशास्त्र ने इस विषय को इस तरह समझाया है :—

पूर्वं पश्येदृतुस्नाता यादृशं नर मङ्गना।
तादृशं जनयेत्पुत्रं ततः पश्येत्पतिं प्रियम्॥

अर्थात्—अपनी सन्तान को जैसी बनाने की इच्छा हो, ऋतु-स्नान करने पर वैसी ही आकृति को देखना चाहिए। पति को अथवा जो अधिक प्यारा हो, उसे ही देखना चाहिए।

रङ्ग देश, ऋतु, जाति और वंश के अनुसार होता है। ठण्डे देशों के रहने वाले गोरे और गर्म देश के रहने वाले काले रङ्ग के देखे जाते हैं। शीत देशवासी होने के कारण अङ्गरेज लोग गोरे और उष्ण प्रदेशनिवासी हब्शी काले होते हैं। तात्पर्य यह है कि रङ्ग का गोरा या काला होना देश और ऋतु पर निर्भर है; लेकिन यह बात सर्वथा सत्य है, ऐसा नहीं माना जा सकता; क्योंकि भारतवर्ष में गर्मी और सर्दी दोनों खूब होती है, तो यहाँ के सब लोग एक ही रङ्ग के, काले होने चाहिए; परन्तु यहाँ अत्यन्त गोरे और अत्यन्त काले मनुष्य भी देखने आते हैं। इसके अतिरिक्त अङ्गरेज़ लोगों की पीढ़ियाँ भारत में बीत जाती हैं; लेकिन उनका

वर्ण नहीं बदलता, अतएव यहाँ यह मानना ही पड़ेगा कि वंश और जाति का भी रङ्ग पर असर होता है। यह एक मानी हुई बात है कि गौर वर्ण के माता-पिता की सन्तान अवश्य गोरे रङ्ग की होगी। यदि माता-पिता काले रङ्ग के होंगे, तो सन्तान भी काले रङ्ग की ही होगी; लेकिन इसके लिए भी निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि यह सिद्धान्त अटल है। जाति के लोग सभी एक वर्ण के होते हैं, यह मानना तो दूर रहा; एक कुटुम्ब के आदमी भी एक वर्ण के नहीं होते। अब यहाँ पर प्रश्न होता है कि जब देश, ऋतु, जाति और वंश रङ्ग-भेद होने का कारण नहीं है, तो और क्या कारण है? इसका उत्तर एकमात्र इच्छाशक्ति अथवा मनःशक्ति कहा जा सकता है। देश, ऋतु, जाति और वंश का भी रङ्ग पर प्रभाव होता है; किन्तु तभी जब कि इच्छाशक्ति उसके प्रतिकूल कार्य न करती हो। यदि इच्छाशक्ति प्रतिकूल हुई, तो इनका प्रभाव नाममात्र के लिए भी नहीं रहता। डॉक्टर लोग का कथन इसकी पुष्टि करता है :—

"एक अङ्गरेज ने एक साँवले रङ्ग की मालेशियन महिला से विवाह किया था। अङ्गरेज का इससे खूब गाढ़ा प्रेम था। बीस वर्ष दोनों ने गार्हस्थ्य जीवन बिताया। बाद में उस स्त्री का शरीरान्त हो गया। इससे एक भी औलाद पैदा नहीं हुई। इसके बाद इस अङ्गरेज ने एक योरोपियन महिला का पाणिग्रहण किया; इस स्त्री से एक पुत्री का जन्म हुआ, जो मालेशियनों के सदृश काले रङ्ग की थी।"

योरोपियन जोड़े से काले रङ्ग की कन्या पैदा होने का कारण

उसका पिता था। उसके हृदय पर उसकी पूर्व पत्नी ब्राजेलियन स्त्री की मुखाकृति का इस प्रकार गहरा चित्र बन गया था कि वह साँवले रङ्ग की हुई। डॉक्टर फाउलर लिखता है :—

एक हब्शी ने एक निर्धन स्त्री के साथ विवाह किया। वह कुछ दिन बाद एक पड़ोसिन भटियारी पर आसक्त हुआ। उसने उस भटियारी से प्रेम करने के लिए सैंकड़ों यत्न किए; लेकिन निष्फल हुआ। एक दिन वह अत्यन्त कामातुर हो उसके घर में घुस गया, तब उस भटिहारी ने उसे घर से निकाल दिया। वह इतना काम-पीड़ित था कि वहाँ से आकर उसने अपनी स्त्री से भोग किया। योगान् उसी दिन गर्भ रह गया। इस गर्भ से जो लड़की पैदा हुई, वह ठीक उसी भटिहारी के रङ्ग-रूप की हुई। यह भी मनःशक्ति का ही कारण था।

स्पेन में एक प्रतिष्ठित अङ्गरेज की कन्या के शयनागार में एक "ईथोपियन" जाति के पुरुष का चित्र था। सोते समय वह उसके नेत्रों के सामने टँगा रहता था। गर्भावस्था में भी उसका ध्यान उसी चित्र पर रहा। उस गर्भ से जो बच्चा पैदा हुआ। वह ठीक उसी चित्र से मिलते हुए रङ्ग-रूप का था।"

उपरोक्त उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध होता है कि अनायास प्रभाव भी सन्तान के रङ्ग-रूप पर पड़ता है। जब अनायास बातों का प्रभाव होता है, तो इच्छानुसार सन्तान का रङ्ग-रूप निर्माण करने में संशय ही क्या रह गया? अनायास की अपेक्षा इरादतन् डाले हुए प्रभाव का असर अच्छा होता है।

वर्ण नहीं बदलता, अतएव यहाँ यह मानना ही पड़ेगा कि वंश और जाति का भी रङ्ग पर असर होता है। यह एक मानी हुई बात है कि गौर वर्ण के माता-पिता की सन्तान अवश्य गोरे रङ्ग की होगी। यदि माता-पिता काले रङ्ग के होंगे, तो सन्तान भी काले रङ्ग की ही होगी; लेकिन इसके लिए भी निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि यह सिद्धान्त अटल है। जाति के लोग सभी एक वर्ण के होते हैं, यह मानना तो दूर रहा; एक कुटुम्ब के आदमी भी एक वर्ण के नहीं होते। अब यहाँ पर प्रश्न होता है कि जब देश, ऋतु, जाति और वंश रङ्ग-भेद होने का कारण नहीं है, तो और क्या कारण है? इसका उत्तर एकमात्र इच्छाशक्ति अथवा मनःशक्ति कहा जा सकता है। देश, ऋतु, जाति और वंश का भी रङ्ग पर प्रभाव होता है; किन्तु तभी जब कि इच्छाशक्ति उसके प्रतिकूल कार्य न करती हो। यदि इच्छाशक्ति प्रतिकूल हुई, तो इनका प्रभाव नाममात्र के लिए भी नहीं रहता। डॉक्टर लोब का कथन इसकी पुष्टि करता है :—

"एक अङ्गरेज ने एक साँवले रङ्ग की ब्राजेलियन महिला से विवाह किया था। अङ्गरेज का इसमें खूब गाढ़ा स्नेह था। बीस वर्ष दोनों ने गार्हस्थ्य जीवन बिताया। बाद में उस स्त्री का शरीरान्त हो गया। इससे एक भी औलाद पैदा नहीं हुई। इसके बाद इस अङ्गरेज ने एक योरोपियन महिला का पाणिग्रहण किया; इस स्त्री से एक पुत्री का जन्म हुआ, जो ब्राजेलियनों के सदृश्य काले रङ्ग की थी।"

योरोपियन जोड़े से काले रङ्ग की कन्या पैदा होने का कारण

उसका पिता था। उसके हृदय पर उसकी पूर्व पत्नी आजेलियन स्त्री की मुखाकृति का इस प्रकार गहरा चित्र बन गया था कि वह साँवले रङ्ग की हुई। डॉक्टर फाउलर लिखता है :—

एक हब्शी ने एक निर्धन स्त्री के साथ विवाह किया। वह कुछ दिन बाद एक पड़ोसिन भटियारी पर आसक्त हुआ। उसने उस भटियारी से प्रेम करने के लिए सैकड़ों यत्न किए; लेकिन निष्फल हुआ। एक दिन वह अत्यन्त कामातुर हो उसके घर में घुस गया, तब उस भटिहारी ने उसे घर से निकाल दिया। वह इतना काम-पीड़ित था कि वहाँ से आकर उसने अपनी स्त्री से भोग किया। योगान् उसी दिन गर्भ रह गया। इस गर्भ से जो लड़की पैदा हुई, वह ठीक उसी भटिहारी के रङ्ग-रूप की हुई। यह भी मनःशक्ति का ही कारण था।

स्पेन में एक प्रतिष्ठित अङ्गरेज की कन्या के शयनागार में एक "ईथोपियन" जाति के पुरुष का चित्र था। सोते समय वह उसके नेत्रों के सामने टँगा रहता था। गर्भावस्था में भी उसका ध्यान उसी चित्र पर रहा। उस गर्भ से जो बच्चा पैदा हुआ। वह ठीक उसी चित्र से मिलते हुए रङ्ग-रूप का था।"

उपरोक्त उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध होता है कि अनायास प्रभाव भी सन्तान के रङ्ग-रूप पर पड़ता है। जब अनायास बातों का प्रभाव होता है, तो इच्छानुसार सन्तान का रङ्ग-रूप निर्माण करने में संशय ही क्या रह गया? अनायास की अपेक्षा इरादतन् डाले हुए प्रभाव का असर अच्छा होता है।

"डॉक्टर पी० एस० सिक्रेट के यहाँ कुछ पालतू ख़रगोश थे। उन्होंने एक कमरे को नीले रङ्ग का पोतकर नीली ही उसमें छत बाँधी और नीला ही फ़र्श बिछा दिया। उसमें खरगोशों के कई जोड़े रखे गए। इन जोड़ों से जो बच्चे पैदा हुए उनमें से दो नीले रङ्गके थे। फिर इन नीले बच्चों की औलाद नीले ही रङ्ग की पैदा हुई।"

डॉक्टर केल्लाग का कहना है—रोम का एक न्यायाधीश बदशक्ल और नाटे क़द का था। उसके एक पुत्र पैदा हुआ, जो ठीक पिता की सूरत-शक्ल का था। अन्त में उसने ख़ूबसूरत सन्तान प्राप्ति के लिए डॉक्टर गेलन की सम्मति ली। डॉक्टर ने उसकी गर्भवती स्त्री के शयनागार में ख़ूबसूरत प्रतिमाओं के रखने की सलाह दी। ऐसा ही किया गया। इस प्रकार जो सन्तान पैदा हुई, वह अत्यन्त ख़ूबसूरत पैदा हुई।

अमरीका के एक दम्पति ने अपनी सन्तान को अत्यन्त रूपवान् उत्पन्न करने के लिए एक अत्यन्त ख़ूबसूरत बालक का चित्र खरीदा। गर्भाधान और गर्भवास के समय स्त्री ने नित्य बड़े ही ध्यान से उस चित्र को देखा। यथासमय जो बालक उत्पन्न हुआ, वह बिलकुल उस चित्र के अनुसार था। जो लोग उनके घर आते थे, वे उसी चित्र को इस बच्चे का चित्र कहते थे।

इन उदाहरणों द्वारा यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि सन्तान का रूप-रङ्ग माता-पिता के हाथ में है। वे चाहे उसे ख़ूबसूरत बनावें या बदसूरत। कुरूप बालक माता-पिता की बदसूरती और मूर्खता का प्रमाण है। ख़ूबसूरत बच्चा माता के सौन्दर्य तथा

बुद्धिमत्ता का द्योतक है। मनःशक्ति द्वारा बच्चे को काला, गोरा, रूपवान और कुरूप बनाना माता-पिता के अधीन है। कभी किसी स्त्री को उसके पड़ोसी अथवा उसके घर के लोग अमुक पर-पुरुष के साथ अनुचित सम्बन्ध का लाञ्छन लगा देते हैं। इस लाञ्छन के कारण उस पुरुष की मुखाकृति निरन्तर उस स्त्री के हृदय में अङ्कित होती रहती है। योगवश यदि उस समय वह स्त्री गर्भवती हुई, तो उसके पेट से उसी पुरुष के रङ्ग-रूप की सन्तान उत्पन्न हो जाती है। यह देख कर मूर्ख लोग अपने दिये लाञ्छन को सत्य बताने में उस बालक को प्रमाण-रूप मानते हैं; लेकिन ऐसा समझना भूल है। यह मनःशक्ति पर अवलम्बित है। माता-पिता के अनुकूल ही उनका रूप-रङ्ग होना चाहिए या होता है, ऐसा मानने वाले लोग मूर्ख हैं। हमने जहाँ-तहाँ लोगों को यह कहावत कहते सुना है :—

"माँ पर पूत, पिता पर बेटी।"

यह बात किसी अंश में सत्य हो; किन्तु मनःशक्ति के सामने यह बिलकुल झूठ है। खूबसूरती का असली अर्थ दम्पति को समझ लेना चाहिए। वर्ण और रूप दोनों अलग-अलग हैं। गौर वर्ण खूबसूरती नहीं है; और न श्याम वर्ण बदसूरती ही है। गोरे आदमी भी इतने बदसूरत होते हैं कि जिन्हें देख कर घृणा उत्पन्न होती है; और काले रङ्ग के मनुष्य कभी-कभी ऐसे खूबसूरत होते हैं, जिन्हें देख कर मन प्रसन्न हो जाता है। इससे यह

सिद्ध होता है कि वर्ण का खूबसूरती और बदसूरती से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। शारीरिक सङ्गठन अच्छा होना चाहिए, फिर चाहे मनुष्य काला हो या गोरा! आँख, कान, नाक, मुँह, गाल, ठोडी, भृकुटी, कपाल आदि मनुष्य की खूबसूरती के प्रदर्शक होते हैं। मुँह के खूबसूरत होने से ही मनुष्य खूबसूरत माना जाता है सही; किन्तु शरीर के प्रत्येक अवयव का उचित विकास भी खबसूरती में ही शामिल है। टाँगे बढ़ी हुई लम्बी, हाथों के पञ्जे लम्बे, छोटे-छोटे हाथ, सङ्कुचित वक्ष, अङ्ग की दुर्बलता, किसी अवयव का कम या अधिक होना भी बदसूरती है। इसलिए खूबसूरत सन्तान उत्पन्न करने वाले स्त्री-पुरुषों को पहले "खूबसूरती क्या है?" इस विषय को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। बाद में रूप-रङ्ग सम्पन्न सन्तान प्राप्ति का यत्न करना चाहिए।

प्रत्येक शारीरिक अवयव की रचना सीमा से कम या अधिक होना ही बदसूरती है। रङ्ग कैसा ही हो गोरा हो या काला! उचित रूप में शारीरिक सङ्गठन का नाम ही खूबसूरती है। यदि उत्तम वर्ण और उत्तम शारीरिक सङ्गठन अर्थात् खूबसूरती एक ही व्यक्ति में हों, तो फिर कहना ही क्या है? सोना और सुगन्ध हो जाता है। हरेक देखने वाला वाह-वाह कहने लगता है। देखने वाला मुदित हो जाता है। सारांश यह कि वर्ण के साथ ही शारीरिक सुन्दरता का होना बड़ा ही जरूरी है। इसी का नाम खूबसूरती है। माता-पिता को अपने पुत्र-पुत्री का सौन्दर्य निर्माण करने के लिए गर्भावस्था में ही सावधानी की आवश्यकता है।

आज हमारे देश में जैसा होना चाहिए, वैसा शारीरिक सङ्गठन नहीं है। किसी की नाक लम्बी और बदसूरत है, तो किसी की आँखें खराब हैं। किसी के ओंठ और मुँह भद्दे हैं, तो किसी के ठोडी और गाल बदशक्ल हैं। किसी की टाँगें लम्बी हैं, तो किसी का धड़ चौड़ा है। किसी की गर्दन छोटी है, तो किसी की लम्बी है। तात्पर्य यह है कि सौन्दर्य का एक ही व्यक्ति में मिलना आज कठिन है। जिसे देखो, वही सौन्दर्य का इच्छुक है। कुरूपता किसी को भी पसन्द नहीं है। जो व्यक्ति बदसूरत होते हैं, लोग उनसे घृणा करते हैं; और उन्हें कोई पसन्द नहीं करता। जो व्यक्ति बदसूरत होते हैं, वे कृत्रिम उपायों द्वारा अपने शरीर को ख़ूबसूरत बनाने में चिन्तित रहते हैं। देश का बहुत सा पैसा ख़ूबसुरती खाते में खर्च हो रहा है। बढ़िया वस्त्र, नजाकत और सौन्दर्य के अन्य उपाय देश को धूल में मिला रहे हैं। आजकल कपाल पर बड़े-बड़े बाल रख कर हमारे मर्द-बच्चे औरतों की तरह उनमें कड़ी पट्टी करते हैं। ऐसे बाल रखने का कारण पूछने से यही मालूम हुआ कि यदि बालों को इस तरह नहीं रक्खा जावे, उनकी ख़ूबसूरती में ख़लल आता है !! सारांश यह कि दुनिया ख़ूबसूरती चाहती है; किन्तु असली ख़ूबसूरती प्राप्त करने की विधि लोगों को मालूम नहीं है।

ख़ूबसूरती और बदसूरती का निर्माण माता-पिता के हाथ में है। बदसूरत बच्चा, माँ-बाप की मूर्खता का बोधक है। गर्भिणी स्त्री अपने गर्भस्थ भ्रूण को जैसा चाहे, वैसा बना सकती है। एक

विलायती स्त्री को "चेरी" नामक फल प्राप्त करने की बड़ी ही प्रबल इच्छा हुई। वृक्ष के पास जाकर उसने फल तोड़ने के बहुत ही प्रयत्न किये; किन्तु अधिक ऊँचे होने के कारण वह प्राप्त नहीं कर सकी। इन दिनों वह स्त्री सगर्भा थी। यथा समय इस गर्भ से कन्या उत्पन्न हुई। उस कन्या के कपाल पर चेरी के समान लाल रङ्ग का चिह्न मौजूद था। पाठक! विचारिए, मनःशक्ति की बालक पर कितनी गहरी छाप पड़ती है !!

अलबर्ट आल्स्टोन का कहना है—एक व्यक्ति ने समुद्र-यात्रा करते समय अपनी स्त्री को अप्रसन्नता के कारण समुद्र में पटक दिया! उसने जहाज का एक हिस्सा पकड़ लिया। उस निर्दय व्यक्ति ने उसकी अँगुलियाँ काट दीं। वह स्त्री डूबना ही चाहती थी कि अन्य यात्रियों ने उसकी प्राण-रक्षा करली। इस स्त्री से जो सन्तान उत्पन्न हुई, वह भी बिना अँगुलियों की थी!

डॉक्टर चेपीन लिखता है—एबिङ्गटन में एक स्त्री के गर्भ से बिलकुल प्रतिमा के समान बालक पैदा हुआ था। कारण यह हुआ कि जिन दिनों वह गर्भिणी थी एक प्रतिमा को बड़े ही ध्यान से देखा करती। वह प्रतिमा उसे अत्यन्त प्रिय थी। फलरूप में सन्तान भी मूर्ति के समान पैदा हुई। हमारे देश में भी कभी-कभी चार हाथ वाले, दो सिर वाले, तीन आँख वाले, पूछ वाले बच्चों के पैदा होने की खबर समाचार-पत्रों में निकला करती हैं। बहुत से पाठकों ने तो आँखों से देखा भी होगा। इसका कारण हमारे देवताओं की भिन्न-भिन्न आकृतियाँ हैं। हिन्दू लोगों के

प्रायः सभी देवता विचित्राकृति के होने के कारण हिन्दू-समाज में ऐसे विचित्र बच्चे पैदा हो जाते हैं।

हमारे विचार से अब इस विषय को अधिक स्पष्ट करने की जरूरत नहीं रह गई। इस प्रकरण को ध्यान से पढ़ने पर इच्छानुसार गोरा, काला, खूबसूरत और बदसूरत बचा उत्पन्न करने की विधि सहज ही समझ में आजायगी। तो भी इस प्रकरण का संक्षिप्त सार पाठकों को फिर बताना ठीक समझते हैं।

(१) मनःशक्ति प्रबल होनी चाहिए। जैसी इच्छा हो, उसी प्रकार की दृढ़ मनःशक्ति रखने से मनोभिलषित सन्तान उत्पन्न होगी।

(२) गर्भिणी स्त्री को जिस मास में जिस अङ्ग का वृद्धि विकास हो, उसीमें उसी अङ्ग का सुन्दर सङ्गठन करने का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

(३) गर्भिणी को अपने गर्भकाल में आहार-विहार, रहन-सहन आदि का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

(४) जैसा बच्चा उत्पन्न करना हो, वैसे चित्रों को मकान में लगा कर गर्भवती को रात-दिन उसी चित्र के अवलोकन में समय बिताना चाहिए।

"सन्तान-शास्त्र" के पाठक अब भविष्य में इच्छानुसार खूबसूरत बच्चे पैदा करके देश के सौन्दर्य को बढ़ायेंगे, ऐसा हमें पूर्ण विश्वास है। गर्भ विषयक जितनी भी आवश्यक बातें थीं, यथासम्भव यहाँ तक समझा दी गई। अब हम आगे के प्रकरण

में बच्चा जनने के लिए घर कैसा होना चाहिए; और उसमें क्या आवश्यकीय वस्तुएँ रखनी चाहिए, इस विषय का उपदेश करेंगे।

(२) प्रसूति-गृह

जिस घर में बच्चा उत्पन्न होता है, उसे "प्रसूति-गृह" कहते हैं। प्रसव के लिये पहले से ही प्रसूति-गृह तय्यार कर लेना चाहिए। गर्भ में बालक २७० दिन से २८० दिन तक रहता है। हम लोग बच्चे के गर्भ में रहने का समय दस महीने दस दिन मानते हैं; किन्तु वास्तव में बच्चा ९ महीने और १० दिन गर्भ में रहता है, पर यह अटल नियम नहीं है। कभी-कभी दस-पाँच दिन आगे-पीछे भी प्रसव हो जाता है। प्रसव के लिए चिकित्सकों ने निम्नलिखित नक्शा तय्यार किया है।

ऋतु बन्द होने की तिथि			प्रसव होने की तिथि
ता० १ जनवरी	...	...	ता० ३० सितम्बर
" १ फ़रवरी	...	...	" ३१ अक्टूबर
" १ मार्च	...	...	" ३० नवम्बर
" १ एप्रिल	...	...	" ३१ दिसम्बर
" १ मई	...	...	" ३१ जनवरी
" १ जून	...	...	" २८ फ़रवरी
" १ जुलाई	...	...	" ३१ मार्च
" १ अगस्त	...	...	" ३० एप्रिल

ऋतु बन्द होने की तिथि			प्रसव होने की तिथि	
ता० १ सितम्बर	...	...	ता० ३१	मई
" १ अक्टूबर	...	...	" ३०	जून
" १ नवम्बर	...	...	" ३१	जुलाई
" १ दिसम्बर	...	...	" ३१	अगस्त

इस हिसाब को समझ लेने से प्रसव के दिन का हिसाब निकालने में कोई कठिनता नहीं पड़ती। सब से मोटी बात यह है कि जिस तारीख में ऋतु बन्द हो, उसके ९ महीने १० दिन बाद प्रायः बच्चा पैदा होता है। जो लोग अधिक मैथुन नहीं करते और केवल सन्तान उत्पन्न करने के लिए स्त्री प्रसङ्ग करते हैं, उन्हें प्रसव-काल जानने में और भी अधिक सुविधा रहती है; बशर्ते कि स्त्री-प्रसङ्ग की तारीख याद रक्खी गई हो।

वाग्भट्ट इस प्रकार आज्ञा देते हैं:—

प्राक्चैव नवमान्मासात् सूतिकागृहमाश्रयेत्।
देशे प्रशस्ते संभारै सम्पन्नं साधकेऽहति॥

अर्थात्—नवाँ महीना लगने के पूर्व ही, अच्छा दिन देख कर अच्छी जगह में बने हुए स्थान के प्रसूति-गृह चुनना चाहिए। आवश्यकीय वस्तुओं से तैयार मकान में ही गर्भिणी स्त्री को प्रसव करना चाहिए।

आजकल बड़े-बड़े शहरों में सूतिका-गृहों को बने देख कर हमारे बहुत से भाई समझते होंगे, यह गृहनिर्माण आदि पाश्चात्य चिकित्सकों के मस्तिष्क का फल है। ऐसा समझने वालों

की उपरोक्त श्लोक ध्यान से पढ़ना चाहिए। हमारे प्राचीन शास्त्रकार चिकित्सकों ने भी यही बताया है। अविद्या के कारण लोगों को प्रसूति-गृह सम्बन्धी बातों का विशेष ज्ञान नहीं है।

आजकल लोग प्रसूति-गृह तो चुनते हैं; लेकिन वह घर क्या होता है, कलकत्ते की कालकोठरी (Blackhole) होती है! हवा जाने की बिलकुल जगह नहीं होती। यदि इत्तिफ़ाक से एकाध खिड़की अथवा सूराख हो, तो उसे भी बन्द कर देते हैं। जहाँ हवा जाने के सूराख तक बन्द कर दिए जायँ, वहाँ प्रकाश कैसे जा सकता है? सारांश कि अन्धकारमय और वायुशून्य मकान ही प्रायः प्रसूति-गृह बनाया जाता है। जब प्रसव होता है, उस समय ऐसे अँधेरे, हवाबन्द मकान में कई स्त्रियाँ और बदबूदार कपड़े वाली एक-दो दाइयाँ गर्भिणी के पास घुसी रहती हैं। एक प्रकार से वह प्रसूति-गृह उस समय मृत्यु-भवन बन जाता है। ऐसे कारणों से ही देश में बच्चों की जञ्चाओं की मृत्यु-संख्या बढ़ गई है।

जो लोग पैसे वाले हैं और जिनके स्थान का बाहुल्य है, उन्हें तो प्रसूति-गृह एक अलग ही निर्म्माण कराना चाहिए। वह मकान ऐसी जगह बनवाना चाहिए, जहाँ किसी प्रकार का गन्दापन न हो। उसके पास गटर, मोरी, पाखाना, कचरा-कूड़ा डालने की जगह न हो। सूतिका-गृह उत्तम जगह, चतुर कारीगरों द्वारा आयुर्वेदानुसार बनवाना चाहिए। प्रसव-दिनों के पहले ही गर्भवती को प्रसूति-गृह में निवास करना चाहिए। जिन ग़रीब लोगों को अलग प्रसूति-गृह निर्म्माण कराने की शक्ति न हो,

उन्हें एक अच्छा लम्बा-चौड़ा, हवादार, रोशनीवाला, पवित्र, लिपा-पोता मकान देख रखना चाहिए; और आवश्यकता पड़ने पर उसी में प्रसव कराना चाहिये। जो लोग उत्तम सन्तान चाहते हैं, उन्हें उत्तम, चित्त को प्रसन्न करने वाला सूतिका-गृह तय्यार कराना चाहिए। जहाँ अँधेरी, वायुरहित, तङ्ग, दुर्गन्धमय कोठरी प्रसूति-गृह बनाई जाती हो, वहाँ शायद जननी तो जीवित रह सकती है, लेकिन बच्चा तो कोमल पुष्प की तरह मुरझा जाता है। यदि बच्चा मरे नहीं, तो मरने के तुल्य हो जाता है।

जिस बच्चे ने अभी-अभी इस संसार में पदार्पण किया है, उसे दुर्गन्धयुक्त वायु, अन्धकार, गन्दापन प्रदान करने से वह आमरण रोगी रहता है। बालक को अत्यन्त शुद्ध वायु की आवश्यकता होती है। गर्भ में बच्चे के फेफड़े साँस लेने अथवा छोड़ने का काम नहीं करते। गर्भ से निकलते ही उसके फेफड़े क्रिया करते हैं। बच्चा पहली साँस जन्मते ही लेता है, और वही साँस गन्दी हवा की हो! कहिए बालक मरेगा नहीं, तो और क्या होगा? इस बड़ी भारी अज्ञानता से लाखों बच्चे प्रति वर्ष मर जाते हैं; और माता-पिता ईश्वर को दोष देते हुए रोते रहते हैं; किन्तु इसमें दोष माता-पिताओं का है, जो अपने हाथों अपने बालक की हत्या कर डालते हैं।

गरीब लोगों का कहना है कि निर्धनता के कारण हम उत्तम प्रसूति-गृह नहीं बनवा सकते; लेकिन ऐसा कहने वाले अज्ञानी हठी और पाखण्डी हैं। प्रसूति-गृह चूने पत्थर का ही हो, यह बात नहीं है। वह किसी भी वस्तु का बना हो; किन्तु विस्तृत प्रकाश-

युक्त, हवादार और मनोहर होना चाहिए। हमारे देशवासी, जो पक्के मकानों में रहते हैं, अज्ञानता के कारण अपने मकानों को ऐसे ढंग का बनवाते हैं, जो उनके लिये मौत का पिंजरा होता है। अपवित्रता और गन्दापन मकान में अच्छी तरह रहता है। यहाँ के लोग चूने-पत्थर का मकान स्वास्थ्य की दृष्टि से नहीं बनाते; बल्कि इस दृष्टि से बनवाते हैं कि हमारी कई पीढ़ियों तक यह न टूटे-फूटे और नाम बना रहे। जिस देश में मकान बनाते वक्त भी नाम करने का भूत सिर पर सवार रहता है, वहाँ वायु और प्रकाश की इज्जत कौन करेगा? जापानी लोग घास के मकानों में रहते हैं; लेकिन इतने अच्छे, हवादार, प्रकाशयुक्त और स्वच्छ बनाये जाते हैं कि देखते ही मन प्रसन्न हो जाता है। एक स्वच्छता-प्रेमी अपनी झोंपड़ी को भी अपनी सुविधा के अनुसार अच्छी बना सकता है। हमारे देखने में आया है कि मूर्ख, आलसी और गन्दे आदमी अपने अच्छे से अच्छे मकान को भी इतना अपवित्र बना डालते हैं कि देखते ही घृणा से सिर चक्कर खाने लगता है। ऐसे हजारों क्या लाखों मनुष्य इस भारतवर्ष में हैं, जो दो-चार आने पैसे खर्च करके मकान में सफेदी नहीं करते और दुर्व्यसनों में अपना पैसा नित्य खर्च करते रहते हैं। पान, तम्बाकू, चाय, सोडा, लेमन, भाँग, गाँजा, अफीम, शराब, वेश्यागमन आदि कार्यों के लिये पैसे खर्च होते रहते हैं, लेकिन मकान की सफाई का नाम लेते ही कहने लगते हैं—"हाथ तंग है।" यह मूर्खता का सब से बड़ा नमूना है। ऐसे लोग अज्ञानी हैं; और स्वयं अपना सारा

करते हैं। सारांश यह कि ग़रीब लोगों का यह बहाना कि निर्धनता के कारण उचित प्रसूति-गृह निर्माण नहीं करा सकते, केवल बहाना है; जबकि अन्य कामों में फ़ुज़ूल खर्ची की जाती है, तो प्रसूति-गृह के लिये निर्धनता का नाम लेना, लोगों को धोका देना है। प्रसूति-गृह-निर्माण में अथवा हवा और प्रकाशयुक्त मकान बनाने में—स्वच्छता में निर्धनता उतनी बाधक नहीं है, जितनी कि अज्ञानता है। यदि उचित प्रसूति-गृह की घर में सुविधा नहीं हो सके, तो हमारी सलाह है कि कुछ समय के लिये अच्छा हवादार, स्वच्छ, और प्रकाशयुक्त मकान किराये पर लेकर उसे प्रसूति-ग्रह बनाया जा सकता है। तात्पर्य यह है कि जैसे बने, वैसे कम खा कर, कम पहिन कर प्रसूति-गृह अच्छा चुनना चाहिए।

जब अच्छा मकान प्रसूति-गृह के लिए चुन लिया जावे, तब उस मकान में अग्नि सुलगा कर थोड़ा गर्म कर लेना चाहिए। इस क्रिया से जो कुछ भी शील, ठण्ढक उस मकान में होगी, वह दूर हो जायगी। प्रसूति-गृह में प्रायः आग रखी जाती है; लेकिन यह बात ठीक नहीं है। आग के सुलगते रहने से मकान की हवा बिगड़ जाती है। इसलिए आग हमेशा प्रसूति-गृह के बाहर ही रखनी चाहिए; आवश्यकता पड़ने पर अन्दर लानी चाहिए। प्रसूति-गृह में कोयलों को सुलगाने से वायु दूपित हो जाती है, इसलिए बाहर सुलगा कर फिर आग को भीतर लाना चाहिए। प्रसव-समय में आग हमेशा तय्यार रहनी चाहिए। प्रसूति-गृह में चौबीसों घण्टे दीपक रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। रात्रि

के समय ही ऐसा दीपक जलाना चाहिए, जिसका धुआँ कमरे की वायु को दूषित न करे। दीपक हवा से ऑक्सीजन वायु ग्रहण कर, कार्बोनिक एसिड वायु उत्पन्न करता है। यह वायु स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती है। जो लोग प्रसूति-गृह में मिट्टी के तेल की चिमनियाँ रखते हैं, जिनसे धुआँ निकलता रहता है, प्रसूता और नवजात बालक के लिए विष है। प्रसूति-गृह में ऐसा दीपक जलाना चाहिए, जिसमें धुएँ के बादल न उठते हों, वायु को न बिगाड़ता हो, अत्यन्त तेज प्रकाश वाला न हो, जो आँखों को भी असह्य हो।

एक चारपाई का प्रसूति-गृह में होना आवश्यक है। प्रसव के समय प्रायः स्त्रियों के लिए फटी, पुरानी और मैली दरी, सतरञ्जी या इसी तरह का एकाध वस्त्र सोने के लिए दिया जाता है, यह ठीक नहीं है। प्रसूता के लिए एक लम्बी-चौड़ी चारपाई होनी चाहिए। चारपाई पर गर्भिणी यदि लेटेगी, तो प्रसव वेदना कम होगी; और बच्चा आसानी से बाहर आ जावेगा। गर्भिणी को प्रसव के समय भूमि पर न लेटना चाहिए, क्योंकि घर के फर्श पर की धूल में हजारों रोगोत्पादक कीटाणु होते हैं। ये रोग-जन्तु नव-जात शिशु के शरीर पर चढ़ जाते हैं और जननी के शरीर पर भी चढ़ कर उन दोनों को रोगी बना देते हैं। कभी-कभी जमीन ठण्डी होती है, जिससे बालक और माता दोनों को ज्वर और खाँसी हो जाने का भय रहता है; अतएव प्रसव यदि चारपाई पर हो, तो किसी भी तरह का भय नहीं रहता।

बेंत या निवार से बने हुए पलङ्ग इस काम के लिए ठीक नहीं होते; क्योंकि ऐसे पलङ्गों पर एक ही जगह वजन पड़ने के कारण वे बीच में झोली सी बन जाते हैं, जिससे गर्भवती को बड़ा ही कष्ट होता है—अच्छी तरह नींद भी नहीं आने पाती! प्रसव के लिए एक ऐसी चारपाई बनवाई जावे, जो मजबूत और चिकने तख़्तों की बनी हो। इस तरह की चारपाई को प्रसूति-गृह में ले जाने के पूर्व गर्म जल से अच्छी तरह धोकर धूप में सुखा लेनी चाहिए। यदि कार्बोनिक एसिड के पानी से या फ़िनाइल के पानी से इस चारपाई को धो लिया जावे, तो और भी उत्तम हो। टूटी-फूटी, मैली-कुचैली, गन्दी चारपाई को भूल कर भी काम में न लाना चाहिए। चारपाई के छिद्रों में खटमल, पिस्सू आदि रक्त-दूषक जन्तु न होने चाहिए।

जिस प्रकार उत्तम चारपाई की जरूरत है, उसी तरह प्रसूति-गृह में उत्तम, स्वच्छ, कोमल, सुखद बिछौने की भी जरूरत है। एक मुलायम गद्दा, जिसमें पर्याप्त रुई हो, चार-पाँच सफ़ेद पलङ्ग-पोश—चादरें, एक-दो तकिए और ऋतु के अनुसार ओढ़ने के लिए वस्त्र रखने चाहिए। आजकल इस विषय पर लोगों का ध्यान नहीं जाता। यहाँ तो गर्भ रहते ही प्रसूति-गृह के लिए, घर के सब फटे-पुराने गन्दे चिथड़े जमा करने लगते हैं!! प्रसूता को कई दिन तक सोने के लिए एक फटी-टूटी चटाई अथवा सैकड़ों पैवन्द लगी हुई गन्दी गुदड़ी दी जाती है। कहीं-कहीं गुदड़ी की जगह कम्बल दिए जाते हैं, जो प्रसूता के शरीर में

कभी कै होने लगती है। जी मचलाने लगता है। इसे शुभ समझा जाता है; क्योंकि उससे कमल का मुँह अच्छी तरह खुल जाने में सहायता पहुँचती है।

प्रसव-काल के समय गर्भिणी को ठहर-ठहर कर प्रसव-पीड़ा होती है। प्रसव-वेदना पीठ, गर्भाशय, वस्ति के निम्नभाग, और जाँघों तक फैल जाती है! प्रसव-वेदना पहले धीरे-धीरे आती है, फिर कुछ काल के लिए बन्द हो जाती है। बाद में हलकी वेदना होकर तीस-चालीस मिनिट के लिए फिर रुक जाती है। इसके बाद अधिक देर तक ठहरने वाली तीव्र वेदना आरम्भ हो जाती है। इस प्रकार दस-बारह घण्टे वेदना के पश्चात् प्रसव हो जाता है। डॉक्टर ट्रॉल का कहना है का :—

" And there is certainly no reason except in abnormal habits and conditions, why parturition should be painful."

भावार्थ—अयोग्य आदतों तथा विकृत दशाओं के कारण ही प्रसव-वेदना होती है। इसके अतिरिक्त प्रसव-वेदना का और कोई भी कारण नहीं है।

सादा जीवन बिताने वाली मजदूर पेशा स्त्रियाँ स्वयं प्रसव कर लेती हैं, उन्हें अन्य आरामतलब स्त्रियों की तरह प्रसव-वेदना का कष्ट नहीं सहना पड़ता! साधारण दृष्टि से देखा जावे, तो शहरों में रहने वाली स्त्रियों की अपेक्षा देहाती स्त्रियों की प्रसव-क्रिया अधिक सरलतापूर्वक होती है। प्रसव-वेदना एक प्रकार का रोग है। यह प्राकृतिक वेदना नहीं है। प्रसव-काल में कष्ट होना

समाज की वलि

चाहिए, यह क़ुदरती नियम नहीं है; अर्थात् जिन स्त्रियों को प्रसव के समय वेदना होती है, उन्हें रोगी समझना चाहिए। हमने एक पुस्तक में पढ़ा है कि चक्कड़ों की स्त्रियाँ चलते-चलते मार्ग ही में प्रसव कर लेती हैं; और बालक को उठा कर फिर चलने लगती हैं। अफ्रीका की जङ्गली स्त्रियाँ, जो सदैव नङ्गी रहती हैं; और जिन्हें असभ्य कहा जाता है, बिना किसी कष्ट के सुगमतापूर्वक बालक जनती हैं। इसका कारण यह बताया जाता है कि वे अपने घर का प्रायः सभी काज करती हैं, और गर्भ-काल में मैथुन नहीं करतीं।

भारतवर्ष में तो प्रतिशत ९० स्त्रियाँ प्रसव-वेदना के पश्चात् प्रसव करती हैं। जिस वक्त देश में क़ुदरती नियमों के अनुसार स्त्री-पुरुषों का आचरण होने लगेगा, उस समय प्रसव-वेदना हुए बिना ही स्त्रियाँ बच्चे उत्पन्न करेंगी। प्रसव-वेदना के आरम्भ होते ही स्त्री को एक आराम कुर्सी अथवा बिछौने पर शान्त चित्त से पड़े रहना चाहिए। यदि कुछ कार्य करने की इच्छा हो, तो अवश्य करते रहना चाहिए। मन्द-मन्द प्रसव-वेदना के समय घूमना-फिरना और काम करना बड़ी ही अच्छी बात है। प्रसव-वेदना के समय मल-मूत्र त्यागने की आवश्यकता हो; तो रोकना नहीं चाहिए; और यदि मल-मूत्र रुक गया हो, तो पिछले प्रकरण में बताए हुए नुस्ख़े काम में लाना चाहिए। यदि इस समय भूख लगे, तो गौ का दूध जो अधिक गर्म न हो, पीना चाहिए; अथवा सागूदाने की खीर बना कर देना चाहिए। प्यास लगे तो सिवाय शीतल जल के और कुछ नहीं देना चाहिए।

जब स्त्री को ऐसा मालूम होने लगे कि बिना लेटे प्रसव-वेदना कम न होगी, तब समझना चाहिए कि प्रसव की प्रथम दशा आ पहुँची। यह प्रथम दशा कुछ देर तक स्थायी रहती है। मूर्ख दाई इस समय गर्भिणी को बच्चा बाहर निकालने के उद्देश से ज़ोर करने को कहती हैं; लेकिन ऐसा करना अत्यन्त घातक है। इस समय थोड़ा-थोड़ा दूध-घृत पिलाना चाहिए। दूध कुछ-कुछ गरम हो; और उसी में थोड़ा सा घृत भी डाल दे। इस समय गर्भाशय का मुख विकसित होने लगता है; और योनि-मार्ग भी चौड़ा होने लगता है। प्रसव-काल में गर्भाशय का मांस सिकुड़ने लगता है; किन्तु वह एकदम नहीं सिकुड़ता। उसमें धीरे-धीरे सिकुड़ने की लहरें उठती हैं, इन्हीं लहरों के कारण जननी को वेदना होती है। इस प्रकार गर्भाशय के सिकुड़ने से उसमें रहने वाला बालक बाहर निकलना चाहता है। गर्भाशय के भीतर की चीजें दबाव पड़ने से वैसी ही रहती हैं, उनका घनफल कम नहीं होता। गर्भाशय के भीतर बच्चा और कुछ तरल पदार्थ होते हैं। इनका भी घनफल दबाव के कारण कम नहीं हो सकता। जब गर्भाशय के सिकुड़ने से उसकी समाई कम होने लगती है, तब ये चीजें उसके मुख द्वारा बाहर आने लगती हैं। यदि वस्ति-गह्वर की चौड़ाई कम हो; और गर्भाशय सिकुड़ता जाये, तो उसकी दीवार कहीं से फट जायगी; और बच्चे को भी हानि पहुँचेगी।

जब गर्भाशय की समाई कम होने लगती है; अर्थात् वह सिकुड़ने

लगता है, तब गर्भोदक से भरी हुई झिल्ली एक थैली की शक्ल में गर्भाशय के मुँह में अड़ जाती है। ज्यों-ज्यों दबाव पड़ता है, त्यों त्यों गर्भाशय के मुख के पास का मांस, जो पहले सिकुड़ा था, फैल जाता है; और मुँह चौड़ा हो जाता है। थैली गर्भाशय के मुख से होकर योनि के ऊपरी भाग में चली जाती है। इस गर्भोदक की थैली से योनि-मार्ग चौड़ा होता जाता है। धीरे-धीरे मार्ग इतना चौड़ा हो जाता है कि बच्चे का सिर सहज ही में बाहर निकल सके। जहाँ सिर निकल सकता है, वहाँ शरीर के किसी भी अवयव के निकलने में कुछ भी रुकावट नहीं हो सकती।

जिस समय गर्भ का मुख चौड़ा होता है, उस समय स्त्री का जी मिचलाने लगता है। और किसी-किसी को तो थोड़ी-बहुत उल्टी भी हो जाती है। यदि उल्टी होने लगे, तो प्रसव जल्दी ही हो जाता है। क़ै बन्द होने पर गर्भ का मुँह विकसित होने लगता है और गर्भस्थ शिशु धीरे-धीरे योनि-मार्ग की ओर आने लगता है। इस समय प्रसव-वेदना अधिक बढ़ जाती है। कई स्त्रियों को इस समय यह निश्चय हो जाता है कि अब मैं नहीं बच सकती। इस प्रकार की चिन्ता करना अज्ञानता है। इस समय जननी को चाहिए कि हिम्मत न छोड़े। दाई तथा आसपास की स्त्रियों को चाहिए कि उसे धीरज बँधाती रहें; और उससे कह दें कि बिना किसी प्रकार की हानि के अभी बच्चा पैदा हो जावेगा। इस तरह के दम-दिलासे से जननी की हिम्मत बढ़ाते रहना चाहिए। इस समय यदि भय पैदा करने वाली बातें की जावेंगी, तो प्रसूता

की मनःशक्ति निर्बल हो जाने पर उसे अवश्य ही हानि होने की सम्भावना है।

प्रथमावस्था कब समाप्त होती है, इस बात को चतुर दाई देखती रहे; लेकिन हाथ डाल कर देखना बहुत ही बुरा है। इससे प्रसूता को कष्ट होता है। गर्भाशय के भीतर बालक एक झिल्ली में बंद रहता है। बाहिर होते-होते यह झिल्ली फट जाती है, इस झिल्ली फटने का शब्द भी होता है। झिल्ली फटते ही गर्भोदक बहने लगता है, इससे बच्चे के निकलने के मार्ग में चिकनाहट पैदा हो जाती है। कभी-कभी यह झिल्ली नहीं फटती और भ्रूण झिल्ली सहित बाहर आता है। इस समय होशियारी की जरूरत है। मूर्ख दाइयाँ इसे और कुछ समझकर फेंक देती हैं। यदि बालक झिल्ली के अन्दर हो, तो झिल्ली को झटपट ही चाकू अथवा नाखून से फाड़ कर बालक को निकाल लेना चाहिए। इस समय यदि देर हो गई तो बच्चा मर जायेगा। कभी-कभी गर्भाशय का मुख अच्छी तरह नहीं खुलने पाता, और पानी बहना आरम्भ हो जाता है। ऐसा प्रायः दाइयों की असावधानी से हो जाया करता है। बार-बार हाथ डालने या जननी के जोर करने से ऐसा हो जाता है। दाई को बारम्बार यह देखते रहना चाहिए कि गर्भाशय का मुख खुल गया है या नहीं। आध-आध घण्टे के अन्तर में देखना चाहिए। इस प्रकार देखने से यह भी पता लग जाता है कि बच्चे का कौन सा अङ्ग पहले बाहर आ रहा है। ९७ प्रतिशत पहले सिर ही आता है, यह प्राकृतिक नियम है। इस प्रकार बच्चा

पैदा होते वक्त कोई कष्ट नहीं होता; किन्तु यदि पहले नितम्ब-भाग या हाथ बाहर आवें तो बहुत ही कष्टदायक मामला हो जाता है। कभी-कभी एक हाथ दो पाँव, कभी दो हाथ एक पाँव, कभी दोनों हाथ और दोनों पाँव भी पहले आ जाते हैं। इन सब बातों को जानने के लिए दाई को योनि-मार्ग में अँगुली डाल कर टटोल लेना चाहिए। प्रसव की यह अवस्था प्रथमावस्था है, इसे धीरे-धीरे शान्तिपूर्वक वितानी चाहिए। अधिक से अधिक बारह घण्टे प्रसव में लगते हैं; किन्तु जिनका प्रसव पहले-पहल होता है, उन्हें कभी-कभी २४ घण्टे तक भी लग जाते हैं।

प्रसूता को चित या पट न लेटना चाहिए। दाई प्रायः जननी को चित लेटा कर प्रसव कराती हैं; लेकिन ऐसा करने से योनि से गुदा तक का चमड़ा छिल जाता है। प्रसव के समय स्त्री को किसी करवट से सोना अच्छा है। यदि बाईं करवट सोवे, तो और भी अच्छा है। दोनों घुटनों के बीच में एक तकिया या ऐसी कोई मुलायम वस्तु रख देनी चाहिए जो जङ्घाओं को अलग-अलग रख सके। इससे बालक सुगमतापूर्वक बाहर निकल आवेगा। इस दूसरी अवस्था में प्राणवायु को भीतर रोक कर ज़ोर लगाना प्रसूता के लिए लाभदायक है। एक चतुर स्त्री को जननी के पीछे बैठ जाना चाहिए। उसे अपना हाथ प्रसूता के पीठ पर हलके रूप में रखना चाहिए और कभी-कभी दोनों कोखों पर भी हाथ फेरना चाहिए। ऐसा करने से प्रसूता के दिल को शान्ति मिलती है। जब तक

बालक पैदा न हो, तब तक इसे वहीं बैठे रहना चाहिए; और पेट पर धीरे-धीरे अपना हाथ रखे रहना चाहिए।

जब बालक का सिर बाहर निकल आवे, तो दाई को चाहिए कि उसकी गर्दन के चारों तरफ हाथ फेर कर देख ले कि नाल गर्दन में तो नहीं लिपटा हुआ है ? पैदा होते ही यह नाल यदि शरीर से न निकाला जावे, तो बालक के मर जाने का डर रहता है ? यदि नाल गर्दन में लिपटा हुआ हो, तो धीरे-धीरे हलके हाथों से खोल कर सिर के ऊपर से उतार कर भीतर कर देना चाहिए ! यदि नाल में आँटे पेचीदा हुई तो देर लगना सम्भव है। ऐसे समय पेच खोलने की उलझन में न पड़ना चाहिए। एक बन्ध बालक की तरफ और दूसरा बन्ध माता की तरफ किसी मुलायम धागे से लगा कर पेचों की क़ैंची से काट देना चाहिए। जब बालक का सिर बाहर निकल आता है, तब बहुत सी मूर्ख दाइयाँ उसे पकड़ कर खींचती हैं। ऐसा करने से सिर में झटका आ जाता है; और गर्दन की कोमल शिराएँ टूट जाती हैं—बच्चा मर जाता है। घर के लोगों को चाहिए कि दाई को ऐसा करने के लिए सख्त मनाही कर दें। जब सिर निकल आता है, तो कन्धे सहज ही में आप ही आप निकल आते हैं। सिर निकल आने के बाद थोड़ी देर में फिर प्रसव-वेदना होगी। यदि न हो, तो प्रसव-वेदना पैदा होने के लिए उपाय करना चाहिए। प्रसूता के पेट पर धीरे-धीरे हाथ फेरने से फिर प्रसव-वेदना पैदा होगी। ऐसा करने पर भी यदि पीड़ा न उठे, तो अब देरी करने से बालक के श्वास घुटने का भय है। इस समय बालक

को खींच कर ही निकालना सब से अच्छा उपाय है; लेकिन सिर पकड़ कर खींचना कदापि उचित नहीं है। दाई को अपने दोनों हाथों की अँगुलियाँ भीतर डाल कर बालक के बगलों में अड़ा देनी चाहिए; और फिर धीरे-धीरे बच्चे को बाहर खींचना चाहिए। परन्तु जब इस प्रकार बालक को खींचा जावे, तब एक स्त्री को चाहिए कि प्रसूता के पेट को दबा कर पकड़ रखे। ऐसा न करने से रक्त बहने लगेगा। जो स्त्री पीछे पीठ पर हाथ रखे हुए हैं, उसे अपना दूसरा हाथ इस वक्त पेट पर दबा कर रखना चाहिए। जब बालक छाती तक बाहर आ जावे, तब पीठ से हाथ उठा लेना चाहिए; लेकिन पेट पर वैसा ही जमाए रहना चाहिए। आँवल के गिरने तक हाथ को पेट पर ही रखना चाहिए। ऐसा करने से खून नहीं बह सकता।

बालक की जब छाती निकल चुकती है, तब भूमिष्ट होने में अधिक देर नहीं लगती। चन्द मिनिटों में बालक बाहर आ जाता है। जब बालक बाहर आ जावे, तब उसे तत्काल ही उठा कर एक तरफ़ कर लेना चाहिए; क्योंकि कभी-कभी प्रसूता के योनि-मार्ग द्वारा रक्त की एक धार निकलती है। वह धार बालक के मुँह नाक, कान, आँख आदि में नहीं गिरने देना चाहिए।

कभी-कभी बालक पैदा होने में बड़ी ही तकलीफ़ होती है। प्रसव-वेदना के मारे गर्भिणी को प्राणान्तक कष्ट होता है, परन्तु बालक पैदा नहीं होता! प्रसव-वेदना कई दिनों तक भी होती रहती है। ऐसी दशा में बालक उत्पन्न करने के लिए निम्न उपाय किए

जाने चाहिए; परन्तु चिकित्सक को पहले-पहल यह मालूम कर लेना चाहिए कि प्रसव-वेदना ही है या अन्य किसी कारण से पेट में दर्द उठ खड़ा हुआ है! जब यह निश्चय हो जावे, तभी निम्न उपायों को काम में लाना चाहिए:—

(१) फालसे की जड़ अथवा शालपर्णी की जड़ को पानी में पीस कर नाभि, वस्ति और योनि पर लेप कर देने से सुखपूर्वक प्रसव होगा।

(२) अग्निशिखा के कन्द को काँजी में पीस कर गर्भिणी के पावों पर लेप करे तो सुख पूर्वक प्रसव होगा।

(३) पाठ अथवा अडूसे की जड़ को पानी में घिस कर योनि पर लेप करने अथवा योनि में रखने से सहज ही बच्चा पैदा हो जावेगा।

(४) शालपर्णी की जड़ को चावलों के धोवन में पीस कर नाभि एवं वस्ति पर लेप करने से बच्चा पैदा होने में अधिक कष्ट नहीं होता।

(५) बिजौरे की जड़ तथा मुलहटी को पीस कर घी और शहद में मिला कर गर्भिणी को खिला दे; शीघ्र प्रसव होगा।

(६) अपामार्ग, जिसे औंगा, औंधी झाड़ा, चिरचिटा, पुठकण्डा आदि नामों से भी पुकारते हैं, की जड़ खूब बारीक पीस कर नाभि के नीचे योनि और जाँघों पर लेप कर देने से बच्चा फौरन बाहर आ जावेगा।

(७) अपामार्ग एक बड़ी ही मेध्य वस्तु है, इसमें

गुणों का लिखना कठिन है। जब बहुत ही आवश्यकता आ पड़े; और बालक बाहर न निकलता हो, तब इसकी ताजी जड़, जिसकी लम्बाई तीन-चार अँगुल हो, स्त्री-योनि में रख दें। अवश्य बच्चा पैदा हो जावेगा। साधारण दशा में इसे प्रयोग नहीं करना चाहिए, नहीं तो गर्भाशय तक भी बाहर निकल पड़ेगा।

(८) काले साँप की केंचुली की धूनी योनि में देने से प्रसव सुखपूर्वक हो जाता है।

(९) अलसी, तिल और शहद तीनों को पीस कर एक बत्ती बना ले, इस बत्ती को योनि में रखने से प्रसव होने में विलम्ब नहीं होता।

(१०) नौसादर और पोदीने की बत्ती बना कर योनि में रखने से भी बालक बिना किसी कष्ट के पैदा हो जाता है।

(११) "अपीका" नामक अङ्गरेजी दवा एक-एक रत्ती तीन चार देने से सहज ही में प्रसव होता है।

(१२) "अरगाट" नामक अङ्गरेजी दवा भी इस समय प्रयोग की जाती है; किन्तु यह विष है "अपीका" सब तरह से दोष-मुक्त और रामबाण दवा है।

(१३) यदि गर्भाशय का मुख कठोर होने के कारण बच्चा बाहर न आता हो, तो कबूतर की बीट, अकरकरा और शहद इन तीनों को पीस कर गर्भाशय तक पहुँचावे अथवा "अपीका" का प्रयोग करना ठीक होगा।

(१४) घोड़े के सुम की धूनी देने से भी सुख सहित प्रसव हो जाता है।

(१५) एक कोरी मिट्टी की हाँडी में साँप की केंचुल रख कर जला लो; और उस राख को शहद में मिला कर स्त्री की आँखों में आँज दो, फौरन बच्चा पैदा होगा।

(१६) जब प्रसव-वेदना कम हो जावे; और उसे तेज करने की इच्छा हो, तो गर्भिणी स्त्री को एक या दो रत्ती केंचुआ पान में रख कर लिए खिला दो। मांसाहारी स्त्रियों के ही यह योग उचित है।

(१७) अमलतास का छिलका एक तोला लेकर क्वाथ बना ले, और उसमें शक्कर डाल कर प्रसव-वेदना से व्यथित स्त्री को पिला दे; सुखपूर्वक प्रसव होगा।

(१८) कबूतर की बीट को पानी में घोट कर पिलाने से भी प्रसव होने में देरी नहीं लगती।

(१९) इन्द्रायण की जड़ अथवा उसके बीजों को पानी में पीस कर एक बत्ती बना ले। स्त्री की योनि में इस बत्ती को रखने से प्रसव तत्काल हो जाता है।

(२०) गाजर के बीज, सौंफ, सोवा, मेथीदाने, बड़ की जड़, बनफशा और मुलहटी प्रत्येक तीन-तीन माशे लेकर क्वाथ बना ले और गर्भिणी को पिला दे; सुखपूर्वक प्रसव होगा।

(२१) गर्भिणी के सिर के बाल लेकर उसके मुख में ठूँसने से भी बच्चा शीघ्र पैदा होने में सहायता मिलती है। बाल ठूँसने से वह घबरा न जावे, इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

(२२) पाँच तोले गुड़ में एक तोला अजवाइन का क्वाथ बना कर कुछ-कुछ गर्म पिलाने से भी शीघ्र ही प्रसव हो जाता है।

(२३) छींक के लिए कोई दवा देने से भी बच्चा जल्दी पैदा हो सकता है।

(२४) यदि एक दम चमका देने वाला काम किया जावे, तो भी बालक शीघ्र ही पैदा हो सकता है; किन्तु गर्भिणी डर न जावे, यह बात ध्यान में रखने की है।

(२५) कुछ-कुछ गर्म गौ का दूध पिलाने से भी शीघ्र प्रसव होने में सहायता मिलती है।

साधारणतः जिस प्रकार प्रसव होता है, उसकी क्रिया यहाँ तक वर्णन की जा चुकी; किन्तु कई बार प्रसव-क्रियाएँ इस प्रकार की होती हैं, जहाँ प्रसूता तथा बालक दोनों की जान जाने का अन्देशा रहता है। गर्भ से पहले-पहल बच्चे का सिर बाहर आना अच्छा है। प्रतिशत ९५ बालक इसी प्रकार उत्पन्न होते हैं; अर्थात् गर्भ के बाहर पहले सिर ही आता है। कभी-कभी बालकों के नितम्ब पहले निकलते हैं, किसी के घुटने पहले निकल आते हैं, तो किसी के पाँव पहले बाहर आते हैं; और कभी-कभी हाथ पहले बाहर आ जाते हैं। ये सब भयङ्करता के चिह्न हैं। इस समय इस क्रिया में सुदक्ष दाई की जरूरत पड़ती है। यदि दक्ष दाई न मिल सके, तो डॉक्टर को तत्काल बुलवा लेना चाहिए। कभी-कभी बच्चा अधिक मोटा होने के कारण अथवा

मर जाने के कारण बाहर नहीं निकलता। बच्चे का गर्भ में मर जाना अत्यन्त ही भयङ्कर दशा है। भारतवर्ष में शिक्षित दाइयों की बड़ी कमी है; इसलिए ऐसे मौक़े पर तत्काल डॉक्टर को बुलाना चाहिए। गर्भ से बालक को काट कर निकालने तथा पेट चीर कर निकालने के सिवाय और कोई उपाय इस वक्त ठीक नहीं होता है।

कभी-कभी ऑंवल (और) भी पहले निकल आती है। यह बड़ी ही भयङ्कर बात है। ऑंवल कहाँ रहती है, यह हम पीछे अच्छी तरह बता आए हैं। यह गर्भाशय के ऊपर की ओर लगी रहती है और बच्चा भूमिष्ठ हो जाने के बाद निकलती है; किन्तु दुर्भाग्यवश वह कभी गर्भाशय के मुख के पास ही लग जाती है। जब ऑंवल गर्भाशय के मुख के पास होती है, तो उसका पहले निकलना स्वाभाविक है। जब रज पाँचवें अथवा छठे महीने प्रवाहित हो, तब समझ लेना चाहिए कि ऑंवल गर्भाशय के मुँह के पास ही है। कभी-कभी यह रज इतना अधिक प्रवाहित हो जाता है कि स्त्री की जीवन-लीला का अन्त भी हो जाता है। यदि ऑंवल गर्भाशय के मुख के पास हो, तो शीघ्र रुधिर अवश्य निकल जाना चाहिए। यदि न निकलेगा, तो प्रसव के वक्त इतना बहेगा कि प्रसूता की मृत्यु हो जावेगी। अधिक रुधिर-स्राव में यदि गर्भिणी बच जावे, तो गर्भ नहीं बच सकता; गर्भपात अवश्य हो जावेगा।

ऑंवल मुख पर है; यह जानने का यही उपाय है कि यदि

छठे महीने रुधिर प्रवाहित हो जावे; और इसी तरह बिना किसी नियत समय के बहने लगे, तो समझ लेना चाहिए कि आँवल गर्भाशय के मुख के पास है। जब रक्त बहने लगे, तब शुद्ध वस्त्र को योनि में इस प्रकार रख देना चाहिए कि वह गर्भाशय के मुँह तक पहुँच जावे। जब वह कपड़ा तर हो जावे, तब उसे निकाल कर उसकी जगह दूसरा रख दे। इस तरह कपड़ा बदलते रहना चाहिए; लेकिन इससे उत्तम उपाय तो यह है कि गर्भिणी को रक्त के प्रवाहित होने पर चलने-फिरने से रोक दे; और मुलायम बिछौने पर लेटा दे। जब तक प्रसव-काल न आवे, तब तक ऐसा ही करना चाहिए। आहार नर्म और शीघ्र पचने वाला देना चाहिए। दूध का उपयोग करने से जो निर्बलता रक्त-स्राव के कारण पैदा हो जाती है, वह कम हो जाती है।

जब रक्त प्रवाहित होता है, तब गर्भाशय का मुँह थोड़ा-थोड़ा खुल जाता है। इस वक्त अँगुली डाल कर आँवल का होना मालूम किया जा सकता है। इस प्रकार आँवल टटोलने वाली स्त्री को अँगुली के नाख़ून काट कर साफ़ रखना चाहिए और अँगुली डालने के पहिले साबुन से हाथ को अच्छी तरह धो डालना चाहिए। अँगुली भीतर डालने पर यदि मुलायम चमड़ा सा अँगुली को स्पर्श हो तो समझ लेना चाहिए कि आँवल मुँह पर है। जब निश्चय हो जावे, तो प्रसव के समय सावधान रहना चाहिए। प्रसव-वेदना उठने पर हाथ डाल कर आँवल को रोक कर चतुर दाई पहले बालक को उत्पन्न कर सकती है।

युग्म बालकों के पैदा होने के समय भी दाई को सावधानी से काम करना चाहिए। यह विषय इतना बड़ा है कि इस पर एक स्वतन्त्र पुस्तक लिखी जा सकती है, तथापि हमने मुख्य-मुख्य बातें बता दी हैं। अब आगे बच्चे के भूमिष्ठ होने के बाद क्या करना चाहिए, इस पर विचार करेंगे।

(४) नवजात शिशु

भूमिष्ठ होते ही बच्चा रोने लगता है। यह रोना उसकी जननी और पिता को आनन्ददायक होता है। जन्मते ही बच्चे का रोना आवश्यक है। यदि बालक पैदा होते ही न रोवे, तो समझ लेना चाहिए कि वह अस्वस्थ है। बालक यदि तत्काल न रोवे, तो शीघ्र ही उपचार करना चाहिए। बालक का इस प्रकार का रोना, उसके दुःख का सूचक नहीं है; बल्कि इससे यह सूचित होता है कि उसके फेफड़े हवा से भर गए हैं, और श्वासोच्छ्वास आरम्भ हो गया है। बच्चे के रोने की आवाज़ से उसके स्वास्थ्य का अनुमान भी लगाया जा सकता है। यदि बालक भूमिष्ठ होने पर न रोवे, तो ठण्डे पानी में अपने हाथों को डुबा कर उसकी छाती पर रगड़ना चाहिए। रगड़ने के समय ज़ोर नहीं लगाना चाहिए; बल्कि धीरे-धीरे हाथ फेरना चाहिए। अच्छी तरह श्वास प्रश्वास की क्रिया जारी करने के लिये इतना ही पर्याप्त है। बालक की पीठ पर थपकियाँ देने से और उसके नाक में फूँक देने से भी बच्चा रोने लगता है। यदि इतने पर भी बालक न रोवे, तो उसे

गोदी में चित लेटा ले; और बच्चे की दोनों भुजाएँ पकड़ के ही थोड़ा ऊपर उठावे तथा उसके मुँह में फूँक मारे; फूँक मारते ही उसकी दोनों भुजाओं को उसकी पसली से मिला कर ज़रा-ज़रा दबावे। ऐसा एक-दो बार करने से बच्चा रो उठेगा। कभी-कभी इस क्रिया से एकदम नहीं रोता: पहले धीरे-धीरे साँस लेने लगता है और बाद में रोता है।

यदि बालक के मुँह से चेप वग़ैरह निकालने के बाद भी वह न रोवे; और मुँह, आँख आदि नीले हो जावे, तो फ़ौरन ही बिना नाल को बाँधे, नाभि की ओर से नाल को काट दे। काटने के बाद जब नाल से लगभग आधे तोले के रक्त निकल जावे, तब उसे बाँध दे। ऐसा करने से मुख आँख आदि का नीलापन दूर हो जावेगा; और बालक रोने लग जावेगा। बहुत सी मूर्ख दाइयाँ जब बालक नहीं रोता, तो उसके सिर को पानी में डुबो देती हैं, यह बहुत बुरा है। सिर को पानी में न डुबो कर यदि मुँह पर ठण्डे पानी के छींटें दी जावे, तो अच्छी बात है। बहुतेरी दाइयाँ मुँह में मिर्चें चबा कर फूँकें मारती हैं। फूँकें मारना अच्छा है; लेकिन मिर्चें चबा कर फूँकें मारना बुरा है।

जब तक बालक न रोवे, तब तक नाल काटना हानिप्रद है। नाल पर आग जलाने से भी बालक रोने लगता है; परन्तु आग जलाने में सावधानी रखनी चाहिए। तेज़ आग की जरूरत नहीं है, केवल गर्मी पहुँचनी चाहिए। नाल काटते समय बालक की नाभि से डेढ़ या दो इञ्च के फ़ासले पर एक बन्ध नाल में लगाना

हुए; और दूसरा बन्ध उससे आगे इतने ही फ़ासले पर बाँधना चाहिए। दो बन्ध बाँधने के बाद तेज़ कैंची या छुरी आदि से नाल को बीच से काट देना चाहिए। नाल काटने के पहले बन्ध लगाना बहुत ही जरूरी है। यदि बन्ध लगाए बिना ही नाल काट दिया जाय, तो बच्चे के शरीर का रक्त निकल जावेगा; और वह मर जावेगा। उधर आँवल से भी रक्त निकल जाने के कारण वह हल्की हो जावेगी और गर्भाशय की दीवार से चिपक जाने के कारण प्रसूता के प्राणों पर आ बीतेगी।

इसलिए बिना दो बन्ध लगाए नाल को भूल कर भी न काटना चाहिए। हाँ, यदि बालक का मुँह, आँख वगैरह नीले हो जावें, तो बिना बन्ध लगाए ही हमारी पीछे बताई हुई विधि के अनुसार नाल काटा जा सकता है। बन्ध लगाने से कई फ़ायदे हैं—(१) बालक के शरीर का रक्त नहीं निकलने पाता; (२) आँवल भारी होने के कारण शीघ्र ही बाहर आ जाता है। (३) कभी-कभी पेट में दो बालक होते हैं, और उनका एक ही नाल होता है। यदि बिना बन्ध लगाए नाल काट दिया जावे तो दूसरे बालक की मृत्यु हो जाती है।

अंग्रेज़ी दाइयाँ बालक उत्पन्न होने पर पहले उसके स्वास्थ्य को देखती हैं। यदि निर्बल होता है, तो माता की तरफ़ से नाल को सूँत कर नाल के रक्त को बालक के शरीर में पहुँचा कर बन्ध लगाती हैं; और फिर काटती हैं! माता का थोड़ा सा रक्त भी बालक के लिए अत्यन्त बलदायक होता है। कई दाइयाँ ऐसा न

करके माता की ओर से नाल द्वारा निकलते हुए रुधिर की २-४ बूँदें बच्चे को पिला देती हैं। अङ्गरेजों के लिए यह उपाय भले ही ठीक हो; किन्तु हमारी समझ में ऐसा करना बुरा है।

नाल का वह हिस्सा, जो बालक की नाभि से लगा रहता है, एक ऐसे धागे से बाँध देना चाहिए, जो बालक के गले में पड़ा रहे। जब नाल सूख कर नाभि से अलग होगा, तब धागे में बँधे रहने के कारण वह खो नहीं सकता। इस नाल को सँभाल कर रखना चाहिए; क्योंकि यह बच्चे की दवा-दारू में काम आता है।

हमारे आर्षग्रन्थों में नालोच्छेदन का कार्य बालक के पिता का बताया गया है। नाल काटने के बाद सोने की शलाका से बालक को मुँह में शहद और घृत चटावे, इससे बालक का पेट शुद्ध हो जावेगा।

कुमारं जातं पुराऽन्यैरालम्भात् सर्पिर्मधुनि
हिरण्यनिकार्षं हिरण्ययेन प्राशयेत् ॥

अर्थात्—बालक के शरीर का जरायु अलग करके और मुँह, नाक, कान, आँख आदि का मल साफ़ करके, पिता की गोद में बालक को दे। बालक का नाड़ी छेदन करने के बाद पिता सोने की शलाका से उसे घृत और मधु चटावे।

कभी-कभी बच्चा उत्पन्न होने पर चुपचाप पड़ा रहता है, हाथ-पाँव कुछ भी नहीं हिलाता। ऐसी दशा में बच्चे को होशियारी

से उलटा अर्थात् सिर नीचे और पाँव ऊपर करना चाहिए। बाद में कुछ सैकिण्डों के अन्तर से छाती को दबा-दबा कर फेफड़ों में चैतन्यता उत्पन्न करनी चाहिए। इस समय बालक के मुँह में अँगुली डाल कर बलग़म वग़ैरह देख लेना चाहिए; क्योंकि उलटा करने से बच्चे के गले का बलग़म मुँह में आ जाता है; यदि मुँह में बलग़म हो, तो साफ़ करके बालक के मुँह के भीतर फूँक मारना चाहिए। फूँक मारने वाले व्यक्ति के मुँह से किसी तरह की दुर्गन्ध न आनी चाहिए। बदबूदार मुँह से यदि बच्चे के मुँह में फूँक दी जावेगी, तो वह फूँक उसके लिए विष का काम करेगी। इसके बाद बालक की दोनों आँखों को "बोरिक एसिड" के पानी से धो देना चाहिए।

नाल काटने के बाद बच्चे को करवट के बल लेटा देना चाहिए और उसे स्नान कराने का प्रबन्ध करना चाहिए। इस समय बालक के सारे शरीर को मधु से पोत दिया जावे, तो बड़ी ही अच्छी बात है। ऐसा कर देने से बालक रोगों से मुक्त रहेगा; और बड़ी उम्र पावेगा। कुछ मिनटों के बाद शहद को कोमल तथा स्वच्छ वस्त्र से पोंछ कर बालक को स्नान कराना चाहिए। नाभि से जुड़े हुए नाल के शेष अंश को पानी से उबाले हुए मलमल के टुकड़े से लपेट देना चाहिए। बालक को स्नान कराते समय नाल को मैले पानी से बहुत बचाना चाहिए। उसके भीग जाने से उसमें बदबू पैदा हो जावेगी, और सड़ जावेगा। यदि नाल को 'बोरिक एसिड' के पानी से धोकर साफ़ रक्खा जावे तथा हवा और पानी

से बचाया जावे, तो सात-आठ दिन में नाल स्वयं नाभि से अलग हो जाता है।

नाल काटते वक्त रुधिर को पीछे हटा कर १२ अनविधे मोती उसमें भर दे और ऊपर से बाँध कर नाल को काट दे। नित्य एक मोती बालक को खिलाया जावे, तो आमरण चेचक रोग नहीं होगा।

बालक को पैदा होने के बाद दस्त होता है। यदि दस्त न हो, तो ऐसा कोई उपाय करना चाहिए कि जिससे दस्त हो जावे। आठ-दस बूँद अरण्डी के तेल में थोड़ा सा शहद मिला कर चटा देने से दस्त हो जाता है। यदि अधिक दिनों तक दस्त न हो, तो बच्चा अस्वस्थ होकर मर जाता है। बालक का पेट साफ़ करने के लिए उसकी माता का दूध ही सबसे उत्तम इलाज है। यदि माता के स्तनों में दूध न पैदा हुआ हो, तो अरण्डी का तेल और मधु मिला कर चटाना लाभदायक है।

बालक का नाल काट कर उसको स्नान कराना चाहिए। बिना स्नान के उसके शरीर की चिकनाई नहीं जाती। बालक को गर्म पानी से निहलाना चाहिए। घास जला कर पानी को गर्म न करना चाहिए; क्योंकि इस पानी से यदि बालक का शरीर धोया जावेगा, तो उसे चर्म-रोग हो जावेगा। गूलर, पीपल, बड़ आदि वृक्षों की छाल को पानी में उबाल कर, यदि उस जल से बच्चे को स्नान कराया जावे, तो बड़ा ही लाभप्रद है। यदि उक्त वृक्षों की छाल समय पर न मिल सके, तो

तपाई हुई चाँदी या सोने को पानी में बुझा कर उससे स्नान कराना चाहिए। स्नान के समय मुँह में अँगुली डाल कर उसके मुँह की चिकनाई भी साफ़ कर देनी चाहिए। मुख की चिकनाई निकालने के लिए अगुली पर रूई अथवा मुलायम साफ़ कपड़ा लपेट कर बच्चे के तालू को होशियारी से साफ़ करना चाहिए। बालक को नित्य स्नान कराना चाहिए। गुनगुने पानी में ज़रा सा नमक मिला कर स्नान कराने से बच्चा स्वस्थ रहता है। बालक को स्नान कराने के बाद अच्छे साफ़ मुलायम वस्त्र से उसके शरीर को पोंछ कर, कपड़ा ओढ़ा कर सुला देना चाहिए। बालक को स्नान कराने के बाद उसके सिर पर तेल में भिगोया हुआ रूई का फाया रखना चाहिए। पिघले हुए घी में थोड़ा सा सेंधा नमक डाल कर बच्चे को पिला देना चाहिए। इससे पिलाने से बालक वमन करेगा। आयुर्वेद में लिखा है :—

गर्भाम्भःसैन्धववतामर्पिषावामयेत्ततः ।

मेधायुष्यां बलार्थं च प्राशयेत्‌ पयो शयेत् ॥

इस प्रकार वमन कराने से उदरस्थ सब विकार दूर हो जाते हैं और बहुत ही लाभ होता है। वच, ब्राह्मी, शङ्खाहुली और इलायची इन सबका कपड़छन चूर्ण आधी रत्ती लेकर उसमें थोड़ा सा घी तथा शहद मिला कर बालक को चटा देना चाहिए, अथवा शहद में सोना घिस कर चटाना चाहिए। यदि मिल सके, तो मोती भस्म आधा चावल भर और आँवले का चूर्ण आधा चावल भर इन

दोनों को घृत और शहद में मिला कर चटा देना चाहिए। पैदा होने के दिन से ३ दिन तक इनमें से कोई सा भी एक नुस्खा चटा देने से बालक बुद्धिमान्, आयुष्मान् और बलवान् होता है। ये नुस्खे अमूल्य हैं, उत्तम सन्तान की इच्छा वाले को चाहिए कि अवश्य सायं-प्रातः दोनों समय इनमें से कोई सा भी एक अवलेह बना कर नवजात शिशु को चटावे। बहुत से लोग अपने बच्चों को गुड़ और अजवायन का काढ़ा अथवा शक्कर घोल कर दिया करते हैं। यह ठीक नहीं है—आयुर्वेद, गुड़-शक्कर का काढ़ा पिलाने का अत्यन्त विरोधी है। सबसे सरल चटनी १॥ रत्ती शहद और एक रत्ती घृत है; यही बालक को चटाना चाहिए। शहद के अभाव में पुराना गुड़ काम में लाया जा सकता है। यह "जन्म-घुटी" है। बहुत से लोग जन्म-घुटी में बहुत सी अन्य वस्तुएँ डालते हैं। मूर्ख माँ-बाप और दाई घुटी की चीजों के गुणों तथा अवगुणों को न जान कर घुटी में डाल देती हैं, जिनसे बच्चों की मृत्यु हो जाती है। लेखक के एक स्थानीय मित्र का कहना है :—

"मैंने सुन रक्खा था कि जन्म-घुटी में भिलावाँ देने से बालक स्वस्थ और दीर्घायु होता है। मेरे घर में जब कन्या पैदा हुई, तो मैंने उसकी घुटी में एक कच्चा भिलावाँ डाल कर उस कन्या को पिला दिया। कुछ समय बाद वह कन्या मर गई। कुछ दिन बाद मुझे ज्ञात हुआ कि उस कन्या का भिलावे से शरीरान्त हुआ था।"

लिखने का तात्पर्य यह है कि मनमानी जन्म-घुटी देकर मूर्ख लोग सैकड़ों बच्चों के प्राण ले रहे हैं। अच्छे-अच्छे समझदारों के घरों में भी ग़लतियाँ हो जाया करती हैं। मेरे उक्त मित्र चतुर और समझदार हैं; तथापि वैद्यकशास्त्र की अनभिज्ञता से उक्त घटना हो गई। इसलिए इस विषय में लोगों को मनमानी न करके वैद्यक-ग्रन्थों की आज्ञानुसार कार्य करना चाहिए।

बालक की माता के स्तनों में ३-४ दिन तक दूध नहीं उतरता; अतएव आवश्यकता पड़े, तो नीचे लिखी हुई चीज़ें बालक को चटानी चाहिए। बालक को पहले दिन अनन्तमूल आधी रत्ती, शहद डेढ़ रत्ती और घी एक रत्ती मिला कर चटाना चाहिए। दूसरे दिन तथा तीसरे दिन लक्ष्मणा से सिद्ध किए हुए घृत को सेवन करावे।

जो बालक कमज़ोर पैदा हों अथवा अवधि से पहिले पैदा हों, उनके विषय में विशेष सावधानी की आवश्यकता है। ऐसे बच्चों को स्नान न कराना चाहिए। केवल गरम किया हुआ जैतून का तेल बालक के शरीर पर रूई के फाये से लगा कर किसी कोमल वस्त्र से पोंछ डालना चाहिए। यदि सर्दी का मौसिम हो, तो कम्बल ओढ़ाकर बच्चे के शरीर पर तेल लगाना चाहिए। इस प्रकार तेल लगा कर पोंछने से भी यदि बालक के शरीर का चिकना पदार्थ न छूटे, तो दुबारा तेल लगा कर पोंछने से छूट जायगा। ऐसे बच्चों को दिन-रात गर्म रखने की ज़रूरत है। गर्म रखने के लिए यथावश्यक कपड़ों को काम में लाना चाहिए। प्रसूता को चारपाई

के नीचे आग रख कर अथवा प्रसूति-गृह में आग सुलगा कर उस जगह की हवा खराब न करनी चाहिए। कमजोर तथा अवधि से पूर्व पैदा हुए बालक को अधिक हिलाना-डोलाना बहुत ही बुरा है।

नवजात शिशु अत्यन्त कोमल होता है। उस पर ऋतु का प्रभाव शीघ्र ही पड़ सकता है। इसलिए उसे सर्दी-गर्मी से बचाना चाहिए। गर्मी के मौसिम में उसे सूती कपड़े तथा सर्दी के मौसिम में ऊनी कपड़े पहनाने चाहिए। गर्भ से बाहर निकलते वक्त बच्चे की आँखों में कभी-कभी कीटाणु पहुँच जाते हैं। यदि इन कीटाणुओं को शीघ्र ही नष्ट न किया जावे, तो ये आँखों को खराब कर डालते हैं। अतएव बच्चे को स्नान कराने के बाद तत्काल ही उसकी आँखों में आर्गीरोल या १० प्रति सैकड़ा का प्रोटार्गोल सोल्यूशन डाल देना चाहिए। इस सोल्यूशन के डालने से सब प्रकार के नेत्र-विकार दूर हो जाते हैं।

बालक का नाल पक जाता है; इसलिए नाल काटने के बाद उसपर बोरिक एसिड डाल देना चाहिए। यदि बोरिक एसिड न मिले तो रुई के फाहे को गर्म पानी में भिगो कर उसपर बाँध दे। इससे नाल न तो दुखेगा और न पकेगा। यदि नाल में चोट लगने से वह दुखने लगे और जख्म हो जावे, तो उस पर कत्थे का कपड़छन चूर्ण अथवा बेसन डाल देना चाहिए। एक प्रकार की मकड़ी जो दीवारों पर सफ़ेद कागज सरीखा जाला बनाती है, उसके जाले को नाल पर चिपका देने से भी रुधिर का बहना बन्द हो जाता है। सात-आठ

होता है। पट्टा बाँधने का कारण यह है कि पेट शिथिल न होने पावे तथा प्रसव-वेदना के कारण शिथिल हुई नसें फिर से दृढ़ और चैतन्य हो जावें। पट्टा साफ, मुलायम और इसी काम के लिए खास होना चाहिए। गर्मी के मौसिम में पट्टा दिन में दो-तीन बार बदलना चाहिए, और अन्य ऋतुओं में दिन में एक बार अवश्य ही बदल देना चाहिए। भीगा हुआ पट्टा अत्यन्त लाभदायक होता है, यह बात सम्भवतः कुछ लोगों को अनुचित मालूम होगी; किन्तु वास्तव में जितना गीला पट्टा लाभदायक साबित हुआ है, उतना सूखा नहीं। इस शीतोपचार से भय मानने की कोई ज़रूरत नहीं है। इससे तो प्रसव-वेदना द्वारा और प्रसव के द्वारा नष्ट हुई शक्ति पुनः प्राप्त होती है।

आँवल को प्रसूतागार में गाड़ने की प्रथा भारत के अधिकांश भागों में है; लेकिन यह बहुत ही बुरी बात है। आँवल को प्रसूतागार से बहुत दूर फिकवा देना चाहिए अथवा कहीं दूरी पर गड़वा देना चाहिए। प्रसूतागार में आँवल का गाड़ना अत्यन्त हानिकारक है।

प्रसव के समय स्त्री की योनि में पवन लगने से वायु कुपित होकर गिरते हुए रुधिर को रोक देती है; और उसके द्वारा, सिर और वस्ति में दर्द पैदा हो जाता है। इस दर्द को मक्कलशूल कहते हैं। चतुर दाई को चाहिए कि बालक के बाहर निकलते ही प्रसूता की योनि को इस प्रकार दबा कर बन्द कर दे कि उसमें

कस्राव होने का भय है। पास्नी ... ति यदि असावधानी से
...न बाद बाहर निकलती है। प्रसूत
...ती है, उसका पुनर्जन्म सा ... मासे गर्म पानी अथवा घी
...कुड़ कर इतना छोटा नहीं
...है। गर्भाशय कहीं पन्न ... मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची,
...टा हो ... नागकेसर पैंताली ... धनियाँ प्रत्येक तीन-तीन माशा इन सबका
... करके पुराने ... में मिला कर खिलाना चाहिए।

आँवल गिर जाने के बाद प्रसूता को अच्छी तरह गर्म जल
... स्नान कराना चाहिए। शरीर के प्रत्येक अवयव को अच्छी
तरह साफ करके उसके शरीर को किसी सूखे, खुरदरे, स्वच्छ
कपड़े से पोंछ देना चाहिए। बाद में सूखे-धुले हुए कपड़े पहिना कर
चारपाई पर लेटा देना चाहिए; और उसके बालक को भी
उसके पास सुला देना चाहिए। बहुत से लोग प्रसूता के स्नान
के पानी को भी गड्ढा खोद कर प्रसूतागार में ही डाल देते
हैं। भूत-प्रेतादि के भय से उन्हें ऐसा करना पड़ता है। यह मूर्खता
है। यथासम्भव प्रसूतागार को गीला न करना चाहिए, और
यदि गीला हो जावे, तो तत्काल उसे सुखाने का प्रयत्न करना चाहिए।
प्रसूता के बिछौने फटे-पुराने, मैले-कुचैले और चिथड़े न होने
चाहिए। गुदगुदा गद्दा, तकिया और उन पर साफ धुली हुई सफ़ेद
चादर एवं ऋतु के अनुकूल ओढ़ने के लिए साफ वस्त्र होने
चाहिए। बहुत से लोग बालक के मल-मूत्र में भीग जाने के भय से
ऐसे गद्दे वग़ैरह प्रसूता के नीचे नहीं बिछाते। जिस जगह बालक
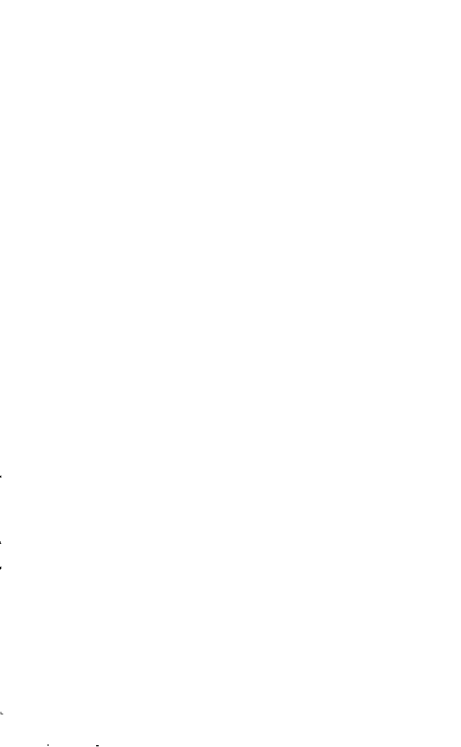
सौरि-ग्रह और हमारी दाइयाँ

रही है। प्रतिशत ४०-४५ बालक अपने जीवन के पहले वर्ष में ही अपनी जीवन-यात्रा पूर्ण कर जाते हैं। भारत में बालकों की मृत्यु-संख्या घटाने के लिए, "विक्टोरिया मेमोरियल स्कॉलर्शिप-फ़ण्ड", "लेडी हार्डिञ्ज मेटर्निटी", "चाइल्ड वेलफेअर एसोसियेशन" और "हेल्थ विज़िटर्स ट्रेनिङ्ग एसोसियेशन" आदि संस्थाएँ तथा बड़े-बड़े नगरों की म्यूनिसिपैल्टीज़ कार्य कर रही हैं; परन्तु मूर्ख खोपड़ियों को हज़ार समझाने पर भी कुछ फल नहीं होता।

स्नान कराने के पहिले प्रसूता के शरीर पर तेल लगाना यद्यपि उचित है; तथापि १०-१२ दिन तक तेल-मर्दन करना बुरा है। १०-१२ दिन बाद जब प्रसूता चलने-फिरने लगे, तब तेल लगा कर स्नान कराना मुफ़ीद है। तेल लगा कर झटपट स्नान करा देना चाहिए। घण्टे भर तेल की मालिश करना और फिर आध घण्टे तक गर्म जल से स्नान कराना प्रसूता के लिए विष के समान है। स्नान-क्रिया यथासम्भव शीघ्र ही समाप्त करनी चाहिए। बहुतेरे प्रसूता के शरीर पर तेल की मालिश करने के बाद हल्दी लगा देते हैं, यह उबटन १०-१२ दिन तक लगाया जाता है। यद्यपि इस प्रकार हल्दी लगाने से प्रसूता स्त्री का रङ्ग निखर जाता है और दुलहिन-सी मालूम होने लगती है; तथापि स्वास्थ्य के लिए यह अत्यन्त हानिकर रिवाज है। उबटन लगाने से प्रसूतागार की हवा बिगड़ जाती है; और मारे दुर्गन्ध के उसमें खड़ा तक भी नहीं रहा जाता। नाक और आँखें ऐसा करने के लिए इन्कार करती हैं; तथापि बाप-दादों की रिवाज नहीं छूटती !!

प्रसूता स्त्री की चारपाई के नीचे आग रखने का आम-रिवाज है। लोग तो लकीर के फ़कीर हैं, उन्हें "आग रखनी चाहिए" यह नियम मालूम है; फिर चाहे गर्मी हो या बरसात, चारपाई के नीचे धधकती हुई अँगीठी ज़रूर रख दी जाती है। देखा गया है कि कभी-कभी इस आग से चारपाई और बिछौने तक जल जाते हैं; अर्थात् तपन के मारे काले से अधजले हो जाते हैं। जहाँ अधिक सेंक की ज़रूरत नहीं होती, वहाँ आवश्यकता से अधिक ताप पहुँचा कर प्रसूता के शरीर को प्रायः जला डालते हैं। इस अग्नि से प्रसूता की अपेक्षा उस छोटे से बच्चे को बहुत ही कष्ट होता है, जो अत्यन्त कोमल है। अधिक क्या कहें, इस आग के कारण कई बच्चों के शरीर पर बड़े-बड़े फफोले पड़ जाते हैं, और कई बच्चे तो मर भी जाते हैं! कैसा घोर अज्ञान है?

बच्चा जनने के बाद, प्रसूता अत्यन्त निर्बल हो जाती है। उसके शरीर के रक्त में रोगों के कीटाणुओं का सामना करने की शक्ति नहीं रहती। वह सहज ही में रोगाक्रान्त हो जाती है; अतएव प्रसूता के स्वास्थ्य का बहुत ध्यान रखना चाहिए। प्रसूता को गम्भीर निद्रा की आवश्यकता होती है, इसलिए ऐसा उपाय करना चाहिए कि वह गहरी नींद सो सके। प्रसूता को चिन्ता और भय से बचाना चाहिए। बिछौनों में पड़े रहने के कारण प्रसूता को कब्ज़ की शिकायत हो जाती है। कब्ज़ होने पर एनिमा द्वारा आँतों को साफ़ कराना चाहिए। रात्रि के समय सोने के पूर्व और प्रातः निद्रा भङ्ग होने पर थोड़ा-थोड़ा गुनगुना पानी पिलाने से भी कब्ज़ की

शिकायत मिट जाती है। अण्डी का तेल (Castor oil) देने से भी क़ब्ज़ की शिकायत दूर हो जाती है। कहीं-कहीं बच्चा पैदा होने के बाद प्रसूता के शरीर में ताक़त लाने के लिए और वात-विकार से बचाने के लिए बाराण्डी (शराब) दी जाती है। प्रसूता को शराब पिलाना उसे अपने हाथों ज़हर का प्याला पिलाने के समान है। हमारे फ़ैशनेबुल बाबू लोग प्रसूता को चाय पिलाते हैं। चाय भी शराब की तरह प्रसूता के लिए घातक पदार्थ है।

प्रसूता के खान-पान के विषय में विशेष सावधानी रखने की आवश्यकता है। प्रसव के दो-तीन घण्टे बाद प्रसूता को खाने-पीने की वस्तु देनी चाहिए। प्रसूता को दुग्ध पिलाना लोग बुरा समझते हैं; परन्तु दूध प्रसूता के लिए सर्वोत्तम ख़ुराक है। पहले तीन दिनों तक पानी मिला कर दूध अथवा साग़ूदाने को दूध में पका कर खिलाना चाहिए। प्रसव के बाद प्रसूता को "हरीरा" दिए जाने का आम रिवाज है। यह एक प्रकार का पेय होता है; लेकिन घी, बादाम, मेवा, गुड़, अजवायन होने से प्रसूता को हानिप्रद होता है। घी, मेवा प्रभृति वस्तुएँ गुरुपाक हैं, जो प्रसूता के लिए वर्ज्य हैं। हलुआ, पूरी, मिठाई वग़ैरह प्रसूता की ख़ुराक नहीं हैं। जो स्त्रियाँ बलवान् होती हैं, वे ही सम्भवतः ऐसी ख़ुराक पचा सकती हैं, तो भी वे बीमार हो जाती हैं। निर्बल प्रसूताओं के लिए गुरुपाक ख़ुराक विष का काम करती है। एकदम पौष्टिक पदार्थ देने से शीघ्र ही शक्ति आ जावेगी, ऐसा समझने वाले मूर्ख हैं। शक्ति पैदा करने के लिए पहले प्रसूता की पाचन-शक्ति का ध्यान रखना

चाहिए। ज्यों-ज्यों उसकी पाचन-शक्ति बलवती होती जावे, त्यों-त्यों पौष्टिक खुराक की मात्रा बढ़ाते जाना चाहिए। प्रारम्भ में अत्यन्त लघु आहार देना चाहिए। दूध और साबूदाने की खीर अथवा दूध-भात पहले दिनों में बड़ी ही अच्छी खुराक है। जो लोग मांसाहारी हैं, उन्हें भात और मछली का शोरबा देना चाहिए। पहले चार दिन तक प्रसूता को खाने के लिए अन्न न देना चाहिए। खिचड़ी, दलिया, सूजी, गुड़ की पात, मूँग की दाल और रोटी वग़ैरह हलका भोजन दिया जा सकता है। प्रसव के बाद खान-पान की बेपरवाही के कारण, मल-दोष होकर प्रसूता बीमार हो जाती है और अनेक स्त्रियाँ तो प्रसूति-गृह में ही अपना शरीर त्याग देती हैं।

बहुत सी जगह बालक पैदा होने के बाद कई दिनों तक प्रसूता को पीने के लिए पानी नहीं दिया जाता। यह भी हानिकारक प्रथा है। प्यास लगना ही पानी की इच्छा सूचित करता है। यदि इस कुदरती माँग को पूरी नहीं किया जावेगा, तो सिवा हानि के और क्या हो सकता? दूध पिला कर भी प्यास निवारण की जा सकती है; किन्तु इतने पर भी यदि प्रसूता पानी के लिए तड़पे तो उसे थोड़ा-थोड़ा करके पानी पिलाना कोई बुरी बात नहीं है। बालक पैदा होने के चौबीस घण्टे बाद तक पानी न दिया जावे, तो अच्छा है। यदि इसके पहले प्यास लगे, तो दूध में मिलाई जा सकती है। इतने पर भी यदि प्रसूता न माने, तो उबाल कर ठंडा

किया हुआ पानी थोड़ा-थोड़ा दे देना चाहिए। गर्मियों के मौसिम में अर्क़ गावज़बाँ, अर्क़ सौंफ़, या अर्क़ दशमूल पानी की जगह पिलाया जावे, तो बहुत ही अच्छी बात है। जाड़े के मौसिम में गर्म पानी पीने के लिए दिया जाना चाहिए। बहुत से लोग प्रसूता को "चरुए" का पानी पिलाते हैं। इस पानी में बहुत सी दवाएँ डाली जाती हैं। भारतवर्ष के ठण्डे प्रान्तों में प्रायः "चरुए" का पानी ही पीने को दिया जाता है।

"चरुए" का पानी बनाने के लिए निम्न-लिखित औषधियाँ प्रसव-काल के पहले लाकर रख छोड़नी चाहिए।

अजवायन दो तोला, सोंठ एक तोला, लौंग तीन माशा, पीपल तीन माशा, पीपलामूल तीन माशा, जावित्री डेढ़ माशा, जायफल डेढ़ माशा, कमरकस छः माशा, लोध छः माशा, सुपारी के फूल छः माशा, हल्दी छः माशा, आँवाँ हल्दी छः माशा, काली मिर्च तीन माशा, असगन्ध छः माशा, मेदा लकड़ी छः माशा, कत्था तीन माशा, माजूफल तीन माशा, केशर डेढ़ माशा, चिकनी सुपारी नग एक, सनाय डेढ़ माशा, मँजीठ तीन माशा, और झाड़ी बेर की जड़ एक तोला।

इन सबको जौकुट करके एक पोटली में बाँध दे। मिट्टी की एक बड़ी हाँडी, जिसमें पन्द्रह-बीस सेर पानी समा सके, आग पर चढ़ा दे और उसमें उपरोक्त दवाइयों की पोटली डाल दे। उबल जाने पर यह पानी प्रसूता को पीने के लिए दिया जाना चाहिए। जब पानी न रहे, तब और नया पानी हाँडी में डाल कर उबाल ले।

बहुत से लोग इतनी दवा की पोटली नहीं डालते; और केवल आध पाव अजवायन की पोटली डाल कर ही "पकवा" का पानी बना लेते हैं। जलवायु के अनुसार वस्तु की दवाइयों में घटा-बढ़ी भी की जा सकती है। उपरोक्त नुस्खा भारत देश के जलवायु के अनुकूल है।

कई लोग दस-दस दिन तक प्रसूता को भोजन नहीं देते। यह निराहार उपवास प्रसूता के लिए अत्यन्त ही घातक है। दो-तीन दिन तक पहले-पहल दूध और आवश्यकता हो, तो साबूदाना भी दें। बाद में हलका आहार—जैसे खिचड़ी, दलिया वगैरह दें। घृत का सेवन भी करावें; लेकिन इसकी मात्रा धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए। सात दिन के बाद घृत उचित परिमाण में दिया जा सकता है। डेढ़ मास तक खान-पान की विशेष सावधानी रखनी चाहिए। ग्यारहवें दिन के बाद साधारण खुराक प्रसूता को दी जा सकती है।

प्रसव से दस दिन तक प्रसूता के खान-पान का ध्यान न रखने से उसकी नाज़ुक दशा के कारण पेट में पाचन न होकर अनेक रोग हो जाते हैं। आहार की अव्यवस्था के कारण ही प्रसूता बीमार हो जाती है, और कई तो मर भी जाती हैं। गर्म पदार्थ, कफ-नाशक पदार्थ, बैंगन, अचार, चने का पानी, पुरानी शाली के चावल, दीपन, पाचन औषधि, गुड़ के बने पदार्थ और गर्म प्रसूता के लिए लाभदायक हैं।

दाइयों की असावधानी के कारण प्रसूता की जननेन्द्रिय में

साधारण रक्त तो बहता ही रहता है; किन्तु यदि रक्त-स्राव अधिक हो जावे, तो निम्न-लिखित दवा बना कर खिलानी चाहिए :—

दोनों सुपारी, भाँविरी गोंद, गोंद कतीरा, गोंद बबूल, पठानी लोध, कमरकस और गुलधावा हरेक आठ-आठ तोला; माजूफल, समुद्रसोख, कायफल, सालब मिश्री, हंसराज, शकाकुल और सफ़ेद मूसली हरेक चार-चार तोला। वंसलोचन एक तोला और सफ़ेद इलायची एक तोला, बादाम एक पाव, गरी, छुहारा, दाख, हरेक आध-आध पाव, घृत डेढ़ सेर, आटा डेढ़ सेर और देशी शक्कर का बूरा दो सेर। गोंद को घी में तल कर फुला लेना चाहिए। इन सब की पँजीरी बना कर, उसमें दोनों मूसली एक सेर, दक्खिनी सुपारी, खिरयाली के बीज, गाजर के बीज, बीजबन्द, मँजीठ, कौंच के बीज, धव के फूल, पलाश का गोंद, इन्द्रजौ, तेजबल, पीपलामूल, माईं, समुद्रसोख, वायविडङ्ग, देशी अजवायन, तालमखाना, सोंठ, गोखरू, माजू, दालचीनी, मोचरस, कमरकस, बबूल की फली, बड़ी इलायची, असगन्ध सब एक-एक तोला और सङ्गजराहत तीन तोला इन सबको कपड़छन करके डाल दे। यह पँजीरी बड़ी ही लाभदायक है। रक्त-स्राव को तत्काल बन्द करती है। पुरुषों के लिए भी लाभदायक है।

प्रसव के बाद तीसरे-चौथे दिन प्रसूता के स्तनों में दूध जमा होने के कारण स्तन बड़े ही कठोर हो जाते हैं और उनमें दर्द होने लगता है। जब बालक दूध पीने लगता है, तब आराम हो जाता है। स्तन में दूध अधिक आ जाने के कारण प्रसूता को तीसरे-

चौथे दिन बुखार की हरारत हो जाती है; और सिर तथा शरीर में पीड़ा होने लगती है। इसे दुग्ध-ज्वर कहते हैं। स्तनों में दूध अधिक इकट्ठा हो जाने के कारण ऐसा हो जाता है। दुग्ध-ज्वर में प्रसूता को खुराक कम देनी चाहिए; इससे बाद आराम हो जावेगी और दूध कम बनेगा। अन्य उपाय द्वारा प्रसूता के स्तनों का दूध निकाल देना चाहिए। प्रसव के बाद प्रसूता स्त्रियों को बारम्बार ज्वर और दस्त की बीमारियाँ हो जाती हैं। इसका कारण खराब और गुरुपाक आहार के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हो सकता। इस दुग्ध-ज्वर के विषय में अधिक चिन्ता करने की कुछ आवश्यकता नहीं है। इसकी दवा एकमात्र दूध को स्तनों से निकाल देना ही है।

हमारे हिन्दू-घरों में एक बड़ी भारी कुप्रथा यह है कि प्रसूता को अस्पृश्य मानते हैं। घर के लोग उसे छूते तक नहीं। उसके हाथों से बड़ा भारी पातक होता है, यह समझ कर उसकी देख-भाल के लिए कोई नीच वर्ण की स्त्री मुकर्रर की जाती है। नीच-वर्णी अछूतिनी प्रसूता की परिचर्या करे, इससे बढ़ कर मूर्खता का और दूसरा क्या काम हो सकता है? प्रसूता की देख-रेख तथा नवजात बालक की सुश्रूषा का कार्य नाइन, दाई आदि को दिया जाता है। इनका यही रोज़गार होने के कारण प्रसूता तथा बालक के साथ इनकी कुछ भी सहानुभूति नहीं होती। ये तो अपना, मार्य-प्रायः मजदूर की तरह अपना कार्य करके चली जाती हैं। रात-दिन प्रसूता अकेली पड़ी हुई यम-यातना की तरह कष्ट भुग-

काल को पूर्ण करती है। यदि प्रसूता को किसी वस्तु की आवश्यकता होती है, तो वह उसे दूर से ही फेंक कर दी जाती है, मानों किसी चमार या भङ्गी को दी गई हो !! घर का अगर कोई छोटा बाल-बच्चा भी भूल कर प्रसूतागार में घुस जावे, तो उसे तत्काल स्नान कराया जाता है !!! कैसी मूर्खता है ? धर्म की कैसी मिट्टी पलीद है ? जिस प्रसूता तथा नवजात शिशु की देख-भाल एक-एक क्षण में की जानी चाहिए, उसी प्रसूतागार में घर के लोगों के घुसने से छूत लग जाती है, यह कितनी अज्ञानता है ? हम इन धर्म के पाखण्डियों से अत्यन्त नम्रतापूर्वक यह पूछना चाहते हैं कि प्रसूता या नवजात शिशु के स्पर्श से आप में क्या चिपक जाता है ? कौन सी भ्रष्टता अथवा कौन सा पाप आपके सिर पर चढ़ जाता है, कृपया बतलाइए ! प्रसव-समय में निकली हुई तमाम ग़लीज चीजें साफ़ कर दी जाती हैं, फिर क्या बात है कि प्रसूता को अछूत समझ कर उसे दुरदुराया जाता है ? मूर्ख लोग इस छुआछूत के भय से प्रसूता को अच्छे ओढ़ने-बिछौने तथा पहनने के वस्त्र तक नहीं देते । उसे फटे-पुराने, मैले-कुचैले कपड़ों में दस-पन्द्रह दिन तक रखते हैं। ऐसी प्रसूताओं को बीमार होना ही चाहिए। जब वे बीमार हो जाती हैं; अथवा मर जाती हैं, तब अपना माथा पकड़ कर बैठ जाते हैं।

यदि किसी के घर में "मूल" नामक नक्षत्र में बच्चा पैदा हो गया, तो बस—घर भर में रोना सा पड़ जाता है। घर के लोग बालक का तथा प्रसूता का मुँह तक नहीं देखते !! सत्यानाश हो इस प्रथा

का ! धर्म की ओट में कितना अत्याचार है। कहते हैं, मूल नक्षत्र में पैदा हुई सन्तान का मुख सत्ताईस दिन तक पिता को हर्गिज़ न देखना चाहिए ! ऐसी प्रथाएँ देश के लिए बड़ी ही घातक हैं। बहुतेरे मूर्ख मूल नक्षत्र में पैदा हुए बच्चे को त्याग देते हैं। इन नियम को बनाने वाले धर्मान्ध मनुष्य की आत्मा को ईश्वर जन्मान्तर तक नरक की कठोर यातना प्रदान करे, यही प्रार्थना है!

वास्तव में देखा जाये, तो प्रसूता के लिए पारसी लोग आदर्श होते हैं; परन्तु बात उलटी हो गई—हम लोग ही प्रसूता को अछूत मान बैठे। प्रसूतागार को "नरक" कहते हैं। ये सब बातें अज्ञानता की द्योतक हैं। प्रसूतागार एक पवित्र स्थान है, जिसमें अपवित्र व्यक्तियों का घुसना वर्जित है। उस घर में एक पवित्र आत्मा ने संसार में पदार्पण किया है। हाँ, यदि उसे गन्दी वस्तुओं से भर रक्खा हो, तो वह वास्तव में नरक है। ऐसे प्रसूतागार से हमारा मतलब नहीं है। हमारा तो हमारे कथनानुसार प्रसूति-गृह से प्रयोजन है। यदि गन्दे लोग प्रसूतागार में जायेंगे, तो नाजुक प्रसूता और बालक दोनों ही रोगी हो जायेंगे। इसलिए हम लोग पवित्र होकर ही प्रसूति-गृह में प्रवेश करें। प्रसूति-गृह छुआछूत मानने का घर नहीं है। उसमें घुस कर अपने को अपवित्र समझना अथवा नवीन स्नान करना अत्यन्त मूर्खता है। अतएव सन्तान की इच्छा करने वालों को इस कुप्रथा के मूल में वज्र मार कर अच्छी तरह प्रसूता की देख-रेख करनी चाहिए।

दस दिन बराबर उस गर्म प्रसूता-गृह की शुद्धि-रक्षा में

कराया जावे, तभी तक लोग उसकी प्रसूता संज्ञा मानते हैं; किन्तु ऐसा मानने वाले लोग बड़ी ही भूल करते हैं। आयुर्वेद का कहना है :—

प्रसूतासार्ध मासान्ते दृष्टेवापुनरार्त्तवे।

अर्थात्—स्त्री की प्रसव-दिन से पैंतालिस दिन पर्यन्त अथवा पुनः रजस्वला होने तक प्रसूता संज्ञा है।

कम से कम डेढ़ महीने तक प्रसूता की देख-भाल बड़ी सावधानी से होनी चाहिए। पहले दस-पन्द्रह दिन तक जितनी सावधानी की आवश्यकता है, उतनी फिर नहीं होती। प्रसव से चार महीने तक ज्वर आदि रोग सूतिका-रोग माने गए हैं। सब बातों से बेफ़िक्र रहने के लिए पवित्रता, सूर्य-प्रकाश और शुद्ध वायु की प्रसूतागार में नितान्त आवश्यकता है। यदि इन बातों पर विशेष ध्यान रक्खा गया, तो अधिक चिन्ता की जरूरत नहीं रहती।

प्रसूति-गृह की हवा साफ़ रखने के लिए कोई सा सुगन्धित द्रव्य वहाँ अवश्य जलाना चाहिए। अजवायन की धूनी का आम रिवाज है, प्रसूता को नग्न करके ऊपर से एक वस्त्र ओढ़ा दिया जाता है और फिर चारपाई के नीचे से अजवायन की धूनी दी जाती है। यह धूनी ख़ास करके योनि के लिए है। यदि अजवायन की धूनी न दी जावे, तो वर्षा-ऋतु में खुजली हो जाती है। खुजली शरीर में नहीं होती, बल्कि योनि में होती है; इसलिए प्रसूता के योनि-मार्ग में कम से कम नित्य एक बार अवश्य ही अजवायन की धूनी देनी चाहिए। प्रसूतागार की वायु शुद्ध रखने के लिए नीचे लिखी

का ! धर्म की ओट में कितना अत्याचार है। कहते हैं, मूल नक्षत्र में पैदा हुई सन्तान का मुख सत्ताईस दिन तक पिता को हर्गिज न देखना चाहिए ! ऐसी प्रथाएँ देश के लिए बड़ी ही घातक हैं। बहुतेरे मूर्ख मूल नक्षत्र में पैदा हुए बच्चे को त्याग देते हैं। इस नियम को बनाने वाले धर्मान्ध मनुष्य की आत्मा को ईश्वर जन्मान्तर तक नरक की कठोर यातना प्रदान करे, यही प्रार्थना है!

वास्तव में देखा जावे, तो प्रसूता के लिए बाहरी लोग अपवित्र होते हैं; परन्तु बात उलटी हो गई—हम लोग ही प्रसूता को अपवित्र मान बैठे। प्रसूतागार को "नरक" कहते हैं। ये सब बातें अज्ञानता की द्योतक हैं। प्रसूतागार एक पवित्र स्थान है, जिसमें अपवित्र व्यक्तियों का घुसना वर्जित है। उस घर में एक पवित्र आत्मा ने संसार में पदार्पण किया है। हाँ, यदि उसे गन्दी वस्तुओं से भर रक्खा हो, तो वह वास्तव में नरक है। ऐसे प्रसूतागार से हमारा मतलब नहीं है। हमारा तो हमारे कथनानुसार प्रसूति-गृह से प्रयोजन है। यदि गन्दे लोग प्रसूतागार में जावेंगे, तो नाज़ुक प्रकृति प्रसूता और बालक दोनों ही रोगी हो जावेंगे। इसलिए हम लोग पवित्र होकर ही प्रसूति-गृह में प्रवेश करें। प्रसूति-गृह छुआछूत लगने का घर नहीं है। उसमें घुस कर अपने को अपवित्र समझना अथवा सचैल स्नान करना अत्यन्त मूर्खता है। अच्छी सन्तान की इच्छा करने वालों को इस छुआछूत के भूत से बच कर अच्छी तरह प्रसूता की देख-रेख करनी चाहिए।

दस दिन अथवा जब तक प्रसूता स्त्री की शुद्धि-स्नान न

कराया जावे, तभी तक लोग उसकी प्रसूता संज्ञा मानते हैं; किन्तु ऐसा मानने वाले लोग बड़ी ही भूल करते हैं। आयुर्वेद का कहना है :—

प्रसूतासार्धं मासान्ते दृष्टेवापुनरार्त्तवे।

अर्थात्—स्त्री की प्रसव-दिन से पैंतालिस दिन पर्यन्त अथवा पुनः रजस्वला होने तक प्रसूता संज्ञा है।

कम से कम डेढ़ महीने तक प्रसूता की देख-भाल बड़ी सावधानी से होनी चाहिए। पहले दस-पन्द्रह दिन तक जितनी सावधानी की आवश्यकता है, उतनी फिर नहीं होती। प्रसव से चार महीने तक ज्वर आदि रोग सूतिका-रोग माने गए हैं। सब बातों से बेफ़िक्र रहने के लिए पवित्रता, सूर्य-प्रकाश और शुद्ध वायु की प्रसूतागार में नितान्त आवश्यकता है। यदि इन बातों पर विशेष ध्यान रक्खा गया, तो अधिक चिन्ता की जरूरत नहीं रहती।

प्रसूति-गृह की हवा साफ़ रखने के लिए कोई सा सुगन्धित द्रव्य वहाँ अवश्य जलाना चाहिए। अजवायन की धूनी का आम रिवाज है, प्रसूता को नग्न करके ऊपर से एक वस्त्र ओढ़ा दिया जाता है और फिर चारपाई के नीचे से अजवायन की धूनी दी जाती है। यह धूनी ख़ास करके योनि के लिए है। यदि अजवायन की धूनी न दी जावे, तो वर्षा-ऋतु में खुजली हो जाती है। खुजली शरीर में नहीं होती, बल्कि योनि में होती है; इसलिए प्रसूता के योनि-मार्ग में कम से कम नित्य एक बार अवश्य ही अजवायन की धूनी देनी चाहिए। प्रसूतागार की वायु शुद्ध रखने के लिए नीचे लिखी

सुगन्धित धूनी बना कर रख छोड़नी चाहिए। सायं-प्रातः दोनों समय प्रसूति-गृह में इस धूनी को जलाने से वायु शुद्ध होकर, सारा घर खुशबू से महक जाता है।

धूनी—कपूर कचरी एक पाव, चन्दन चूरा एक पाव, नागरमोथा आध पाव, छरीला आध पाव, अगर तगर ढाई तोला, लाल चन्दन ढाई तोला, गिलोय ढाई तोला, गुग्गल पाँच तोला, मजीठ छः माशा, देवदारु एक तोला, मखाना दो तोला, दालचीनी एक तोला, लौंग एक तोला और बड़ी इलायची एक तोला; इन सब वस्तुओं को जौ-कुट करके इनमें पाव भर गो-घृत, आध पाव देशी खाँड और आध पाव शहद मिला कर, एक डिब्बे में भर कर रख देना चाहिए। बाजारू सुगन्धित धूप ठीक नहीं होती। वे लोग पैसा कमाने के लिए सड़ा खोपरा, सड़ी सुपारी और सड़ी-गली वस्तुएँ डाल कर सुगन्धित धूप बनाते हैं। मिट्टी, कोयले, अपवित्र शक्कर, सड़ा हुआ शहद, मक्खी, मच्छर, मकोड़े, तितली, चींटी आदि सब उसमें कूट डालते हैं। इसलिए बाजारू सुगन्धित धूप न लेकर घर में ही तैयार कर लेनी चाहिए।

अब हम प्रसूता के रोगों के लिए कुछ नुस्खे लिखने के बाद इस प्रकरण को समाप्त करेंगे। सूतिका रोग बहुत ही बुरा होता है, यथासम्भव शीघ्र ही चिकित्सा करनी चाहिए। अनुचित आहार-विहार, क्रोध, विषम तथा गुरुपाक भोजन; और अजीर्ण में भोजन करने से प्रसूत-रोग पैदा होता है। अङ्गों का टूटना, ज्वर, खाँसी, प्यास, देह का भारीपन, सूजन, शूल, अतिसार, कम्प, चक्कर

आदि सूतिका रोग के लक्षण हैं। चार मास तक प्रसूत-रोग होता है; अतएव प्रसूता के खान-पान आदि में विशेष सावधानी की आवश्यकता है।

(१) दशमूल के क्वाथ में घृत डाल कर पिलाने से सब प्रकार के प्रसूत-रोग नाश हो जाते हैं।

(२) देवदारु, बच, कूट, पीपल, सोंठ, चिरायता, कायफल, मोथा, कुटकी, हरड़, धनियाँ, गजपीपल, कटेरी, गोखरू, धमासा, बड़ी कटेरी, अतीस, गिलोय, काकड़ासींगी, कलौंजी और जीरा इन सब को दो-दो माशा लेकर आध सेर पानी में औटावे। जब एक छटाँक रह जावे, तब इसमें दो रत्ती भुनी हुई हींग और तीन रत्ती सेंधा नमक डाल कर प्रसूता स्त्री को पिला दे। इस क्वाथ से खाँसी, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, कम्प, सिर-दर्द, बकवाद, तृषा, दाह, तन्द्रा, अतिसार, वमन आदि प्रसूत-रोग नष्ट हो जाते हैं। वात-पित्त और कफ के विकारों को भी यह क्वाथ अतीव लाभदायक है। प्रसूत-रोग के लिए यह रामबाण दवा है।

(३) गिलोय, सोंठ, पियाबाँसा, प्रसारणी, शालपर्णी, पृष्ट-पर्णी, बड़ी कटेरी, छोटी कटेरी और गोखरू प्रत्येक डेढ़-डेढ़ माशा लेकर बीस तोले पानी में उबाले। जब पाँच तोला पानी रह जावे, तब उतार कर छान ले। इसमें पाँच माशा शहद डाल कर पिलाने से सब प्रकार के प्रसूत रोग नष्ट हो जाते हैं।

(४) जीरा, कलौंजी, सौंफ, अजवायन, अजमोद, धनियाँ, मेथी, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, झड़बेर, बेर का चूर्ण,

सुगन्धित धूनी बना कर रख छोड़नी चाहिए। सायं-प्रातः दोनों समय प्रसूति-गृह में इस धूनी को जलाने से वायु शुद्ध होकर, सारा घर खुशबू से मँहक जाता है।

धूनी—कपूर कचरी एक पाव, चन्दन चूरा एक पाव, नागरमोथा आध पाव, छरीला आध पाव, अगर तगर ढाई तोला, लाल चन्दन ढाई तोला, गिलोय ढाई तोला, गुग्गल पाँच तोला, मजीठ छ मारा, देवदारु एक तोला, मखाना दो तोला, दालचीनी एक तोला, लौंग एक तोला और बड़ी इलायची एक तोला; इन सब वस्तुओं को जौ कुट करके इनमें पाव भर गो-घृत, आध पाव देशी खाँड और आध पाव शहद मिला कर एक डिब्बे में भर कर रख देना चाहिए। बाजारू सुगन्धित धूप ठीक नहीं होती। वे लोग पैसा कमाने के लिए सड़ा खोपरा, सड़ी सुपारी और सड़ी-गली वस्तुएँ डाल कर सुगन्धित धूप बनाते हैं। मिट्टी, कोयले, अपवित्र शक्कर, सड़ा हुआ शहद, मक्खी, बर्र, मकोड़, तितली, चींटी आदि सब उसमें कूद डालते हैं। इसलिए बाजारू सुगन्धित धूप न लेकर उसे घर में ही तैयार कर लेनी चाहिए।

अब हम प्रसूता के रोगों के लिए कुछ नुस्खे लिखने के बाद इस प्रकरण को समाप्त करेंगे। सूतिका रोग बहुत ही बुरा होता है, यथासम्भव शीघ्र ही चिकित्सा करनी चाहिए। अनुचित आहार-विहार, क्रोध, विषम तथा गुरुपाक भोजन; और अजीर्ण में भोजन करने से प्रसूत-रोग पैदा होता है। अङ्गों का टूटना, ज्वर, खाँसी, प्यास, देह का भारीपन, सूजन, शूल, अतिसार, कम्प, बकवाद

आदि सूतिका रोग के लक्षण हैं। चार मास तक प्रसूत-रोग होता है; अतएव प्रसूता के खान-पान आदि में विशेष सावधानी की आवश्यकता है।

(१) दशमूल के काथ में घृत डाल कर पिलाने से सब प्रकार के प्रसूत-रोग नाश हो जाते हैं।

(२) देवदारु, वच, कूट, पीपल, सोंठ, चिरायता, कायफल, मोथा, कुटकी, हरड़, धनियाँ, गजपीपल, कटेरी, गोखरू, धमासा, बड़ी कटेरी, अतीस, गिलोय, काकड़ासींगी, कलौंजी और जीरा इन सब को दो-दो माशा लेकर आध सेर पानी में औटावे। जब एक छटाँक रह जावे, तब इसमें दो रत्ती भुनी हुई हींग और तीन रत्ती सेंधा नमक डाल कर प्रसूता स्त्री को पिला दे। इस काथ से खाँसी, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, कम्प, सिर-दर्द, बकवाद, तृषा, दाह, तन्द्रा, अतिसार, वमन आदि प्रसूत-रोग नष्ट हो जाते हैं। वात-पित्त और कफ के विकारों को भी यह काथ अतीव लाभदायक है। प्रसूत-रोग के लिए यह रामबाण दवा है।

(३) गिलोय, सोंठ, पियाबाँसा, प्रसारणी, शालपर्णी, पृष्ट-पर्णी, बड़ी कटेरी, छोटी कटेरी और गोखरू प्रत्येक डेढ़-डेढ़ माशा लेकर बीस तोले पानी में उबाले। जब पाँच तोला पानी रह जावे, तब उतार कर छान ले। इसमें पाँच माशा शहद डाल कर पिलाने से सब प्रकार के प्रसूत रोग नष्ट हो जाते हैं।

(४) जीरा, कलौंजी, सौंफ, अजवायन, अजमोद, धनियाँ, मेथी, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, हाऊबेर, बेर का चूर्ण,

कूट और कमेला प्रत्येक एक-एक तोला; गुड़ डेढ़ सेर, दूध दो सेर और गो-घृत एक पाव इन सब का पाक बनावे। यह पाक योनि-रोग, ज्वर, क्षय, श्वास, खाँसी, पाण्डु, कृशता और वात रोगों को समूल खो देता है।

(५) पियावाँसा, मोथा, गिलोय, गन्ध प्रसारिणी, सोंठ और सुगन्धवाला प्रत्येक दो-दो माशा लेकर पावभर पानी में डाल कर काथ बनावे। जब एक छटाँक रह जावे, तब छः माशा शहद डाल कर पिलाने से प्रसूता स्त्री का ज्वर और शूल शीघ्र ही नष्ट होता है।

(६) प्रसारिणी पञ्चाङ्ग सहित पाँच सेर जल में औटावे। जब तीन सेर पानी रह जावे, तब उतार कर छान ले। फिर इस काथ में सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, जीरा, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, मुग्दपर्णी, मापपर्णी, गोखरू, रायसन, एरण्ड की छाल, खरेंटी, सेंधा नमक, जवाखार, सज्जी और काला जीरा प्रत्येक दवा को एक-एक तोला लेकर लुगदी बना ले। उपरोक्त काथ में इस लुगदी को एक सेर गौ-घृत डाल कर पकावे। सिद्ध होने पर घी को निकाल कर रख छोड़े। इस घृत के सेवन से समस्त प्रसूत रोग, संग्रहणी, पाण्डु, ववासीर, उदर-रोग आदि आराम होते हैं; और अग्निदीपन होकर प्रसूता के स्तनों का दूध शुद्ध हो जाता है।

(७) पीपल, देवदारु, नागरमोथा, अगर और पीपलामूल इन सवको दो-दो माशा लेकर मठे में मिलावे, और आग पर चढ़ा

कर औटा ले, फिर इसमें गो-घृत डाल कर पीने से वात, पित्त, कफ. सन्निपात और सब प्रकार के प्रसूत-रोग दूर हो जाते हैं।

(८) जौ, उन्नाव, कुलथी और शाली चावलों की जड़, प्रत्येक छः-छः माशा लेकर गौ के मठे में मिला कर आग पर चढ़ा दे। जब उबल जावे, तब उतार कर छान और प्रसूता को पिला दे। यह सब प्रकार के ज्वरों को समूल नाश कर देता है।

(९) बिजौरे की जड़, बेलगिरी, नागरमोथा, मोलिए की जड़ इन चारों को पानी में रगड़ कर मस्तक पर लेप करने से प्रसूता के सिर का दर्द जाता रहता है।

(१०) तूँबे के पत्र और लोध दोनों को जल में पीस कर भग पर लेप करने से समस्त प्रकार के घाव अच्छे हो जाते हैं।

(११) कोष्ठबद्धता हो जाने पर एक तोला तुरञ्जबीन गुलाब जल में भिगो कर मल-छान कर पिलाना चाहिए।

(१२) प्रसूता की योनि में पीड़ा रहती है; अतएव उसे दबाना और सेंकना चाहिए। ईंट वग़ैरह से अधिक सेंकना ठीक नहीं है। चार तोला पोस्त पानी में डाल कर उबाले; और फिर इसमें थोड़ा सा गो-दुग्ध डाल दे। इस पानी में बनात या नमदा भिगो तथा निचोड़ कर गरम-गरम कपड़े का नलों पर सेंक करे। इससे दर्द मिट जावेगा, घावों को लाभ होगा; तथा समस्त योनि-विकार नष्ट हो जावेगा।

(१३) आँवल आदि का अंश भीतर रह जाने से प्रसूता को दूसरे दिन ही बुख़ार आ जाता है। यह ज्वर धीरे-धीरे बढ़ कर

प्रसूता को काल के गाल में पहुँचा देता है। इसके लिए गर्भाशय का मैल साफ़ करना सबसे अच्छा इलाज है। मैल हाथों से भी साफ़ किया जा सकता है; अङ्गरेजी दाइयाँ इसमें दक्ष होती हैं। गो-मूत्र, सिरका, मठा तीनों को समभाग लेकर मिला ले; और योनि-मार्ग द्वारा गर्भाशय में पिचकारी दे।

(१४) हरड़, बहेड़ा, आमला तीनों समभाग लेकर क्वाथ बनावे। इस क्वाथ की पिचकारी देने से भी उपरोक्त लाभ हो सकता है।

(१५) काली मिर्च दो तोला, सोंठ एक तोला, पीपल दो तोला, सेंधा नमक छः माशा, जावित्री दो तोला, नीलाथोथा दो तोला, सबको सँभालू के पत्तों के रस में एक प्रहर खरल करके चने के बराबर गोलियाँ बना ले। एक गोली नित्य शहद के साथ खिलाने से सब प्रकार के सूतिका रोग समूल नाश हो जाते हैं।

(१६) कसेरू, सिंघाड़ा, कमल के बीज, नागरमोथा, सफ़ेद जीरा, काला जीरा, जायफल, जावित्री, तज, धाय के फूल, सफ़ेद इलायची, सौंफ़, धनियाँ, कालीमिर्च, शतावर, कपूर कचरी; प्रत्येक दो-दो तोला, फौलाद अथवा लोह-भस्म चार तोला, अभ्रक-भस्म चार तोला, सोंठ बत्तीस तोला, बूरा डेढ़ सेर, गो-घृत बत्तीस तोला, गौ-दुग्ध दो सेर।

दूध को आग पर चढ़ा दे। जब एक सेर रह जावे, तब सोंठ का महीन चूर्ण उसमें डाल कर खोआ बना ले। इस खोए को घी में डाल कर अच्छी तरह भून ले। जब खोआ सुर्ख हो

जावे, तब खाँड की चाशनी बना कर उसमें खोआ तथा कपड़छन की हुई उपरोक्त सब दवाइयाँ डाल कर काँसे की थाली में घी लगा कर बर्फी जमा ले। मात्रा छः माशे से एक तोला तक दी जा सकती है। शक्ति के अनुसार इसे सेवन कराने से समस्त सूतिका-रोग नाश होकर पाचन-शक्ति बढ़ जाती है।

(१७) सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, कलमी तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, नागरमोथा, जायफल, धनिया, लौंग, इन्द्रजौ, जटामाँसी, अजमोद, अजवायन, गुलधावा, सतावर, काली मूसली, लोध, गजपीपल, चिरौंजी, गिलोय, कपूर और सफ़ेद चन्दन इन सबको एक-एक तोला पीस कर कपड़छन कर ले। सौंफ का चूर्ण १२८ तोला, घृत ३२ तोला, गो-दुग्ध दो सेर और खाँड दो सेर इन सब को नं० १६ के अनुसार तैयार कर ले। सोंठ की जगह सौंफ का चूर्ण डाल कर खोआ बनाना चाहिए। इसकी खुराक छः माशे से दो तोला तक बकरी के दूध के साथ देने से प्रसूता का शरीर पुष्ट होता है। अजीर्ण, अतिसार, कास, श्वास आदि दूर होकर प्रसूता बिलकुल निरोग हो जाती है।

(१८) पनीर एक डोडी, लौंग की टोपी तीन, बादाम की गिरी छिलके रहित आधा तोला और घी तीन बूँद इन सब को पीस कर घी के साथ दो गोलियाँ बाँध ले। ये दोनों गोलियाँ तीन घण्टे के अन्तर से प्रसूता को दे। इनके सेवन से प्रसूता का

सम्पूर्ण रोग पसीने के द्वारा निकल जाता है। रोग के वेग में यह दवा अत्यन्त लाभदायक होती है।

(१९) मुनक्का तीन, केशर तीन रत्ती और वीरबहूटी एक इनको हाथ से मसल कर पाँच गोलियाँ बना ले। दो-दो घण्टे के अन्तर से ये गोलियाँ खिलाने से समस्त प्रकार के सूतिका रोग नष्ट होकर प्रसूता स्वस्थ हो जाती है।

(२०) शुद्ध शिङ्गरफ़, वच्छनाग, सोहागा फुलाया हुआ, अकरकरा, कालीमिर्च, पीपल, लौंग और अफ़ीम हरेक छः-छः माशे ले। पहले वच्छनाग को पीपल के पत्तों के स्वरस में छः घण्टा खरल करे, फिर अन्य दवाएँ मिला कर सुखा ले और एक-एक रत्ती की गोलियाँ बनावे। शक्ति के अनुसार एक गोली से ५ गोली तक इसकी मात्रा है। मूर्च्छा रोग को भी यह दवा दूर कर देगी।

(२१) प्रसूता को अग्निमान्द्य के लिए यह दवा देनी चाहिए। पीपल, पीपलामूल, चव्य, सोंठ, अजवायन, सफ़ेद जीरा, काला जीरा, हल्दी, दारुहल्दी, विड नमक, काला नमक प्रत्येक चार-चार माशा, काँजी में मिला कर काढ़ा बना कर पिलावे।

(२२) जीरा, कलौंजी, छोटी सौंफ़, बड़ी सौंफ़, अजमोद, धनियाँ, सोंठ, मेथरे, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, हाऊबेर, बिदारीकन्द, कूट और कमेला इन सब को चार-चार तोला लेकर कूट-पीस ले। गुड़ पाँच सेर, दूध दो सेर, घृत पावभर संग्रह करे। गुड़ की चाशनी करके उसमें उपरोक्त सब वस्तुएँ डाल कर बर्फी बना ले। मात्रा ६ माशे से डेढ़ तोला तक शक्ति के अनुसार दी जा-

सकती है। यह औषधि समस्त प्रकार के सूतिका-रोगों को समूल नाश करके भूख को बढ़ाती है।

(२३) देवदारु, वच, कूट, पीपल, सोंठ, जायफल, नागरमोथा, चिरायता, कुटकी, धनिया, पीली हर्रे, गजपीपल, कटेरी, गोखरू, धमासा, भटकटिया, अतीस, गिलोय, काकड़ासींगी और काला-जीरा प्रत्येक तीन-तीन माशा लेकर यथोचित सेंधानमक मिला दे। फिर इन सब को एक सेर पानी में डाल कर आग पर पकावे। जब दो छटाँक पानी रह जावे, तब नीचे उतार कर मसल-छान कर प्रसूता को यह क्वाथ पिलाने से समस्त प्रकार के सूतिका-रोग, दर्द, खाँसी, ज्वर, श्वास, सिर-दर्द, तृषा, दाह, अतिसार आदि नष्ट हो जाते हैं।

(२४) थोड़ी सी शेर की चर्बी में गुड़ मिला कर देने से भी सूतिका-रोग को आराम हो जाता है।

(२५) शुद्ध पारा, शुद्ध, आमलासार, गन्धक शुद्ध, वच्छनाग, काले धतूरे के बीज, सफेद जीरा, पीपल, कालीमिर्च, सोंठ, आँवला, हरड़ की छाल और बहेड़े की छाल सब एक-एक तोला ले। पहले पारे और गन्धक को खरल करके कजली बना ले; फिर सब को मिला कर तीन दिन तक कागज़ी नींबू के रस में खूब अच्छी तरह खरल करे। बाद में तीन दिन तक घृतकुमारी के रस में खरल करके रख ले। एक रत्ती नित्य प्रसूता को देने से सब प्रकार का सूतिका-रोग जाता रहता है।

(२६) शुद्ध पारा, आमलासार गन्धक, भुना हुआ सोहागा, चित्रक, कालीमिर्च, जायफल हर एक दश-दश माशे, धतूरा तीस माशा, लौंग चालीस माशा और पीपल दश तोला ले। पहले पारे और गन्धक को दो पहर तक खरल करके कजली कर ले। फिर सब दवाइयों को तीन दिन तक अदरक के स्वरस में खरल करे। मात्रा आधी रत्ती से एक रत्ती तक। सब प्रकार के प्रसूत-रोगों के लिए रामवाण दवा है। वातज रोगों के लिए इससे बढ़ कर दूसरी दवा नहीं है।

(२७) शीशा-भस्म ५२ माशा, सङ्खिया-भस्म २८ माशा, पीपल २८ माशा, वच्छनाग १४ माशा, शुद्ध पारा १४ माशा, गन्धक १४ माशा और जङ्गली कण्डों की राख १४ माशा। पहले पारे और गन्धक को मिला कर दो प्रहर तक खरल कर ले। जब कजली हो जावे, तब वच्छनाग और पीपल को खरल करे। बाद में सब दवाइयों को मिला कर रख दे। एक रत्ती मुनक्का के साथ देने से प्रसूता के सम्पूर्ण वातज रोग, कफज रोग, सरसाम, सन्निपात, सूतिका रोग आदि आराम होते हैं। इसको सूँघने से सिर-दर्द मिट जाता है। मूर्च्छा भी हट जाती है।

(२८) शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, कृष्ण अभ्रक-भस्म, सोना-माक्षिक-भस्म, ताम्र-भस्म, सार-भस्म, शुद्ध विष, सोंठ, कालीमिर्च और छोटी पीपल; सब छः-छः माशा लेकर धतूरे के पत्तों के रस में अच्छी तरह खरल करके तीन-तीन रत्ती की गोलियाँ बना ले। एक गोली सुबह और एक गोली सायङ्काल के समय खिलाने से

प्रसूत, संग्रहणी, मन्दाग्नि, अतिसार, कास, श्वास, वात रोग अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

(२९) अब हम एक ऐसी प्रसिद्ध दवा का नुस्खा लिखते हैं, जिसके आगे उपरोक्त समस्त दवाइयाँ फीकी हैं। यह वैद्यक ग्रन्थों में प्रसिद्ध "सौभाग्य शुण्ठी" नामक योग है। इसे कम से कम ४५ दिन लगातार सेवन करने से प्रसूता को किसी भी रोग का भय नहीं रहता। गई हुई शक्ति पुनः लौट आती है। यह योग स्त्रियों के लिए ही नहीं; बल्कि पुरुषों के लिए भी बड़ा ही लाभदायक है।

सौभाग्य शुण्ठी

सोंठ अच्छी तीस तोला, गो-घृत तीस तोला, दालचीनी तीस तोला, सफ़ेद इलायची दो तोला, काला जीरा एक तोला, अकरकरा डेढ़ तोला, विधारा डेढ़ तोला, पीपलामूल एक तोला, वरियारे की जड़ दो तोला, चीत एक तोला, खस डेढ़ तोला, सफ़ेद चन्दन एक तोला, सफ़ेद जीरा एक तोला, सतावर एक तोला, कालीमिर्च डेढ़ तोला, सिंघाड़ा दो तोला, अजमोद एक तोला, किशमिश दस तोला, बादाम की मींगी बीस तोला, तेजपात एक तोला, अखरोट पन्द्रह तोला, पिस्ता बीस तोला, मुनक्क़ा पाँच तोला, कँकोल मिर्च डेढ़ तोला, जायफल एक तोला, पीपल एक तोला, सफ़ेद मूसली दो तोला, काली अगर एक तोला, नागरमोथा डेढ़ तोला, चव्य एक तोला, त्रिफला दो तोला, कमलगट्टे की मींगी डेढ़ तोला, जावित्री एक तोला, नागकेशर डेढ़ तोला और गौ का

दूध पाँच सेर (गौ का दूध न मिले, तो बकरी का दूध काम में लाया जा सकता है), मिश्री ढाई सेर।

सोंठ को बारीक पीस कर रख छोड़े। शेष दवाइयों को भी बारीक पीस कर रक्खे। मेवा साफ़ करके पाक में डालने योग्य बना कर रख ले। अब दूध को आग पर चढ़ा दे। जब वह ढाई सेर रह जावे, तब उसमें सोंठ डाल कर खोआ बना ले। इस खोए को घी में भून ले। जब सुर्ख़ हो जावे, तब नीचे उतार ले। अब मिश्री की चाशनी बनावे, और उसमें खोआ तथा अन्य सब पिसी हुई दवाइयाँ डाल कर मिला दे। मेवा वग़ैरह भी डाल दे। चाशनी को आग पर से उतार कर कुछ ठण्ढी होने पर ही खोआ और दवा वग़ैरह मिलानी चाहिए। इसको घी लगी हुई थाली में डाल कर या तो बर्फ़ी बनावे या इसके लड्डू बना कर रख ले। मात्रा आधी छटाँक। ठण्ढ के मौसिम में गर्म गो-दुग्ध के साथ और गर्मी के दिनों में धारोष्ण गो-दुग्ध के साथ सेवन करना चाहिए। प्रसूता स्त्री को यथाशक्ति सौभाग्यशुण्ठी अवश्यमेव खिलाना चाहिए। इससे बढ़ कर प्रसूता के लिए दूसरी कोई वस्तु नहीं है।

प्रसूता की देख भाल के विषय में हमारा इतना लिखना ही पर्याप्त होगा। अधिक के लिए आयुर्वेद ग्रन्थों तथा किसी अच्छे हकीम या डॉक्टर से सहायता लेनी चाहिए।

(६) बालकों की देख-भाल

बालकों की देख-भाल न रहने के कारण ही भारतवर्ष में इनकी मृत्यु-संख्या बढ़ रही है। खास कर बम्बई में शिशुओं की मृत्यु-संख्या बहुत ही बढ़ी-चढ़ी है । यहाँ प्रति सहस्र ४०० बालक पहले वर्ष में ही काल-कवल हो जाते हैं। बालकों की मृत्यु-संख्या की वृद्धि के कई कारण हैं। सबसे पहला कारण स्त्रियों की अज्ञानता है। अविद्या तथा अज्ञान के कारण स्त्रियों के विचार अत्यन्त ही संकुचित रहते हैं। वे अपने बाप-दादों की रीति-रिवाज को छोड़ना बड़ा बुरा समझती हैं। भले ही घर के सब लोगों की मृत्यु हो जाय; परन्तु वे अपने पुराने विचारों से तिल भर हटना नहीं चाहतीं। वे वर्तमान पद्धति के अनुसार बालकों की देख-भाल करना नहीं चाहतीं। देवी-देवता, भूत-प्रेत मन्त्र-तन्त्र, जादू-टौने पर जितना उनका विश्वास है, उतना अन्य बातों पर नहीं । बालक रोगाक्रान्त होकर छटपटाने लगते हैं; किन्तु उनकी माता उसे रोग न कह कर, भूत-प्रेत की बाधा कहती हैं। बस, झाड़-फूँक आरम्भ हो जाती है। बालक मर जावे, इस बात की उन्हें चिन्ता नहीं; लेकिन दवा-दारू का जिक्र किया कि मूर्खाएँ कहने वाले को काटने दौड़ती हैं। कहने वाले के हृदय को मर्म-भेदी वाग्बाणों से बेध देती हैं। यह प्रकरण ऐसी जड़-बुद्धि, मूर्खा स्त्रियों के लिए नहीं है; बल्कि उन समझदार व्यक्तियों के लिए है, जिन्हें उत्तम सन्तान की इच्छा है।

बालकों की मृत्यु-संख्या में वृद्धि होने का दूसरा कारण बाल-विवाह है ; इस विषय पर हम पिछले अध्यायों में बहुत-कुछ लिख आए हैं। तात्पर्य यह है कि बालक-दम्पति से उत्पन्न सन्तान हर्गिज़ स्वस्थ, बुद्धिमान् और दीर्घजीवी नहीं हो सकती।

तीसरा कारण दरिद्रता है। भारतवर्ष की इस बढ़ती-चढ़ती दरिद्रता के कारण भी बालकों की मृत्यु-संख्या में वृद्धि हो रही है। ग़रीबी के कारण मैले-कुचैले; सीले-अँधेरे, वायु-हीन घरों में, जिनमें हवा आने-जाने के लिए खिड़कियाँ नहीं होतीं, रहना पड़ता है। ऐसे मौत के पिंजरों को ही प्रसूति-गृह बनाना पड़ता है। मैले-कुचैले वस्त्र पहन कर ज़िन्दगी पूरी करनी पड़ती है। समय पर भोजन नहीं मिलता; मिलता भी है, तो रूखा-सूखा और बासी! इन सब बातों का स्वास्थ्य पर बड़ा ही बुरा प्रभाव होता है। ग़रीब स्त्रियों को गर्भावस्था अथवा प्रसूत-दशा में दूध नहीं मिलता; इस कारण उनका दूध उनके बालकों के लिए काफ़ी पोषक नहीं होता। अतएव बालक रोगाक्रान्त होकर मर जाते हैं।

चौथा कारण अशिक्षित दाइयाँ हैं। भारत में अभी शिक्षित दाइयों की बड़ी भारी कमी है। इस कारण बालकों की मृत्यु-संख्या उत्तरोत्तर वृद्धि पा रही है। बड़े-बड़े नगरों की सघन बस्तियाँ भी बालकों की मृत्यु-संख्या के बढ़ाने में सहायक हैं। नवजात शिशु की देख-रेख किस प्रकार करनी चाहिए, इस विषय से लोग बहुत ही बेख़बर हैं। इसलिए कुछ मुख्य-मुख्य बातों पर प्रकाश डालना आवश्यक है।

पाखाना—बालक को पैदा होने के कुछ समय बाद एक दस्त होता है। यदि दस्त न हो, तो किसी दवा का प्रयोग करना चाहिए। पाव या आधा चम्मच अरण्डी का तेल (Castor oil) और उसमें थोड़ा सा शहद मिला कर चटाने से बच्चे को दस्त हो जाता है। यदि अधिक समय तक बच्चे को दस्त न हो, तो कभी-कभी वह मर भी जाता है। बारह घण्टे के अन्दर यदि बच्चे को पाखाना न हो, तो दस्त लाने का उपाय करना चाहिए। कमज़ोर तथा समय से पूर्व पैदा हुए बालक को दो-तीन दिन तक दस्त नहीं होता। इसलिए ऐसे बच्चों को दूसरे दिन १०-१५ बूँद अण्डी का तेल अवश्य ही पिला देना चाहिए। माता का दूध भी बच्चे के लिए दस्त लाने में अक्सीर है। प्रसव के बाद २-३ दिन तक माता के दूध में दस्त लाने का गुण प्रकृति ने ही रक्खा है; किन्तु प्रायः प्रथम २-३ दिन पर्यन्त स्तनों में दूध नहीं उतरता, इसलिए अरण्डी का तेल और शहद चटाने में किसी प्रकार की हानि नहीं, बल्कि लाभ ही है। नवजात बालक का पाखाना काले रङ्ग का होता है, जिसमें कुछ हरापन भी होता है। पहले तीन दिन तक बालक को दिन-रात में तीन बार दस्त होता है। चौथे दिन से पाखाने का रङ्ग बदलने लगता है। उसका रङ्ग पीली राई जैसा होने लगता है।

बेवक्त अथवा ज्यादा दूध पिलाने के कारण छोटे बच्चे को बदहज़्मी की शिकायत हो जाती है, इस कारण उसे दिन भर में कई पतले दस्त आते हैं। ऐसी दशा में माता को चाहिए कि दूध

पिलाने के सम्बन्ध में विशेप सावधानी रक्खे। छोटे बालक को गऊ या बकरी का ख़ालिस दूध कभी नहीं पिलाना चाहिए। ख़ालिस दूध बालक के पक्काशय में आसानी से नहीं पच सकता, इसलिए उसे पतले दस्त होने लगते हैं; और वह दिन-प्रतिदिन कमज़ोर होने लगता है। माता के दूध के अभाव में छोटे बालक को कृत्रिम दूध पिलाना चाहिए। कृत्रिम दूध बनाने की विधि हम अगले अध्याय में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे।

दाँत निकलने के वक्त किसी-किसी बालक को बहुत ही कष्ट होता है—उसे दस्त आने लगते हैं। दाँत निकल आने पर यह तकलीफ़ दूर हो जाती है; और बालक के दस्त भी बन्द हो जाते हैं। एक वर्ष से कम उम्र वाले बालक को दिनभर में दो-तीन बार पाखाना होता है। दूसरे साल स्वस्थ बच्चों को केवल दो बार ही पाखाना होता है। छोटे बच्चे को प्रायः कपड़े में ही पाखाना होता है। मूर्खा माताएँ उस कपड़े को तत्काल साफ़ नहीं करतीं और उसी कपड़े के दूसरे हिस्से से उस पाखाने को ढाँक कर बच्चे को उसी कपड़े पर सुला देती हैं। यह बहुत ही बुरा है। पाखाने के कपड़े को बदल देना चाहिए; और विपुल जल से अच्छी तरह उस वस्त्र को धो डालना चाहिए। गर्म जल में यदि इस कपड़े को उबाल कर धो लिया जावे, तो और भी अच्छा हो। एक बच्चे के लिए कम से कम ८ या १० कपड़े रखने चाहिए।

मूत्र—जिस वक्त बच्चा उत्पन्न होता है, उस समय उसका मूत्राशय

मूत्र से भरा हुआ होता है। पैदा होने के बाद २४ घण्टे के अन्दर ही बच्चा पेशाब कर देता है। यदि बालक की लिङ्गेन्द्रिय पर का चमड़ा पेशाब आने में बाधक हो, तो उसे चिकनाई लगा कर ऊपर की तरफ सरकाने का यत्न करना चाहिए। यदि बालक २४ घण्टे के भीतर पेशाब न करे, तो गर्म पानी में तर करके स्पञ्ज या फलालेन का टुकड़ा उसके पेट पर रखना चाहिए। यदि इस उपाय से भी बच्चा पेशाब न करे, तो फिर गर्म जल से बालक को स्नान कराना चाहिए। स्नान कराने से बच्चा पेशाब कर देगा। यदि इतने पर भी बालक पेशाब न करे, तो डॉक्टर को बुलवा कर पेशाब निकलवा देना चाहिए। छोटे बालक को दिन भर में १०-१२ वक्त पेशाब होता है। एक बार के पेशाब का परिमाण एक औंस और २४ घण्टों में १० औंस होता है। बालक पेशाब भी कपड़ों में ही करता है। जब बच्चा पेशाब कर दे, तब तत्काल उस वस्त्र को बदलना चाहिए। बहुत सी स्त्रियाँ पेशाब के कपड़े को नहीं धोतीं; और उसे ज्यों का त्यों धूप में सूखने के लिए डाल देती हैं। यह बड़ी भारी गलती है। पेशाब से भींगे हुए कपड़े को उसी वक्त शुद्ध जल से धोकर सुखा देना चाहिए।

स्नान—शारीरिक स्वच्छता के लिए बालक को नित्य स्नान कराना चाहिए। जाड़े के मौसम में स्नान कराते समय पास में ही आग की अँगीठी रख लेनी चाहिए। यदि कोठरी छोटी हो, तो अधिक अग्नि न रखनी चाहिए। स्नान कराने से शरीर स्वच्छ रहता है; और त्वचा नरम हो जाती है। स्वेद-रन्ध्र और रोम-कूप

साफ़ हो जाते हैं। शरीर में रक्त तेज़ी से प्रवाहित होने लगता है, जिससे शरीर की वृद्धि अच्छी तरह होती है। बालक को भूख लगती; और नींद भी गहरी आती है।

बहुत सी स्त्रियाँ बच्चे को सबल बनाने की इच्छा से, उत्पन्न होते ही ठण्डे जल से स्नान करा देती हैं। ऐसा करना ठीक नहीं है। छोटे बच्चे को शीतल जल से कदापि स्नान न कराना चाहिए। ठण्डे पानी से स्नान कराने से सर्दी, खाँसी, नेत्र-विकार, अतिसार आदि रोग हो जाने का डर रहता है। कई निर्बल बच्चों को तो निमोनिया हो जाता है, जिससे वे मर जाते हैं। तात्पर्य यह है कि छोटे बालक को सदैव गर्म पानी से ही स्नान कराना चाहिए। जो बच्चे जन्म से ही निर्बल हों, उन्हें स्नान न करा कर स्पञ्जिङ्ग कराया जावे। जो बालक एक मास से कम उम्र का हो, जिसके ओंठ नीले हों, अँगुलियाँ ठण्डी हों और बहुत अशक्त हो, उसे स्पञ्जिङ्ग कराने के समय भी विशेष सावधानी रखनी चाहिए। स्पञ्जिङ्ग कराते समय बच्चे का सारा शरीर किसी ऊनी वस्त्र में लपेट लेना चाहिए। जिस अङ्ग का स्पञ्जिङ्ग करना हो, उसी अङ्ग को निकाल कर स्पञ्जिङ्ग करने के बाद फिर कपड़े से ढाँक देना चाहिए। कमजोर बालक का कोई भी अङ्ग अधिक देर तक खुला हुआ न रखना चाहिए, यह बड़ी भारी ग़लती है। जितनी बच्चे को खुराक की आवश्यकता है, उससे कहीं अधिक उसे शारीरिक स्वच्छता की ज़रूरत है। रोगी बालक को नित्य स्नान कराना हानिकारक है। ज्वर में अथवा सर्दी लग जाने पर बालक को स्नान न कराना चाहिए; परन्तु

ज्वर अथवा सर्दी लग जाने के भय से बच्चे को स्नान अथवा स्पर्शिङ्ग न कराना मूर्खता है।

स्नान का पानी न तो अधिक गर्म ही हो; और न बिलकुल ठण्डा ही। पानी में नीम आदि के पत्ते न डालने चाहिए। स्वच्छ निर्मल जल ही अधिक लाभदायक होता है। हाँ, यदि किसी प्रकार का चर्मरोग हो गया हो, तो नीम के पानी से स्नान कराना लाभप्रद होता है।

बालक को दूध पिला कर स्नान न कराना चाहिए। स्तन पान कराने के बाद बच्चे को नहलाना अत्यन्त बुरा है। खुराक के पेट में पहुँचने पर जठराग्नि को काम करना पड़ता है। भोजन के बाद स्नान कराने से बच्चे की अग्नि मन्द होकर पेट की बीमारी हो जाती है। इसलिए दूध पिलाने के पूर्व ही स्नान कराना चाहिए। इसी प्रकार स्नान करा कर तत्काल ही बच्चे को दूध न पिलाना चाहिए। यदि दूध पिला दिया हो, तो एक या डेढ़ घण्टे के बाद स्नान कराना चाहिए। स्नान करा कर आध या पौन घण्टे बाद बालक को स्तन-पान कराना चाहिए। स्नान कराने से बालक का प्रत्येक अवयव शुद्ध और मन प्रसन्न हो जाता है। शरीर पर पानी पड़ने से रक्त-वाहनियाँ विकसित होकर सारे शरीर में रुधिराभिसरण तेजी से होने लगता है। स्नान कराने से जठर के लिए आवश्यक रक्त वहाँ न ठहर कर, सारे शरीर में फैल जाता है, इसी कारण पाचन-क्रिया में शिथिलता आ जाती है।

बालक के लिए प्रातःकाल का स्नान अधिक लाभप्रद है।

रात को गम्भीर निद्रा से बालक स्वयं ही उत्साहयुक्त होता है; और फिर प्रातःकाल स्नान कराने से उसका मन और भी प्रफुल्लित हो जाता है। ठण्डे मौसम में बालक को केवल ४-५ मिनट में ही स्नान करा देना चाहिए। गर्मी के मौसम में १०-१२ मिनट लगाए जा सकते हैं। स्नान कराते समय अन्य-अङ्गों पर पानी न डाल कर पहले-पहल सिर पर पानी डालना चाहिए। सिर पर पानी पड़ते ही रक्ताभिसरण बड़ी तेजी से होने लगता है। बच्चे की रानें, बग़लें, गला और ऐसे अङ्ग जो रात दिन मिले रहते हों, जहाँ पसीना अथवा मल उत्पन्न होता हो, अच्छी तरह धोकर साफ़ कर देने चाहिए। लिङ्गेन्द्रिय की त्वचा को हटा कर धोकर साफ़ कर देना चाहिए। जब अच्छी तरह स्नान करा चुके, तब किसी स्वच्छ, कोमल सूखे वस्त्र से बच्चे के शरीर को पोंछ डालना चाहिए। उसके अङ्ग पर कहीं भी पानी का अंश अथवा मल न लगा रहना चाहिए। अङ्ग पर मल-वृद्धि हो जाने से बालक के शरीर पर फोड़े, फुन्सी, खाज वग़ैरह चर्मरोग हो जाते हैं, और कभी-कभी ज्वर आदि अन्य रोग भी हो जाते हैं। बालक का शरीर पोंछ कर उसके अङ्ग पर टॉइलेट पाउडार (Toilet powder) या बोरिक एसिड (Boric acid) का पाउडर लगा देना चाहिए। यदि उक्त वस्तुएँ न मिलें, तो चावल का आटा या समुद्रफेन का चूर्ण भी लगाया जा सकता है। यदि शरीर पर किसी प्रकार के घाव हों, तो स्नान के बाद बोरिक एसिड अथवा वैसलिन का मलहम लगा देना चाहिए।

बालक के शरीर पर तेल लगा कर स्नान कराने की रीति बहुत ही अच्छी है। बच्चे के शरीर पर तेल की मालिश करने से उसके मस्तक की याद अच्छी होती है। ज़ैतून, नारियल, सरसों और तिल आदि का तेल काम में लाना चाहिए। सरसों का तेल गर्मी के मौसम में न लगाना चाहिए। बाज़ारू "हेअर ऑयल" बच्चे के शरीर पर न लगाने चाहिए। इनसे त्वचा को हानि होती है; क्योंकि ये मिट्टी के तेल (White oil) पर बनाए जाते हैं। यदि बच्चे के शरीर पर सुगन्धित तेल लगाने की इच्छा हो, तो चमेली या मोंगरे का तेल प्रयोग करना चाहिए। तेल की मालिश से हड्डी या सिर के किसी भाग में कोई दोष रह गया हो, तो वह मिट जाता है, शरीर की त्वचा नर्म रहती है; और शीत-काल में उस पर ठण्ढ का कुछ भी प्रभाव नहीं होने पाता। तेल लगाने से रोम-कूप बन्द हो जाते हैं, इसलिए तेल लगा कर स्नान अवश्य कराना चाहिए। स्नान के बाद तेल लगाने से उतना लाभ नहीं होता, जितना कि पहले लगाने से होता है। बच्चे के दोनों कानों में ८-१० दिन में १-२ बूँद तेल डाल देना चाहिए; और नाभि के गड्ढे में तथा लिङ्गेन्द्रिय की सुपारी पर भी लगा देना चाहिए। तेल लगाते समय बच्चे के सिर को बहुत ही आहिस्ता-आहिस्ता थपथपाना चाहिए। पैदा होते समय बालक का सिर, यदि बाहर आने में कुछ समय लगा, तो प्रसूति-मार्ग की हड्डी के दबाव से बेढङ्गे आकार का हो जाता है। इस बेढब आकार के कारण सिर की हड्डी का भार मस्तिष्क पर

पड़ता है, जिसका बड़ा ही भयानक परिणाम होता है। इस हड्डी के दबाव के कारण पागल बच्चे पैदा होते हैं; और यथासमय उन्हें मृगी, अपस्मार आदि रोग हो जाते हैं। सिर की हड्डी कोमल होने से उस समय लचीली होती है। तेल की मालिश करते समय चतुर माता अथवा दाई यदि चाहे तो अपने बालक के सिर का यह दोष मालिश द्वारा दूर कर सकती है।

पाश्चात्य लोग बालक को टब में सुला कर स्नान कराते हैं। टब में स्नान कराने की अपेक्षा बालक को पाँवों पर लेटा कर स्नान कराना अच्छा है। टब में स्नान कराने से कई प्रकार के नुक़सान होते हैं। टब का पानी मैला हो जाने के बाद भी बार-बार काम में आता रहता है। यदि टब का पानी बार-बार फेंका जावे, तो इसमें भी असुविधा होती है; क्योंकि बालक को बार-बार उठाना पड़ेगा। हाँ, यदि एक ऐसा टब बनाया जावे जिसमें से गन्दा पानी नीचे गिरता रहे, तो स्नान कराने से कोई हानि नहीं होती। हमारे विचार से तो टाँगों पर सुला कर स्नान कराना सब से अच्छा तरीक़ा है।

स्नान कराने के पहले बच्चे की आँख, नाक, कान और मुँह का मैल साफ़ कर देना चाहिए। बच्चे के शरीर पर यदि तेल की मालिश की हो, तो कोई सा पवित्र बढ़िया साबुन लगा कर स्नान कराना चाहिए। अधिक साबुन न लगाया जावे, केवल तेल की चिकनाहट हटाने के उद्देश से ही साबुन लगाना चाहिए। साबुन लगा कर बदन को खूब धो देना चाहिए।

तेल लगाने से त्वचा के रोम-छिद्र बन्द हो जाते हैं; यदि साबुन न लगाया जावेगा, तो छिद्र बन्द होकर शरीर का भीतरी मल, प्रस्वेद वग़ैरह नहीं निकलने पाएँगे; और शीघ्र ही बालक बीमार हो जावेगा। गर्मी के मौसम में तेल लगा कर स्नान कराना अच्छा है; किन्तु यदि साबुन न लगाया जावे, तो कोई हानि नहीं। ग्रीष्म-ऋतु में गर्मी के कारण तेल पिघलता है; और वह रोम-कूपों को नहीं रोकता। साबुन लगाने से त्वचा का चिकनापन जाता रहता है; और मुलायम नहीं रहती, इसलिए साबुन लगाते समय इस बात को ध्यान में रख कर बहुत थोड़ा लगाना चाहिए। बालक की आँखों में साबुन का पानी न जाने पावे, इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

सिर पर पानी की धारा डालने से मस्तक ठण्डा रहता है; और बुद्धि के तन्तुओं का विकास होता है। जब बालक एक महीने का हो जावे, तब गर्म जल में दो-ढाई तोला नमक डाल कर स्नान कराना चाहिए। ऐसा करने से उसका बल बढ़ेगा। स्नान कराते वक्त बालक को ज्यादा उलट-पलट न करना चाहिए। जब बालक तीन वर्ष का हो जावे, तब उसे ठण्डे पानी से स्नान कराना चाहिए। तीन वर्ष के बाद बालक को गर्म पानी से स्नान कराने से कई रोग हो जाते हैं। मान लिया जावे कि गर्म पानी से शरीर ज्यादा स्वच्छ होता है; परन्तु फुर्ती और गर्मी गर्म पानी से नहीं आती। ठण्डे पानी के स्नान से फुर्तीलापन और शरीर में गर्मी फ़ौरन आ जाती है। ठण्डे पानी से स्नान करने वाले का शरीर

मजबूत होता है। बचपन से ही ठण्डे पानी से स्नान करने की आदत डाल देना बहुत ही अच्छा है। नित्य ठण्डे पानी से अच्छी तरह स्नान कराने पर बालक कदापि रोगी नहीं हो सकता।

वस्त्र—हमारे विचार से तो छोटे बच्चे को वस्त्र पहनाना अच्छा नहीं है। जो वस्त्र बालक को ओढाए तथा बिछाए जाते हैं, वे ही उसके लिए काफ़ी हैं। जो लोग अपने बच्चे को वस्त्र पहनाना चाहें, उन्हें चाहिए कि बालकों को ढीले वस्त्र पहनाया करें। बच्चे को ढीले कपड़ों से आराम मिलता है। ढीले वस्त्रों से बालक को हाथ-पैर हिलाने में सहूलियत रहती है; और शारीरिक विकास के लिए भी ढीले वस्त्र लाभदायक होते हैं। बालक को तीनों ऋतुओं के अनुसार वस्त्र पहनाने की व्यवस्था रखनी चाहिए। शीत काल में ऊनी कपड़े, गर्मी में सूती और वर्षा-ऋतु में साधारण मोटे कपड़े पहनाना चाहिए। ऋतु के अनुसार कपड़े न पहनाने से बच्चे की तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है। बालक के सारे शरीर को कपड़े में लपेट कर रखना हानिकारक है। बच्चे का सिर तो कभी भूल कर भी न ढाँकना चाहिए। बहुत से लोग बच्चे को कनटोपी अथवा तङ्ग टोपी पहना दिया करते हैं, यह बड़ी भारी ग़लती है। बाल का सीना, पेट और छाती नाज़ुक होती है; अतएव इनकी हिफ़ाज़त करना आवश्यक है। जहाँ तक हो सके इन अङ्गों को हमेशा गर्म रखना चाहिए। तङ्ग कपड़ों से बच्चे के शरीर में अच्छी तरह रुधिर नहीं बहता। छाती और गले के पास कपड़ा अवश्य ढीला होना चाहिए। बच्चों के कपड़े साफ़ और कई

होने चाहिए; ताकि मल-मूत्र से बिगड़ जाने पर फिर सूखे पहनाए जा सकें। बच्चों के कपड़े मल-मूत्र से खराब होते रहते हैं। ऐसी दशा में यदि कपड़े चुस्त होंगे, तो बच्चे को बार-बार कपड़े निकालने और पहनाने में तकलीफ़ होगी। इसलिए कपड़े ढीले होने चाहिए। कपड़े नित्य बदलने चाहिए। बालक के शरीर पर जो लोग मैले वस्त्र रखते हैं, वे अपने हाथों अपने बालक को रोगी बनाते हैं। शरीर पर मैले वस्त्र कभी न रहने देना चाहिए। बच्चे की सफ़ाई और कपड़ों के देखने से ही माता की चतुराई और सुघड़ाई मालूम होती है। जिस बालक का शरीर मैला और कपड़े गन्दे होते हैं। उसकी माता के फूहड़ होने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं होता।

बालक को रेशमी कपड़े पहनाने चाहिए; क्योंकि वे बालक के कोमल शरीर के लिए उपयुक्त होते हैं। बच्चे को यदि ऊनी वस्त्र पहनाना हो, तो नीचे एक सूती वस्त्र अवश्य ही पहिना देना आवश्यक है; नहीं तो ऊनी वस्त्र उसके शरीर में चुभेगा, जिससे वह बेचैन होकर रोने लग जावेगा। शीत काल में बच्चे को सर्दी से बचाना चाहिए। बच्चे की त्वचा बहुत ही कोमल होती है, इस कारण उसे सर्दी लग जाने का भय अधिक रहता है। जरा सी भी असावधानी हुई कि बच्चे का जीवन सङ्कटापन्न हो जाता है। सर्दी के मौसम में बच्चे को पाँवों से गर्दन तक हमेशा गर्म रखना चाहिए। जब बालक चलने-फिरने लगे, तब उसके पैरों में गर्म मोजे और जूते पहनाने चाहिए। पाँव गर्म और सिर ठण्डा रखने से

बालक स्वस्थ रहता है। छोटे बच्चे के लिए कई जोड़े कपड़े रखने चाहिए। ख़ास करके पाजामे बहुत होने चाहिए। बालक प्रायः पाजामे में ही पाख़ाना और पेशाब कर देते हैं, इस कारण बारम्बार पाजामे बदलने की ज़रूरत होती है। गर्मी के मौसम में दिन में दो चार और सर्दी के मौसम में दिन में एक बार बच्चे के कपड़े अवश्य ही बदल देने चाहिए।

बच्चे को खुली हवा में घुमाने ले जाते वक्त गर्म कपड़े पहनाने चाहिए। बाहर की ठण्ढी हवा बालक के शरीर को हानि पहुँचाती है। सर्दी के दिनों में बिना मोज़े पहनाए बालक को बाहर न लेजाना चाहिए। यदि मोज़े अप्राप्य हों, तो पैरों पर कपड़ा ही लपेट देना चाहिए। मल-मूत्र और लार से कपड़ा ख़राब होने पर फ़ौरन बदल देना चाहिए। यदि कपड़ा न बदला जावेगा, तो सर्दी होकर बच्चे को खाँसी हो जावेगी। वर्षा और शीत ऋतु में बालक को बाहर घुमाने ले जाना हो, तो शाल या किसी गर्म कपड़े से उसका शरीर ढँक देना चाहिए; परन्तु मुँह और आँख कदापि न ढँकना चाहिए। बालकों के मुख से अक्सर लार टपकती रहती है; इसलिए उनके गले में ऐसा वस्त्र ऊपर में हमेशा पड़ा रहना चाहिए, जिससे लार उसी पर पड़ती रहे; और दूसरे वस्त्र ख़राब न होने पावें। जब वह कपड़ा लार से भींग जावे, तब उसे हटा कर उसकी जगह दूसरा लगा देना चाहिए। बालक को इतने अधिक कपड़े भी न पहनाने चाहिए कि उसके सारे शरीर पर पसीना आ जावे। अधिक कपड़ों से बच्चा घबरा

जाता है। गर्मी में यदि अधिक कपड़े पहना दिए जावेंगे, तो बच्चे के शरीर से पसीना अधिक निकलेगा; और निर्बल हो जावेगा। बच्चे को रङ्गीन वस्त्र न पहनाने चाहिए। रङ्गों में ऐसे बहुत से रासायनिक पदार्थ होते हैं, जो विषाक्त होते हैं। हरे रङ्ग में सोमल का विष होता है, इसलिए बच्चे को हरा कपड़ा कभी भूल कर भी न पहनाना चाहिए। बच्चों की आदत होती है कि वे कपड़े को मुँह में लेकर चूसने लगते हैं। यदि रङ्गीन वस्त्र उसके मुख में पहुँच गया, तो वह जहर का काम करेगा। रङ्गीन कपड़े त्वचा के द्वारा भी शरीर में अपना विष पहुँचाते हैं; अतएव समझदार माता-पिता को चाहिए कि बच्चों को भूल कर भी रङ्गीन कपड़े न पहनावें। चटक-मटकदार भड़कीले कपड़े पहना कर लोग अपने बच्चे को देख कर बड़े प्रसन्न होते हैं; लेकिन वास्तव में ये वस्त्र दुखदायी होते हैं। जहाँ तक हो सके सादे, सफ़ेद, स्वच्छ और ढीले वस्त्र पहनाने चाहिए। शीतकाल में बारीक कपड़े पहनाने से बच्चा छोटे क़द का रह जाता है; और गर्मी में काफ़ी कपड़े न पहनाने से बालक का शरीर काला हो जाता; और लू भी लग जाती है। बालक के शरीर को सूर्य-प्रकाश से बिलकुल ही बचाना मूर्खता है। अधिक सूर्य-प्रकाश ही हानिप्रद हो सकता है।

शरीर में गर्मी पहुँचाने के लिए उचित वस्त्र पहिनाना मानो बच्चे के वृद्धि-विकास में सहायता देना है। द्रव्य-लोभी माता-पिता बालक को यथेष्ट वस्त्र पहनाने में कन्जूसी करते हैं; यह उनकी

भूल है। जब तक बच्चा तीन महीने का होता है, तब तक उसकी छाती बहुत ही निर्बल होती है। मामूली सर्दी-गर्मी का असर उसके फेफड़ों पर बहुत ही जल्दी होता है। इसलिए छाती की रक्षा के लिए; ग्रीष्म-ऋतु के अतिरिक्त अन्य सब ऋतुओं में फ़लालैन का टुकड़ा बच्चे की छाती पर हमेशा होना चाहिए। पेट की हिफ़ाज़त भी इसी तरह करनी चाहिए। पेट की दीवार पतली होती है; और उस पर पेट के भीतर की अँतड़ियों का भार पड़ता है। हवा में परिवर्त्तन होने से पेट में सर्दी लग जाती है, जिससे दस्त आने लगते; और अनेक रोग हो जाते हैं। अतएव पेट पर भी तीन महीने की उम्र तक फ़लालैन अथवा सफ़ेद कपड़े को बाँधना चाहिए। इस पट्टे से दूसरा लाभ यह भी होता है कि पेट पर उचित दबाव पड़ता है, जिससे पेट का आकार बेढब नहीं होता, जैसा कि प्रायः छोटे बच्चों का पेट आगे निकल आया करता है।

मल-मूत्र शरीर पर न गिरने पावे और ओढ़ने-बिछाने के कपड़े ख़राब न होने पावें, इसलिए बालकों को जाँघिया पहनाना चाहिए। घुटने तक के पाजामे को जाँघिया, चड्डी, निकर आदि नामों से पुकारते हैं। मल-मूत्र होते ही बच्चे का जाँघिया बदल देना चाहिए; और बालक का वह अङ्ग जो मैला हो गया हो, साफ़ कर देना चाहिए। अधिक समय तक बच्चे के शरीर पर पाख़ाना या पेशाब लगा रहने से उसे विविध रोगों के हो जाने का भय है।

आज कल हम लोग हरेक बात में पाश्चात्य पद्धति का अनुकरण करते हैं। भले-बुरे का ध्यान न रख कर आँखें मींचे हुए अङ्गरेज़ी

बातों को अपनाते जा रहे हैं। सद्गुणों का अनुकरण करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है; परन्तु बात-बात में अङ्गरेजों का अनुकरण अच्छा नहीं। हमारे घरों में अङ्गरेजों की तरह बच्चों को तङ्ग कपड़े पहिनाए जाते हैं, और उन्हें सिर्फ "बाबा लोग" बनाने के लिए वैसे कपड़े ही पहिनाते हैं। कपड़े पहिनाने में सेफ्टीपिनों का तथा आलपीनों का प्रयोग भी करते हैं। सेफ्टी-पिन्स की जगह आलपीनों का प्रयोग बच्चे की मृत्यु को बुलाना है। सेफ्टीपिन्स से हानि होने का भय रहता तो है; किन्तु कम। आलपीनें तो बच्चे के शरीर में घुस कर बड़ा भारी अनर्थ कर डालती हैं।

बच्चे के बिछौने अलग होने चाहिए, उसे अपने शरीर से रात-दिन चिपकाए रखना अनुचित है। इससे बच्चे का स्वास्थ्य इतना नष्ट हो जाता है कि वह उम्र भर नहीं सँभल सकता। बच्चे को माता के पास सुला कर उसके शरीर में गर्मी पहुँचानी चाहिए; किन्तु रात-दिन सुलाने से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती है। बच्चे का बिछौना सफ़ेद, स्वच्छ और मृदुस्पर्श होना चाहिए। बच्चे के मल-मूत्र त्यागने से उसका बिछौना बार-बार गीला और मैला हो जाता है, इसलिए बालक के नीचे कई तह का कपड़ा बिछाना चाहिए। बिछाने के लिए बरसाती अवश्य काम में लानी चाहिए। कपड़ों के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखने से बच्चा स्वस्थ रहता है :—

(१) कपड़े सफ़ेद, सूती या ऊनी हों; (२) कपड़े इतने ढीले हों कि बालक को बार-बार उतारने तथा पहिनाने में किसी प्रकार की तकलीफ़ न हो; (३) सेफ़्टीपिन्स तथा आलपीनों का प्रयोग न करना चाहिए ; (४) बच्चे की छाती, पीठ और पेट सदैव गर्म रक्खे जावें; (५) मल-मूत्र से ख़राब हुए वस्त्र तत्काल बदल देने चाहिए ; (६) कपड़े अच्छी तरह धोकर हवादार जगह में रखने चाहिए ; (७) कपड़े हलके, पतले और मुलायम हों , फ़लालेन की अपेक्षा सूती या रेशमी वस्त्र अधिक उपयोगी होते हैं ; (८) गर्मी के मौसम में दिन में दो बार और शेष ऋतुओं में एक बार कपड़े बदल देने चाहिए ।

वायु—हमारे देश में लोग हवा को "हौआ" समझते हैं अज्ञानवश हवा के प्रत्येक मार्ग को रोकने का प्रयत्न करते देखे जाते हैं। हवा को ही सब बीमारियों का कारण मान बैठे हैं, यह कितनी अज्ञानता है ? जिसके कारण प्राणीवर्ग जीवित है, जो प्राण नाम से पुकारी जाती है; उसी हवा को लोग अपना शत्रु मान बैठे हैं। अन्न-जल के बिना तो मनुष्य कुछ दिनों तक जीवित रह सकता है; परन्तु हवा के बिना तो कुछ मिनिटों में ही प्राणान्त हो जाता है। कलकत्ते के छोटे से ब्लैकहोल में १६४ मनुष्य बन्द किए गए थे, तब एक ही रात में १२३ मनुष्यों की मृत्यु किस कारण हो गई ? समझदार व्यक्ति इसका उत्तर सहज ही में दे सकते हैं। वायु के अभाव से ही इतने आदमी मौत के मुँह में पहुँचे थे। अङ्गरेजों के यहाँ प्रसूता और बालक हिन्दू-मुसलमानों के बच्चों और

प्रसूताओं की अपेक्षा कम क्यों मरते हैं ? क्या किसी ने कभी इस प्रश्न पर विचार किया है ? इसका कारण यह है कि वे वायु के गुणों को अच्छी तरह जानते हैं। हमारे प्रसूतागार कैसे होते हैं, इसका वर्णन हम पिछले अध्यायों में कर आए हैं। खिड़कियाँ तो दूर रहीं, यदि एकाध दरवाजा भी होता है, तो उस पर भी परदा डाल कर हवा को रोक दिया जाता है ! कितना अज्ञान है, कैसी मूर्खता है ? जब ऐसी बातें आँखों से देखी जाती हैं, तब चित्त को जितना दुख होता है, वह लिख कर नहीं बताया जा सकता ! छोटी सी कोठरी, जिसमें हवा आने-जाने के लिए एक अङ्गुल जगह नहीं होती, उसके द्वारों पर भी परदा डाल कर हवा रोक दी जाती है। भीतर आग की अँगीठी धधकती रहती है; और ऐसे तङ्ग कमरे में कई स्त्रियाँ, जिनके शरीर और वस्त्रों से दुर्गन्ध निकलती रहती है, घुसी रहती हैं। रात के वक्त उस कमरे में कई स्त्रियाँ घुस कर सोती हैं। जब वे बीमार होकर कष्ट पाती हैं या मौत के मुँह में पहुँच जाती हैं, तब ईश्वर को दोष देती हैं। छोटे बच्चे पर इस दूषित वायु का कैसा बुरा प्रभाव पड़ता है, इसे मूर्ख माता-पिता नहीं जान सकते !

बच्चे को हमेशा ताजा और स्वच्छ वायु की आवश्यकता है। वायु से भय करना ग़लती है। शरीर को यथेष्ट वस्त्रों से ढँक देने पर वायु कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती। ठण्डी और गर्म हवा से बच्चों की रक्षा करना बहुत ही जरूरी बात है ; लेकिन हवा के भय से उन्हें मुँह ढाँक कर वायुहीन स्थान में सुलाना अपने हाथों

(१) कपड़े सफ़ेद, सूती या ऊनी हों; (२) कपड़े इतने ढीले हों कि बालक को बार-बार उतारने तथा पहिनाने में किसी प्रकार की तकलीफ़ न हो; (३) सेफ़्टीपिन्स तथा आलपीनों का प्रयोग न करना चाहिए; (४) बच्चे की छाती, पीठ और पेट सदैव गर्म रक्खे जावें; (५) मल-मूत्र से खराब हुए वस्त्र तत्काल बदल देने चाहिए; (६) कपड़े अच्छी तरह धोकर हवादार जगह में रखने चाहिए; (७) कपड़े हलके, पतले और मुलायम हों, फ़लालेन की अपेक्षा सूती या रेशमी वस्त्र अधिक उपयोगी होते हैं; (८) गर्मी के मौसम में दिन में दो बार और शेष ऋतुओं में एक बार कपड़े बदल देने चाहिए।

वायु—हमारे देश में लोग हवा को "हौआ" समझते हैं। अज्ञानवश हवा के प्रत्येक मार्ग को रोकने का प्रयत्न करते देखे जाते हैं। हवा को ही सब बीमारियों का कारण मान बैठे हैं, यह कितनी अज्ञानता है? जिसके कारण प्राणीवर्ग जीवित है, जो प्राण नाम से पुकारी जाती है; उसी हवा को लोग अपना शत्रु मान बैठे हैं। अन्न-जल के बिना तो मनुष्य कुछ दिनों तक जीवित रह सकता है; परन्तु हवा के बिना तो कुछ मिनिटों में ही प्राणान्त हो जाता है। कलकत्ते के छोटे से ब्लैकहोल में १६४ मनुष्य बन्द किए गए थे, तब एक ही रात में १२३ मनुष्यों की मृत्यु किस कारण हो गई? समझदार व्यक्ति इसका उत्तर सहज ही में दे सकते हैं। वायु के अभाव से ही इतने आदमी मौत के मुँह में पहुँचे थे। अङ्गरेजों के यहाँ प्रसूता और बालक हिन्दू-मुसलमानों के बच्चों और

प्रसूताओं की अपेक्षा कम क्यों मरते हैं? क्या किसी ने कभी इस प्रश्न पर विचार किया है? इसका कारण यह है कि वे वायु के गुणों को अच्छी तरह जानते हैं। हमारे प्रसूतागार कैसे होते हैं, इसका वर्णन हम पिछले अध्यायों में कर आए हैं। खिड़कियाँ तो दूर रहीं, यदि एकाध दरवाजा भी होता है, तो उस पर भी परदा डाल कर हवा को रोक दिया जाता है! कितना अज्ञान है, कैसी मूर्खता है? जब ऐसी बातें आँखों से देखी जाती हैं, तब चित्त को जितना दुख होता है, वह लिख कर नहीं बताया जा सकता! छोटी सी कोठरी, जिसमें हवा आने-जाने के लिए एक अङ्गुल जगह नहीं होती, उसके द्वारों पर भी परदा डाल कर हवा रोक दी जाती है। भीतर आग की अँगीठी धधकती रहती है; और ऐसे तङ्ग कमरे में कई स्त्रियाँ, जिनके शरीर और वस्त्रों से दुर्गन्ध निकलती रहती है, घुसी रहती हैं। रात के वक्त उस कमरे में कई स्त्रियाँ घुस कर सोती हैं। जब वे बीमार होकर कष्ट पाती हैं या मौत के मुँह में पहुँच जाती हैं, तब ईश्वर को दोष देती हैं। छोटे बच्चे पर इस दूषित वायु का कैसा बुरा प्रभाव पड़ता है, इसे मूर्ख माता-पिता नहीं जान सकते!

बच्चे को हमेशा ताजा और स्वच्छ वायु की आवश्यकता है। वायु से भय करना ग़लती है। शरीर को यथेष्ट वस्त्रों से ढँक देने पर वायु कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती। ठण्डी और गर्म हवा से बच्चों की रक्षा करना बहुत ही जरूरी बात है; लेकिन हवा के भय से उन्हें मुँह ढाँक कर वायुहीन स्थान में सुलाना अपने हाथों

अपने हृत्खण्ड को विष देना है। जो बच्चे स्वच्छ हवा में श्वासोच्छ्वास करते हैं, वह हृष्ट-पुष्ट, नीरोग, कान्तिमान् और तेजस्वी तथा माता-पिता को आनन्द देने वाले होते हैं। अङ्गरेजों के बालकों को ध्यान से देखिए, उनका स्वास्थ्य कितना अच्छा होता है? इधर हमारे हिन्दू-मुसलमानों के बच्चों को देखिए, उन्हें देखने पर तरस आता है। कारण यही है कि वे लोग अपने बच्चों को खुली हवा में रखते हैं; और हम लोग गन्दी हवा में! ऐसी दशा में बच्चे मरेंगे नहीं, तो और क्या होगा? भूत-प्रेतों का अज्ञानपूर्ण भय भारतवासियों के हृदय में ऐसा घर कर गया है कि पढ़े-लिखे और समझदार व्यक्ति भी भूत-प्रेतों और डायनों पर विश्वास करते हैं। भूत-प्रेत के भय से भी हम लोग अपने बालकों को घर के आँगन तक में नहीं लाते; फिर भला शुद्ध वायु का घर तो दूर है। बालक की पहिली दशा अर्थात् एक वर्ष तो दूषित वायु में ही बीतता है। नवजात शिशु के साथ अपनी अज्ञानता के कारण इससे बढ़ कर हमारा और क्या पतित व्यवहार हो सकता है? हवा की कमी के कारण प्रतिवर्ष लाखों बच्चे जमीन के पेट में गड्ढा खोद कर रख दिए जाते हैं। हम लोग अपने हाथों अपने बच्चे का प्राण ले लेते हैं—यदि यह कहें, तो अत्युक्ति न होगी।

बच्चे को जन्मते ही उसे स्वास्थ्य और वृद्धि-विकास के लिए शुद्ध वायु और सूर्य-प्रकाश की बड़ी जरूरत है। सूर्य-प्रकाश के न पाने से जिस प्रकार उगा हुआ छोटा पौधा कुछ ही दिनों में

पीला पड़ कर मर जाता है, उसी प्रकार छोटा बालक कभी बिना सूर्य-प्रकाश के रोगी होकर अपनी जीवन-लीला का अन्त कर देता है। जिस प्रकार शुद्ध वायु की आवश्यकता है, उसी तरह प्रकाश की भी नितान्त जरूरत है। बालकों को ऐसे कमरे में रखना या सुलाना चाहिए, जिसमें ताजा हवा और सूर्य का प्रकाश खूब आता हो। बच्चे के कमरे में रात-दिन समान रूप से हवा आने के लिए खिड़कियाँ खुली रहनी चाहिए। बन्द घर में बालक को रखना या सुलाना अत्यन्त हानिकारक होता है। अनेक माताएँ ठण्ढ या वर्षा ऋतु में बालक को बन्द कमरे में रखती हैं। वे कमरे की खिड़कियाँ खुली रहने के गुणों को नहीं समझतीं। उन्हें सबसे बड़ा भारी भय तो यह रहता है कि हवा लगने से बालक बीमार हो जावेगा। ऐसा समझना उनका भ्रममात्र है। यदि बालक सर्दी के दिनों में गर्म वस्त्र से गर्दन तक ढँका है, तो ठण्ढ उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती; बल्कि उसे तन्दुरुस्त और बलवान् करती है। जो बालक खुली हवा और प्रकाश में सोते तथा रहते हैं, उन्हें एकाएक सर्दी भी नहीं लग सकती। ऐसे बच्चे क्षय तथा फेफड़ों की अन्य बीमारियों से बचे रहते हैं। खुली हवा में सोने से बच्चे को अच्छी नींद आती है, और भूख भी खूब लगती है। गर्मी और वर्षा ऋतु में मकान के बरामदे में एक दरी बिछा कर बच्चे को लेटा देना चाहिए, और उसे खेलने देना चाहिए। ऐसी वस्तुएँ जो गन्दी, मैली-कुचैली तथा हवा को खराब करने वाली हों, बच्चे के कमरे में हर्गिज़ न रखनी चाहिए।

खुराक—बच्चे की खुराक वास्तव में दूध है। इस विषय पर हम अगले अध्याय के आरम्भ में स्वतन्त्र रूप से विस्तारपूर्वक लिखेंगे। लोग दूध के अलावा दूसरे पदार्थ भी बच्चे को देते रहते हैं, जो कभी-कभी बालकों के लिए विष का काम कर जाते हैं। हम पीछे इस विषय पर थोड़ा सा प्रकाश डाल आए हैं। बच्चे की पहिली खुराक "जन्मघुटी" है। लोग इसे किसी पंसारी के यहाँ से एक-दो पैसा देकर बाजार से खरीद लाते हैं। दूकानदार मनमानी सड़ी-गली, चाहे जो चीज पुड़िया में रख कर दे देता है, वही नवजात बालक के गले में डाल दी जाती है! "जन्मघुटी" ऋतुओं के अनुकूल अलग-अलग होनी चाहिए। ऋतुओं के अनुकूल ही नहीं; बल्कि स्थानीय जल-वायु के अनुकूल भी होनी चाहिए। इस विषय में स्थानीय किसी योग्य वैद्य की सम्मति लेनी चाहिए। हमने पीछे कुछ "जन्मघुटी" के नुस्खे लिखे हैं, वे सभी दशा में, सभी ऋतुओं में और सभी स्थानों में अत्यन्त लाभदायक हैं। यदि "जन्मघुटी" के अतिरिक्त आवश्यकता पड़े तो दो-तीन दिन तक निम्नलिखित पेय देना चाहिए :—

एक तोला जौ को पानी में भिगो कर उसका दूध निकाल ले; और जितना जौ का दूध हो उसमें उतना ही पानी मिलावे। फिर माता के दूध के समान मीठा बनाने के लिए उसमें थोड़ी सी मिश्री या बताशा मिला कर पिला दे। जो लोग "अन्नप्राशन-संस्कार" करते हैं, उन्हें यह पेय न पिलाना चाहिए; क्योंकि जौ अन्न है।

बहुत से लोग बच्चे को मीठा खिलाते हैं। शक्कर, बताशे, मिश्री, विलायती मिठाइयाँ आदि अपने बच्चे को खिला कर प्रसन्न होते हैं, 'यह' अज्ञानता है। बच्चे के लिए अधिक मिष्टान्न विष का काम करता है। मिठाई बालक के पक्वाशय को निर्बल कर देती है। पेट की अँतड़ियाँ निकम्मी हो जाती हैं। फलतः बच्चा धीरे-धीरे सूख कर मर जाता है। मूर्ख माता-पिता बच्चे को छठे महीने से ही खाना-पीना सिखाने लगते हैं। उसे जलेबी, लड्डू, कलाकन्द, पेड़ा इत्यादि पदार्थ बड़े ही प्रेम से खिलाते हैं। बच्चे को मिठाई खाने की आदत पड़ जाती है, और फिर वह मिठाई के लिए रोया करता है। ऐसी आदत डालने के दोषी बच्चे के निकट-सम्बन्धी लोग हैं। मिठाइयों से बच्चों के के जेब भर देते हैं, बच्चे दिन भर उसे पेट में डालते रहते हैं। इसका परिणाम क्या होता है, इस पर आज तक किसी ने विचार भी किया है ? हमारी इन भूलों से बच्चे बेमौत मर रहे हैं।

बाजारू मिठाइयाँ जबकि बड़े मनुष्यों के लिए ही रोगोत्पादक हैं, तो बेचारे नवजात, अल्पवयस्क बच्चों के लिए तो उनके द्वारा जो हानि न हो वही थोड़ी है। बाजारू मिठाइयों पर सड़क की धूल उड़ कर पड़ती है, जिससे उसमें रोगोत्पादक लाखों कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त हवा और मक्खियाँ भी उन मिठाइयों पर रोगोत्पादक जन्तुओं को पहुँचाती हैं। हलवाइयों का मिठाई बनाने का ढङ्ग भी ऐसा घृणोत्पादक होता है कि देख लेने पर फिर

उनके यहाँ की वस्तु खाने की इच्छा नहीं होती। सारांश यह कि बच्चों के लिए ही क्या; बड़े आदमियों के लिए भी बाजारू मिठाइयाँ घातक सिद्ध हुई हैं। मिठाइयाँ हानिकारक होते हुए भी लोग खूब खाते हैं। भारतवर्ष में मिठाई को सर्वश्रेष्ठ खाद्य समझा है; अतएव बात-बात में मिठाई दिखाई देती है। त्योहार बिना मिठाई के सूना है; देवालय में बिना मिठाई लिए जाना पाप है; पाहुने की पहुनाई बिना मिठाई के फीकी है। उत्सव, हर्ष, आनन्द, लाभ-वृद्धि आदि के समय में भी मिठाई की चर्चा होती है। यहाँ तक कि यदि घर में गमी हो गई हो, तो आँसू बहाने के साथ ही मिठाई भी है। भारतवर्ष मिठाई का इतना प्रेमी हो गया है कि उसकी तृप्ति के लिए प्रति वर्ष लाखों रुपए की मिठाई विदेशों से आती है। ये मिठाइयाँ प्रायः बालकों के लिए होती हैं। बाजारों में रङ्गीन, गोल, तिर्छी, लम्बी, तिकोनी, चौकोनी, अनेक रूपों की मिठाइयाँ मिलती हैं। ये सब विदेशों से आती हैं। इन्हें हमारे बालक बड़े प्रेम से खाते हैं। इन मिठाइयों में प्राणहारी विष होता है, जो बच्चों को धीरे-धीरे निर्बल बना कर काल के गाल में पहुँचा देता है। विदेशी मिठाइयों में विष होता है। इसके लिए, हम पाश्चात्य विद्वानों का कथन ज्यों का त्यों यहाँ उद्धृत करते हैं:—

Every investigation that has been made into the colouring matters used by *confectioners for the adornment of their* sweetmeats has invariably ended in the discovery of poisons of the most destructive and deadly nature."-

In England, the centre of civilization, as we are so fond of calling it, poison is openly vended in the streets, shop-windows are filled with it; and although Doctor Lethely tells us that "within the last three years no less than seventy cases of poisoning have been traced to this source" still no steps are taken to decrease or prevent the evil.

Brunswick-green is frequently employed for colouring sweetmeats. This substance is known as the oxychloride of copper. A small quantity of it is sufficient to produce death. A case is mentioned by Henke where a boy aged three died from sucking a cake of green water colour prepared with this mineral poison, such as sold in the colour boxes of children. The most easily obtainable antidote is the white of Eggs.

In September, 1847, three adults and 8 children were taken to Marylebone Work-house having been seized with vomiting and retched after eating some coloured confectionary. Only two pennyworth had been purchased, and eleven persons had shared it, yet the symptoms appeared within ten minutes of its being taken. The poisonous colours had been made from verdigris.

Another case is mentioned by Dr. Lethely in May, 1850, two little girls were taken to London Hospital suffering from the effects of poison. They had brought some sugar ornaments and coloured confectionary from a Jew in Pethicoat Lane, and soon

after eating them, they were seized with vomiting pains in the stomach and burning of the mouth. On analysing the vomited matters, there were abundant evidence of the presence of arsenic, copper, lead, iron, all of which metals had been derived from the confectionary of which the children had partaken.

On making enquiry, Dr. Lethely was informed that between thirty and forty children had been attacked in a similar way, after purchasing sweetmeats from the Jew in question, who was not acquainted with the poisonous nature of his merchandise, for he had puchased it, so he stated as the refuse stock of a large and "very re pectable" firm in the city etc., etc.

—*Tricks of Trade London* 1856; pp. 42, 43, 44, 45 etc.

उक्त उद्धरण का सारांश यह है कि रङ्गीन मिठाइयों में, जो बाजारों में बिकती हैं, जहर होता है। बहुत से बच्चे उन्हें खाकर तत्काल बीमार हुए; और मर भी गए। इसलिए बाजारू मिठाइयाँ जो विलायत से आती हैं, भूल कर भी बच्चों को न देनी चाहिए। यदि आप चाहते हैं कि हमारा बालक कुछ मीठा खावे, तो उसे थोड़ा सा अच्छा शहद चटा दें। जो बालक मिठाई की जगह शहद खाता है; और दूसरे सब तरह के मिष्टान्न पदार्थों से बचाया जाता है; वह नीरोग, बलवान्, हृष्टपुष्ट और चिरायु होता है।

हमने ऊपर मिठाइयों का विरोध किया है; इससे यह मतलब न समझा जावे कि बाजारू मिठाइयाँ न देकर यदि घर में हलुआ,

लड्डू, आदि बना कर दे दिया जावे, तो कुछ हर्ज नहीं। बहुत सी माताएँ अपने बालक को मोटा-ताजा बनाने के लिए दूध को उबाल कर उसमें जायफल, केशर इत्यादि चीजें डाल कर पिलाती हैं; ये सब बड़ी भारी भूलें हैं। बच्चे ऐसे पदार्थों को हजम नहीं कर सकते, उनकी जठर-ज्वाला इतनी प्रबल नहीं होती। ऐसे पदार्थ उनके पेट में पहुँचने पर कई रोग पैदा कर देते हैं।

हम इसी जगह मादक पदार्थों का ज़िक्र भी कर देना ठीक समझते हैं। भारतवर्ष में अधिकांश छोटे बालकों को अफ़ीम देने का आम रिवाज है। इसका कारण माँ-बाप की मूर्खता है। जब बच्चा रोने लगता है; और मूर्ख माता उसके रोने का कारण नहीं जान सकती, तो उसे अफ़ीम खिला कर बेहोश कर देती है। ऐसी मूर्खाएँ भी आज माता कहलाने की अधिकारिणी बन गई हैं। बेचारा अबोध शिशु उस अफ़ीम के नशे में बेहोश आखें मींच कर पड़ा रहता है। बच्चा स्वयं अफ़ीम नहीं खाता, उसे जबरन खिलाई जाती है। जब बच्चा अफ़ीम के नशे में उन्मत्त होकर पड़ा रहता है, तब उसकी माता गृह-कार्य करती या अपनी सहेलियों में बैठकर इधर-उधर की गप्पें हाँकती है। जो स्त्रियाँ बच्चों का पालन-पोषण अपने लिए भार समझती हैं; उन्हें बच्चे पैदा नहीं करने चाहिए। हम पीछे गर्भ न रहने के बहुत से उपाय बता आए हैं, उन्हें काम में लाने से बच्चा पैदा न होगा।

अफ़ीम विष है, बुद्धिनाशक है। नवजात शिशु को अफ़ीम देकर उसके मस्तिष्क के उन्नत ज्ञानतन्तु नष्ट कर दिये जाते हैं।

जिस बच्चे को बचपन में अफ़ीम दी गई हो, वह बड़ा होने पर मन्दबुद्धि और मूढ़ होगा।

आराम—पैदा होने के बाद पन्द्रह दिनों तक बालक को खूब नींद आती है। वह दिन-रात सोता है। केवल भूख लगने या पाखाना पेशाब करने पर वह जागता है। १५ दिन तक बालक १८ से २० घण्टे तक नित्य सोता है। बाद में बच्चा जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे उसकी नींद कम पड़ती जाती है। दो महीने की अवस्था में जब बच्चे की नींद टूटती है, तब वह प्रायः एक-दो घण्टे जागता रहता है। एक वर्ष की अवस्था में बच्चे को १५ घण्टे नींद की आवश्यकता होती है। दो-तीन वर्ष की अवस्था में वह २४ घण्टे में लगभग १२-१३ घण्टे तक सोता है। जब तक बच्चा एक साल का न हो जावे, तब तक उसे सोने से न रोकना चाहिए। बहुत सी स्त्रियाँ दूध पिलाने के लिए बच्चे को नींद से जगा लेती हैं। दूध पिलाने या खिलाने के लिए बालक की निद्रा भङ्ग करना ठीक नहीं है। यदि बच्चे को एक ही करवट पड़े बहुत समय हो गया हो, तो उसे आहिस्ते से दूसरी करवट बदला देना चाहिए। छोटे बच्चों के अधिक सोने से उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

जहाँ बच्चा सो रहा हो, वहाँ किसी प्रकार का शोरगुल नहीं करना चाहिए। तेज प्रकाश होने से निद्रा में विघ्न होता है; और स्वास्थ्य को भी हानि पहुँचती है। इसलिए जिस कमरे में बालक सो रहा हो, वहाँ मन्द प्रकाश और शुद्ध वायु होना उसके लिए

अत्यन्त लाभदायक होता है। जिस चारपाई या पलने में बालक सोता हो, उसमें खटमल वग़ैरह नहीं होने चाहिए। खटमल, पिस्सू, मच्छर, मक्खी आदि प्राणी बालक की निद्रा को भङ्ग न करें, इस बात का ख़ूब अच्छी तरह ध्यान रखना चाहिए।

बालक को पलने में सुलाना सबसे अच्छा है। पलना विस्तृत, कोमल और ऐसा होना चाहिए, जिससे बालक नीचे न गिर सके। छोटे-छोटे बच्चों को बिल्ली, नेवला आदि जानवर मार डालते हैं। इस विषय में बहुत सावधानी रखनी चाहिए।

यदि बीमार हो जाने पर बच्चे को रात्रि अथवा दिन में नींद न आती हो, तो उसे अफ़ीम न देकर इलाज करना चाहिए। आगे चल कर दसवें अध्याय में हम कुछ नुस्ख़े लिखेंगे।

वृद्धि—छोटे बच्चे की वृद्धि शीघ्रतापूर्वक होती है। शरीर की वृद्धि के साथ ही साथ मस्तिष्क की वृद्धि भी होती है। मस्तिष्क का परिवर्त्तन यदि ध्यानपूर्वक देखा जावे, तो बहुत होता है। इस क्रमशः वृद्धि की ओर ध्यान देने से ख़ासा मनोरञ्जन होता है—बच्चा धीरे-धीरे मुसकुराने लगता है, किलक-किलक कर अपने मन की प्रसन्नता प्रकट करता है, चीज़ों को पकड़ने तथा नोंचने का यत्न करता है। दाँत निकलने लगते हैं, आँखों में अश्रु पैदा हो जाते हैं। नवजात शिशु को जैसा लेटा दिया जाता है, वह उसी दशा में पड़ा रहता है; क्योंकि उसकी मांस-पेशियाँ उस वक़्त बहुत ही कमज़ोर होती हैं। कुछ दिनों के बाद आप ही आप वह हिलने-डुलने लगता है; हाथ-पाँव हिलाने लगता है; उठने की चेष्टा करता

है; घुटनों चलता है; बैठने लगता है; और फिर खड़ा तथा चलने की चेष्टा करता है।

एक महीने का बच्चा मुसकुराने तथा हँसने लगता है। आरम्भ में बच्चा अन्धा होता है। उसके नेत्रों में देखने की शक्ति नहीं होती। वह बारम्बार पलक नहीं मारता। उसकी आँखों के पास अँगुली ले जाने पर वह आँखें नहीं मूँदता; अर्थात् उसे कुछ भी दिखाई नहीं देता है। दस दिन के बाद उसे अन्धकार और प्रकाश का भेद मालूम होने लगता है; और फिर धीरे-धीरे उसकी आँखों से उसे दीखने लगता है। आँखों के पास अँगुली ले जाने पर वह पलक मारने लगता है। दूसरे महीने उसकी गर्दन में ताक़त आ जाती है; और वह सिर ऊपर उठाना सीख जाता है, हाथ-पैर चलाने लगता है; और शब्दों पर ध्यान देने लगता है।

तीसरे-चौथे महीने वह अपनी माता को पहिचानने लगता है। वह प्रत्येक वस्तु को देख सकता है; किन्तु रङ्गों के भेद को नहीं जान सकता। जो कोई वस्तु उसके हाथ में आजाती है, उसे वह अपने मुँह में डालने लगता है। छठे महीने वह अपने खिलौनों से खेलने लगता है; और बैठने की कोशिश करता है। सात या आठ महीने का हो जाने पर स्वस्थ बालक आपों आप बैठने लगता है; और घुटनों के बल चलने या सरक कर चलने की चेष्टा करता है। एक वर्ष की अवस्था में बालक खड़ा होकर और किसी वस्तु को पकड़ कर धीरे-धीरे क़दम रखने लगता है। कभी-कभी कई बच्चे ९-१० महीने की उम्र में ही पैरों चलने लगते हैं। पाँव की मांस-पेशियाँ

मुदृढ़ न होने से पहले-पहल वह चलने की कोशिश करते वक्त गिर पड़ता है। ज्यों-ज्यों उसके पाँवों की शक्ति बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों वह अच्छी तरह चलने लगता है। यदि बच्चा एक वर्ष का हो जावे; और बिलकुल न चल सके, तो घबराने की आवश्यकता नहीं है। कभी-कभी स्वस्थ बालक दो वर्ष के हो जाने पर पैरों चलते हैं।

आठ-दस महीने की उम्र से बच्चा कुछ-कुछ बोलने का प्रयत्न करता है। एक वर्ष की उम्र में वह टूटे-फूटे शब्दों में अटकता हुआ "मामा, डाडा, काका" आदि शब्द बोलने लगता है। यह बोली प्रत्येक मनुष्य को अत्यन्त प्यारी लगती है।

ठीक समय पर पैदा हुए नवजात शिशु का वजन ६ पौण्ड से आठ पौण्ड तक होता है। किसी-किसी का इससे भी अधिक होता है; और किसी-किसी का ३ पौण्ड से भी कम। लड़कियों की अपेक्षा लड़कों में अधिक वजन होता है। पहले दो-तीन दिन में बच्चे का वजन घटता है; ५-७ औंस कम हो जाता है। आठ-दस दिनों का हो जाने पर; अर्थात् माता के स्तनों में दूध उतर आने पर, वह इस कमी की पूर्त्ति कर लेता है। बाद में हर सप्ताह ५-७ औंस के हिसाब से पाँच-छः महीने तक वृद्धि होती रहती है। पाँचवें महीने के आरम्भ में बच्चे का वजन जन्म-दिन के वजन से दूना हो जाता है; और साल में जन्म से तिगुने के लगभग होता है। प्रथम वर्ष के अन्त में बच्चे का वजन लगभग १० सेर होता है। पहले छः महीने तक हर सप्ताह में; और दूसरे छः महीनों में हर पन्द्रहवें दिन बच्चे की तोल का हिसाब रखना चाहिए।

कभी-कभी वच्चे वजन में कई दिनों तक घटते; और फिर एकदम वढ़ कर सारी कमी पूरी कर लेते हैं। ऐसा होना उनकी तन्दुरुस्ती और वीमारी को सूचित करता है। वीमार वालकों का वजन नहीं वढ़ता; वल्कि घट जाता है। मासिक-वृद्धि का नक़शा लगभग अङ्कों में नीचे दिया जाता है :—

वच्चों की मासिक-वृद्धि का नक़शा

अवस्था	प्रत्येक मास की वृद्धि	कुल वजन
पहिले महीने में	१३ औंस	८ पाउण्ड
दूसरे ,,	३० ,,	९ ,, १४ औंस
तीसरे ,,	२७ ,,	११ ,, ७ ,,
चौथे ,,	२६ ,,	१३ ,, ३ ,,
पाँचवें ,,	२१ ,,	१४ ,, ८ ,,
छठे ,,	२० ,,	१५ ,, १२ ,,
सातवें ,,	१७ ,,	१६ ,, १३ ,,
आठवें ,,	२३ ,,	१८ ,, ४ ,,
नवें ,,	२२ ,,	१९ ,, १० ,,
दसवें ,,	२० ,,	२० ,, १४ ,,
यारहवें ,,	३३ ,,	२१ ,, १४ ,,
वारहवें ,,	७ ,,	२२ ,, १५ ,,

उत्पन्न होते ही बच्चे की लम्बाई १९ से २० इञ्च तक होती है। कोई-कोई बालक लम्बाई में कम से कम १६ इञ्च और अधिक से अधिक २४ इञ्च होते हैं। बालक प्रथम छः महीने में ४-५ और दूसरे छः महीने में ३-४ इञ्च बढ़ता है। इसके बाद इतनी शीघ्रता से क़द में वृद्धि नहीं होती।

श्वासोच्छ्वास—गर्भ में तो बालक माता के श्वास में से कमल द्वारा ग्रहण करता है; और उसी के द्वारा त्यागता है। उस वक्त माता के रक्त द्वारा बच्चे को ऑक्सिजन मिलता है। गर्भ में बालक के शरीर का स्वतन्त्र उपक्रम नहीं होता, वहाँ बालक निद्रितावस्था में रहता है। पैदा होने पर उसे अधिक ऑक्सिजन की आवश्यकता होती है। संसार में आते ही बालक के फेफड़े फैल जाते हैं; और उनमें श्वासोच्छ्वास की क्रिया आरम्भ हो जाती है। नवजात शिशु एक मिनिट में ४४ बार साँस लेता है। कुछ दिनों के बाद श्वासों की संख्या घट कर ३५ से ४० तक हो जाती है। आयु का दूसरा साल लगते ही २८ बार साँस लेने लगता है। तीसरे चौथे वर्ष में एक स्वस्थ बालक प्रति मिनिट २५ बार साँस लेता है। जो बच्चा धीरे-धीरे और गम्भीर साँस लेता है, वह दीर्घायु और तन्दुरुस्त होता है। जो बालक जल्दी-जल्दी साँस ले, उसे अस्वस्थ समझना चाहिए। बच्चा हमेशा नाक से ही श्वासोच्छ्वास की क्रिया करे, इस बात का ध्यान माता-पिता को जरूर रखना चाहिए। अगर वह मुख से साँस लेता हो, तो उसके मुख को हाथ से बन्द करके दबा रखना चाहिए; अथवा एक कपड़े की पट्टी बाँध

देनी चाहिए। स्वास्थ्य के लिए नाक के द्वारा ही श्वासोच्छ्वास की क्रिया आवश्यक है; अतएव माता-पिता को नाक से साँस लेने तथा छोड़ने की आदत अपने बच्चे को डालना चाहिए।

तत्काल पैदा हुए बच्चे की नाड़ी भी बड़ी तेजी से फड़कती है। एक मिनिट में १३० से १३३ तक धड़कती है। दूसरे सप्ताह में प्रति मिनिट १२० से १२५ तक धड़कती है। नाड़ी की गति क्रमशः घट कर दूसरे वर्ष ११० और पाँचवें वर्ष १०० हो जाती है। रोते वक्त बच्चे की नाड़ी की धड़कन २० से ३० बढ़ जाती है और सोते समय नाड़ी की गति-संख्या प्रति मिनिट ३० से २० तक घट जाती है। नाड़ी की गति प्रायः अनियमित होती है, ऐसी दशा में उसे रोगी न समझ लेना चाहिए।

लोई—लोई आटे की बनाई जाती है। पानी डाल कर थोड़ा सा आटा गूँथ लेना चाहिए; और एक गोला सा बना कर बच्चे के शरीर पर नित्य फेरना चाहिए। इसके फेरने से उसके शरीर के छोटे-छोटे रोम सब उखड़ जाते हैं, और शरीर खूबसूरत हो जाता है। लोई करने के बाद ही बच्चे को स्नान कराना चाहिए। जिन बच्चों के शरीर पर लोई नहीं की जाती, उनके शरीर पर बहुत रोएँ होते हैं, जो यौवनावस्था में काले बाल की शक्ल में परिणत हो जाते हैं। सामने कपाल पर लोई कर देने से बालक का कपाल खूबसूरत हो जाता है और मुँह मनोहर मालूम होने लगता है। चतुर माताएँ अपने बच्चों के मुख, ग्रीवा, कनपटी आदि

पर इस होशियारी से लोई करती हैं कि बड़े होने पर उन्हें हजामत बनाने की जरूरत बहुत ही कम पड़ती है। जब तक इच्छित स्थानों पर के बाल साफ़ न हो जावें, तब तक लोई करना चाहिए।

दाँत—यद्यपि दाँतों का निकलना बच्चे के स्वास्थ्य पर निर्भर रहता है; तथापि साधारणतः छठे या सातवें महीने से दाँतों का निकलना आरम्भ हो जाता है। पहले-पहल सामने के दो दाँत निकलते हैं, जिनका काम केवल काटना है। इन दाँतों से कोई वस्तु चबाई नहीं जा सकती। फिर तीन-चार सप्ताह बाद नीचे के दो दाँत निकलते हैं। आठवें महीने इन दाँतों के आस-पास एक-एक दाँत निकलता है। बाद में तीन-चार महीने तक एक भी दाँत नहीं निकलता। १२ वें अथवा १४ वें महीने चार दाढ़ें निकलती हैं। अठारहवें या बीसवें महीने नीचे-ऊपर चार दाँत और निकलते हैं। इसके बाद जब बालक ढाई वर्ष का हो जाता है; तब नीचे की चार दाढ़ें और निकलती हैं। सारांश यह कि ढाई वर्ष की अवस्था में तन्दुरुस्त बच्चे के दस-दस दाँत प्रत्येक जबड़े में निकल आते हैं। ये दाँत "दूध के दाँत" कहे जाते हैं। छः वर्ष की अवस्था में दूध के दाँत गिर जाते हैं; और दूसरे नए दाँत उनकी जगह आ जाते हैं।

नवाँ अध्याय

(१) स्तन-पान

पयोऽमृत रसं पीत्वा कुमारस्ते शुभानने।
दीर्घमायुरवाप्नोतु देवाःप्राश्यामृतं यथा॥

अर्थात्—जैसे देवगण अमृत-पान कर दीर्घायु हो जाते हैं; वैसे ही आपका बालक दूधरूपी अमृत पीकर चिरायु हो।

जिस तरह माता अपने गर्भ में बच्चे के लिए ध्यान रखती थी, उसी तरह अब उसे गोद में भी सावधान रहना चाहिए। इस वक्त माता दुग्ध के द्वारा अपने बालक पर अच्छा या बुरा, जैसा चाहे वैसा प्रभाव डाल सकती है। वैद्यक ग्रन्थों में लिखा है कि प्रसव के तीसरे दिन प्रसूता को अच्छी तरह अर्थात् चोटी से एड़ी तक स्नान करा कर स्वच्छ वस्त्र पहनाना चाहिए। फिर प्रसूता को पूर्व दिशा की तरफ़ मुँह करके बैठाना चाहिए; और उसकी गोदी में बालक को इस प्रकार देना चाहिए कि बच्चे का मुँह उत्तर दिशा की ओर रहे। इस समय निम्नलिखित श्लोक बोला जाता है :—

चत्वारःसागरास्तुभ्यं स्तनयो क्षीर वाहिणः ।
भवन्तु सुभगे नित्यं वालस्य वलवृद्धये ॥

अर्थात्—तेरे बालक की शरीर-वृद्धि के लिए चारों समुद्र तेरे स्तनों में प्रतिदिन क्षीरवाही होकर रहें; और तेरे दूध-रूपी अमृत का पान कर यह तेरा बालक बलवान् हो ।

स्तन को धोकर पहले उसमें से थोड़ा सा दूध भूमि पर गिरा कर बाद में बच्चे के मुँह में स्तन देना चाहिए । इस समय स्त्री का स्तन अत्यन्त कोमल होता है; तथा बच्चा भी दो दिन का भूखा होता है, इसलिए सम्भव है कि बच्चा बड़े वेग से दूध पीने लग जावे । दूध पिलाने के पूर्व बच्चे को थोड़ा सा मक्खन चटा देना चाहिए । यदि मक्खन न मिले, तो ताजा घी भी काम में लाया जा सकता है ।

बालक को दूध पिलाने के पूर्व स्तन को हमेशा धो डालना चाहिए । ठण्डे पानी की अपेक्षा गर्म पानी से धोना विशेष लाभ-प्रद सिद्ध हुआ है । स्तन की त्वचा पर सदैव पसीना निकला करता है; वह एक प्रकार का दूषित पदार्थ है । यदि स्तन-पान कराने के पूर्व स्तन को धोया नहीं जावेगा, तो बालक के मुख में पसीने का भाग जावेगा; और वह उसके स्वास्थ्य को नष्ट कर देगा । दूध पिलाने के पूर्व स्तन को दबा कर थोड़ा सा दूध भी निकाल देना चाहिए । दूध पीने के बाद चर्बी का अंश तथा दूषित अंश स्तनों में रह जाता है; इसलिए उसे निकाल देना ही अच्छा है ।

स्तन-पान कराते समय जननी को अपनी शारीरिक तथा मानसिक स्थिति अच्छी रखनी चाहिए; क्योंकि इस समय उसकी प्रकृति का प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। इन बातों को आज कल की माताएँ बिलकुल नहीं जानतीं। मानसिक शक्ति का वर्णन हम पीछे उदाहरण सहित लिख आए हैं; अतएव यहाँ अधिक कुछ न लिख कर, केवल इतना ही बता देना चाहते हैं कि माता की शारीरिक तथा मानसिक स्थिति का प्रभाव स्तन-पान के द्वारा बालक पर अवश्य होता है। स्तन-पान कराते समय यदि माता के विचार पवित्र, उदार, शान्त, धार्मिक और उच्च रहे, तो बालक भी उक्त गुणों से भूषित होगा। इसके विरुद्ध यदि स्तन-पान के समय ईर्ष्या, द्वेष, क्षुद्रता, अनुदारता, चञ्चलता, अधार्मिकता आदि अवगुणों ने माता के हृदय में स्थान पाया, तो बच्चा भी वैसा ही बन जावेगा। क्रोधी माता का अथवा क्रोध में पिलाया हुआ दूध बच्चे के लिए ज़हर होता है। जिस प्रकार बालक गर्भ में माता के गर्भाशय से पोषण पाता था, उसी तरह वह गर्भ के बाहर निकल कर भी माता के रक्त से ही पोषण प्राप्त करता है। गर्भावस्था में माता के विचार और विकारों का प्रभाव जिस प्रकार बालक पर होता है, ठीक उसी तरह स्तन के दूध द्वारा स्तन-पान करने वाले बच्चे के मन पर होता है। यह बात अक्षरशः सत्य है।

बालक को दूध पिलाने के पूर्व जननी को चाहिए कि समस्त झञ्झटों और झगड़ों से अपने मन को खींच कर बालक की ओर लगा दे। मन के समस्त विकारों को त्याग कर उसे शान्त और

पवित्र करने के बाद अपने बच्चे को स्तन-पान के लिए गोद में लेना चाहिए। उस समय अपने बालक की हित-कामना के सिवाय और दूसरे विचारों को पास न फटकने देना चाहिए। माताओं को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि उनके बालक का शरीर एवं मस्तिष्क उनके दूध का ही बनता है। जिस समय दूध बनता है, उस समय जननी के भले और बुरे विचार उसके दूध में प्रवेश कर जाते हैं; और दूध के द्वारा बालक में चले जाते हैं। इस विषय में अधिक प्रमाण की आवश्यकता ही क्या है ? क्योंकि इस बात को सभी मानते हैं कि खुराक के अनुसार प्राणियों का स्वभाव भी बनता है। डॉक्टर ट्राल लिखते हैं :—

Mental shocks, anger, melancholy, and all disagreeable or abnormal mental conditions render all the secretions (milk as well as rest) more or less morbid and correspondingly damage the child which partakes of the vital aliments.

अर्थात्—मानसिक विकार; जैसे—क्रोध, शोक, खेद, चिन्ता आदि शरीर के समस्त रसों को, जिनमें दूध भी शामिल है, विकारी बनाते हैं; और अन्त में उन रसों के पीने वाले बालक के शरीर में दूषण उत्पन्न करते हैं।

माता के खान-पान के अनुकूल दूध भी बनता है; और वह बालक पर अपना प्रभाव करता है, अतएव जब तक बच्चा स्तन-पान करता है, तब तक माता को अपनी खुराक में बहुत ही सावधानी रखनी चाहिए। सड़े, बासी, तीक्ष्ण, चरपरे, कड़वे, मादक और गुरुपाक पदार्थ कदापि न खाने चाहिए।

हमेशा सादा, हलका, रुचिकारक और बलवर्द्धक भोजन करना चाहिए। इन दिनों यदि दवा-दरू खाई जावेगी, तो स्तन-पान करने वाले बालक पर उनका प्रभाव हुए बिना नहीं होगा। इसलिए बच्चे वाली स्त्री को दवा देने के पहले दवा के गुण-दोषों को खूब अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए। दूध में दवा का क्या प्रभाव होता है, इसके लिए एक उदाहरण है:—

किसी दुधारू पशु को लहसुन खिला कर देखिए। दूसरे दिन उसके दूध में भी लहसुन की गन्ध आवेगी। जो लोग लहसुन नहीं खाते, उन्हें यदि यह दूध पीने को दिया जावे, तो नहीं पी सकते।

बालक को तीसरे दिन से स्तन-पान कराया जाता है; इसका यह मतलब समझा जाता है कि दो दिन तक प्रसूता के स्तनों में दूध नहीं बनता; परन्तु ऐसा मानना केवल भ्रममात्र है। माता के स्तनों में दूध उसी समय से बनने लगता है, जब से कि बालक भूमिष्ट होता है। उस समय दूध होता अवश्य है; लेकिन थोड़ा, चिकना, और गाढ़ा होता है। इस कारण सहज ही में बाहर नहीं निकलता। दो दिन तक स्तनों में दूध जमा होता रहता है, इसलिए जब वह पतला होकर निकलने योग्य होता है, तब लोग समझते हैं कि अब दूध उत्पन्न हुआ है। जो स्त्री पहली बार प्रसूता होती है, उसके स्तनों के मुँह उठे नहीं होते। अतएव बालक के मुँह में उसके स्तन आसानी से नहीं आ सकते। उपरोक्त कारणों से २-३ दिन तक बालक को स्तन-पान नहीं कराया जाता। हमारी समझ से यह अनुचित है। पहिले दिन से ही बालक को स्तन-पान कराना चाहिए। दूध भले

ही कम हो; लेकिन बालक के मुँह में स्तन देते रहना चाहिए। बालक जब स्तनों को मुख में लेकर चूसता है, तब स्तन के ज्ञान-तन्तुओं में जाग्रति होती है। दूध तय्यार करने वाली ग्रन्थियों को ये ज्ञानतन्तु जाग्रत कर देते हैं; अतएव यदि दूध न भी उतरता हो, तो भी पाँच-सात बार स्तन-पान कराना चाहिए।

पहले दिन से ही बालक को दूध पिलाने का एक महत्त्वपूर्ण कारण और भी है। वह यह कि स्तनों में जाग्रति होने से गर्भाशय और अण्डाशय भी जाग्रत होते हैं। यह बात अनुभव-सिद्ध है कि गर्भाशय के विकारों के कारण स्तनों में भी विकार हो जाते हैं। स्तन और गर्भाशय का इतना निकटवर्त्ती सम्बन्ध होने के कारण, गर्भाशय को ठीक रखने के लिए बालक को जन्म के प्रथम दिन से ही दूध पिलाना बहुत ही उचित है। प्रसव के बाद गर्भाशय का सिकुड़ना आरम्भ हो जाता है; और वह धीरे-धीरे ठोस गोला सा बन जाता है। इसी गोले के कारण प्रसूता को जो कष्ट होता है, उसे "वायगोला" कहते हैं। जब गर्भाशय गोले का रूप धारण कर लेता है, तब रक्तस्राव होने का डर नहीं रहता; परन्तु यदि यह गोला ठोस न हुआ और गर्भाशय शिथिल रहा, तो रक्तस्राव के कारण स्त्री की मृत्यु हो जाना सम्भव है। इसलिए प्रति दिन यह जाँच कर लेनी चाहिए कि गोला ठोस हुआ है या नहीं। एकाध बार यदि इस गोले के ढीले होने से रक्तस्राव होने लगे, तो बालक को स्तन-पान कराने लग जाना चाहिए। ऐसा करने से गर्भाशय सिकुड़ता है। सारांश यह कि स्तन-पान कराना ही बालक और

उसकी माता के लिए विशेष लाभप्रद है। प्रसूता के स्तनों में जो दूध पहिले-पहल उतरता है, उसमें "कोलेस्टरीन" नामक जड़ पदार्थ होता है, यह पदार्थ प्रत्येक स्तनधारी प्राणियों के दूध में पाया जाता है, यह रेचक होता है। गर्भावस्था में, जो मल बालक के पेट में जमा रहता है, उसे दूर करने के लिए प्रकृति ने माता के दूध में इस रेचक पदार्थ को रक्खा है। जब परमात्मदेव ने माता के दूध से बच्चे का पेट साफ़ होने की उत्तम व्यवस्था कर दी, तब अन्य रेचक पदार्थ पिला कर उसके पेट को जीवन के प्रथम दिन से ही दवा का आदी बनाना अनुचित है।

स्तन-पान बालक के लिए ईश्वरीय आज्ञा है। प्रकृति यथा उत्पन्न होते ही उसकी खुराक माता के स्तनों में ही प्रदान करती है। जिन्हें प्रकृति स्तन-पान के योग्य नहीं समझती, उनके शरीर में स्तन नहीं हैं। मनुष्य-जातिके लिए ईश्वर ने स्तन-पान का विधान किया है। माता का दूध ही बालक के लिए प्रकृत आहार है। डॉ० प्राउट का कहना है—दूध एक नमूना है; और बतलाता है कि इसमें पोषक तत्त्व कौन-कौन से हैं। दूध में अधिक भाग शक्कर, मक्खन और पनीर होता है। स्तनों में दूध उस समय तक निकलता रहता है, जब तक कि बालक अन्य प्रकार के पदार्थ पचाने योग्य नहीं होता। इन बातों से यह सिद्ध होता है कि माता दूध ही बच्चे का प्राकृत आहार है। अमेरिका के एक प्रसिद्ध डॉक्टर थॉमस एस० साथवर्थ एम० का कहना है—दूध केवल माता का ही पिलाना चाहिए। यदि किसी कारण से माता का दूध

दूषित हो या कम हो, तो उसकी चिकित्सा करके तथा दोषों को हटा कर दूध बढ़ाना चाहिए।

हमारे देश में एक आम रिवाज सा हो गया है कि यदि माता के स्तनों में किसी प्रकार का दोष हुआ, तो बिना कुछ सोचे-विचारे गौ, भैंस, बकरी आदि प्राणियों का दूध बच्चे को पिलाने लगते हैं। इस अज्ञानता का फल यह होता है कि बच्चा उस दूध को पचा नहीं सकता; और बीमार होकर अन्त में मर जाता है। यदि माँ के दूध में किसी तरह का दोष हो, तो तत्काल उसकी औषधि करनी चाहिए। यदि दूध कम उतरता हो, तो दुग्ध-वर्द्धक उपाय करना चाहिए। हम आगे "दुग्ध-चिकित्सा" के ऐसे कुछ नुसखे लिखेंगे।

कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी हैं, जो अपने बच्चों को दूध पिलाना पसन्द नहीं करतीं। ऐसी स्त्रियों को हम बदक़िस्मत कह सकते हैं। डॉक्टर बुल साहब लिखते हैं:—

अपना दूध पिलाना स्वस्थ स्त्री के लिए उतना ही हितकर है, जितना कि बच्चे के लिए। दूध पिलाने से स्त्री को प्रथम मास में होने वाले प्रसूतिका रोग नहीं होने पाते; तथा उसका चित्त प्रसन्न रहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि बच्चे को दूध पिलाने वाली स्त्री का स्वास्थ्य पूर्वापेक्षा सुधर जाता है। बहुत सी स्त्रियाँ जो पहले निर्बल थीं, वे बच्चे को दूध पिलाने के वक़्त सबल हुई देखी गई हैं। बालक यदि दूध पीता रहता है, तो छाती में फोड़ा-फुन्सी कुछ भी नहीं होने पाते।

हमारे देश की स्त्रियाँ अपने बच्चों को खुद आप ही दूध पिलाती हैं। जिन्हें पाश्चात्य हवा लग गई है, वे ही स्त्रियाँ अपने बच्चे को दूध पिलाना बुरा समझती हैं। जो स्त्रियाँ अपने बच्चे को दूध नहीं पिलातीं, वे पापिनी हैं; क्योंकि बच्चा बिना माता के दूध के निर्बल हो जाता है। ऐसी स्त्रियों को चाहिए कि वे गर्भ धारण ही न करें। अङ्गरेज-स्त्रियाँ वृद्धा होकर भी जवान सी मालूम होती हैं, इसका यही कारण है कि वे अपनी सन्तान को स्तन नहीं पिलातीं। इसमें स्वार्थ है—ऐसी माताएँ स्वार्थी माताएँ हैं; क्योंकि यदि बच्चा पैदा होने पर स्त्री अपने बालक को दूध नहीं पिलाती, तो २-३ महीने में वह फिर पहले सी ही युवा हो जाती है। विलासी व्यक्ति ही ऐसा करते हैं। वे अपने रूप-यौवन के आगे अपने हृत्खण्ड बालकों को तुच्छ समझते हैं! धिक्कार है ऐसी माताओं को!!

स्वस्थ माता को चाहिए कि अपने बालक को अपना दूध पिलावे। हाँ, दूध के दूषित होने पर और बीमारी की हालत में दूध पिलाना बुरा है। जिन स्त्रियों को कण्ठमाला और क्षयी नामक रोग हो, उन्हें चाहिए कि अपने बालक को अपना दूध न पिलावें। किसी हृष्ट-पुष्ट धाय का दूध पिलाना चाहिए; ताकि इन रोगों के कीटाणु जो बालक के शरीर में गर्भावस्था में प्रवेश कर चुके हों, मर जावें।

यह बात डॉक्टरी ग्रन्थों में पाई जाती है कि कण्ठमाला और क्षयी रोग के कीटाणु बालक में माँ-बाप से आते हैं। खेद है कि फिर भी लोग विवाह के समय इस बात की ओर अच्छी तरह ध्यान

नहीं देते। क्षयी और कण्ठमाला के रोगी माता-पिता की सन्तान अन्य बालकों की अपेक्षा शीघ्र ही जवान होती है। वह संसार के अन्य काम-काज शीघ्र आरम्भ कर देती है; और विवाह भी कर लेती है। ऐसे रोगी माता-पिता की सन्तान अपने शरीर-उन्नति की ओर ध्यान न देकर, बच्चे पैदा करने लगती है। फल यह होता है कि शीघ्र ही उन्हें क्षय हो जाता है; और मर जाते हैं। ऐसे लोग अपने पीछे अपने बाल-बच्चे छोड़ जाते हैं, वे भी उनकी तरह युवावस्था में पहुँचते-पहुँचते मर जाते हैं। इसलिए कण्ठमाला और क्षयी दोनों राजरोग कहे जाते हैं।

अब हम यहाँ अच्छे-बुरे दूध के जानने की विधि लिखेंगे। आयुर्वेद-ग्रन्थों में लिखा है :—

यद्विरेकतां याति नच दोषैरधिष्ठितम्।
तद्धि शुद्धं पयो विन्द्यात्पाययेत्तंचवैसुधीः॥

अर्थात्—जिस स्त्री का दुग्ध जल में डालने से तुरन्त मिल जावे और दूध का कोई अंश, रङ्ग तथा तार आदि जल में अलग न दिखाई पड़े, उस दूध को शुद्ध समझना चाहिए।

सुश्रुत में भी इसी प्रकार लिखा है। स्त्री के दूध की परीक्षा पानी में डाल कर करनी चाहिए। जो दूध शीतल, स्वच्छ, पतला, शङ्ख के रङ्ग का और पानी में डालते ही उसमें मिल जावे, वही दूध अच्छा होता है। ऐसे दूध को पीने वाला बालक आरोग्य रहता है और पुष्ट होकर बलवान् बनता है।

जो दूध पानी में डालने से तैरता रहे; और स्वाद में कसैला हो, तो उसको वात-दूषित दुग्ध समझना चाहिए। पानी में डालने से जिसके पीले-पीले दाने अथवा लकीरें हो जावें; और जो स्वाद में खट्टा हो, वह दूध पित्त से दूषित समझना चाहिए। जो दूध पानी में डालने से डूब जावे, और चिकना हो, उसे कफ-दूषित दूध समझना चाहिए। जिस दूध में वात-पित्त, कफ-पित्त, कफ-वात के अथवा वात, पित्त और कफ तीनों के लक्षण मिलते हों, उस दूध को त्रिदोष दूषित दूध समझना चाहिए।

नवजात शिशु का पक्काशय बहुत ही छोटा होता है। उसमें एक या दो औन्स तरल पदार्थ समा सकता है। एक महीने की अवस्था तक पक्काशय बढ़ जाता है और उसमें ३-४ औन्स पतला पदार्थ आ सकता है। तीन महीने में पाँच औन्स और एक साल के अन्त में वह १० औन्स ग्रहण कर सकता है।

डेढ़-दो महीने तक थूक बहुत ही कम बनता है। इस समय बच्चे के मुँह में केवल इतना ही थूक बनता है कि उसका मुँह तर रहे। तीसरे और चौथे महीने में थूक अधिक बनने लगता है। जब बालकों के मुँह में दाँत निकलने लगते हैं, तब थूक और भी अधिक बनने लगता है।

दूध पक्काशय में जाते ही जमने लगता है। वह १०-१५ मिनिट में बिलकुल जम जाता है। माता का दूध छोटे-छोटे कणों के रूप में; और गौ का दूध यदि उसमें पानी नहीं मिलाया जाता, तो बड़ी-बड़ी गाँठों के रूप में जम जाता है। छोटे बालकों का पक्काशय

माता के दूध को कोई डेढ़ घण्टे में पचाता है; किन्तु गौ का दूध इससे अधिक समय में पचता है। जब बालक को अधिक दूध पिला दिया जाता है या वह खुद अधिक पी जाता है, तब दूध की गाँठों का बहुत सा हिस्सा पक्वाशय से आँतों में पचने के लिए चला जाता है। आँतों में भी उसकी पूरी पचन-क्रिया नहीं होती; और दूध के अपरिपक्व करण मलाशय में पहुँचते हैं। ये करण मलाशय से ज्यों के त्यों बाहर निकल जाते हैं। अब यहाँ यह बतला देना आवश्यक है कि कौन-कौन सी स्त्रियाँ दूध पिलाने के अयोग्य हैं।

हम पीछे लिख आए हैं कि कण्ठमाला और क्षयी रोग से ग्रसित माताओं को चाहिए कि अपने बच्चे को दूध न पिलावें। जो माता बहुत निर्बल और कम उम्र हो, उन्हें भी बालक को दूध न पिलाना चाहिए। स्तनों की बनावट में कुछ फ़र्क़ हो, तो बच्चे को दूध न पिलाना चाहिए। बालक को दूध पीते अथवा माता को दूध पिलाते समय किसी तरह का कष्ट प्रतीत होता हो, तो दूध न पिलाना चाहिए। कभी-कभी किसी स्त्री का दूध इतना खराब हो जाता है कि बालक पीकर मर जाता है। इस समय शीघ्र ही दूध की परीक्षा की जानी चाहिए। जब तक दूध शुद्ध न हो जावे, तब तक माता को चाहिए कि वह अपने बालक को दूध हर्गिज़ न पिलावे। जो माताएँ अत्यन्त उग्र स्वभाव की हों; जो छोटी-छोटी घटनाओं से भी भयभीत हो जाती हों; जो शोकातुर हों; जो अपने कर्त्तव्यों को अच्छी तरह न समझती हों; जो बच्चे

का पालन-पोषण अपने लिए भार समझती हों; दूसरों को देख कर कुढ़ा करती हों; और मन ही मन बड़बड़ाया करती हों; विषयी हों; गर्भिणी हों, ऐसी माताओं को चाहिए कि अपने बालकों को अपना विष-तुल्य दूध न पिलावें। पहले उपरोक्त दोषों को दूर करना चाहिए, तत्पश्चात् माता को चाहिए कि अपने बच्चे को स्तन-पान करावे; अन्यथा बालक पुष्ट, बलवान्, स्वस्थ और दीर्घायु नहीं हो सकता। जिन स्त्रियों के स्तनों में दूध कम उतरता हो, उन्हें निम्नलिखित उपाय करने चाहिए:—

दुग्ध-चिकित्सा

(१) शालि चावल, साठी के चावल, गेहूँ, रामतोरी, नारियल, कसेरू, सिंघाड़ा, सतावर, विदारीकन्द और लहसुन को सेवन करे। *जो स्त्रियाँ मांस खाती हों, वे छोटी-छोटी मछलियाँ खावें।* कलमी चावलों का काढ़ा अथवा इन्हें दुग्ध में पीस कर पीने से दूध खूब उतरता है। काश्मीरी लोग इन चावलों को महातण्डुल अथवा महा चावल कहते हैं। विदारीकन्द का रस पीने से अथवा उसका चूर्ण दूध के साथ सेवन करने से स्त्रियों का दुग्ध बहुत ही बढ़ जाता है।

(२) जिन स्त्रियों का दुग्ध दूषित हो, उन्हें मूँग का काढ़ा बना कर पीना चाहिए। भारङ्गी, देवदारु, बच, अतीस को पीस कर सेवन करने से दुग्ध शुद्ध हो जाता है। पाढ़ा, मूर्वा, मोथा, चिरायता, सोंठ, इन्द्रजौ, शारिवा, कुटकी इन सबको छः-छः माशा

लेकर काथ बना कर पीने से भी दूध शुद्ध हो जाता है। परवल, नीम, पीतशाल, देवदारु, पाढ़ा, मूर्वा, गिलोय, कुटकी और सोंठ का काढ़ा बना कर पिलाने से भी दूध शुद्ध हो जाता है।

(३) दूध और चावल के आहार से भी दूध बढ़ जाता है।

(४) बच, नागरमोथा, अतीस, बड़ी हर्र, देवदारु, नागकेशर, कमल-पुष्प, प्रत्येक २-२ तोले लेकर इन्हें जौ-कुट कर ले और आध सेर पानी में डाल कर आग पर चढ़ा दे। जब दस तोले के क़रीब पानी रह जावे, तब मल छान कर पिला दे। आवश्यकता हो तो मिश्री मिला ले। यह काढ़ा नित्य पिलाने से दूध खूब उतरता है।

(५) सौंफ़ और सतावर दोनों एक-एक तोला बारीक पीस कर ठण्डे पानी के साथ पीने से भी दूध उतरता है।

(६) गिलोय को गो-दुग्ध में उबाले, और उस दूध में गो-घृत मिला कर पिलाने से दूध बढ़ता है।

(७) यदि दूध अधिक आता हो, तो किसी दूसरे बच्चे को पिला देना चाहिए; अथवा खरिया मिट्टी और कपूर का लेप कुचों पर करना चाहिए।

(८) बीजबन्द और सफ़ेद जीरा सिरके में पीस कर छाती पर लेप करने से भी दूध कम हो जाता है।

(९) यदि दूध स्तनों में जम जावे, तो मूँग और साठी चावल दोनों को पीस कर, गुनगुना करके छाती पर लेप कर दे।

(१०) वनफ़शा दो तोला दूध में पीस कर थोड़ा गरम करके छाती पर लेप करने से जमा हुआ दूध स्तनों में उतर आवेगा।

(११) स्तन अगर सूज अथवा पक गए हों, तो उनका दूध निकाल देना चाहिए। पित्तनाशक शीतल द्रव्यों तथा सूजन और दर्द-नाशक दवाइयों का प्रयोग करना चाहिए; अथवा जोंक लगवा कर रक्त निकलवा देना चाहिए।

(१२) इन्द्रायण की जड़ का लेप करने से स्तनों की सूजन और दर्द जाता रहता है।

(१३) हल्दी और धतूरे के पत्तों को पीस कर स्तनों पर लेप करने से पीड़ा शान्त हो जाती है।

(१४) बाँझ-ककोड़े की जड़ को पीस कर स्तनों पर लेप करने से स्तनों की पीड़ा जाती रहती है।

(१५) लोहे को आग में रख कर खूब गर्म कर ले। जब वह लाल हो जावे, तब पानी में बुझा ले। यह पानी पिलाने से स्तन-पीड़ा नष्ट हो जाती है।

(१६) मुलहटी, नीम, हल्दी, सँभालू, धौ के फूल इन सब को पीस कर बारीक चूर्ण कर ले। यदि स्तनों पर घाव हो गए हों, तो यह चूर्ण भुरका देने से अच्छे हो जाते हैं।

(१७) विदारीकन्द अथवा सतावर को गो-दुग्ध में डाल कर पीने से दूध बढ़ता है। जब तक इसे सेवन किया जावे, केवल दूध और भात खाना चाहिए।

स्तनों और दूध का दोष हटाने के बाद ही बच्चे को दूध

पिलाना चाहिए। जब तक दूध निर्दोष न हो जावे, तब तक धाय अथवा कृत्रिम दूध पिलाने का प्रबन्ध करना चाहिए। धाय तथा कृत्रिम दूध के विषय में हम अगले किसी अध्याय में स्वतन्त्र रूप से लिखेंगे। अब यहाँ यह बतलावेंगे कि बालक को किस प्रकार दूध पिलाना चाहिए।

हमारे देश में दूध पिलाने की कोई विधि मुक़र्रर नहीं है। माता चाहे जैसे अपने बालक को दूध पिला देती है। वह खड़े, बैठे, लेटे, छाती पर सुला कर, मन चाहा जैसे बच्चे के मुख में स्तन देकर उसे स्तन-पान कराते देखी जाती है। कभी-कभी तो माता चारपाई पर सोती हुई नीचे खड़े बच्चे को दूध पिला देती है। चर्खा कात रही हैं; और बगल में पड़ा बच्चा दूध पी रहा है, ऐसा सैकड़ों बार देखने में आया है। भारतवर्ष का यदि पतन हुआ है, तो एक ही तरह से नहीं; बल्कि सभी तरह से हुआ है। कितने आश्चर्य की बात है कि आजकल की स्त्रियाँ माता बनने के लिए उत्सुक हैं; लेकिन उन्हें बच्चे को दूध पिलाना तक भी नहीं आता। आज मनुष्य-जाति के बच्चे शूकर और कूकर से भी अधमावस्था में पलते हैं!

डॉक्टरों का कहना है कि यदि रात्रि के समय बच्चे को स्तन-पान कराना है, तो माता को पड़े-पड़े दूध न पिलाना चाहिए; बल्कि उठ बैठना चाहिए; और प्रेम से बच्चे को दोनों हाथों के सहारे उठा कर गोदी में सुखपूर्वक सुला कर स्तन-पान कराना चाहिए। यहाँ तो दिन में भी माताएँ लेटे-लेटे अपने बच्चे को दूध पिलाती रहती हैं। रात की तो पूछिए ही मत; स्तनों को खुला छोड़ कर गहरी

नींद में माताएँ तो खर्राटे भरती रहती हैं; और अज्ञान बालक मुँह में स्तन लिए पड़ा रहता है। माता बिछौने से उठी कि बच्चा रोया!

दूध पिलाते वक्त माता को चाहिए कि सब प्रकार के शोक, क्रोध आदि को त्याग कर आनन्दपूर्वक बैठ जावे; और सीधी बैठ कर बालक को बड़े ही प्रेम के साथ अपनी गोदी में ले। दूध पिलाते समय यदि माता का मुँह पूर्व दिशा में और बालक के पाँव उत्तर दिशा की तरफ रहे, तो बहुत ही अच्छी बात है। माता बच्चे को इस प्रकार हाथों पर रक्खे कि स्तन-पान करने के लिए झुकना न पड़े। यदि झुक कर दूध पिलाया जावे, तो माता जल्दी ही थक जाती है और बच्चे पर दबाव पड़ता है। झुक कर पिलाने से माता अच्छी तरह श्वासोच्छ्वास की क्रिया नहीं कर सकती। उसके फेफड़े दब जाते हैं; और कमर में दर्द होने लगता है। जब बच्चा बैठने योग्य हो जाता है, तब सब झञ्झटें हट जाती हैं; और वह बड़ी आसानी से दूध पी लेता है; लेकिन जब तक बालक बैठना न सीखे, तब तक बड़ी ही सावधानी से दूध पिलाना चाहिए।

जब स्तन दूध से भरे हों, तो पहले छाती को हाथ से सहारा देकर बालक के मुँह में स्तन देना चाहिए। ऐसा न करने से एकदम बहुत सा दूध कण्ठ में चला जावेगा और नाक के द्वारा बाहर निकल आवेगा। ऐसी दशा में बच्चा बहुत ही घबरा जाता है। पहले-पहल जरा सी देर मुँह में स्तन देकर हटा लेना चाहिए और फिर उसके मुख में देना चाहिए। माता को चाहिए कि समान रूप से अपने दोनों स्तन बच्चे को चुसावे। एक ही स्तन सदैव

देते रहने से दूसरा स्तन खराब हो जावेगा और उसकी दुग्ध-ग्रन्थियाँ निर्बल होकर निकम्मी हो जावेंगी, दूध भी अच्छी तरह पैदा न होगा। एक सबसे बड़ा भारी दोष यह होगा कि बच्चे की आँखें टेढ़ी हो जावेंगी; क्योंकि दूध पीते वक्त उसे एक ही ओर देखने का मौक़ा मिलेगा। अतएव माता को चाहिए कि समान रूप से अपने दोनों स्तन बच्चे को पिलावे।

एक ही ओर का स्तन पान कराने से बालक के शरीर पर भी प्रभाव होगा। बच्चे का एक अङ्ग पुष्ट और दूसरा निर्बल होगा। अग्नि के पास से आकर माता को तत्काल स्तन-पान न कराना चाहिए। कठिन श्रम तथा आग से तपने के बाद अपने स्तन का दूध पहले भूमि पर निकाल डालना चाहिए, तत्पश्चात् स्तन-पान कराना चाहिए।

एक यूनानी पुस्तक में लिखा है—दूध पिलाने के लिए अच्छी पहचान यह है कि बचा रोवे और दूध की स्वयं इच्छा प्रकट करे। दूध पीने के पहिले बच्चे का रोना भी गुणकारी है। एक सप्ताह तक बच्चे को बहुत ही कम मात्रा में दूध पिलाना चाहिए। यदि अधिक दूध पिला दिया जावेगा, तो बालक को अफरा वग़ैरह बहुत से रोग हो जावेंगे। यदि अफरा वग़ैरह रोग हो जावें, तो दूध पिलाना बन्द कर देना चाहिए; और बच्चे को लेटा रखना चाहिए; ताकि उसके पेट के आहार का पाचन हो जावे। जब बालक का पेट हलका मालूम हो; और अजीर्ण मिट जावे

तब उसे दूध पिलाना चाहिए। पहले का दिया हुआ दूध जब पच जावे, तब दूध पिलाना चाहिए।

बालक स्तन-पान के लिए ही रोता है, ऐसा एक आम ख्याल हो गया है। माताएँ बच्चे का रोना सुन कर उसके मुँह में अपना स्तन दे देती हैं; किन्तु ऐसा न करना चाहिए। स्तन-पान के लिए समय मुक़र्रर कर लेना चाहिए; और इस कार्य में घड़ी से सहायता लेनी चाहिए। बच्चा रोता हो, उसे स्तन-पान के लिए स्तन दिया जावे; और फिर बन्द न हो, तो समझ लेना चाहिए कि वह अस्वस्थ और व्याकुल है। कारण मालूम करके उसे दूर करने का उपाय करना चाहिए; अन्यथा बच्चे को मूर्च्छा या अपस्मार हो जाता है। कई बालकों के अण्डकोषों में आँत उतर आती है। अधिक रोने के कारण ही प्रायः बालकों के कानों में दर्द होने लगता है। जब तक बच्चे के रोने का असली कारण न मालूम हो जावे, तब तक निश्चिन्त नहीं रहना चाहिए।

बहुत सी मूर्खा तथा प्रमान्ध माताएँ रात-दिन अपने बालक को दूध पिला कर बड़ी ही खुश होती हैं। उनका अनुमान है कि जितना अधिक दूध पिलाया जावेगा, बालक उतना ही अधिक पुष्ट और बलवान् बन जावेगा; परन्तु इन मूर्खाओं को यह नहीं मालूम होता कि बच्चे को यदि उसके हाजमें की ताक़त से ज्यादा दूध पिला दिया जावेगा, तो वह रोगी होकर एक न एक दिन हमारी गोद सूनी कर जावेगा। अब हम यहाँ यह बतलावेंगे कि दूध किस अवस्था में और कितनी बार पिलाना चाहिए।

पहले तीन महीने तक दिन में दो-दो घण्टे के अन्तर से; और रात में केवल ३ बार दूध पिलाना चाहिए; अर्थात् दिन में सुबह ६ बजे, ८ बजे, १० बजे, १२ बजे, २ बजे, ४ बजे और ६ बजे; रात में ९ बजे, १२ बजे और ३ बजे दूध पिलाना चाहिए। चौथे महीने से दिन में ३-३ घण्टे के अन्तर से; और रात में केवल २ बार दूध पिलाना काफ़ी होता है, अर्थात् सुबह ६ बजे, ९ बजे, १२ बजे, ३ बजे और ६ बजे। रात में ९ बजे और ढाई बजे दूध पिलाना चाहिए। पाँचवें महीने दिन में ४ बार अर्थात् ६ बजे सुबह, १० बजे, २ बजे और ६ बजे; रात में केवल एक बार १० बजे बच्चे को दूध पिलाना चाहिए।

दूध पिलाने में घड़ी की सहायता जरूर लेनी चाहिए। हमारे शौक़ीन नवयुवक जो केवल शोभा मात्र के लिए अपने जेब में घड़ी और चेन डाले रहते हैं; उन्हें चाहिए कि उसका थोड़ा-बहुत उपयोग अवश्य करें। जब उनके घर में नवीन जीव उत्पन्न हो, तब दूध पिलाने का समय मालूम करने के लिए उसे अपनी श्रीमती के पास रख दें। यदि ८-१० महीने के लिए जेब में घड़ी न भी रहे, तो फ़ैशन में बट्टा न लगेगा। आशा है, बच्चे को दूध पिलाने में अवश्य घड़ी की सहायता लेकर अपने बच्चे को स्वस्थ और सबल बनावेंगे। यदि बालक रोया; और समय का ज्ञान न होने के कारण उसे बेवक़्त ही दूध पिला दिया गया, तो स्तन पूर्णतया ख़ाली नहीं होंगे। इसके अतिरिक्त स्तनों में दूध बनने के लिए काफ़ी वक़्त नहीं मिलता, जिससे स्तनों में काफ़ी दूध भी नहीं उतरता।

माता के दूध के पिछले अंश में चर्बी का भाग अधिक रहता है। दूध का यह अंश यदि माता के स्तनों में रह जाता है, तो दूसरी बार जब बच्चा दूध पीता है, तो यह अंश पहले उसके पेट में जाता है। इससे उसका हाज़मा ख़राब हो जाता है; और उसे हरे-पीले दस्तों की शिकायत हो जाती है। प्रत्येक बार बच्चे को दूध पिलाने में १०-१५ मिनट लगाना चाहिए। स्वस्थ बालक के लिए इतने समय तक दूध पीना काफी होता है। जो लोग उपरोक्त विधि के अनुसार अपने बालकों को दूध पिलावेंगे, उनकी सन्तान हमेशा ख़ुश रहेगी।

छोटे बालकों के पोषण के लिए माता के दूध से बढ़ कर और कोई पदार्थ नहीं है। वह उनका प्राकृतिक आहार है, उनके पोषण के लिए ईश्वरीय दान है। यदि माता के स्तनों में दूध न उतरता हो, तो इस कारण बालक को दूध पिलाना बन्द कर देना ठीक नहीं है। दूध उतारने का प्रयत्न करना चाहिए। कुछ उपाय हमने इसी प्रकरण में पीछे लिखे हैं। बच्चे को दूध पिलाना ही स्तनों में दूध उतारने के लिए सर्वोत्तम उपचार है। यदि माता के स्तनों में दूध बहुत कम अथवा देर से बनता हो, तो ४ घण्टे के अन्तर से अपना दूध पिलाना चाहिए; और बीच-बीच में कृत्रिम दूध देना चाहिए। यदि इतना करने पर भी स्तनों में दूध की कमी देखी जावे, तो माता को चाहिए कि छः-छः घण्टे के अन्तर से बच्चे को स्तन-पान करावे; किन्तु यह याद रखना चाहिए कि माता जितनी देर से बच्चे को दूध पिलावेगी, उतना ही कम दूध स्तनों

में उतरेगा। हमारे विचार मे स्तन-पान में ४ घण्टे से अधिक अन्तर न होना चाहिए। यदि माता का यह ख्याल हो कि चार घण्टे के अन्तर से दूध पिलाने पर भी बच्चे का पेट नहीं भरता, तो उसे अपना दूध न पिलाना चाहिए। गर्मी की बीमारी में, हृद्रोग में, स्तनों पर फोड़ा-फुन्सी, खाज, दाद वगैरह के हो जाने पर; और ज्वर की हालत में अपने बालक को भूल कर भी स्तन-पान न कराना चाहिए।

जब माता का दूध बालक को काफी परिमाण में न मिल सके, तब दूध पिलाने के लिए धाय का प्रबन्ध करना चाहिए। धाय चुनने में किन-किन बातों की, सावधानी की जरूरत है, यह हम आगे लिखेंगे।

(२) धाय

अव्यङ्गे ब्रह्मचारिण्यौ वर्णप्रकृतितःसमे ।
नीरुजे मध्य वयसौ जेवद्वत्से न लोलुपे ॥
हिताहार विहारेण यत्नादुपचरितेचते ॥

अर्थात्—माता के स्तनों में दूध न हो अथवा कम हो, तो दो धाएँ रखनी चाहिए। वे धाय निरोगी, मध्य वय की, जिनके बच्चे न मरते हों, बच्चे से स्नेह करने वाली, बालक के कुल की, वर्ण की, प्रकृतिकी, उत्तम अङ्गों वाली, ब्रह्मचर्य से रहने वाली, निर्लोभी, उचित आहार-विहार से रहने वाली होनी चाहिए।

अभी हमारे निर्धन भारतवर्ष में धाय रखने की रीति नहीं है। बढ़ती हुई दरिद्रता इसमें बाधक है। धाय रखने की असमर्थता

के कारण हज़ारों बालक मौत के मुँह में जा रहे हैं। जिन लोगों के पास पैसा है, वे धाय रखते हैं; किन्तु इस विषय में पूरा-पूरा ज्ञान न होने से वे धाय रखने में ग़लतियाँ करते हैं; अतएव यहाँ इस विषय में थोड़ा सा लिखना आवश्यक समझा गया।

सब से पहली बात यह है कि धाय बालक के वर्ण की होनी चाहिए; किन्तु भारतवर्ष में उच्च वर्णों की धायें नहीं मिलती हैं, यह वर्णसङ्करता है। माता-पिता उसे जन्म देते हैं; और धाय उसे दूध पिला कर बड़ा करती है। एक बालक के दो प्रकार के संस्कार होते हैं; अतएव वह बालक वर्णसङ्कर कहा जा सकता है। धाय के द्वारा पले हुए बालकों का शरीर सुन्दर और बलवान् हो सकता है; किन्तु गुणों में वे कदापि उत्तम नहीं हो सकते। यह हम पीछे लिख आए हैं कि दूध के द्वारा बच्चे पर बड़ा ही प्रभाव होता है; अतएव धाय के चुनने में बड़ी चतुरता की आवश्यकता है।

एक-दो बच्चों को लेखक ने धाय के द्वारा पलते देखा है। उन्हें देख कर जितना दुख हुआ, उसे लिख कर बतला देना असम्भव है। धाय एक नीच वर्णी स्त्री थी। पवित्रता उसके पास से छू कर नहीं निकली थी। उसके पास जाने में नाक दबाना पड़ता था। इतने से ही पाठक अनुमान कर लें कि वह कितनी चतुर होगी! भोजन उसका मोटा अन्न था। मक्का, ज्वार खाकर अपना पेट भरती थी। दूध और घी का कभी स्वप्न में दर्शन नहीं होता था। उस धाय को बच्चे के पालन करने के लिए ३) या ४) हर महीने दिए जाते थे! बालक की क्या दशा होनी चाहिए, यह

जच्चा श्रौर बच्चा की करुण दुर्दशा

Fine Art Printing Cottage, Allahabad.

पाठक स्वयं ही अनुमान कर लें—मौत के सिवाय और क्या होगा ? जो लोग इस तरह की धाय रखते हैं, उनसे हमारी बद्धाञ्जलि यह प्रार्थना है कि वे अपने बच्चों का कृत्रिम दूध से पालन करें।

धाय कैसी ही स्नेहमयी क्यों न हो, वह जननी की समानता कदापि नहीं कर सकती; इसलिए जहाँ तक सम्भव हो, माता को ही अपने बालक का लालन-पालन करना चाहिए। जो स्त्रियाँ बच्चे का पोषण नहीं करना जानतीं या करना नहीं चाहतीं, उन्हें चाहिए कि विवाह कदापि न करें। यदि विवाह भी कर लें, तो माता बनने की इच्छा त्याग देनी चाहिए। बालक को उसकी जननी का दूध ही ठीक है, वह उसकी स्वभाव-सिद्ध खुराक है। यदि धाय रखने की आवश्यकता आ ही पड़े, तो पहले निम्नलिखित बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है:—

(१) धाय स्वस्थ, पुष्ट और सुडौल हो। उसे उपदंश, क्षय, कण्ठमाला, बवासीर, अपस्मार तथा और किसी प्रकार का पैतृक अथवा औपसर्गिक रोग न हो।

(२) धाय सच्चरित्रा, सुशील और नम्र हो। व्यभिचारिणी धाय का दूध विष के समान होता है।

(३) धाय के स्तन मोटे और दृढ़ हों। चर्बी से भरे हुए तथा पिलपिले न हों। अच्छा दूध पैदा करने वाले स्तन कुछ कठोर होते हैं। स्तन लटके हुए न हों; उनमें काफी दूध हो, जो स्तन को जरा सा दबाने से निकल आवे।

(४) धाय के दूध में यथेष्ट पोषक तत्त्व होने चाहिए।

इसकी परीक्षा खुद की जा सकती है। इस विषय में हम पीछे लिख आए हैं कि धाय के बच्चे को देख कर, दूध के अच्छे बुरे का अनुमान किया जा सकता है।

(५) धाय का मुँह खोल कर यह देख लेना चाहिए कि उसके दाँत, जीभ, मसूड़े साफ़ हैं या नहीं।

(६) नेत्रों को भी देखना चाहिए। यदि नेत्रों में कोई दोष हो, तो वह धाय दूध पिलाने योग्य न समझनी चाहिए।

(७) धाय के शरीर पर किसी प्रकार का चर्म-रोग—दाद, खाज, फोड़े-फुन्सी, कोढ़ वगैरह न हो। यह अच्छी तरह देख लेना चाहिए।

(८) धाय का आमाशय अर्थात् पाचन-शक्ति अच्छी हो। उसके मुख से किसी प्रकार की दुर्गन्ध न आती हो।

(९) धाय के पति को देख लेना चाहिए। वह कमजोर और रोगी न हो।

(१०) धाय के विषय में यह भी अनुसन्धान कर लेना चाहिए कि गर्भावस्था में उसका स्वास्थ्य खराब तो नहीं रहता।

(११) धाय को गर्भपात तो नहीं हो जाया करता, इस बात का पता लगा लेना चाहिए।

(१२) धाय का रङ्ग पीला न हो, उसके मुँह पर मुर्दनी न छाई हो। रङ्ग स्वच्छ और सतेज होना चाहिए।

(१३) धाय के स्तनों में दूध कितना है, इस बात का पता

लगा लेना चाहिए; क्योंकि यदि उसके स्तनों में उसके बालक के योग्य ही दूध है, तो दूसरे बच्चे को क्या पिलावेगी ?

(१४) धाय के बालक की उम्र भी देख लेनी चाहिए। यदि बच्चा एक मास का है, तो धाय का बच्चा तीन मास का होना चाहिए। दोनों बालकों की अवस्था में जितना कम अन्तर हो, उतना ही अच्छा है। यदि अवस्था में अधिक अन्तर रहा, तो बालक धाय के द्वारा कदापि स्वस्थ नहीं रह सकता; क्योंकि दिनों के साथ ही साथ दूध के गुणों में भी अन्तर आता जाता है।

(१५) धाय युवा होनी चाहिए; उसकी उम्र बच्चे की माँ से अधिक न हो।

(१६) धाय दूध पिलाने के दिनों में ऋतुमती न होनी चाहिए। ऋतुमती स्त्री का दूध विष हो जाता है, वह बालक के पेट में नहीं ठहरता।

(१७) धाय को किसी योग्य चिकित्सक के पास ले जाकर उसके स्वास्थ्य की परीक्षा करा लेनी चाहिए।

(१८) क्रोधी स्त्री को कभी भी धाय न बनाना चाहिए।

(१९) धाय की नींद कुम्भकर्णी न होनी चाहिए।

(२०) बुरी आदत वाली धाय का दूध बच्चे के लिए कदापि लाभप्रद नहीं हो सकता।

(२१) धाय के दूध की परीक्षा करके उसके शुद्धाशुद्ध का ज्ञान कर लेना चाहिये। दूध की परीक्षा किस प्रकार की जानी चाहिए, यह बात हम पीछे लिख आए हैं।

बहुत से लोग धाय को अपने यहाँ रख कर, अपने यहाँ का भोजन देते हैं। यह बात बहुत ही अच्छी है; किन्तु धाय को जिस भोजन का अभ्यास हो, उसे एकदम बदल कर नई तरह का भोजन कदापि न देना चाहिए। यदि भोजन एकदम बदल दिया जावेगा, तो धाय और बालक दोनों बीमार हो जावेंगे। इसलिए भोजन धीरे-धीरे बदलना चाहिए। माता के समान ही, धाय को सुपच, पौष्टिक भोजन और आराम देना आवश्यक होता है। उसे दूध, फल और तरकारियाँ अवश्य खिलानी चाहिए। धाय को अधिक शारीरिक परिश्रम से बचने को हिदायत कर देनी चाहिए। बिलकुल आरामतलबी भी ठीक नहीं है, नहीं तो बदहज़मी हो जावेगी। धाय को गले तक ठूँस-ठूँस कर भोजन न करना चाहिए। बहुत से मूर्ख लोगों का ध्यान है कि शराब से दूध बढ़ता है। ऐसा समझना भूल है। डॉक्टर बुल साहब लिखते हैं :—

एक आरोग्य बालक जिसकी अवस्था दो मास की थी, एक धाय को दिया गया। चौथे सप्ताह में बालक को मरोड़ अतीसार हो गया। मैंने जाकर बच्चे को देखा; और धाय के बारे में पूछा, तो मुझे बतलाया गया कि धाय बिलकुल स्वस्थ है; परन्तु जब मैं ने धाय को बुला कर देखा तो मालूम हुआ कि वह शराबी है। जब उससे पूछा गया तो मालूम हुआ कि सवा सेर पोर्टवाइन नित्य पीती है। मैं ने उसे शराब की मात्रा आधी कर देने के लिए कहा। बालक कुछ-कुछ अच्छा हो गया। तीन दिन बाद जब मैं ने जाकर उस बच्चे

को देखा, तो पूर्वापेक्षा स्वस्थ पाया; परन्तु बिलकुल चङ्गा नहीं हुआ था। तब मैं ने धाय को बिलकुल शराब पीने से रोका; और नित्य प्रातः समय फुव्वारे के नीचे बैठ कर स्नान करने तथा खुली हवा में टहलने के लिए आज्ञा दी। तीन दिन में बच्चा बिलकुल तन्दुरुस्त हो गया; और धाय के दूध में भी कोई कमी नहीं हुई।

धाय को दूध बढ़ाने के उद्देश्य से शराब न देनी चाहिए; और न शराबी धाय को अपना बालक देना चाहिए। दूध पिलाने वाली स्त्री यदि किसी तरह का नशा सेवन करेगी, तो बालक को दाँत निकलते समय बड़ा ही कष्ट होगा। खुली हवा में धाय को रखना नितान्त आवश्यक है। यदि बन्द हवा में धाय को रक्खा गया, तो दूध दूषित तथा कम हो जावेगा।

धाय को सूर्योदय से पूर्व उठना चाहिए। उठते ही शौच, दतौन आदि से निपट कर अच्छी तरह स्नान करना चाहिए। धाय को अपना गृह-कार्य भी करना चाहिए। जो केवल बालक को लेकर बैठी रहती हैं, वे सुस्त हो जाती हैं; उनका दुग्ध खराब हो जाता है। जब धाय गृह-कार्य में लगी हो, उस समय बालक को खिलाने का काम उसकी माता को करना चाहिए। धाय के सिपुर्द अपना बच्चा करके जननी को निश्चिन्त न हो जाना चाहिए। बालक को जो कुछ माता सिखला सकती है, वह धाय नहीं सिखा सकती। बालकों का पालन-पोषण कोई सहज बात नहीं है। यहाँ जो कुछ भी संक्षिप्त लिखा जाता है, बुद्धिमान् माता-पिता का कर्त्तव्य है कि उस पर खूब ही विचार करें।

धाय को यह बात भली-भाँति समझा देनी चाहिए कि वह बच्चे को अफ़ीम कभी न दे। वालक को इसलिए अफ़ीम दे दी जाती है कि वह सोता रहे; और माता अपना काम-काज आनन्दपूर्वक करती रहे। उन्हें यह नहीं मालूम कि वालक सो नहीं रहा है; वरन् अचेत पड़ा है। उसकी शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ निर्बल हो रही हैं। यह अफ़ीम रूप, रङ्ग, यौवन, बुद्धि, आयु सब का नाश करने वाली है। जिस वालक को अफ़ीम खिलाई जाती है, उसके विषय में यह सोचना कि बड़ा होने पर अत्यन्त चतुर और विद्वान् होगा, सर्वथा मूर्खता है।

धाय के चुनाव के विषय में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है; बुद्धिमान् व्यक्ति के लिए इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि धाय के चुनाव में बड़ी ही सावधानी की ज़रूरत है। यदि ज़रा भी ग़फ़लत की गई, तो ऐसा भयङ्कर परिणाम होगा, जिसके लिए सिवाय पश्चात्ताप के और दूसरा कोई उपाय न होगा। बेपरवाह, क्रोधी और ग़ाफ़िल स्त्री न केवल बच्चे की ही प्रकृति बिगाड़ेगी; बल्कि उसके स्वास्थ्य को भी मिट्टी में मिला देगी। ठिगनी, लम्बी, कानी, खोड़ी, बहरी, गूँगी, नकटी, कुरूपा माँ धाय बनने के योग्य नहीं है। डॉक्टर बेरट बड़ा ज़ोर देकर लिखते हैं :—

ठण्ढ के मौसम में भी धाय को स्नान करना चाहिए। उसको सफ़ाई से बढ़ कर दूसरा कोई काम न समझना चाहिए। नित्य प्रातःकाल उठना चाहिए; और रात्रि में जल्दी सो जाना चाहिए,

हम लोग उक्त डॉक्टर के इस कथन को अपनी दृष्टि में साधारण भले ही समझें; किन्तु इस विषय पर हर एक डॉक्टर का बड़ा भारी ज़ोर है कि धाय सफ़ाई से रहने वाली हो। उसको अच्छी तरह समझा देना चाहिए कि बालक के स्वास्थ्य के विषय में छोटी से छोटी बात भी माता-पिता को तुरन्त सूचित कर दे। उसे अपनी ग़लती छिपाने के लिए बच्चे का कष्ट या चोट वग़ैरह न छिपाना चाहिए। बालक के माता-पिता को चाहिए कि धाय के हृदय को चोट पहुँचाने वाले वाक्य अथवा कार्य न करें। उसके दिल को दुखाने से कदापि लाभ नहीं हो सकता; जैसे बने, तैसे धाय को प्रसन्न और संतुष्ट रखने की चेष्टा करनी चाहिए।

हम पिछले प्रकरण में यह बतला आए हैं कि बच्चे को दूध कैसे और कितने घण्टे के अन्तर से कितनी देर पिलाना चाहिए। वही बात धायों के विषय में भी समझना चाहिए; और धाय को वे बातें अच्छी तरह समझा देनी चाहिए। यदि हमारे लिखे अनुसार धाय न मिले, तो फिर बच्चे को कृत्रिम दूध पिलाना चाहिए। अब हम आगे इसी विषय का वर्णन करेंगे।

(३) कृत्रिम दूध

हमारे देश में प्रतिशत ४० बालक कृत्रिम दूध से पलते हैं; परन्तु कृत्रिम दूध किस प्रकार तैयार होता है, यह बात बहुत कम लोग जानते हैं। कृत्रिम दूध से जो बालक पाले जाते हैं, वे प्रतिशत ९० मर जाते हैं। इस मृत्यु का कारण केवल कृत्रिम दूध

बनाने के विषय की अज्ञानता है। लोगों को देखा है कि मूर्खतावश दूध को खूब औटा कर; और खूब शक्कर डाल कर अपने बच्चों को पिलाते हैं। कुछ समय बाद इस दूध के कारण उनका पेट खराब हो जाता है; और हरे-पीले दस्त होते हुए बीमार हो जाते हैं; यहाँ तक कि मर भी जाते हैं। इस कृत्रिम दूध के कारण बच्चों के पेट में बड़ी-बड़ी गाँठें पड़ जाती हैं, जिसके कारण उनके पेट में दर्द होता है। इस दर्द की वेदना से वे लगातार कई दिनों तक चिल्ला-चिल्ला कर प्राण त्याग देते हैं। बालक तो पेट के दर्द के कारण छटपटाता और रोता है; किन्तु मूर्ख माता-पिता तथा अन्यान्य आत्मीय जन भूत-प्रेत और डायन का कारण मान कर झाड़-फूँक, जादू-टौना, छूमन्तर आदि के फन्दे में पड़ जाते हैं। परिणाम यह होता है कि रोने का असली कारण नहीं मालूम होता; और बच्चा इस लोक से विदा हो जाता है। एक-दो नहीं; हजारों की तादाद में इस कृत्रिम दूध की अज्ञानता के कारण हमारे बच्चे—हमारे भोले-भाले निरपराध हृदय के टुकड़े—मौत के मुँह में जा रहे हैं। इस विषय का ध्यानपूर्वक स्मरण—जिन दृश्यों को लेखक ने अपनी आँखों से देखा है, उनका स्मरण—होते ही सिर चक्कर खाने लगता है; और हृदय को एक विचित्र वेदना होती है, जिसे लिख कर प्रकट करना असम्भव है।

हमारे देश की स्त्रियाँ अज्ञानता अथवा अशिक्षा के कारण कृत्रिम दूध बनाना नहीं जानतीं। इसी कारण वे आवश्यकता पड़ने पर बालकों को गाय, भैंस अथवा बकरी का खालिस दूध पिला

देती हैं। इसका फल यह होता है कि बच्चों का हाज़मा और स्वास्थ्य खराब हो जाते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से हम नीचे एक नक़्शा देते हैं, जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के दूध में शक्कर, लवण, पानी आदि का परिमाण अलग-अलग बता देंगे :—

दुग्ध के अंशों का नक़्शा

दूध	पनीर (प्रोटीन)	मक्खन (वसा)	शक्कर	क्षार	पानी	कुल
स्त्री	२·५०	५·१८	६·५२	...	८५·८०	१००
गधी	२·२५	१·६५	६·००	०·५०	८९·१०	,,
गौ	३·५०	४·००-	३·५०	०·७५	८७·२५	,,
बकरी	४·३०	४·७८	४·४६	०·७५	८५·७१	,,
भेड़	४·५०	४·२०	५·००	०·६८	८५·६२	,,
भैंस	६·११	७·४५	४·१७	०·८७	८१·४०	,,

भैंस के दूध में वसा अधिक होने के कारण बच्चा उसे पचा नहीं सकता। गौ-बकरी आदि का दूध भी माता के दूध के समान नहीं होता। उक्त नक़्शे से यह मालूम होता है कि बकरी या भेड़ी का दूध स्त्री के दूध से कुछ अंशों में मिलता-जुलता है। इतना होने पर भी गौ का ही दूध काम में लाया जाता है। इसका कारण यह है कि बकरी और भेड़ी के दूध में पनीर का अंश अधिक पाया जाता जिसमें दही अधिक है, वह भीतर जाकर बच्चे के पेट में

इतना गाढ़ा हो जावेगा कि उस का पचना कठिन हो जायगा। इस के अतिरिक्त बकरी के दूध में बकरी के शरीर की दुर्गन्ध आया करती है। गौ के दूध में भी पनीर अधिक है; लेकिन मक्खन कम है। इसको यदि पानी मिला कर काम में लाया जावे, तो वह ठीक बन जाता है। बहुत सी बातों में गधी का दूध स्त्रियों के दूध से मिलता है; किन्तु कमजोर होता है। जबकि बच्चा बहुत ही छोटा हो; अर्थात् १-२ महीने के लिए ही गधी का दूध उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसमें पानी का अंश अधिक होने से ठण्ढ रहती है। जब कभी बालक को गर्मी हो जाती है, तो हमारे देश में इस दूध को पिला दिया करते हैं। विलायत में गधी के दूध का अधिक प्रचार है। डॉक्टर बुल गधी के दूध के विषय में इस प्रकार लिखते हैं:—

यदि बालक को गधी का दूध दिया जावे, तो उत्पत्ति के दिन से १० दिन तक उसमें उबला हुआ पानी समभाग मिला लेना चाहिए। मीठा मिलाने की आवश्यकता नहीं है। १० दिन के बाद दो-तिहाई दूध और एक-तिहाई पानी मिलाना चाहिए। एक महीने के बाद गधी का खालिस दूध दिया जाना चाहिए। दूध को उतना ही गर्म पिलाना चाहिए, जितना कि स्त्री की छाती का दूध गर्म होता है। स्त्री के स्तनों के दूध की गर्मी ९६ से ९८ डिग्री तक होती है। गर्म उबलता हुआ पानी मिलाने से इतनी गर्मी आ जाती है। जिन दिनों पानी मिलाने की आवश्यकता न हो, उन दिनों दूध के पात्र को खौलते हुए पानी के पात्र में थोड़ी देर रख छोड़ना चाहिए।

ग्रीष्म-ऋतु में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऋतु का प्रभाव दूध पर न पड़ने पावे। जहाँ तक बन सके, तत्काल गधी के स्तनों से निकाला हुआ दूध दिया जावे। दूध को जब तक पिलाना न हो, तब तक उसमें पानी न मिलाना चाहिए। पानी मिला कर दूध को रख छोड़ना, ठीक नहीं है; बल्कि जब पिलाने की जरूरत पड़े, तभी पानी मिला कर पिलाना चाहिए। एक गधी बच्चे के लिए मोल ले लेनी चाहिए। यदि ऐसा न हो सके, तो गधी को सायं-प्रात: अपने घर लाकर अपने सामने ही दुहाना चाहिए।

गधी का दूध भारतवर्ष में बहुत ही कम काम में लाया जाता है। हाँ, दवा की शक्ल में इसे प्रयोग करते हैं। जब बच्चे को गर्मी बहुत हो, पेट में खराबी हो, मुँह में छाले पड़ गए हों, तब इस दूध को पिलाते तथा सिर पर लगाते हैं। हमारे विचार से गधी का दूध केवल गर्म प्रकृति के बच्चों के लिए ही हितकर है। निघण्टु में, गधी के दूध के विषय में लिखा है :—

गर्दभ्यास्तुस्मृतंदुग्धं मधुरम् बलकारकम्।
रूक्षं चाम्लं दीपनञ्च बुद्धिमान्द्यकरं मतम्॥
पथ्यं रुचिप्रदं क्षारं कफ वात विनाशनम्।
बालरोगञ्च कासञ्च श्वासञ्चैव विनाशयेत्॥

अर्थात्—गधी का दूध मीठा, बलकारक, रूखा, पचने पर अम्ल, बुद्धि को मन्द करने वाला, कफ-वात नाशक, खारा, और बालकों के रोग, खाँसी, श्वास को दूर करने वाला होता है; किन्तु गधी का दूध बच्चे की खुराक

न बनाना चाहिए; क्योंकि यह मन्द बुद्धिकारक है। अतएव बच्चे के लिए ठीक नहीं है।

बहुत से लोग बकरी का दूध पिलाना बहुत ही अच्छा समझते हैं। वह अनेक वृक्षों की पत्तियाँ खाती है, इसलिए उसके दूध को लोग गौ के दूध से भी उत्कृष्ट समझते हैं। किसी हद तक ऐसा समझना ठीक है; किन्तु बालक के लिए बकरी का दूध अच्छी खुराक है, यह मानना ठीक नहीं है। बकरी के दूध के लिए डॉक्टरों की सम्मतियाँ भी अनुकूल हैं। उनका कहना है कि गौ के दूध से क्षय, कैंसर आदि रोग हो जाते हैं; लेकिन बकरी के दूध से कोई रोग नहीं होता। हमारे विचार से डॉक्टरों की इस विषय में थोड़ी सी भूल है। जो गौएँ अशुद्ध वायु में तथा खराब चारे-पानी से पाली जाती हैं, उन्हीं का दूध रोगोत्पादक होता है। हरेक गौ का दूध क्षय तथा कैंसर रोग पैदा करता है, ऐसा वे लोग नहीं कह सकते। बकरी का दूध उतना बलवान् नहीं होता, जितना कि गौ का होता है। यदि बालक को बकरी का दूध पिलाना हो, तो गधी के दूध की तरह पानी वगैरह मिला कर देना चाहिए। बकरी के दुग्ध के विषय में सुश्रुत में लिखा है :—

छागं कषायं मधुरञ्च शीतम् ग्राहि लघुपित्तक्षयापहारि
कासज्वराणां रुधिरातिसारे हितंपयश्छागलजन्त्रिदोषजित्।

अर्थात्—बकरी का दूध कसैला, मधुर, शीतल, मलरोधक, हलका तथा पित्त, क्षय, खाँसी, ज्वर और रक्तातिसार में हितकर है।

भेड़ी के दूध के गुण भावप्रकाश में इस प्रकार वर्णित हैं:—

आविकं लवणं स्वादु स्निग्धोष्णं चाश्मरी प्रणुत् ।
अहृद्यं तर्पणं वृष्यं शुक्र पित्त कफ प्रदम ॥
गुरुकासेऽनिलोद्भूते केवले चानिलेवरे ॥

अर्थात्—भेड़ी का दूध नमकीन, स्वादिष्ट, स्निग्ध, गर्म, पथरी को दूर करने वाला, हृदय को हानिकर, तृप्तिकारक, वृष्य तथा शुक्र, पित्त और कफ पैदा करने वाला है। केवल भारी, वात की खाँसी और वात रोग में हितकारी है।

भैंस का दूध बच्चों के पिलाने में कम प्रयोग होता है। इसमें चर्बी का भाग अधिक होने से बालक पचा नहीं सकता। निघण्टु में लिखा है :—

स्निग्धं महच्छीत करं च तन्द्रा निद्राकरं वृष्य तमं श्रमघ्नम् ।
बलप्रदं पुष्टिकरं कफस्य सञ्जीवनं माहि षमुच्यते पयः ॥

अर्थात्—भैंस का दूध स्निग्ध, वातकारक, शीतजनक, तन्द्रा और निद्रा उत्पन्न करने वाला, वीर्यवर्द्धक, श्रमनाशक, बलकारक, पौष्टिक और कफ उत्पन्न करने वाला है।

गौ का दूध अधिकतर बच्चों को पिलाया जाता है। बिना पानी मिलाए गौ का दूध पिलाने से, बच्चा उदर-रोग से पीड़ित हो जाता है। पानी मिलाने से दूध का मिठास कम हो जाता है, इसलिए थोड़ा मीठा और मिलाना पड़ता है। विलायत वाले भी गौ का दूध ही काम में लाते हैं; क्योंकि वहाँ गधी का दूध महँगा मिलता है। भारतवर्ष में तो गौ का दूध सर्वोत्तम समझा जाता है।

इसके गुणों पर भारतवर्ष ने मोहित होकर इस पशु को "माता" शब्द से अलंकृत किया है। यह पूज्य शब्द गौ के अतिरिक्त दूसरे किसी भी दुधारू पशु के लिए व्यवहृत नहीं होता। यह माता शब्द ही हमें गौ के दूध में तथा माता के दूध में समान गुण प्रदर्शित कर रहा है। आयुर्वेद गो-दुग्ध के विषय में कहता है :—

धेनोपयः स्यान्मधुरं सुशीतं,
रसायनं स्निग्ध मलं गुरुस्यात्।
भ्रम श्रमघ्नं विषहृत्सरञ्च,
कफावहं शुक्रकरंहि हिवर्णम् ॥
गव्यं क्षीरं पथ्यमत्यं तरुच्यं,
स्वादु स्निग्धं पित्तवातामयघ्नम्।
कान्तिं प्रज्ञाबुद्धि मेधाङ्ग पुष्टिम्,
धत्तेस्पष्टं वीर्य वृद्धिं विधत्ते॥

अर्थात्—गो-दुग्ध मधुर, शीतल, रसायन, स्निग्ध, भारी, भ्रम-नाशक, श्रमहारी, विष-विनाशक, सारक, कफकारक, शुक्रजनक और वर्ण को सुन्दर करता है। पथ्य, रुचिकारी, स्वादु तथा प्रज्ञाबुद्धि, मेधा-अङ्ग में पुष्टि और वीर्य को बढ़ाता है।

गाय के दूध में डॉक्टर लोग आजकल जिन रोगों के पैदा करने वाले कीटाणुओं का जिक्र करते हैं, उनका एकमात्र कारण गो-पालन सम्बन्धी अज्ञानता है। यदि गो-पालन में

सावधानी रक्खी जावे, तो गो-दुग्ध से बढ़ कर इस मृत्युलोक में दूसरा पेय पदार्थ नहीं हो सकता। डॉक्टर बुल साहिब लिखते हैं:—

बड़े-बड़े शहरों में स्वच्छ और निरोगी गायों का दूध प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। अधिकांश दूध उन गायों का काम में लाया जाता है, जो गोशालाओं में घरों के अन्दर रहती हैं। उन्हें कभी भी खुली हवा प्राप्त नहीं होती, जिससे वे रोग-ग्रस्त हो जाती हैं। कण्ठमाला का दोष भी उनके फेफड़ों में पाया जाता है। अतएव वे रोगोत्पादक दूध देती हैं। यदि दूध बाहर से मँगाया जाता है, तो उसमें इतना पानी, मैदा, चाक वग़ैरह मिला दिया जाता है कि वह एक रोगी गौ के दूध से भी निकृष्ट हो जाता है। इस प्रकार के दूध बालक के कोमल पकाशय को खराब कर डालते हैं। यही कारण है कि बड़े शहरों में वे बच्चे, जिनका निर्वाह कृत्रिम दूध पर होता है, रोगी होते हैं। इसके साथ ही वे जब अपनी मुख्य ख़ुराक अर्थात् वायु भी शुद्ध नहीं प्राप्त कर सकते, तो अधिक रोगी बन जाते हैं। यही कारण है कि छोटे बच्चों की मृत्यु अधिक होती है।

जो लोग अपने बच्चों को कृत्रिम दूध से पालना चाहते हैं, उन्हें सबसे पहले दुधारू पशु को अपने घर पर रख कर अच्छी तरह पालन करना चाहिए। शुद्ध वायु, शुद्ध जल और शुद्ध भोजन देकर उस पशु से इच्छानुसार दूध प्राप्त करना चाहिए। अथवा यदि हो सके तो दुधारू पशु को नित्य सायं-प्रातः अपने घर मँगा कर अपने सामने उसका दूध निकलवाना चाहिए। अगर पशु का मालिक ढोर को आपके घर लाकर दूध देने में असमर्थ

हो, तो फिर सायं-प्रातः उसके यहाँ जाकर अपने सामने अपने पात्र में दूध दुहा कर लाना चाहिए। ग्वालों पर विश्वास करने में काम नहीं चलेगा। वे लोग भैंस के दूध में पानी मिला कर उसे गो-दुग्ध कह कर दे जाते हैं। दूध में से मक्खन निकाल लेते हैं। गन्दे हाथों से गन्दे पात्रों में दूध भर कर बेचते फिरते हैं। हमने आँखों देखा है कि ग्वाले बारिश का पानी, चमार-भङ्गी के घर का पानी और मकानों की गन्दी मोरियों का पानी तक भी दूध में मिलाने से बाज नहीं आते! जब दूध की ग्वाले इतनी मिट्टी-पलीद कर चुकते हैं, तब बची-खुची बरबादी हलवाई की दूकान पर हो जाती है। चावलों का आटा मिला कर उसे गाढ़ा बना देते हैं। कलकत्ता, बम्बई जैसे नगरों में हलवाई लोग मक्खन निकले हुए दूध को गाढ़ा बनाने के लिए अरारोट (Arrowroot) काम में लाते हैं! बहुत ही सावधानी करने पर भी—आँखों के सामने भी ग्वाले और हलवाई दूध में पानी वग़ैरह बिना मिलाए नहीं मानते। तात्पर्य यह है कि बच्चों को पिलाने के लिए बाज़ारू दूध कभी भी काम में न लाना चाहिए। बाज़ारू दूध पिलाना बच्चों को अपने हाथों विष-पान कराना है।

बाज़ारों में एक प्रकार का दूध और मिलता है। वह डिब्बे के अन्दर बन्द होता है। विलायत वालों ने अपनी बुद्धि से दूध का जलीय अंश निकाल कर उसे डिब्बों में बन्द कर दिया है। यह स्विस मिल्क (Swis milk) जमा हुआ दूध कहलाता है। जब इसे काम में लाना होता है, तब इसमें गर्म पानी मिला लिया जाता है।

जिन देशों में दूध मिलना कठिन होता है, वहाँ के लिए यह बड़े काम की वस्तु है, किन्तु ताजे दूध की बराबरी नहीं कर सकता। अङ्गरेज लोग अब अपने बच्चों के लिए जमे हुए दूध का प्रयोग करने लगे हैं। बहुत से बच्चों के लिए तो यह अनुकूल सिद्ध हुआ है और बहुतेरों को रोगी बना दिया है। हमारे भारतीय बन्धु भी इस जमे हुए दूध को काम में लाने लगे हैं, इससे बढ़ कर हमारी अधोगति का और क्या प्रमाण हो सकता है ? जिस देश में एक-एक व्यक्ति नौ-नौ लाख गौओं का स्वामी था, उसी देश में आज गौओं का वंश नाश होता जा रहा है। जहाँ कभी आठ आने का एक मन घी बिकता था, वहाँ आज आठ आने सेर ख़ालिस दूध भी नहीं मिलता। अथर्ववेद काण्ड ५, सूक्त १७, मन्त्र १८ में लिखा है:—

ओ३म् नास्य धेनुः कल्याणी नानड्वान्त्सहते धुरम्।
विजानिर्यत्र ब्राह्मणो रात्रिं वसति पापया॥

अर्थात्—(न) न तो (अस्य) उसकी (धेनुः) दुधारू गौ (कल्याणी) कल्याण करने वाली होती है; और (न) न (अनड्वान) गाड़ी ले जाने वाले बैल (धुरम्) जूए को (सहते) सहन करते हैं। (यत्र) जहाँ (विजानिः) विद्याभ्यास बिना (ब्राह्मणः) ब्राह्मण (रात्रिम्) रात को (पापया) कष्ट से (वसति) रहता है।

तात्पर्य यह कि जिस देश में ब्राह्मण लोग विद्या नहीं पढ़ते, वहाँ दुधारू गौएँ और बैल नहीं होते। इस वेद-वाक्य के अनुसार, ज्यों-ज्यों ब्राह्मणों ने विद्याभ्यास में शिथिलता की, त्यों-त्यों

गोवंश का नाश होता गया। अपने लिए न सही, अपने कोमल बच्चों के लिए ही गो-वंश को सँभालने की अत्यन्त आवश्यकता है।

नेसल्ज मिल्क, मेलिन फूड, न्यूज फूड, फूड फॉर इन्फेण्ट्स एण्ड चिल्डरैन, गधी का दूध, बकरी का दूध, भेड़ का दूध, भैंस का दूध आदि विविध कृत्रिम दूधों की अपेक्षा गौ का दूध ही बच्चे को पिलाना चाहिए। कोई यह समझे कि इस पुस्तक का लेखक एक हिन्दू ब्राह्मण है, इसलिए धार्मिक दृष्टि से पक्षपातपूर्वक गौ के नाम का उल्लेख किया है! नहीं, वास्तव में सत्य बात ही यहाँ लिखी गई है। लेखक ही क्या, सैकड़ों अङ्गरेज भी गौ के दूध को ही बालक के लिए सर्वोत्कृष्ट खुराक बताते हैं। कृत्रिम आहार के लिए बड़ी ही सावधानी की जरूरत है! डॉक्टर वस्ट साहब ने "Diseases of Infants and Children" में लिखा है :—

अधिक चौकसी, अधिक दृढ़ता, अधिक धैर्य, उत्तम प्रबन्ध बालकों को उन बुरे परिणामों से बचा सकते हैं, जो कि उन्हें कृत्रिम आहार देने से प्रकट होते हैं। उक्त डॉक्टर साहब का यह भी कहना है कि बच्चों की अधिक मृत्यु का कारण केवल कृत्रिम आहार ही नहीं है; वरन् बहुत कुछ असावधानी भी है। माता को चाहिए कि कृत्रिम आहार तैयार करने अथवा कराने में बहुत सावधानी रक्खे।

कृत्रिम दूध तैयार करने के लिए गौ का दूध ही काम में लाना

चाहिए, यह बात हम पीछे लिख आए हैं। अब यहाँ कृत्रिम दूध बनाने की विधि लिखते हैं :—

सात दिन की अवस्था वाले बालक के लिए आठ माशा दूध में दो तोला उबाला हुआ पानी, डेढ़ माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पानी मिलाना चाहिए।

पन्द्रह दिन से एक महीने तक की उम्र वाले बच्चे के लिए एक तोला दूध में दो तोला उबाला हुआ पानी, डेढ़ माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पानी मिलाना चाहिए।

दूसरे महीने—दो तोला दूध, दो तोला उबाला हुआ पानी, ढाई माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पानी मिलाया जाय।

तीसरे महीने—चार तोला दूध में, चार तोला उबाला हुआ पानी, चार माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पानी अथवा दो रत्ती सोडा मिलाना चाहिए।

चौथे महीने—पाँच तोले दूध में चार तोला उबाला हुआ पानी, चार माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पानी अथवा चार रत्ती सोडा मिलाना चाहिए।

पाँचवें और छठे महीने—छः तोले दूध में, तीन तोला उबाला हुआ पानी, चार माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पानी मिलाना चाहिए।

सातवें महीने—आठ तोले दूध में चार तोला उबाला हु पानी, छः माशा दूध की शक्कर और आठ माशा चूने का पा मिलाना चाहिए।

आठवें, नवें और दसवें महीने—बारह तोले दूध में चार तो पानी, ८ माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पा या चार रत्ती सोडा मिलाना चाहिए।

दसवें महीने के बाद, दूध में एक या दो चम्मच पानी मिला ही काफी है।

अक्सर देखा गया है कि माताएँ बच्चों को दूध पिलाने असावधानी करती हैं। फल यह होता है कि बच्चा प्रा रोगी बना रहता है। अक्सर दस्त या क़ै का होना, बच्चे प पेट आगे की ओर बढ़ आना, बच्चे की टाँगें विशेष कमज़ो होना, बालक का रह-रह कर रो पड़ना यह सब आहार असावधानी के दुष्परिणाम हैं। छोटी अवस्था में जो आद पड़ जाती है, वही भविष्य में बच्चों के जीवन व स्वभाव हो जाता है: इसलिए बचपन में उनको संयमशी रखना माता का सर्व प्रथम कर्त्तव्य है। दूध अथवा भोज बालकों को हमेशा निर्धारित समय पर दिया जाना चाहिए। हम आगे दूध की मात्रा तथा समय का नक़शा देते हैं, जिससे पाठकों को इस विषय के समझने में बहुत सहायता मिलेगी और इसके अनुसार बालक को दूध पिलाने से बहु लाभ होगा :—

बालक के दूध की मात्रा तथा समय

अवस्था	दिन में कितने घण्टों के अन्तर से दूध पिलाना चाहिए	रात में कितनी बार पिलाना चाहिए	२४ घण्टों में कुल कितनी बार पिलाना चाहिए	एक बार में पिलाने की मात्रा	२४ घण्टों में दूध की मात्रा
२ से ७ दिन	२	२	१०	१ से १॥ औन्स	१० से १५ औन्स
२ से ३ सप्ताह	२	२	१०	१॥ से २॥ "	१५ से २७॥ "
४ से ५ "	२	१	९	२॥ से ३॥ "	२२॥ से ३१ "
१॥ से ३ मास	२॥	१	८	३ से ५ "	२४ से ४० "
४ से ५ "	३	१	७	४ से ६ "	२९ से ४२ "
६ से ९ "	४	०	५	६ से ७ "	३० से ४५ "
१० से १२ "	४	०	५	७ से ९ "	३५ से ४५ "

नोट—यहाँ दिन से मतलब ६ बजे सुबह से १० बजे रात तक का है।

सातवें महीने—आठ तोले दूध में चार तोला उबाला हुआ पानी, छः माशा दूध की शक्कर और आठ माशा चूने का पानी मिलाना चाहिए।

आठवें, नवें और दसवें महीने—बारह तोले दूध में चार तोला पानी, ८ माशा दूध की शक्कर और छः माशा चूने का पानी या चार रत्ती सोडा मिलाना चाहिए।

दसवें महीने के बाद, दूध में एक या दो चम्मच पानी मिलाना ही काफी है।

अक्सर देखा गया है कि माताएँ बच्चों को दूध पिलाने में असावधानी करती हैं। फल यह होता है कि बच्चा प्रायः रोगी बना रहता है। अक्सर दस्त या क़ै का होना, बच्चे का पेट आगे की ओर बढ़ आना, बच्चे की टाँगें विशेष कमजोर होना, बालक का रह-रह कर रो पड़ना यह सब प्रकार की असावधानी के दुष्परिणाम हैं। छोटी अवस्था में जो आदत पड़ जाती है, वही भविष्य में बच्चों के जीवन का स्वभाव हो जाता है; इसलिए बचपन में उनको संयमशील रखना माता का सर्व प्रथम कर्त्तव्य है। दूध अथवा भोजन बालकों को हमेशा निर्धारित समय पर दिया जाना चाहिए। हम आगे दूध की मात्रा तथा समय का नक्शा देते हैं, जिससे पाठकों को इस विषय के समझने में बहुत सहायता मिलेगी और इसके अनुसार बालक को दूध पिलाने में अच्छा लाभ होगा:—

बालक के दूध की मात्रा तथा समय

अवस्था	दिन में कितने घण्टों के अन्तर से दूध पिलाना चाहिए	रात में कितनी बार पिलाना चाहिए	२४ घण्टों में कुल कितनी बार पिलाना चाहिए	एक बार में पिलाने की मात्रा	२४ घण्टों में दूध की मात्रा
२ से ७ दिन	२	२	१०	१ से १॥ औन्स	१० से १५ औन्स
२ से ३ सप्ताह	२	२	१०	१॥ से २॥ "	१५ से ३०॥ "
४ से ५ "	२	१	९	२॥ से ३॥ "	२२॥ से ३२ "
१॥ से ३ मास	२॥	१	८	३ से ५ "	२४ से ४० "
४ से ५ "	३	१	७	४ से ६ "	२९ से ४२ "
६ से ९ "	४	०	५	६ से ७ "	३० से ४५ "
१० से १२ "	४	०	५	७ से ९ "	३५ से ४५ "

नोट—यहाँ दिन से मतलब ६ बजे सुबह से १० बजे रात तक का है।

भारतवर्ष में बालक को दूध पिलाने का ढङ्ग ठीक नहीं है। बहुतेरे लोग चम्मच से, कटोरी से, रूई के फाहे से, तथा सीपी वग़ैरह से बच्चे को दूध पिलाते हैं; लेकिन ऐसा करना अत्यन्त बुरा है। बालक के लिए प्रकृति ने चूसना बताया है। चूसने में बालक के पेट में दूध धीरे-धीरे उसकी इच्छानुसार जाता है। कटोरी वग़ैरह से पिलाने पर एकदम और अनिच्छित दूध पेट में पहुँच कर उसके आमाशय को ख़राब कर देता है। चूस कर दूध पीने से बच्चे को एक बड़ा भारी लाभ यह होता है कि दूध में उसके मुख की लार का अंश भी मिल जाता है, जिससे वह अच्छी तरह पचता है। पहले ज़माने में ऐसा करने के लिए बत्ती के द्वारा बच्चे को दूध पिलाया जाता था। आजकल बाज़ार में दूध पिलाने के लिए काँच की बोतल मिलती है। उसके मुख पर रबर की चूँची लगी रहती है। यह काँच की बोतल दूध पिलाने के काम में लानी चाहिए।

लोग अपने बालकों को कृत्रिम दूध पिलाने के लिए इस काँच की बोतल को काम में लाने लगे हैं; परन्तु इसके विषय में असावधानी रखने के कारण यह काँच की बोतल भी बच्चों के लिए घातक हो गई है। जो महाशय अपने बालक को काँच की बोतल द्वारा दूध पिलाना चाहें, उन्हें चाहिए कि इसके विषय में निम्नलिखित बातों को सदा स्मरण रक्खें।

(१) बोतल सस्ती न होनी चाहिए। जहाँ तक हो सके ऊँचे दर्जे की अच्छी क़ीमत वाली बोतल काम में लानी चाहिए।

(२) बोतल काँच की ही हो। बहुत से लोग अन्य पात्रों में नली लगवा कर उस पर रबर की चूँची लगाते हैं, और उसमे बच्चे को दूध पिलाते हैं, किन्तु यह उपाय ठीक नहीं है।

(३) काँच की बोतल अच्छी तरह साफ़ हो सकती है। उसकी अस्वच्छता सहज ही में मालूम हो जाती है। काँच की बोतल में प्रत्येक समय के दूध की मात्रा का अनुमान हो जाता है। उसमें दूध डाल कर उसका मुँह इस प्रकार बन्द कर दिया जाता है कि उसमें किसी प्रकार के कीटाणु प्रवेश न कर सकें।

(४) रबर की चूँची बहुत आगे न होनी चाहिए। बोतल से ३ इञ्च के लगभग आगे रहनी चाहिए। अधिक आगे होने से बालक को दूध पीने में कष्ट होगा। इस चूँची को बोतल के मुँह पर धागे से बाँध देना चाहिए। चूँची में केवल एक छिद्र ही होता है, इसलिए उसमें तीन-चार छोटे-छोटे छिद्र सुई से और कर देने चाहिए। यदि दूध अधिक जाने लगे, तो चूँची के भीतर एक छोटा सा स्पञ्ज का टुकड़ा रख देना चाहिए।

(५) रबर की चूँचियाँ दो रखनी चाहिए; और उन्हें हेर-फेर कर काम में लाना चाहिए। दूध पिलाने के बाद चूँची को खोल कर अच्छी तरह गर्म पानी से धोकर साफ़ कर डालना चाहिए; और सूखने के लिए रख छोड़ना चाहिए। दूसरी बार दूध पिलाने में इस चूँची से काम न लेकर, अन्य चूँची काम में लानी चाहिए।

(६) बोतल को दूध पिलाने के बाद गर्म पानी से धोकर साफ़

कर डालना चाहिए। अगर वाशिङ्ग सोडा डाल कर वोतल साफ कर ली जावे, तो और भी अच्छा है।

(७) यदि पिलाते-पिलाते दूध बच जावे, तो उसे फिर पिलाने के लिए न रखना चाहिए; वल्कि फेंक देना चाहिए।

(८) वच्चे को लेटा कर दूध पिलाना ठीक नहीं है। बहुत सी स्त्रियाँ बोतल को बालक के मुँह में देकर अपना काम-धन्धा करने लगती हैं, यह अनुचित है। बालक को गोद में लेकर दूध पिलाना चाहिए; और उस वक्त उसका सिर कुछ ऊँचा रखना चाहिए। दूध पिला कर वच्चे को लेटा देना चाहिए। उसे उछालना अथवा हिलाना-डुलाना ठीक नहीं है।

(९) दूध पिलाने के वाद वोतल तथा रवर की चूँची को तत्काल ही धो डालना चाहिए। कुछ देर पड़ी रख कर धोने से उसमें गन्दा रह जाता है; और साफ करने में दिक़्क़त पड़ती है।

(१०) कृत्रिम दूध में मलाई नहीं होनी चाहिए। यदि हो, तो उसे निकाल लेना चाहिए; अन्यथा चूँची के छिद्र में जाकर अटक जावेगी और दूध का आना रुक जावेगा।

कृत्रिम दूध के पिलाने में उपरोक्त बातों पर ध्यान न देने से जो दूध बालक के जीवन-रक्षणार्थ पिलाया जाता है, वही उसके प्राणों का घातक बन जाता है। जिस बालक को कृत्रिम दूध पिलाने में माता-पिता सावधानी रक्खेंगे, वह बालक हृष्ट-पुष्ट बलवान और स्वस्थ होगा। अब हम आगे यह बतलावेंगे कि बालक को अन्न कब देना चाहिए।

(४) अन्नप्राशन

बालक के मुँह में दाँतों का पैदा होना ही इस बात की सूचना देता है कि वह अब अन्न खाने योग्य हो गया है। जब बच्चे के मुँह में दाँत निकल आवें, तब उसे खाने के लिए अन्न देने में कोई हानि नहीं है। बालकों को छठे और आठवें महीने के बीच में दाँत निकलने लगते हैं। प्राचीन समय में आर्य-जाति में "अन्न-प्राशन" नाम का एक संस्कार प्रचलित था। आश्वलायन गृह्यसूत्र में लिखा है :—

षष्ठे मास्यन्न प्राशनम् ॥ १॥

घृतौदनं तेजस्कामः ॥ २ ॥

दधि मधु घृत मिश्रित मन्नं प्राशयेत् ॥ ३ ॥

अर्थात्—छठे महीने बच्चे का अन्न प्राशन-संस्कार करे। जिसे अपना बालक तेजस्वी करना हो, वह घी मिला हुआ भात अथवा दही-शहद और घी मिला कर खिलावे।

इसी प्रकार पारस्कर गृह्यसूत्र में भी लिखा है कि अन्नप्राशन के बाद एकदम अन्न देना ठीक नहीं है। अन्न की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए और दूध शनैः शनैः छुड़ाना चाहिए जब बच्चे के दाँत निकलने लगें, तब उसे बिना पानी मिलाए गौ का खालिस दूध भी दिया जा सकता है। दाँत निकलने पर मूर्ख माता-पिता बालक को पेड़ा, कलाकन्द, लड्डू, जलेबी, बिस्कुट

आदि पदार्थ देकर बड़े ही प्रसन्न होते हैं, यह बहुत बुरा है। एक डॉक्टर का कहना है—बचपन के अनुचित आहार से मनुष्य उम्र भर कोष्ठबद्धता तथा दाँतों की बीमारी से दुखी रह सकता है।

बहुत सी स्त्रियाँ स्नेहवश अथवा अज्ञानतावश अपने बच्चों को १२-१४ महीने तक और कभी-कभी दो-ढाई वर्ष तक भी स्तन-पान कराती रहती हैं। यह बड़ी भारी ग़लती है, इससे बालक को बहुत हानि होती है। प्रसव से आठ महीने तक स्त्री को ऋतुधर्म नहीं होता, इसलिए आठ महीने तक ही बालक को दूध पिलाना चाहिए। रजोदर्शन होने के बाद माता के स्तनों के दूध में विकार उत्पन्न हो जाता है। रजोदर्शन के बाद बालक को दूध पिलाना कम कर देना चाहिए; और दूसरी ख़ुराक—जैसे साबूदाना, अरारोट आदि पदार्थ दूध में पका कर देना चाहिए। जब तक बच्चे के मुँह में दो दाँत न निकल आवें, तब तक उसे गुरु आहार न देना चाहिए। हमारे विचार से आठ महीने के पहिले बालक को अन्न पर न लाना चाहिए। छठे महीने अन्नप्राशन करा देना चाहिए और थोड़ा-थोड़ा अन्न खिलाते रहना चाहिए।

पहले-पहल खिचड़ी, गेहूँ का दलिया, भात, पकाए हुए मूँग आदि हलका आहार देना चाहिए। भात का माँड़ निकाल कर देना चाहिए। डबल रोटी भी बच्चे को दी जा सकती है। इस प्रकार के आहार विलायत में बहुत बिकते हैं; परन्तु उनसे रोग-वृद्धि के सिवाय और कुछ भी नहीं होता। भारतीय बच्चों के लिए विदेशी

आहार देना बड़ी भारी भूल है। गेहूँ या चने की रोटी दूध के साथ खिलाना अच्छा है; अथवा गेहूँ या चने के आटे को भून कर दूध में पका कर देना चाहिए। बालक के लिए ही क्या, मनुष्य मात्र के लिए दूध एकदम बन्द न कर देना चाहिए। रजोदर्शन के बाद माता का दूध छुड़ा कर उस जगह बालक की खुराक में अच्छी तरह पाली हुई गौ का दूध अवश्य होना चाहिए; अन्यथा बालक का उचित वृद्धि-विकास नहीं होने पाता।

गेहूँ के आटे में थोड़ा सा नमक डाल कर तवे पर रोटी बनाना चाहिए। रोटी को उतार कर उसे घी से चुपड़ कर फिर तवे पर सेंकना चाहिए। इस प्रकार दो-चार बार घी लगा कर सेंक लेने से बालक के लिए स्वादिष्ट और उत्तम खुराक तैयार हो जाती है। बालक के लिए जिस आटे की रोटी बनाई जावे, उसे छननी से छान कर उसका चूर (चोकर) अलग न कर देना चाहिए। चोकर निकाल देने से आटा शक्तिहीन हो जाता है। बालक को बिना छने आटे की ही रोटियाँ देनी चाहिए। जौ का आटा भी बच्चों के लिए गेहूँ के आटे की तरह लाभप्रद है। बच्चे को मूल्यवान् और स्वादिष्ट चरपरे पदार्थों की आवश्यकता नहीं है। जहाँ तक हो सके, सादा भोजन ही बच्चों को देना उचित है। जो बच्चे अधिक मिठाई से पाले जाते हैं, उनके पेट में कीड़े पड़ जाते हैं, दाँत गल जाते हैं; और शरीर में फोड़े-फुन्सी बहुत हो जाते हैं।

आजकल आरारोट, चावल वगैरह लघु आहार बच्चों को प्रायः खिलाया करते हैं। इन वस्तुओं से पले हुए बच्चे पतली

टाँगों वाले, टेढ़ी पीठ वाले, बेडौल छाती वाले तथा निर्बल होते हैं। चावल आरारोट आदि में हड्डी बनाने वाले अंश बहुत ही कम होते हैं। जो बच्चे गेहूँ, जौ, चने आदि से पाले जाते हैं, वे बलवान और स्वस्थ होते हैं। बालक के लिए सिर्फ दूध, गेहूँ, जौ और चना ही उत्तम खुराक है। दाल, भाजी आदि अधिक अच्छी वस्तुएँ नहीं हैं। बाज़ारू चीज़ें बालकों के लिए ही नहीं बल्कि नवयुवकों के लिए भी स्वास्थ्य-नाशक हैं।

बालक के लिए पहले-पहल एक तोला अथवा सवा तोला अन्न ही काफ़ी होता है। साथ में थोड़ा सा दूध भी देना चाहिए। मीठा न मिलाना चाहिए; और यदि मिलाना आवश्यक ही हो, तो शहद मिलाना ठीक है। पहले-पहल बच्चे को रोटी दी जावेगी, तो दाँत न होने के कारण वह उसे चबा नहीं सकेगा; और ज्यों का त्यों पेट में उतार जावेगा। परिणाम यह होगा कि बच्चा उसे पचा नहीं सकेगा; और आमाशय निर्बल हो जावेगा। दूध में गेहूँ या जौ के आटे को पका कर देना अच्छा है; लेकिन आटे को दूध में पकाने के पहले भून लेना चाहिए। बच्चे को बारम्बार खिलाने की आदत न डालनी चाहिए। खुराक देने में भी घड़ी की सहायता लेनी चाहिए; और नित्य नियमित समय पर ही उसे खुराक देनी चाहिए। फल वगैरह भी बालक को दिए जा सकते हैं। फल बड़ी ही अच्छी वस्तु है; इससे आमाशय बलवान और स्वस्थ रहता है। फलों का रस भी बालकों के लिए एक अनुपम वस्तु है। अन्न, फल, दूध वगैरह जो कुछ भी खिलाना हो,

एक बार ही खिला दे। बारम्बार मुँह चलाने की आदत न डालनी चाहिए। यदि दो वर्ष तक एक बच्चे को गेहूँ, जौ, चना, दूध, फल आदि खिलाए जावें; और दूसरे पदार्थों से उसे बचाया जावे, तो वह खूब ही हृष्ट-पुष्ट और बलवान होगा। दाँत निकलने में किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। दो वर्ष तक बालक को दिन में तीन वक्त—सुबह, दोपहर और सायंकाल—खुराक देनी चाहिए। एक वक्त की खुराक में ढाई तोला अन्न पाँच-सात तोला दूध और कोई फल होना चाहिए। दो वर्ष के पश्चात् यदि बच्चा स्वस्थ और सबल हो, तो साग-तरकारी खुराक में शामिल कर देनी चाहिए; लेकिन साग-तरकारी वगैरह तीक्ष्ण, मसालेदार, चरपरी और मिर्चों से सुर्ख न हों। दो वर्ष के बाद यदि माता-पिता चाहें, तो बालक को थोड़ी-बहुत मिठाई भी खिला सकते हैं। यदि मिठाई न देवें, तो और भी अच्छी बात है। मिठाई तथा चरपरे पदार्थों से अपनी औलाद को बचाने के लिए पहिले माता-पिता को इस विषय में संयमी होना चाहिए। चटोरे माता-पिता की सन्तान बचपन में भोजन-विषय में कदापि संयमी नहीं हो सकती। चाय, काफी आदि से बच्चे को बहुत ही बचाने की जरूरत है।

जो लोग मांसाहारी हैं, उनको हम सलाह देते हैं कि इस अप्राकृतिक आहार को अपने घर से हटा दें। मांस मनुष्य की खुराक नहीं है। मनुष्य मांसाहारी नहीं; बल्कि फलाहारी है। इस विषय पर हम अधिक न लिख कर केवल अपनी लिखी हुई

पुस्तक "दीर्घायु*" का भोजन प्रकरण पढ़ने की सलाह देते हैं। जो लोग मांसाहार त्यागने में असमर्थ हैं, उन्हें चाहिए कि यथा-सम्भव अपने बच्चों को बहुत समय तक बचावें। सर जेम्स क्लार्क साहब लिखते हैं :—

सब दाँत निकलने के पूर्व बच्चे को मांस खिलाना प्राकृतिक नियम के विरुद्ध है; क्योंकि ऐसे कठोर आहार को चबाने के लिए दाँतों का होना आवश्यक है। यदि कहो कि मांस को क़ीमा किया जा सकता है, तो वह क़ीमा अस्सी वर्ष के बूढ़े के वास्ते ही ठीक हो सकता है; क्योंकि उसका आमाशय उसे पचा सकता है। छोटे बच्चे का आमाशय मांस पचाने के योग्य नहीं होता, और इसी कारण मांस बच्चे के लिए निस्सन्देह हानिकारक भोजन है।

बच्चे को प्रेम से अथवा भूल से कदापि मांस न खिलाना चाहिए। मांस अत्यन्त बुरी और स्वास्थ्य-नाशक ख़ुराक है, इस बात को अब समझदार अङ्गरेज़ और मुसलमान भाई भी स्वीकार करने लगे हैं। मांस खाने वाले का आमाशय तो अवश्य ही ख़राब हो जाता है। पाँच-छः वर्ष की उम्र तक बच्चे को पनीर, अण्डे, मांस वग़ैरह कदापि न खिलाने चाहिए। इसी तरह चाय, क़ाफ़ी, भङ्ग, तम्बाकू, अफ़ीम आदि मादक पदार्थों से भी बच्चे को बचाना चाहिए।

---

* "दीर्घायु" नामक पुस्तक मैनेजर आर० डी० बाहिती एण्ड कम्पनी नं० ४ चोरबगान कलकत्ता में मिलेगी।

—लेखक

बालक को इच्छानुसार पानी देना चाहिए। जब उसकी तृषा शान्त हो जावेगी, तब वह स्वयं ही पानी न पीएगा। बालक को यदि उबाल कर ठण्डा किया हुआ पानी पीने के लिए दिया जावे, तो सब से अच्छी बात है। जहाँ बालक खेलता हो, वहाँ एक पात्र में पानी भर कर रख देना चाहिए। जब उसे प्यास लगेगी, तब वह स्वयं पी लेगा; अथवा जब वह माँगे, तब उसे तत्काल पानी पिला देना चाहिए। पानी पिलाने के विषय में बहुत सावधानी रखनी चाहिए। हाँ, भोजन के पश्चात् पानी न पिलाना चाहिए। पेशाब करने के बाद भी पानी पिलाना हानिकारक है। गर्मी के मौसम में रात्रि के वक्त निद्रा से जगा कर बच्चे को शीतल जल पिला देना चाहिए। जब बालक का शरीर कुछ गर्म मालूम हो और स्वभाव चिड़चिड़ा हो जावे, तब उसकी खुराक बन्द करके उसे केवल दूध और पानी के आधार पर ही रखना चाहिए। ऐसा करने से वह शीघ्र ही स्वस्थ हो जावेगा।
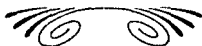
दसवाँ अध्याय

(१) बालरोग-चिकित्सा

बच्चों के छोटे-मोटे रोगों की चिकित्सा प्रत्येक गृहस्थ को जानी चाहिए। छोटी-छोटी बीमारियों के लिए डॉक्टर और हकीमों के घरों का चक्कर काटना, चिन्तार्णव में मग्न रहना; तथा पसीने की कमाई को बर्बाद करना ठीक नहीं है। माता-पिता को बाल-चिकित्सा अवश्य आनी चाहिए; और मुख्यतः माता को! बाल-चिकित्सा की अनभिज्ञता के कारण लाखों बच्चे बेमौत मर रहे हैं। मूर्खता के कारण मनमानी दवा दे-देकर माँ-बाप अपने हाथों अपने अबोध, निर्दोष बच्चों को मार डालते हैं। अब हम यहाँ बालकों के रोगों की चिकित्सा का वर्णन करेंगे। जो औषधि बड़े मनुष्यों के लिए ज्वरादि रोगों पर दी जाती है, वही बच्चों के लिए भी हितकर है; लेकिन मात्रा कम होनी चाहिए। बालकों को तप्त लोह आदि से दागना, क्षार लगाना, वमन, विरेचन आदि वर्जित हैं। दूध पीने वाले बच्चों को दवा देने का सुगम उपाय यह है कि माता के स्तनों पर दवा लगा कर

स्तन-पान करा देना चाहिए। यदि बालक स्तन-पान न करता हो, तो दूसरे किसी उपाय से उसके मुँह में दवा डालनी चाहिए।

एक महीने के बालक को अधिक से अधिक एक रत्ती तक काष्ठौषधि की मात्रा देनी चाहिए। दूसरे महीने में दो रत्ती, तीसरे महीने में तीन रत्ती, चौथे महीने में चार रत्ती; इसी तरह प्रति मास एक रत्ती के हिसाब से बढ़ाता जावे। इसी तरह प्रथम वर्ष में एक माशा, दूसरे में दो माशा और तीसरे में तीन माशा; इस तरह १६ वर्ष की उम्र तक एक-एक माशा बढ़ाता जावे। चूर्ण, कल्क, अवलेह के लिए यही मात्रा है। क्वाथ के लिए इससे चौगुनी मात्रा होनी चाहिए। जो बालक दूध-पीते हैं, उन्हें घृत, शहद, मिश्री में मिला कर दवा खिलानी चाहिए। जो बालक अन्न और दूध दोनों खाते-पीते हैं, उन्हें दवा घी में देनी चाहिए। बालकों को लङ्घन न कराना चाहिए। यदि लङ्घन कराना आवश्यक हो, तो दूध पिलाने वाली को लङ्घन कराना चाहिए। बालकों से लङ्घन में अन्न वग़ैरह छुड़ाया जा सकता है; लेकिन दूध न छुड़ाना चाहिए।

(१) दूध छोड़ देने पर—यदि बालक धाय अथवा माता का दूध न पीवे; अर्थात् मुँह से स्तन को न दबावे, तो सेंधानमक, आँवला, हरड़ तीनों समान भाग लेकर घी में मिला ले; और इससे बच्चे की जीभ पर मालिश करे।

(२) सब प्रकार के ज्वरों पर—नागरमोथा, हरड़, नीम, मुलहटी, पटोलपत्र इन सब का क्वाथ बना कर कुछ-कुछ गर्म पिलाने से बच्चे के समस्त ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

(३) ज्वरातिसार—नागरमोथा, अतीस, पीपल और काकड़ासींगी इनके चूर्ण को शहद में मिला कर चाटने से या क्वाथ बना कर पिलाने से बच्चे का ज्वर, अतीसार, खाँसी, श्वास, वमन आदि विकार दूर हो जाते हैं।

(४) ज्वरातिसार योग—धव के फल, बेल की गरी, धनियाँ, लोध, इन्द्रजौ और सुगन्धवाला इनको समभाग लेकर चूर्ण बना ले। इसको शहद में मिला कर बच्चे को चटा देने से ज्वर, अतीसार, वात-विकार आदि नष्ट हो जाते हैं।

(५) दूसरा उपाय—बड़ी कटेरी के फूल और जड़ की छाल, पीपल, पीपलामूल इन सब का क्वाथ बना कर उसमें वंसलोचन डाले। इसे माता को पिलाने से बालक की छर्दि, मूर्च्छा, साँस, ज्वर, खाँसी और अतीसार नष्ट हो जाते हैं।

(६) तीसरा उपाय—हल्दी, दारुहल्दी, मुलहटी, कटेरी, इन्द्रजौ इन सब का क्वाथ बना कर दूध पिलाने वाली को पिलाने से ज्वर, अतीसार, खाँसी, वमन, और श्वास रोग हो जाते हैं।

(७) चौथा उपाय—धनियाँ, अतीस, काकड़ासींगी और गजपीपल इन सब का चूर्ण शहद में मिला कर चटाने से ज्वर और अतीसार दूर हो जाते हैं।

(८ पाँचवाँ उपाय—सोंठ, अतीस, नेत्रबाला और इन्द्रजौ, इनका क्वाथ प्रातःकाल दूध पिलाने वाली को पिलाने से सब प्रकार के ज्वरातिसार जाते रहते हैं।

(९) रक्तातिसार—मोचरस, लज्जावती की जड़, धव

के फूल, कमल की केशर इन सब को घोंस कर काढ़ा बना ले। इस काढ़े को पिलाने से रक्तातिसार तत्काल आराम हो जाता है।

(१०) दूसरा उपाय—धान की खील, मुलहटी, मिश्री और शहद इनको मिला कर दूध पिलाने वाली को चटा दे, और ऊपर से चावलों का मांड पिला दे। तत्काल बालक के रक्तातिसार में आराम हो जावेगा।

(११) समस्त अतीसार—शालपर्णी पृष्ठपर्णी, और सुपारी की छाल इनका काथ बना कर पिलाने से त्रिदोष तथा अन्य समस्त प्रकार के अतीसार नष्ट हो जाते हैं।

(१२) खाँसा और बुखार—काकड़ासींगी, अतीस, नागरमोथा और छोटी पीपल इन सब को समभाग लेकर कपड़छान कर ले। यह दवा एक महीने के बालक से लगा कर ५ वर्ष के बालक तक को देनी चाहिए। दवा को शहद में मिला कर बच्चे को चटा दे; अथवा माता के दूध में मिला कर पिला दे। बालक की माता को पथ्य से रहना चाहिए। मूँग की दाल, गेहूँ की रोटी और दूध खाना चाहिए। बच्चे को अवश्य ही आराम होगा।

(१३) खाँसी—पुष्करमूल, अतीस, बाँसा, पीपल और काकड़ासींगी इनके काथ में शहद मिला कर पिलाने से बच्चे की सब तरह की खाँसी दूर होती है।

(१४) दूसरा उपाय—नागरमोथा, अतीस, बाँसा, पीपल और काकड़ासींगी के क्वाथ में शहद मिला कर पिलाने से बच्चे की कई प्रकार की खाँसी दूर हो जाती है।

(१५) तीसरा उपाय—कटेरी के फूल की केशर को पीस कर शहद में मिलावे, इसे बालक को चटाने से बहुत दिनों की पुरानी खाँसी भी जाती रहेगी।

(१६) द्राक्षादि चूर्ण खाँसी और श्वास पर—मुनक्का, बाँसा, हरड़, पीपल इनका चूर्ण शहद अथवा घी में मिला कर चटाने से बालक का श्वास-रोग, खाँसी, तमक आदि सब दूर हो जाते हैं।

(१७) दूसरा उपाय—पीपल, धमासा, मुनक्का, काकड़ासींगी और वंसलोचन; इनका चूर्ण शहद और घी में मिला कर चटाने से बालक की खाँसी और श्वास आदि रोग शान्त हो जाते हैं।

(१८) हिचकी और वमन-नाशक योग—कुटकी का चूर्ण शहद में मिला कर चटाने से बालक की हिचकी और वमन नष्ट हो जाता है।

(१९) छर्दि-नाशक—आम की गुठली, चावल की खील और सेंधा नमक इनको शहद में मिला कर चटाने से बालक की छर्दि दूर हो जाती है।

(२०) दूध डालने पर योग—बड़ी और छोटी कटेरी के फल और पञ्चकोल इनका चूर्ण शहद और घृत में मिला कर चटाने से बालक का दूध पटकना बन्द हो जाता है।

(२१) दूसरा उपाय—पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ का चूर्ण करके शहद और घी में मिला कर चटाने से भी बच्चे का दूध डालना बन्द हो जाता है।

(२२) तृषा-निवारक योग—नेत्रवाला और खाँड इनको शहद में मिला कर चटाने से बच्चे की प्यास दूर हो जाती है।

(२३) अफरा और वातशूल पर—सेंधानमक, सोंठ, इलायची, हींग और भारङ्गी के चूर्ण को घृत में मिला कर चटा दे; और ऊपर से गर्म पानी पिलावे, तो बालक का अफरा और पेट के वातशूल आदि आराम हो जाते हैं।

(२४) मूत्र रुक जाने पर—पीपल, काली मिर्च, इलायची छोटी और सेंधानमक इन सब को चूर्ण शहद में मिला कर चटाने से बालकों का रुका हुआ मूत्र खुल जाता है।

(२५) नाभि की सूजन पर—मिट्टी के एक गोले को पहले आग में तपा कर लाल कर ले; और फिर उसे दूध में बुझा ले। इसके बाद उस गोले को कपड़े में लपेट कर बच्चे की नाभि पर सुहाता-सुहाता सेंक करे, तो अवश्य आराम हो जावेगा।

(२६) नाभि पक जाने पर—बकरी की मेंगनियों की राख पकी हुई नाभि पर लगाने से आराम हो जाता है।

(२७) दूसरा उपाय—किसी भी दूध वाले वृक्ष की छाल का चूर्ण, चन्दन और रेणुका चूर्ण मिला कर नाभि पर लगाने से आराम हो जाता है।

(२८) तीसरा उपाय—हल्दी, लोध, प्रियङ्गु और मुलहटी इनकी लुगदी बना कर तिल्ली के तेल में पका ले; और जब तेल सिद्ध हो जावे, तब शीशी में भर कर रख ले। इस तेल को बच्चे की नाभि

पर लगाने से पकी हुई नाभि अच्छी हो जाती है; अथवा उपरोक्त दवाइयों का चूर्ण नाभि पर बुरकाने से भी आराम हो जाता है।

(२९) सूजन पर—बालक का यदि कोई अङ्ग सूज गया हो, तो नागरमोथा, पेंठे के बीज, देवदारु और इन्द्रजौ इन सबको समभाग लेकर पानी के साथ पीस ले; और जहाँ सूजा हो, वहाँ लेप कर दे; सूजन दूर हो जावेगी।

(३०) मुँह पकने पर योग—पीपल के वृक्ष की छाल और पत्तों का चूर्ण करके शहद में मिला कर बच्चे के मुँह में लेप कर दे। इससे पका हुआ मुँह तथा छाले वगैरह सब दूर हो जावेंगे।

(३१) बहुत रोने पर—पीपल और त्रिफला के चूर्ण को घी और शहद में मिला कर चटाने से बालक का रोना बन्द हो जाता है।

(३२) घाव और फोड़े-फुन्सी पर—पटोलपत्र, त्रिफला, नीम की छाल और हल्दी इनका क्वाथ माता अथवा बालक को पिलाने से घाव, फोड़े-फुन्सी, ज्वर आदि दूर हो जाते हैं।

(३३) खुजली आदि पर—घर का धुँआसा, हल्दी, कूट, राई और इन्द्रजौ इन सब को समभाग पीस कर बारीक चूर्ण कर लो और फिर छाछ में मिला कर लगा दे। इससे धनरफ, खुजली, पाम, और विचर्चिका आदि रोग दूर हो जाते हैं।

(३४) तालुकण्टक योग—बच्चे का तालु पक जाता है, काग नीचे लटक आता है, सिर में गड्ढा पड़ जाता है, दूध बड़ी कठिनता से पीता है, दस्त पतला होने लगता है, प्यास लगती है,

कण्ठ, मुख आदि में दर्द होता है तथा गर्दन लटका देता है; ऐसी दशा में हरड़, वच और कूट इनको पत्थर पर पीस कर लुगदी बनावे। इसे शहद मिला कर माता के दूध के साथ देने से तालुकण्टक आराम हो जाता है।

(३५) तालु पक जाने पर—जवाखार को शहद में मिला कर तालु में लगाने और मालिश करने से आराम होता है।

(३६) विसर्प रोग पर—बच्चे के मस्तक और गुदा में उत्पन्न हुआ विसर्प रोग प्राणहारी होता है। यह रोग कनपटियों में उत्पन्न होकर हृदय तक जाता है। इसी तरह गुदा से उत्पन्न होकर सिर तक जाता है। यह लाल कमल के रङ्ग का सुर्ख होता है। इसे महापद्म रोग भी कहते हैं। पटोलपत्र, त्रिफला, नीम और हल्दी इनका काथ बना कर पिलाने से विसर्प और ज्वर आदि नष्ट हो जाते हैं।

(३७) दूसरा उपाय—सारिवा, कमल, कुमोदिनी, चन्दन, नागरमोथा, पुण्डरीक, लालचन्दन, मजीठ और मुलहटी इन सब को पानी में पीस कर लेप करने से विसर्प रोग दूर हो जाता है।

(३८) कुकूण रोग पर—कुकूण रोग बालक के पलकों में पैदा होता है। बच्चा आँखें खुजाने लगता है. और आँखों से पानी बहा करता है। बालक माथा, नाक और नेत्रों को मसलता है। धूप के सामने देख नहीं सकता। रास्ते में चलते समय आंखें नहीं खोल सकता; ये सब कुकूण (कोथुवा) रोग के लक्षण हैं। दोनों

हल्दी, लोध, मुलहटी, कुटकी, नीम के पत्ते और ताम्रभस्म इन सबको बकरी के दूध या पानी में महीन पीस कर बत्तियाँ बना ले। फिर इस बत्ती को जल से घिस कर बच्चे की आँख में आँजने से कुकूण रोग नष्ट हो जाता है।

(३९) दूसरा उपाय—त्रिफला, लोध, पुनर्नवा, अदरक, छोटी बड़ी कटेरी इन सबको जल में पीस कर थोड़ा गर्म कर ले; फिर इसका लेप कर दे, कुकूण रोग अवश्य दूर हो जावेगा।

(४०) तीसरा उपाय—मैनसिल, शङ्ख की नाभि, पीपल रसौत, इन सब को पीस कर शहद अथवा पानी की सहायता से बत्ती बना ले, इसे शहद में घिस कर बालक के नेत्रों में आँज दे।

(४१) गुदा के पक जाने पर—रसौत का क्वाथ पिलाने से, रसौत को पानी से पीस कर लेप करने से, अथवा रसौत की भस्म गुदा पर भुरकाने से आराम हो जाता है।

(४२) दूसरा उपाय—शङ्ख, मुलहटी और रसौत को पानी में पीस कर लेप करने से पकी हुई गुदा में शीघ्र ही आराम होता है।

(४३) तीसरा उपाय—यदि गुदा में कोई खराब किस्म का घाव हो, तो पहले उस जगह जोंक लगा कर खून निकलवा देना चाहिए। बाद में बड़ आदि दूध वाले वृक्षों की छाल के क्वाथ से कुनकुने पानी से धोवे। फिर चन्दन, दोनों सारिवा, शङ्ख की नाभि इन सब को पीस कर लेप कर दे; अथवा केवल मुलहटी को

ही पीस कर लेप कर देने से गुदा के सब प्रकार के व्रण अच्छे हो जाते हैं।

(४४) पारिगर्भिक—जो गर्भवती होने पर भी अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं, उनके बालकों को खाँसी, वमन, कृशता, तन्द्रा, अरुचि, मन्दाग्नि, भ्रम, पेट का बढ़ना आदि कई विकार हो जाते हैं। कभी-कभी बिना गर्भवती माता का दूध पीने से भी यह रोग हो जाता है। यदि गर्भिणी माता का दूध पीने से यह रोग हुआ हो, तो दूध बन्द करके अग्नि-दीपन करने वाले पदार्थ खिलाने चाहिए; और यदि बिना दूध पिए ही यह रोग हो गया हो, तो भी पाचन-शक्ति को बढ़ाने वाले पदार्थ बालक को खिलाने चाहिए।

(४५) चोरक रोग—बालक के एक साथ दस्त और अफरा हो जावे, वमन भी हो; और आँखें खुली की खुली रह जावें, श्वास धीरे-धीरे चलने लगे; और मृतक के समान हो जावे, तो चोरक रोग समझना चाहिए। ब्राह्मी का रस, वच, शङ्खाहूली और कूट इनकी लुगदी बना कर घी में सिद्ध करे। जब घृत सिद्ध हो जावे, तब इस घृत के सेवन कराने से चोरक रोग नष्ट हो जाता है।

(४६) दूसरा उपाय—त्रिफला, त्रिकुटा, कूट, नागरमोथा, जवाखार और मरुआ इनकी लुगदी बना कर एक पाव तिल का तेल, एक पाव हाथी का मूत्र लेकर लुगदी को इसमें डाल कर सिद्ध करे जब सिद्ध हो जावे, तब इस तेल को नासिका में डालने से चोरक रोग दूर हो जाता है।

हल्दी, लोध, मुलहटी, कुटकी, नीम के पत्ते और ताम्रभस्म इन सबको बकरी के दूध या पानी में महीन पीस कर बत्तियाँ बना ले। फिर इस बत्ती को जल से घिस कर बच्चे की आँख में आँजने से कुकूण रोग नष्ट हो जाता है।

(३९) दूसरा उपाय—त्रिफला, लोध, पुनर्नवा, अदरक, छोटी बड़ी कटेरी इन सबको जल में पीस कर थोड़ा गर्म कर ले; फिर इसका लेप कर दे, कुकूण रोग अवश्य दूर हो जावेगा।

(४०) तीसरा उपाय—मैनसिल, शङ्ख की नाभि, पीपल रसौत, इन सब को पीस कर शहद अथवा पानी की सहायता से बत्ती बना ले, इसे शहद में घिस कर बालक के नेत्रों में आँज दे।

(४१) गुदा के पक जाने पर—रसौत का क्वाथ पिलाने से, रसौत को पानी से पीस कर लेप करने से, अथवा रसौत की भस्म गुदा पर भुरकाने से आराम हो जाता है।

(४२) दूसरा उपाय—शङ्ख, मुलहटी और रसौत को पानी में पीस कर लेप करने से पकी हुई गुदा में शीघ्र ही आराम होता है।

(४३) तीसरा उपाय—यदि गुदा में कोई खराब क़िस्म का घाव हो, तो पहले उस जगह जोंक लगा कर खून निकलवा देना चाहिए। बाद में बड़ आदि दूध वाले वृक्षों की छाल के क्वाथ से कुनकुने पानी से धोवे। फिर चन्दन, दोनों सारिवा, शङ्ख की नाभि इन सब को पीस कर लेप कर दे; अथवा केवल मुलहटी को

ही पीस कर लेप कर देने से गुदा के सब प्रकार के व्रण अच्छे हो जाते हैं।

(४४) पारिगर्भिक—जो गर्भवती होने पर भी अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं, उनके बालकों को खाँसी, वमन, कृशता, तन्द्रा, अरुचि, मन्दाग्नि, भ्रम, पेट का बढ़ना आदि कई विकार हो जाते हैं। कभी-कभी बिना गर्भवती माता का दूध पीने से भी यह रोग हो जाता है। यदि गर्भिणी माता का दूध पीने से यह रोग हुआ हो, तो दूध बन्द करके अग्नि-दीपन करने वाले पदार्थ खिलाने चाहिए; और यदि बिना दूध पिए ही यह रोग हो गया हो, तो भी पाचन-शक्ति को बढ़ाने वाले पदार्थ बालक को खिलाने चाहिए।

(४५) चोरक रोग—बालक के एक साथ दस्त और अफरा हो जावे, वमन भी हो; और आँखें खुली की खुली रह जावें, श्वास धीरे-धीरे चलने लगे; और मृतक के समान हो जावे, तो चोरक रोग समझना चाहिए। ब्राह्मी का रस, वच, शङ्खाहूली और कूट इनकी लुगदी बना कर घी में सिद्ध करे। जब घृत सिद्ध हो जावे, तब इस घृत के सेवन कराने से चोरक रोग नष्ट हो जाता है।

(४६) दूसरा उपाय—त्रिफला, त्रिकुटा, कूट, नागरमोथा, जवाखार और मरुआ इनकी लुगदी बना कर एक पाव तिल का तेल, एक पाव हाथी का मूत्र लेकर लुगदी को इसमें डाल कर सिद्ध करे जब सिद्ध हो जावे, तब इस तेल को नासिका में डालने से चोरक रोग दूर हो जाता है।

(४७) दन्त-रोग—बच्चों को दाँत निकलते वक्त बड़ा ही दुख होता है। एक प्रकार से बालकों का पुनर्जन्म सा होता है, यदि यह कह दें, तो अत्युक्ति न होगी। चूने को शहद में मिला कर दाँतों की जड़ों में मसलने से दाँत सुखपूर्वक निकल आते हैं।

(४८) दूसरा उपाय—धाव के फूल, पिप्पली और आँवलों का रस इन तीनों को मिला कर मसूड़ों में घिसने से दाँत सुख-पूर्वक निकलते हैं।

(४९) तीसरा उपाय—धव के फूलों का चूर्ण शहद में मिला कर घिसने से भी दाँतों के निकलने में कुछ कष्ट नहीं होता।

(५०) चौथा उपाय—पीपल और आँवलों का चूर्ण शहद में मिला कर मसूड़ों पर मालिश करने से दाँत बिना किसी तकलीफ के सहज ही में निकल आते हैं।

(५१) पाँचवाँ उपाय—बच के चूर्ण को शहद में मिला कर बच्चे के मसूड़ों पर मसलने से दाँत सुखपूर्वक निकलते हैं।

(५२) जल्दी ही दाँत निकलने पर—सात महीने से पूर्व दाँत निकलना आयुर्वेदाचार्यों ने अशुभ माना है :—

जातस्य प्रथमेवा च द्वितीये तृतीयेथवा
चतुर्थे पञ्चमे चैव षष्ठे वा सप्तमे पिवा ॥
यस्य दन्ताः प्रजायन्ते सदुष्टः कुलघातवा ॥

अर्थात्—जिस बालक के उदर से ही दाँत निकले हुए हों; अथवा

प्रथम मास में निकलें, यह माता के लिए; दूसरे में पिता के लिए, तीसरे में माता और पिता दोनों के लिए, चौथे भाई या बहिनों के लिए; और पाँचवें, छठे, सातवें में आत्मीय जनों के लिए घातक होता है।

इस उत्पात के निवारणार्थ दान, पुण्य, यज्ञ, जप, तप, भगवद्भजन आदि पवित्र उपायों का अवलम्बन करना चाहिए। यहाँ औषधि की गति नहीं है।

(५३) दाँत कटकटाने पर—निद्रा में प्रायः बच्चे दाँतों का शब्द किया करते हैं, यह रोग है। लोग इसे माता-पिता, भाई आदि के लिए घातक समझते हैं। यह रोग रूखा भोजन करने वाले बालक की ठोड़ी अथवा शिर में अग्नि के कोप से उत्पन्न होता है। काकड़ासींगी और सागोन के कल्क से पकाया हुआ दूध पैरों के तलुओं में लेप करने से बालक का दाँत कटकटाना बन्द हो जाता है।

(५४) सूखा रोग पर—जो माताएँ दिन में खूब सोती हैं, जो बहुत ठण्डा जल पीती हैं, उनका दूध खराब हो जाता है। इस दूध को पीकर बालक कृश होने लगता है। दिन प्रतिदिन वह सूखता ही जाता है। हड्डियाँ मात्र शेष रह जाती हैं। पेशाब और पाखाना अधिक होता है। इस रोग को शोष और कार्श्य कहते हैं। इस रोग की दवा करने के पूर्व बच्चे को अत्यन्त हलका जुलाब देना चाहिए। फिर सेंधानमक, त्रिकुटा, लताकरञ्ज, पाठा, कदम्ब सममाग लेकर इन्हें कूट पीस कर कपड़छन कर ले; और फिर शहद में मिला कर बालक को आराम होने तक नित्य प्रातः समय चटावे।

(५५) दूसरा उपाय—विदारीकन्द, गेहूँ और जौ का सत्त घी में भून कर खिलावे। ऊपर से शहद और मिश्री मिला हुआ गो-दुग्ध पिलावे।

(५६) तीसरा उपाय—आठ तोले असगन्ध को पानी के साथ पीस कर लुगदी बना ले। बाद में एक सेर गो-दुग्ध में आठ तोला ताज़ा गो-घृत डाल कर यह लुगदी भी डाल दे। फिर चूल्हे पर चढ़ा कर पकावे। जब घृतमात्र शेष रह जावे, तब इसे छान कर काँच की शीशी में भर ले। इस घृत को खिलाने से बच्चा पुष्ट और बलवान् हो जाता है। इस घृत को अश्वगन्धादि घृत भी कहते हैं।

(५७) सर्व रोगान्तक उपाय—गर्भाशय से निकलते ही बच्चे को किसी स्वच्छ कोमल वस्त्र से पोंछ कर तुरन्त ही शीघ्रतापूर्वक तीन वर्ष के पुराने शहद में उसको लपेट कर लेटा दे। ठीक तीन घण्टे के बाद शहद पोंछ डाले। स्नान न करावे, इसीसे बच्चा हमेशा स्वस्थ और बलवान् रहेगा।

(५८) पसली रोग पर—लाल अपामार्ग (ओंगा) के पत्र लेकर हींग और लवण के साथ चटाने से पसली रोग जाता रहता है।

(५९) डब्बा रोग पर—इसे पसली रोग भी कहते हैं। प्याज़ के अर्क़ में एलुआ पीस कर पसली पर लेप करना चाहिए, और ख़रगोश का ख़ून दो बूँद एक औन्स गर्म पानी में डाल कर पिला दे; अथवा कस्तूरी असली चावल भर, शहद बढ़िया छः माशा दोनों को मिला कर बच्चे को चटावे। यदि उपरोक्त दोनों दवा दी जावें, तो शीघ्र ही लाभ होगा।

(६०) मसान रोग पर—इसे कचिया मसान कहते हैं। मूर्ख लोग इसे भूत-प्रेतों का उत्पात समझते हैं; और झाड़-फूँक कराते हैं। दवा-दारू को इस रोग में व्यर्थ समझते हैं। परिणाम यह होता है कि बच्चा मर जता है। जिस स्त्री के बालक को मसान रोग हो, उसे गर्भस्थापन के पहले ही उदर-शुद्धि के लिए औषधि सेवन करनी चाहिए। जब बच्चा पैदा हो जावे, तो उसे निम्नलिखित लकड़ियों को घिस कर पिलावे। सिरस, सेमल और नीम इन तीनों की ६-७ इञ्च लम्बी और पाव इञ्च मोटी लकड़ी लेकर तीनों को एक साथ सुतली से बाँध ले, और चन्दन की तरह पत्थर पर घिस कर पिलावे। यदि बालक को मरोड़ अथवा हरे-पीले दस्त होते हों, तो उम्र के अनुसार थोड़ा सा एरण्डी का तेल पिला दे।

(६१) दूसरा उपाय—शिङ्गरफ का पारा छः माशे, शुद्ध आँवला सार गन्धक नौ माशा, शुद्ध दन्ती बीज नौ माशे, कस्तूरी दो माशे, केशर छः माशे वाखुर्आँ छः माशे, त्रिकुटा पन्द्रह माशे, त्रिफला पन्द्रह माशे, सुहागा छः माशे, निशोथ बारह माशे, पुनर्नवा छः माशे, शुद्ध बच्छनाग दो माशे। पहले पारे को गन्धक के साथ घोट कर कजली बना ले; बाद में सब को पीस कर भाँगरे के स्वरस में आधी-आधी रत्ती की गोलियाँ बाँध ले। छः महीने के बच्चे को आधी गोली और छः महीने के ऊपर की उम्र के बच्चे को पूरी गोली देनी चाहिए। इससे मसान रोग तो अच्छा हो ही जाता है; लेकिन यह दस्त, संग्रहणी, कब्ज, खाँसी, पसली ज्वर, खसरा, मोतीझरा आदि रोगों के लिए भी रामबाण है।

(६२) खाँसी और ज्वर पर—हल्दी, मिर्च, आँवला, हरड़, चीत, सेंधा नमक, पीपर, कूट, आकाशवेल, मुलहटी सब सामान भाग, नीम की कोंपल दो भाग, नीम गिलोय के पत्ते तीन भाग, नागरमोथा नौ भाग इन सबको कूट-पीस कर कपड़-छन कर ले और फिर गो-मूत्र की तीन पुट देकर चने के बराबर गोलियाँ बाँध ले। एक गोली दिन में ३-४ बार माता के दूध में घिस कर देनी चाहिए।

(६३) पसली रोग पर—धतूरे के बीज शुद्ध, सोंठ, मिर्च, पीपल, मक्कसूदाबादी शुद्ध हिंगलू, भुना हुआ सुहागा, शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक ले। पहले गन्धक और पारे को रगड़ कर कजली बना ले; बाद में सब दवाइयों को तुलसी के पत्तों के स्वरस में खरल कर, सरसों के बराबर छोटी-छोटी गोलियाँ बना ले। यह गोली हर तीसरे घण्टे माता के दूध में घिस कर देने से पसली रोग नष्ट हो जाता है। ये गोलियाँ खाँसी और बुखार में भी दी जावें, तो तत्काल लाभ दिखाती हैं।

(६४) बाल-दुख-भञ्जनी वटिका—एक छुहारा लेकर उसके अन्दर की गुठली निकाल डाले। उसमें चार रत्ती अफीम रख कर छुहारे को बन्द करके ऊपर से धागा लपेट दे। फिर इस छुहारे को आकड़े के दूध में डाल कर आग पर रख दे। जब छुहारा गल जावे, तब तीन रत्ती केशर, चार रत्ती अतीस, चार रत्ती काकड़ासींगी, पाँच रत्ती छोटी पीपल, पाँच रत्ती मरोड़ फली, चार रत्ती कालानमक, पाँच रत्ती जावित्री, तीन रत्ती लौंग, चार रत्ती कस्तूरी, जायफल

सब को कूट-पीस कर आकड़े के दूध और अफीम में मिला दे। फिर बँगला पान के अर्क में खरल करके उड़द के बराबर गोलियाँ बना ले। माता के दूध में एक गोली घिस कर चटाने से बच्चे का दुबलापन, हरे-पीले दस्त, ज्वर, खाँसी, सर्दी, पसली आदि अनेक रोग दूर हो जाते हैं।

(६५) सूखा रोग पर—छः माशे से एक तोले तक गधी का दूध सुबह-शाम बच्चे को पिलाने से शरीर पुष्ट होता है। कोई सा गुणदायक दवा का तेल भी बच्चे के शरीर पर लगाना चाहिए; लाक्षादि तेल उत्तम होगा। इसके बनाने की विधि इसी प्रकरण में आगे लिखी है।

(६६) कुकूण (कोथुवा) पर—जस्ते के खीले (सफ़ेदा) को नीम की पत्ती के स्वरस में तथा सौंफ की पत्ती के स्वरस में तीन-तीन भावना देकर खरल कर ले। आँखों की पलक उलट कर आँखों में आँजने से भीतर पड़े हुए दाने भी नष्ट हो जावेंगे।

(६७) डब्बा रोग पर—रेवन्दसार एक तोला और शुद्ध गन्धक आधा तोला दोनों मिला कर रख ले। बच्चे की उम्र के अनुसार आधी रत्ती से लगा कर माता के दूध में दे। यदि बच्चा दूध न पीता हो, तो पान में रख कर खिला दे। उसी समय दस्त और क़ै होगी। इसके बाद कोई शीत-शान्ति की औषधि दे। जिसे वमन-विरेचन न हो, उसे समझ लेना चाहिए कि रोग असाध्य हो गया है।

(६८) दूसरा उपाय—शुद्ध जमालगोटा छः माशा, सोंठ

तीन माशा, करञ्ज की गिरी ६ माशा, एलुआ ६ माशा, इन सब को दो दिन तक जल में खरल करे। मूँग और उर्द के बराबर गोलियाँ बना ले। एक गोली माता के दूध में घिस कर देने से बच्चे का पसली-रोग, ज्वर, खाँसी वग़ैरह आराम हो जावेंगे।

(६९) ज्वर-दस्त पर—काली-छोटी दूधी का चूर्ण एक रत्ती से एक माशा तक बलाबल के अनुसार माँ के दूध या बताशे में रख कर दिन में तीन बार देना चाहिए। कैसा ही बुखार और दस्त क्यों न हो, मिट जावेगा।

(७०) मिठवा रोग पर—जहरमोहरा खताई एक तोला, छोटी इलायची छः माशा, मुलहटी का चूर्ण छः माशा इन सब को अर्क़ गुलाब या केवल पानी में खरल करके एक-एक रत्ती की गोलियाँ बना ले। इसे माता के दूध या जल में घिस कर पिलाने से मिठवा रोग, जिसे ओरसा तथा पसली चलना भी कहते हैं, तत्काल नष्ट हो जाता है।

(७१) दूसरा उपाय—घोड़ों के घुटनों के पास ही एक निशान सा होता है। यह निशान अगले पैरों में ही होता है। इसे 'लोग घोड़ों के पर' कहते हैं। यहाँ का चमड़ा आटन सरीखा होता है। इस चमड़े को ऊपर से किसी नाई के द्वारा या तेज चाकू वग़ैरह से निकाल लेना चाहिए। छः महीने तक के बालक को एक राई के बराबर इसे उसकी माता के दूध में घिसकर पिलाना चाहिए। छः महीने से ज्यादह उम्र के बालक को डेढ़ राई के बराबर देना चाहिए। स्मरण रहे, यह कस्तूरी से भी अधिक गर्म

पदार्थ है। पसली रोग पर यह आधे घण्टे में अपना प्रभाव दिखाता है।

(७२) दूसरा उपाय—लौंग नग दो, लहसुन की छिली हुई दो फाँके (पोथी), जुन्दबेदस्तर दो चावल भर इन तीनों को शहद में इतना बारीक घोंटे कि सब एकदिल हो जावें। फिर चने के बराबर गोलियाँ बना ले। दो घण्टे के अन्तर से एक-एक गोली देनी चाहिए। तीन गोली देने पर अवश्य लाभ हो जावेगा। पहली से ही लाभ हो जावे, तो दूसरी गोली देने की आवश्यकता नहीं है। दूसरी से लाभ हो, तो तीसरी न दे। छः महीने के बच्चे को आधी गोली माँ के दूध में घिस कर देनी चाहिए। ये गोलियाँ शहद में भी दी जा सकती हैं। कफ हो, तो तूतिया-भस्म आधा चावल माँ के दूध में दे देना ठीक है।

(७३) सूखा रोग पर शर्तिया दवा—कद्दी, जिसे लोग कँघई भी कहते हैं, उसकी ढाई पत्ती लेकर चूना-कत्था लगे पान में रख कर मुँह में खूब चबाए। जब उसकी पीक बन जावे, तब उस पीक को सीधे हाथ की तीन अँगुलियों पर लेकर सूखा रोग वाले बच्चे की पीठ पर गुदा से चार अङ्गुल ऊपर रीढ़ की हड्डी पर डाल कर ७-८ इञ्च तक लम्बी उस पीक को रगड़े। जब १५ मिनट रगड़ते हो जावें, तब सफ़ेद कोमल वस्त्र से उस जगह को पोंछ डालना चाहिए। आप देखेंगे कि सूखे रोग के कीड़े सब निकल आए हैं। बस बालक तन्दुरुस्त हो जावेगा। बाद में उसकी माता को ७ दिन

तक नीम की ११ पत्तियों की ठण्डाई नित्य घोट कर पिला देने से फिर कभी यह रोग होता ही नहीं।

(७४) दूसरा उपाय—मेंहदी के बीज एक छटाँक, हल्दी एक गाँठ (आधा तोला), जहरमोहरा खताई एक तोले। जहरमोहरा खताई को धधकते अङ्गारों में रख कर निकाल ले। आध घण्टे आग में रखने से जल जावेगा; और ठण्डा हो जाने पर भस्म सा हो जावेगा। अब सब दवाइयों को एक साथ पीस कर कपड़-छन कर ले; दवा तैयार हो गई। छः महीने के बच्चे को एक चावल भर माता के दूध में घिस कर पिलाने से तीन-चार दिन में सूखा रोग समूल नष्ट हो जाता है। छः महीने से अधिक उम्र वाले बालक को दो चावल भर प्रातः समय और २ चावल भर सायङ्काल देना चाहिए।

(७५) तीसरा उपाय—ऐसी काली गौ का एक सेर मूत्र सूर्योदय से पहले लेना चाहिए, जिसके शरीर पर दूसरे रङ्ग का एक धब्बा भी न हो। एक तोला असली काश्मीरी केशर को खरल में गो-मूत्र से घोट कर लुगदी बना ले। फिर इस केशर की लुगदी को शेष गो-मूत्र में मिला कर एक शुद्ध काँच की बोतल में भर दे और कार्क लगा कर बन्द कर दे। बस दवा बन गई। छः महीने तक के बच्चे को चार बूँद दवा और चार बूँद माता के दूध को मिला कर पिला देना चाहिए। छः महीने से अधिक उम्र के बालक को आठ बूँद दवा और उतना ही उसकी माता का दूध मिला कर पिला देना चाहिए। लाभ तो दो-तीन दिन में ही हो जावेगा; किन्तु

लगातार सात दिन तक दवा पिलाते रहना चाहिए। एक वक्त की बनाई हुई दवा तीन साल तक काम दे सकती है।

(७६) बच्चों के लिए जुलाब—रेवन्द चीनी, हरड़, सौंफ, तुरञ्जबीन इनमें से कोई सी भी वस्तु गुलाब-जल में घिस कर देने से बालक का कोठा साफ़ हो जाता है। कॉस्टरॉयल (अरण्डी का तेल), जहाँ तक हो सके, बच्चे को नहीं पिलाना चाहिए। हाँ, पाँच-सात मिनिट तक बच्चे के पेट पर अरण्डी के तेल की धीरे-धीरे मालिश करनी चाहिए।

(७७) आँव गिरने पर—बेल का गूदा अथवा हरड़ को शहद में घिस कर चटाने से आराम हो जाता है; अथवा चौबीस रत्ती बबूल के गोंद में एक रत्ती नीलाथोथा मिला कर चूर्ण कर ले और २४ पुड़ियाँ बाँध ले। दिन में तीन बार एक-एक पुड़िया ठण्डे जल में पिलाना चाहिए। पुराना आँव इससे समूल नष्ट हो जाता है। जब यह दवा दी जावे, तब दूध तथा काँजी के अतिरिक्त दूसरी खुराक न देनी चाहिए।

(७८) रतवा पर—रतवा रोग में बच्चे के शरीर पर लाल रङ्ग के चकत्ते पड़ जाते हैं। दुर्गन्धित स्थान में रहने से, प्रकाश और वायु-रहित बन्द मकान में रहने से, मैले बिछौनों में सोने से, मैले वस्त्र पहनने से; और बिगड़ा हुआ भोजन अथवा जल पीने से यह रोग हो जाता है। इस रोग में बालक को दस्त साफ़ लाने की औषधि देनी चाहिए। रतवा के चकत्ते पर अफ़ीम के डोड़े या थोड़ी सी अफ़ीम डाल कर उबाले हुए जल में फ़लालेन का टुकड़ा भिगो

कर सुहाता-सुहाता सेक करना चाहिए। टिञ्चर ऑफ स्टील नामक अङ्गरेजी दवा भी इस पर लाभप्रद है। फैलते हुए रतवा को रोकने के लिए १० ग्रेन कास्टिक को आधी छटाँक वर्षा के पानी में घोल कर लोशन बना लेना चाहिए। फिर इसे फाये से चकत्तों पर या आसपास लगाने से आराम हो जाता है। इस कास्टिक लोशन से रतवा बिलकुल साफ हो जाता है। यह रोग छूत का है, अतएव दूसरे वालकों को दूर रखना चाहिए। इस रोग में स्वच्छता परमावश्यक है।

(७९) ग्रह-रोग पर—मापपर्णी, गोरखमुण्डी और खस इनको जल में उबाल कर बच्चे को स्नान कराने से सब प्रकार के ग्रह शान्त हो जाते हैं।

(८०) दूसरा उपाय—सतवन, कूट, हल्दी, चन्दन इनका लेप करने से भी सब प्रकार के ग्रह शान्त हो जाते हैं।

(८१) तीसरा उपाय—लहसुन, नीम के पत्ते, लाख, वंसलोचन की धूनी से भी ग्रह शान्त हो जाते हैं; अथवा सफेद सरसों, नीम के पत्ते, वंसलोचन और लाख इनकी धूनी देने से भी ग्रह शान्त हो जाते हैं।

(८२) चौथा उपाय—साँप की केंचुल, जायफल, सफेद सरसों इनमें से किसी भी एक वस्तु में घृत मिला कर धूनी देने से वालकों के सब ग्रह दूर हो जाते हैं।

(८३) पाँचवाँ उपाय—लहसुन, मूर्वा, सरसों, नीम के पत्ते, साँप की केंचुल, बिल्ली की विष्ठा, बकरी के वाल, मेंढे का सींग,

वच और शहद इनकी धूप बना कर धूनी देने से सब ग्रह शान्त हो जाते हैं।

(८४) अष्टमङ्गल घृत—वच, कूट, ब्राह्मी, सफेद सरसों, सारिवा, सेंधानमक, पीपल और गो-घृत हरेक ६-६ माशा-घी दो छटाँक, दूध एक पाव जल एक पाव ले। सब दवाइयों को जौ-कुट करके दूध, पानी और घी में मिला कर चूल्हे पर चढ़ा दे, जब घृतमात्र शेष रह जावे, तब आग से नीचे उतार कर घी को छान कर शीशी में भर कर रख ले। इस घी को नित्य खिलाने से बच्चा बुद्धिमान्, फुर्तीला और अच्छी स्मरण-शक्ति वाला होता है। भूत, प्रेत, पिशाच, डायन, राक्षस, ग्रह, मातृका आदि कोई भी बाधा नहीं कर सकते।

(८५) लाक्षाद्य तेल—तिलों का तेल एक सेर, लाख का रस एक सेर, दही का पानी चार सेर, रास्ना, चन्दन, कूट, नागरमोथा, असगन्ध, हल्दी, सतावर,, देवदारु, दारु हल्दी, मुलहटी, मूर्वा, कुटकी, रेणुका प्रत्येक ६-६ माशा इन सब को पानी के साथ पीस कर लुगदी बना ले। फिर सब चीजों को मिला कर आग पर चढ़ा दे। तेल के रह जाने पर नीचे उतार ले; और ठण्डा हो जाने पर छान कर बोतल में भर ले। इस तेल की मालिश करने से बालकों के सब प्रकार के ज्वर जाते रहते हैं। शरीर का बल और कान्ति बढ़ती है। राक्षस, ग्रह, भूत-प्रेतादि की कुछ भी बाधा नहीं होने पाती।

(८६) कुमार-कल्याण घृत—शङ्ख पुष्पी, वच, ब्राह्मी, कूट,

आँवला, हर्र, बहेड़ा, किशमिश, मिश्री, सोंठ, जीवन्ती, जीवक, खरेंटी, कचूर, धमासा, बेलगिरी, अनार, तुलसी, नागरमोथा, पुष्कर-मूल, छोटी इलायची और गजपीपल प्रत्येक एक-एक तोला इन सब को पानी से घोट कर लुगदी बना ले। गो-घृत एक सेर, दूध चार सेर, कटेरी के पञ्चाङ्ग का क्वाथ चार सेर ले। अब सब दवाइयों को कड़ाही में डाल कर आग पर चढ़ा दें, जब घृतमात्र रह जावे, तब चूल्हे से उतार कर छान ले; और चीनी अथवा काँच के पात्र में भर कर रख दे। यह घृत बच्चों के लिए एक अपूर्व दवा है। जिस बच्चे को नित्य यह घृत खिलाया जाता है, वह शतायु होता है। यह घृत बल, बुद्धि, तेज, वर्ण, अग्नि आदि को बढ़ाता है। दाँत निकलते वक्त बच्चा किसी तरह का कष्ट नहीं पाता।

(१) बचपन

It depends upon you whether your children be men or brutes.

—*Abbot*

मि० अबॉट लिखते हैं—बच्चों को मनुष्य अथवा पशु बनाना, अपने ही हाथ में है। हमारे विचार से तो यदि बच्चों में कोई दुर्गुण है, तो उसका अपराधी उसे न समझ कर अपने को ही समझना चाहिए। यदि गर्भावस्था में कोई त्रुटि रह जावे, तो वह माता की गोद में पूरी की जा सकती है। बच्चों की या यों कहिए कि मानव-जाति की पहली पाठशाला उसकी माँ की गोद है।

माता की गोद बच्चे का महाविद्यालय है—विश्वविद्यालय है। बालक को सच्ची शिक्षा गर्भावस्था और माता की गोद में मिलती है। आज माताएँ अपने कर्तव्यों को नहीं समझतीं, वे अज्ञान-रूपी निविड़ अन्धकार में बैठी हुई हैं; यही कारण है कि देश अशिक्षितों के कारण हाहाकार का केन्द्र बन गया है। माता के मन के संस्कार ही उनकी सन्तान के संस्कार हैं। अपनी सन्तान को बुरी अथवा भली बनाना माता-पिता के आधीन है।

माता जैसी शिक्षा बच्चे को अपनी गोद में देगी, वही उसकी नस-नस में समा जावेगी। चोर, व्यभिचारी, पापी, जुआरी, मिथ्याभाषी, पाखण्डी, दुष्ट अथवा धार्मिक, सदाचारी, सुशील, सचरित्र, सत्यवादी, उदार, दयालु, निराभिमानी और परोपकारी—जो कुछ भी चाहे, माता बना सकती है। इसलिए माता का उत्तरदायित्व इस जगत् में सब से अधिक है। बालक तो फ़ोटो निकालने के प्लेट के समान कोरा प्लेट है; और माता उस पर प्रभाव अङ्कित करने वाली दूर्बीन है। इसलिए माता को सन्तान-पालन में बड़ी ही सावधानी की आवश्यकता है। मन, वचन और कर्म से माता को सर्वदा पवित्र रहना चाहिए। अपने बालक को उत्तम अथवा अधम उत्पन्न करना तथा तैयार करना अपने हाथ में है। अपने बच्चे को दुष्ट स्वभाव का बना कर उस पर रुष्ट होना मूर्खता है। उसमें जो कुछ भी गुण अथवा अवगुण हैं, वे सब आप के छाया-चित्र हैं। बेचारा बालक ज़रा भी दोषी नहीं है। एक विद्वान् का कथन है :—

The Child follows all the actions of its parents.

अर्थात्—अपने माता-पिता के आचरणों का ही बालक अनुकरण करता है।

आप देखते हैं कि बिना सिखाए ही वह घरेलू भाषा बोलने तथा समझने लगता है। अङ्गरेजों के बच्चे अङ्गरेजी और भारतवासी भारतीय भाषा स्वयं बोलने लगते हैं। अर्थात् वे अपने माता-पिता आदि आत्मीय जनों का अनुकरण करते हैं। मिष्ट अथवा कठोर भाषण भी बच्चा माता-पिता आदि से ही सीखता है। सद्गृहस्थों, कुलीनों की सन्तानें विनयी, सभ्य और नम्र होती हैं। नीच, दुष्ट, क्रूर तथा ओछे मनुष्यों की सन्तानें घमण्डी, कटुवादी निष्ठुर तथा गन्दी भाषा बोलने वाली होती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि बचपन में बच्चे की देख-रेख रखने की नितान्त आवश्यकता है। यद्यपि हमारा विषय यहीं पूर्ण हो चुका था; तथापि यह प्रकरण इसीलिए लिखा गया है कि माता-पिता की भूल से कहीं किए-कराए पर पानी न फिर जाय। हम यहाँ बचपन के लिए कुछ बातें लिखेंगे। आशा है, पाठकों को अवश्य लाभ पहुँचेगा।

(१) बचपन में बालक शिक्षित, सभ्य, उदार, सज्जन और साधु स्वभाव के मनुष्यों की सङ्गति में ही रक्खा जाय। प्रेम से यदि कोई बच्चे को गोदी में लेना चाहे, तो उसकी गोदी में बच्चे को देने के पूर्व यह सोच ले कि यह सदाचारी, विद्वान और

पवित्र है या नहीं? यदि उपरोक्त गुणों से शून्य है, तो बच्चे को उसकी गोद में मत जाने दो।

(२) गाली-गलौज करने वाले मनुष्यों अथवा लड़कों में अपने बच्चे को कदापि न जाने दो।

(३) बच्चे का मुँह चूमना ठीक नहीं है। माता-पिता यदि अत्यन्त प्रेम के कारण मुँह चूमना चाहें, तो कभी-कभी ऐसा कर सकते हैं। जब मुख चूमने की इच्छा हो, तब उसके मुँह के पास मुँह लगा दिया जावे; लेकिन चुम्बन न लिया जावे। प्राचीन सभ्य लोग सिर सूँघते थे, चूमना बुरा समझते थे। चुम्बन असभ्यता है। बहुत से घरों में अड़ोसी-पड़ोसी, इष्ट-मित्र जो कोई भी आता है, बच्चे को गोदी में लेकर उसका मुँह चूमने लगता है। यहाँ तक कि चुम्बन के मारे बच्चे के नाक में दम हो जाता है; और वह घबराने लगता है।

(४) जब बच्चा पैरों चलने लगे; तब उसके लिए एक अलग बिछौना रक्खे। प्रेम अथवा भूत-प्रेत आदि के भय से अपनी छाती से उसे चिपटा कर कभी न सुलावे।

(५) ग्यारह वर्ष की अवस्था तक बच्चों का मस्तिष्क अत्यन्त ही कोमल होता है; इसलिए इस अवस्था तक बालकों को बुरी आदतों से हटा कर अच्छी आदतें डालनी चाहिए। इस अवस्था तक डाले हुए प्रभाव उसके हृदय पर आमरण अङ्कित हो जाते हैं। माता-पिता को इस समय बड़ी ही सावधानी रखनी चाहिए। बच्चे की प्रत्येक बात पर दृष्टि रखनी चाहिए।

(६) बालकों को अधिक दण्ड कदापि न देना चाहिए। अधिक दण्ड से उनकी आदत पिटने की पड़ जाती है; और फिर वे दण्ड की परवाह नहीं करते। सब से पहली बात तो यह है कि बच्चे का शिक्षण ही इस प्रकार का हो कि वह अपराध न करे। यदि भूल से कोई अपराध हो भी जावे, तो उस पर बच्चे को क्षमा करके आयन्दा न करने की हिदायत दे देनी चाहिए। आँखों की घुड़की में ही बालक रक्खा जावे, तो सबसे अच्छी बात है।

"तुझे मारूँगा" ऐसा कह कर न मारना अथवा मारना तो प्रेम से, धीरे-धीरे अथवा हँसते हुए—यह ठीक नहीं है। ऐसे दण्ड-विधान से बच्चे बिगड़ जाते हैं; और अपने क़ाबू में नहीं रहते।

(७) सफ़ाई के विषय में बड़ी ही सावधानी रखनी चाहिए। बच्चे का शरीर और वस्त्र हमेशा स्वच्छ रहना चाहिए। बच्चे को सफ़ाई का ऐसा प्रेमी बना देना चाहिए कि उसे मैले बदन और वस्त्र से घृणा उत्पन्न होने लगे। फ़ैशन की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी स्वच्छता की। बहुत से महाशय अपने बच्चों को फ़ैशनेबुल बनाए रखते हैं; परन्तु पवित्रता की ओर ध्यान नहीं देते, यह ग़लती है। दो-चार वस्त्र पहनाने की बजाय एक ही कम क़ीमती वस्त्र पहनाओ; लेकिन वह साफ़ हो। बचपन में हमेशा ढीले और कम वस्त्र पहनाने चाहिए। जिन बच्चों के शरीर पर बचपन से ही बहुत से कपड़े लाद दिए जाते हैं, उनकी शारीरिक वृद्धि रुक जाती है; एवं रोगी हो जाते हैं। देश और ऋतु की अनुकूलता

के अनुसार यथासम्भव कम कपड़े पहनाने का ध्यान रखना चाहिए। शारीरिक स्वच्छता के लिए बच्चे को नित्य बिला नागा अच्छी तरह स्नान करा देना चाहिए। स्नान कराते वक्त शरीर का प्रत्येक अवयव, बगल, रान, गला, छाती आदि ख़ूब अच्छी तरह रगड़ कर धो डालने चाहिए। लिङ्ग के अग्र भाग की त्वचा को सरका कर सुपारी पर के मैल को धो डालना चाहिए। सुपारी पर खोपरे या तिली का तेल भी लगा देना चाहिए। बच्चों के सिर पर बड़े-बड़े बाल होते हैं; अतएव उनमें किसी प्रकार का चार अथवा साबुन लगा कर ख़ूब धो डालना चाहिए। प्रायः बच्चों के सिर में गुमड़ियाँ, फोड़े-फुन्सी वग़ैरह हो जाते हैं। यह सब सिर को साफ़ न रखने से ही होते हैं। लेखक ने समझदार लोगों के बालकों के सिर में फोड़े होते और उनमें कीड़े पड़े हुए तक देखे हैं; यह सब अपवित्रता के कारण थे। इसलिए सफ़ाई की आवश्यकता है। बच्चों को सिर पर यदि बाल साफ़ रखे जावें, तो उन्हें रहने देना चाहिए; अन्यथा क़ैंची से काट देना चाहिए। हमारे प्राचीन भारतवासियों में मुण्डन-संस्कार नाम से एक संस्कार प्रचलित था, जिसका बिगड़ा हुआ रूप 'जरुले' के नाम से अब भी हिन्दुओं में मौजूद है। मुण्डन-संस्कार के लिए आश्वलायन गृह्यसूत्र में लिखा है:—

तृतीयेवर्षे चौलम्

तीसरे वर्ष मुण्डन-संस्कार कहा है। पारस्कर गृह्यसूत्र में तो प्रथम वर्ष में ही मुण्डन-संस्कार की आज्ञा है। बहुत से लोग प्रेम-

पूर्वक अपने नासमझ बच्चों के सिर पर आगे की तरफ़ अङ्गरेज़ी ढङ्ग की ज़ुल्फ़े रखा देते हैं, यह हानिकारक है। तात्पर्य यह है कि बच्चे की शारीरिक स्वच्छता का ख़ूब ध्यान रखना चाहिए।

(८) बच्चों के शरीर पर तेल की मालिश आठवें या पन्द्रहवें दिन कर देना चाहिए। बच्चे की नाभि में भी तेल लगा देना चाहिए, बालों में भी कोई उम्दा तेल लगा देना चाहिए। उम्दा से हमारा मतलब बाज़ारू हेअर ऑयलों से नहीं है। हेअर ऑयल जो बाज़ारों में मिलते हैं, उनसे बच्चों को बचाना चाहिए। कोई सा भी शुद्ध तेल प्रयोग करना चाहिए। सरसों, चमेली, तिल का तेल, नारियल का तेल अच्छा होता है। १५-२० दिन में एक बार बच्चे के कान में भी २-४ बूँद तेल डाल कर रूई का फाया लगा देना चाहिए।

(९) बालक के भोजन पर विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है; क्योंकि भोजन का स्वास्थ्य और स्वभाव से घनिष्ठ सम्बन्ध है। बुरे भोजन से स्वास्थ्य और स्वभाव भी बुरा हो जाता है, बचपन में हानिकारक पदार्थों के खाने से समस्त जीवन दुखमय बन जाता है। बचपन में अज्ञानता के कारण बच्चे मनमानी चीज़ खा लिया करते हैं। माता-पिता भी प्रेम के वशीभूत होकर अपने बच्चों की ज़बान चटोरी बना देते हैं। यही आगे चल कर आदत हो जाती है। लड़कपन की आदत से आदमी उम्र भर जीभ का ग़ुलाम बना रहता है। बच्चों को ऐसा भोजन देना चाहिए, जो रुचिकारक और स्वास्थ्य-वर्द्धक हो।

बहुत से बालक तरह-तरह की मीठी-मीठी चीजों के लिए या अन्यान्य सुस्वादु पदार्थों के लिए मचल जाते हैं; और जब तक वे उस इच्छित पदार्थ को पा नहीं लेते, तब तक उन्हें सन्तोष ही नहीं होता। जब हानिकारक वस्तुओं के लिए बालक मचले उस वक्त उसके माता-पिता तथा आत्मीय जनों को उसकी इच्छा पूरी न करके मचलने देना चाहिए, इस बात की परवाह नहीं करनी चाहिए। यदि आरम्भ में ही उसके मचलने की परवाह नहीं की गई, तो वह फिर कभी मचलेगा ही नहीं; और यदि एक बार आपने उसके मचलने पर उसकी इच्छित वस्तु उसे दे दी, तो वह हमेशा तङ्ग करेगा। जो लोग खिलाने-पिलाने के लिए अपने बच्चों पर प्यार करते हैं, उनके बालक बिगड़ जाते हैं। आगे चल कर वे चरित्र-भ्रष्ट, चोर, जुआरी तक बन जाते हैं। जहाँ तक हो सके, बच्चे को सादा भोजन देना चाहिए। नमक, मिर्च, चटपटे मसाले, अत्यन्त मिठाई, हानिकारक खटाई आदि से यथासम्भव बचाना चाहिए। मांस मनुष्य की ख़ुराक नहीं है; यह हम पीछे लिख आए हैं, अतएव यहाँ अधिक न लिख कर केवल यही लिखना है कि यदि मांसभोजी माता-पिता हों, तो उन्हें अपने बालक को इससे बचाना चाहिए।

छोटे-छोटे बच्चों की आदत कई बार खाने की होती है। माता-पिता का फ़र्ज़ है कि ऐसी आदत से उन्हें बचावें। मूर्ख माँ-बाप उनके कुरते या कोट में एक जेब लगा देते हैं; और उसमें ऐसा कोई पदार्थ भर देते हैं, जिसे बच्चे दिन भर खाते फिरते हैं। यह

वहुत ही बुरा है। ऐसे बच्चे रोग के भण्डार वन जाते हैं। खोंमचे वालों की मिठाइयाँ तथा नमकीन चटपटे पदार्थ बच्चों को कभी न खिलाना चाहिए। बच्चे को खूब चबा कर धीरे-धीरे खाने की आदत डालनी चाहिए। स्वास्थ्य-रक्षा की यह एक सर्वोत्तम विधि है। जो लोग अपनी सन्तान को संयमी बनाना चाहते हैं, उन्हें सबसे पहले खुद संयमी बनना चाहिए। चटोरे माता-पिता की औलाद चटोरी न बने, यह असम्भव है। माता-पिता तो विविध चटपटे मसालेदार पदार्थ अथवा मिठाइयाँ खावें; और बच्चे को उनसे बचाने की चेष्टा करें, यह भूल है। संयमी माँ-बाप की औलाद संयमी होती है।

(१०) हमारे देश में बच्चों को आभूषण पहनाने की एक बड़ी ही बुरी प्रथा है। सैकड़ों बच्चे आभूषणों के कारण प्रति वर्ष मार डाले जाते हैं। सब कोई जानते हैं कि बच्चों के लिए आभूषण जान-जोखिम की वस्तु है; परन्तु फिर भी पहनाते ही हैं। नृशंस लोग जेवर पहने हुए बच्चे को उठा ले जाते हैं; और उसे मार कर जेवर लेकर चम्पत हो जाते हैं। हमने देखा है कि नीच लोग १०-१५ रुपयों के आभूषणों के लिए भी बच्चों को मार डालते हैं। ऐसी दशा में एकमात्र उपाय यही है कि बच्चों को आभूषण बिलकुल ही न पहनाया जावे। मूर्ख स्त्रियों के कहने से पुरुष प्रायः बच्चों को आभूषण पहना देते हैं। आभूषणों में एक नहीं, अनेक दोष हैं।

आभूषण बनवाने से रुपये में बारह आने रह जाते हैं।

आभूपण खो जाते हैं, घिस जाते हैं। आभूपणों को तोड़ कर फिर बनवाया जाता है, तब बारह आने के आठ आने ही रह जाते हैं। सारांश यह कि यदि आभूपणों को दो-चार बार तोड़वा कर बनवाया जावे, तो कुछ भी नहीं रह जाता। कृत्रिम आभूपणों से शोभा-वृद्धि करना मूर्खता है, एक कवि ने कहा है :—

नराणाम् भूपणं रूपम् रूपाणाम् भूपणं गुणम्।
गुणानाम् भूपणं ज्ञानम् ज्ञानानाम् भूपणं क्षमा॥

अर्थात्—मनुष्य का भूपण शारीरिक सौन्दर्य है, सौन्दर्य का भूपण गुण-सम्पन्नता है, गुणों का भूपण ज्ञान है; और ज्ञान का भूपण क्षमा है।

कहने का तात्पर्य यह है कि सर्वोपरि भूपण क्षमा है। जो अपने बच्चों को भूपण पहनाना चाहें, उन्हें चाहिए कि वे उसे क्षमा-शील बनावें। कुरूप, दुर्गुणी, अज्ञानी, क्रोधी, अधीर, अशान्त और उद्दण्ड बालक को जेवर पहनाने से लाभ ही क्या है ?

जिन बच्चों को जेवर पहना दिया जाता है, वे स्वतन्त्र घूम फिर नहीं सकते। वे कायर और डरपोक बना दिए जाते हैं। कायरता बड़ा दूपण है। जेवर पहनने वाले बच्चे सुस्त, असहिष्णु, निर्बल, नाजुक और अस्वस्थ हो जाते हैं। जिस जगह भूपण पहनाया जाता है, उस जगह का वृद्धि-विकास रुक जाता है। भूपण से अपवित्रता रहती है। चर्म-रोग पैदा हो जाते हैं। हमारे देश में एक "कर्णवेध" नाम का संस्कार प्रचलित है। कई जातियाँ तो बच्चे के कान छिदाने में हजारों रुपये खर्च कर डालती हैं। यह

प्रथा कानों में आभूषण पहनने के लिए नहीं निकाली गई; बल्कि उपरोक्त संस्कार स्वास्थ्य-रक्षा के लिए रक्खा गया है। लड़कियों की नाक छेद कर उसमें आभूषण पहनाते हैं। इसे सौभाग्य-चिह्न माना जाता है। लड़कों की अपेक्षा लड़कियों के कानों में बहुत छिद्र कर दिए जाते हैं। हमने देखा है कि कानों को छलनी बना दिया जाता है। सम्भवतः किसी समय में यह एक फ़ैशन समझा जाता हो; किन्तु वर्त्तमान काल में हमारी समझ से तो नाक-कानों में छिद्र करके उनमें आभूषण पहनना गन्दापन और अनुचित है।

बच्चों को आभूषण हर्गिज न पहनाना चाहिए। यदि आप को अपना पैसा दिखाना है, तो और किसी उपाय से उसे लोगों पर प्रकट कर सकते हैं; किन्तु अपनी सन्तान को अपने रुपये-पैसे की प्रदर्शिनी मत बनाइए।

(११) बच्चों को व्यायाम की आवश्यकता है, परन्तु बड़ों और बच्चों के व्यायाम में अन्तर है। चलीस दिन के बाद बच्चे को घर से बाहर निकाल कर उसे शुद्ध वायु में ले जाकर घुमाना चाहिए। बाहर ले जाने के वक्त, ऋतु के अनुकूल वस्त्र पहना देने चाहिए। जब तक बच्चा बैठने लायक़ न हो, तब तक उसे गाड़ी में बैठा कर ले जाना ठीक नहीं है। नित्य एक बार घुमाने के लिए ले जाना चाहिए। आँधी, वर्षा, कुहर, ठण्डी हवा, लू, धूप आदि हो, तो बच्चे को बाहर न ले जाना चाहिए। शोर-गुल में, गाड़ी-ताँगों की खड़खड़ाहट में बच्चों को न ले जाना चाहिए। छोटे-छोटे

बच्चों को उनकी माता व्यायाम करा देती हैं। बालक को रात-दिन गोदी में न रख कर, भूमि पर लिटा, उसके साथ ऐसा खेल-तमाशा करना चाहिए कि वह स्वयं प्रसन्नतापूर्वक थोड़ी देर हाथ-पैर हिला ले। प्रकृति बालक को स्वयं व्यायाम के लिए प्रेरणा करती है। यदि बच्चा सुस्त पड़ा ही रहे और हाथ-पैर न हिलावे, तो बच्चे को अस्वस्थ समझना चाहिए।

जब बालक पैरों चलने लगता है, तब उसको सहारा देने वाली एक गाड़ी दी जाती है; जिसके साथ-साथ वह भी चलता है। इसे देख माता-पिता को असीम आनन्द होता है; लेकिन इस प्रकार गाड़ी के द्वारा बालक को चलना सिखलाने से उसके पैर आड़े, टेढ़े और कुरूप हो जाते हैं। छाती की वृद्धि रुक जाती है, कुबड़ापन आ जाता है, टाँगों का सौन्दर्य मारा जाता है, वे दृढ़ नहीं होने पातीं। स्त्रियाँ अपने बच्चों को हाथ पकड़ कर जबरदस्ती इधर-उधर टहलातीं तथा चलना सिखाती हैं—यह अज्ञानता है। जल्दी करने से लाभ भी क्या है? प्रकृति स्वयं उसे समय आने पर सिखा देगी। छोटे-छोटे बच्चों के लिए हाथ-पैर हिलाना, घुटनों चलना, रेंगना, गिरना, पड़ना, उठना, बैठना, दौड़ना, खेलना आदि सब से अच्छे व्यायाम हैं। व्यायाम के बाद इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है कि बच्चा तुरन्त पानी न पी ले, ठण्डी जगह में न लेट जावे, स्नान न कर ले। उन्हें कह दे कि व्यायाम के बाद गर्मी में जब तक हाँफना दूर न हो जाय तथा श्वास पहले की मुताबिक न चलने लग जाय, तब तक पानी पीना, स्नान करना बहुत बुरी बात है।

बालकों के लिए खेलना सब से उत्तम व्यायाम है; लेकिन बच्चा क्या खेलता है? कहाँ और किसके साथ खेलता है इत्यादि बातों पर खूब ध्यान रखना चाहिए। मूर्ख माता-पिता अपने बच्चों को अबोध समझ कर, उनके सामने स्त्री-प्रसङ्ग आदि क्रियाएँ करते हैं। बच्चों में बन्दरों की तरह अनुकरण करने की आदत होती है। वे खेल-कूद में वही बातें करते हैं, जो उन्होंने अपने माता-पिता से सीखी हैं। ये बातें झूठ नहीं हैं। लेखक ने कई बार अपनी आँखों से चार-पाँच वर्ष की उम्र के बच्चों को पति-पत्नी की तरह कुकृत्य करते देखा है! तात्पर्य यह कि बच्चों के व्यायाम खेल-कूद हैं; और इसकी देख-रेख रखने की बड़ी ही आवश्यकता है।

(१२) एक बात बड़ी आवश्यक है। वह यह कि बच्चे को हमेशा सीधा बैठने तथा खड़ा होने एवं चलने की हिदायत देनी चाहिए। जो बच्चे कमर झुका कर आड़े-टेढ़े बैठते हैं अथवा चलते हैं, उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है, और आयु क्षीण हो जाती है। नर-शरीर में मेरुदण्ड नाम का पीठ में एक सीधा बाँस है, इसे लोग पृष्ठवंश, रीढ़, कसेरू और बाँस भी कहते हैं। यह इस शरीर का आधार-स्तम्भ है। आड़े-टेढ़े उठने-बैठने से यह शरीर का आधार-स्तम्भ निर्बल हो जाता है। इसी पृष्ठवंश से अनेक रक्त-वाहिनी नसें निकलती हैं (देखो चित्र नं० १६)। इन रक्त-वाहिनी सूक्ष्म शिराओं से सारे पिछले भाग में रक्त-सञ्चार होता है। यदि ये रक्त-वाहिनी निर्बल हो जायँ, तो सारा शरीर बेकाम हो जाता है,